CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

((अथ हितोपदेशः))

नेपाल वेद

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हिन्दूत्वको सन्देश

श्री ५ महाराजाधिराज महेन्द्र वीर विक्रम शाहदेवद्वारा
नागपुरमें मकर संक्रान्तिके अवसरपर, प्रयागमें कुम्भमेलाके अवसरपर
एवं दांग (नेपाल) में प्रथम आध्यात्मिक सम्मेलनके अवसरपर हिन्दुओंको
प्रदान सन्देशोंका संकलन

श्री ५ की सरकार
प्रचार-प्रसार मंत्रालय, प्रचार विभाग
२०२३

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

महाशिवरात्रि, २०२३

२०,००० प्रति

मुद्रक--श्री सरस्वती प्रेस लिमिटेड
कलकत्ता–९

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ग.पु.नं. १९

श्री ५ महाराजाधिराज महेन्द्र वीर विक्रम शाहदेवद्वारा नागपुर (भारत) में मकर संक्रान्तिके दिन हिन्दू सांस्कृतिक सम्मेलनके लिए प्रेषित शुभकामना सन्देश

मित्रो !

सम्पूर्ण हिन्दू संस्कृतिमें हिमालयको देवभूमि माना गया है। उसके मध्य मणिके समान विधाताने नेपालकी स्थापना कर हिमालयकी शोभा एवं नेपालका महत्व बढ़ाया है। सम्पूर्ण हिन्दू जातिके आराध्य, भगवान् पशुपतिनाथने इसी कारण इसको अपने संरक्षणमें रखा है। शालिग्रामकी मूर्तिका प्रादुर्भाव जहाँ होता है, उस पुण्यतोया गण्डकीने नेपालको पवित्र बनाया है। स्वयं भगवान् शंकराचार्यके इष्टदेव, नृसिंहरूपमें शालिग्राम ही थे। जिसका विधिवत् पूजन आज भी उनके श्रृंगेरी मठमें होता है। हिन्दू जगत्में भगवान् मुक्तिनाथकी वही और उतनी ही मान्यता है, जितनी भगवान् बद्रीनारायण की। इसप्रकार नेपाल, हिन्दू समाजका परमपावन एवं महत्वपूर्ण देश है, ऐसा कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

भारतीय हिन्दुओंके लिये नेपाल सदैव प्रेरणाका अक्षय स्रोत बना रहा है। इतना ही नहीं तो नेपालको गौरव है कि भारतके धर्म-संकटके समयमें हिन्दुओंका आश्रयदाता भी नेपाल ही

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रहा है। भारतके प्रथम स्वातंत्र्य संग्रामके सेनानी नानासाहेब पेशवा आदि वीर नेपालमें ही आये थे। उनके पश्चात् भी भारतीय स्वातंत्र्य संग्राममें, नेपालका योगदान सदैव रहा ही है।

नेपाल सदैव भारतके प्रहरीके रूपमें रहा है। दोनों की प्रायः एक ही संस्कृति है, और दोनां एक ही आदर्श जीवनसे अनुप्राणित हैं। हमारे वैवाहिक सम्बन्ध, विभिन्न रीति-रिवाज व खानपान सब एक ही हैं। हम सभी हिन्दुओंके लिये यह प्रसन्नताकी बात है। यह सम्पूर्ण हिन्दू जगत्के लिये एक गौरव-की बात है।

धर्म ही मानव-जीवनका सर्वश्रेष्ठ तत्व है। धर्मकी ही प्रेरणासे मानव प्रारम्भिक कालसे ही महान् कार्य करता आया है। मानव समाजका कल्याण धर्ममें ही आधारित है। इसलिये नेपाल, आज स्वतन्त्र, सार्वभौम सम्पन्न हिन्दू अधिराज्यके रूपमें है। विश्वमें यह एकमात्र घोषित हिन्दू राज्य होनेसे, हम सभी हिन्दुओंको, हिन्दूत्वके नाते गौरवका अनुभव होना स्वाभाविक है; अर्थात् हिन्दू राज्य होनेके कारण हिन्दू धर्मके श्रेष्ठत्वज्ञानमें, अन्य सभी धर्मोंके प्रति सहिष्णुता एवं सम्मान-का भाव होनेसे, हिन्दू अधिराज्य नेपालमें धर्मके आधारपर किसी भी नागरिकके साथ भेदभावका व्यवहार नहीं होता। संसारमें सुख, विश्वशान्ति, मनुष्य मात्रमें भ्रातृभाव, समता, असीम उदारता जैसे महान् तत्व हैं, जिन्होंने हिन्दू धर्मको हजारों वर्षोंसे अविभाज्य व अक्षुण्ण बना रखा है। इस धर्मकी महानता इसीमें है कि इसने विभिन्न धर्मोंको एक ही लक्ष्य प्राप्तिके लिये

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भिन्न पन्थके रूपमें स्वीकार किया है व यह कभी भी किसी भी धर्मपर आक्रमण नहीं करता। अन्य धर्मोंके प्रति सहिष्णुता, उदारता एवं सम्मानकी भावना रखना हमारी नीतिमात्र नहीं, तो हमारा मूलभूत सिद्धान्त एवं विश्वास भी है। इसी तत्वका प्रत्यक्ष आचरण नेपालके जनजीवनमें दिखायी पड़ता है। नेपालके नागरिक अनेक उपासना पद्धतियोंका पालन करते हुये भी परस्पर स्नेहसे रहते हैं। नेपालके हितके कार्योंमें संलग्न हैं। धर्मकी रक्षाके लिये स्वतन्त्रता व सम्पन्नता आवश्यक होती है। इस दृष्टिसे नेपालने अपने नागरिकोंके भौतिक सुख व समृद्धिके लिये भी सफलतापूर्वक प्रयत्न किया है, तथापि उसका अंतिम उद्देश्य धर्मका पालन ही है। आज संसारकी रक्षा धर्मकेद्वारा ही सम्भव है। इसी कारण नेपालने प्राचीन हिन्दू परम्परा व राज्यनीतिमें आधारित पञ्चायत व्यवस्थाको अपनाया है। इसका मूल लक्ष्य व्यक्तिका आध्यात्मिक विकास है, जिसकेद्वारा जीवनके आधारभूत मूल्योंको प्राप्त करना सम्भव है। इसके निमित्त यह व्यवस्था समाजके प्रत्येक व्यक्तिको अपना कर्तव्य, उत्तरदायित्व तथा अधिकारके प्रति चेतना उत्पन्न कर उसको धर्मके मार्गमें अग्रसर करना चाहती है। देशके असंख्य किसानोंको जीवित व जागृत करनेके निमित्त, भूमि-सुधार जैसे महान् व व्यापक कार्यक्रमका प्रारम्भ भी नेपालमें किया गया है। नेपालको सभी दृष्टिसे विश्वके समक्ष एक आदर्श हिन्दू राज्यके रूपमें खड़ा करनेकी हमारी इच्छा है व उसके लिये हम नेपाली सदैवसे प्रयत्नशील हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नेपालपर हजारों वर्षोंसे आक्रमण व संकट लगातार आते रहे हैं तथापि नेपाल अपनेको उनसे सुरक्षित रखता आया है। महान् विभूति, सन्त एवम् महान् पुरुषोंने हमारा मार्गदर्शन किया है। धर्मने हमारी रक्षा की है। अपनेको हिन्दू कहनेमें भी भय व लज्जाका अनुभव करनेका कृत्रिम वातावरण जब उत्पन्न हुआ था, उस कालमें भी नेपालने अपनेको अक्षुण्ण रखा। सभी हिन्दुओंको इस बातका विशेष अभिमान होना चाहिए।

हिन्दू समाज धर्मपर आधारित है। एकता, भ्रातृत्व व प्रेमके शाश्वत सिद्धान्तोंके अन्तर्गत रहकर ही धर्मका बाह्य रूप परिवर्तनशील रहता है। सामाजिक व राजनैतिक संस्थाओंका विकास होता है व राष्ट्रीय जीवनमें नयी-नयी बातोंका प्रादुर्भाव होता जाता है। हिन्दू समाज भी समयकी गतिके अनुसार अग्रसर हो रहा है। हिन्दू समाज सदैव गतिशील ही रहा है। वातावरणमें होते आये परिवर्तनका प्रभाव इसपर भी पड़ा है व समयकी गति तथा मांगके अनुसार इसमें भी आवश्यक प्रतिक्रिया होती गई है। श्रुतियोंमें उल्लिखित मूल सिद्धान्तोंको, समयके अनुसार, आज नया रूप देनेकी आवश्यकता है। हिन्दू समाजका भविष्य इसीपर निर्भर करता है; अतः आज समस्त हिन्दुओंको इस बातपर ध्यान देना आवश्यक हो गया है। अपनेको हिन्दू कहनेमें लज्जा व संकोच नमानकर, हिन्दू समाजको सुरक्षित, सुदृढ़ तथा विकसित करनेके लिए धर्मके पुनरुत्थानके द्वारा अग्रसर होकर ही हम आज अपने राष्ट्र व समाजकी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रक्षा व विकास कर सकेंगे। समस्त हिन्दुओंको इस बातको भलीप्रकार हृदयंगम करनेकी आवश्यकता है।

आज हिन्दू समाजमें कुछ शिथिलता दिखाई देती है, यह खुशीकी बात नहीं है। आजका हिन्दू विचलित हो रहा है। उसकी धर्मके ऊपरसे श्रद्धा हिल गई है, और उसे उदासीनताने घेर लिया है। अतः उसको पुनः स्वस्थ बनाकर अपनी उच्च, उदात्त प्रकृतिमें स्थिर करना व अपनी श्रेष्ठ हिन्दू जीवन-रचना की ओर अग्रसर करना आवश्यक हो गया है। हिन्दू धर्म विश्वका सबसे प्राचीन धर्म है। इसका अपना एक श्रेष्ठ तत्वज्ञान है। संसारके अनेक प्रकारके संघर्षोंको हटाकर सभीका कल्याण करने व सभीको सुखी एवं शान्तिप्रिय बनानेका प्रशस्त मार्ग उसके पास है। मानवके अन्दरके दैवी अंशको जगानेका आध्यात्मिक तत्वज्ञान उसके पास है। आत्माको उत्तरोत्तर सुसंस्कारित कर, परमात्मतत्वके साथ तादात्म्यकी अनुभूति करानेकी क्षमता उसमें है। जबतक मानव समाज अपने इन आध्यात्मिक जीवन मूल्योंकी पुनःस्थापना करनेमें सफल नहीं होगा, तबतक आधुनिक संहारक अस्त्र-शस्त्रोंके निर्माणकी होड़, विश्व युद्धकी विभीषिका एवं विनाशकी ओर जानेका भवितव्य दूर नहीं होगा। कारण, परस्पर द्वेष व विनाशकी भावना ही स्वार्थका कारण होती है, व भौतिक सुखकी लालसासे ही स्वार्थ तथा मानवके अन्दरकी पाशविक वासनाको आमंत्रण मिलता है। आजका मानव दुर्भाग्यसे इस विनाशकी दिशामें बढ़ता जा रहा है व इसी कारण आपसी विद्वेष व संघर्षमें उलझता ही जा रहा है। मानवकी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

इस भयानक स्थितिसे मात्र धर्मके द्वारा ही रक्षा हो सकती है। आज इसी धर्मके तत्वज्ञानका प्रतिपादन करना आवश्यक है। स्नेह व आत्मीयता, प्रेम तथा सद्भावयुक्त जीवन बिताना ही हिन्दू धर्मका श्रेष्ठ तत्वज्ञान है। इन्हीं गुणोंपर आधारित जीवन रचना ही, जिसमें ईर्ष्या, द्वेष, कलह व संघर्षको कोई स्थान है ही नहीं—एक श्रेष्ठ जीवन रचना है। नेपाल अपनी इसी जीवन रचनाके आधारपर समयके अनुसार पञ्चायत प्रजातंत्रकी पद्धतिको स्वीकार करनेसे गौरवान्वित हुआ है।

आज के विश्व-संघर्ष के युगमें सुखी मानव जीवनके लिए हमें इस श्रेष्ठ तत्वज्ञानका प्रतिपादन व परिचालन करना आवश्यक है। पहले भी सम्पूर्ण विश्वमें "वसुधैव कुटुंबकम्" का रूप लेनेवाला यह तत्वज्ञान परिचालित हुआ था। अनेक प्रचारक विभिन्न देशोंमें जाकर इसका परिचालन करनेमें सफल हुये थे। नेपालकी सुपुत्री राजकुमारी भ्रुकुटीका नाम इसमें उल्लेखनीय है। उसीके कारण तिब्बत, चीन, मंगोलिया तक इस उच्च सांस्कृतिक जीवनका अनुसरण होता आया था। पश्चिमके अनेक देशोंमें व पूर्व एशियामें भी हमारी संस्कृतिके प्रचारके अवशेष आज तक देखनेको मिलते हैं। कम्बोडियाके उत्खननमें शिव, उमा, शेषशायी विष्णु, ब्रह्मा, गणेश, स्कंद, नंदी व बुद्ध आदिकी प्राचीन मूर्तियां मिली हैं। अंकोरके विशाल मन्दिरमें संस्कृतके शिलालेख, रामायण और देवासुर संग्रामके चित्र आदि व ब्रह्मा, विष्णु तथा महेशकी मूर्तियां भी मिलती हैं। थाईलैंडमें तो हिन्दू संस्कृति व संस्कृत भाषाका

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्पष्ट प्रभाव देखनेको मिलता है। चम्पा अर्थात् अनाममें सभी शिलालेख संस्कृत भाषामें पाए जाते हैं। वहां हिन्दू व बौद्ध मन्दिर नेपाल जैसे साथ-साथ हैं। फिलिपाइन्समें भी इसी हिन्दू जीवनका प्रभाव मलाया व जावा जैसा ही पड़ा है। उनकी भाषा व बोलचालमें संस्कृत शब्द प्रचुर मात्रामें मिलते हैं। बोर्नियोके मूल निवासियोंके आचार व्यवहार, भाषा व मन्दिर आदिमें हिन्दू धर्मका प्रभाव स्पष्ट झलकता है। इतना ही नहीं तो जापानके मन्दिरोंमें भी धर्मचक्र, मणिबन्ध, कमलदल व तांडवके चित्र आदि अंकित हैं। मन्दिरोंके गुम्बजमें कलश व चक्र अंकित पाए जाते हैं। सैकड़ों चित्र हिन्दू कलाके आधार-पर हैं। चीनमें भी हिन्दुओंके जैसे सूर्यको अर्घ्य प्रदान करनेकी व पितरोंका श्राद्ध करनेकी प्रथा पायी जाती है। मैत्रेय, अश्वघोष, नागार्जुन, वसुबन्धु, कुमारजीव आदि ग्रंथकारोंके संस्कृत ग्रंथका चीनी भाषामें अनुवाद हुआ है। इसलिए यह स्पष्ट है कि अपने इस दक्षिण पूर्व एशियामें हिन्दू संस्कार पर्याप्त मात्रामें पहुंच चुके हैं। वास्तवमें हम सबकी एक ही आध्यात्म प्रवृत्ति रही है। यह एक ऐसा सूत्र है, जिसको अपने जीवनसे कभी भी पृथक् नहीं किया जा सकता। यह प्रवृत्ति जहां-जहां है, वहां-वहां उसका स्मरण करानेवाले ऐतिहासिक, धार्मिक स्थान, नाम व महापुरुषोंके प्रति श्रद्धा सदैव अटूट रहती है। वे ही हमारी एकताके सूत्र आज भी हैं।

जापानके बौद्धोंकी आज भी सारनाथ, बुद्धगयाके दर्शनकी अभिलाषा रहती है। नेपालके हिन्दूको भी गंगास्नान, काशी-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वास, व कन्याकुमारीसे काश्मीर तकके पुण्य स्थानोंका दर्शन करनेकी जीवनकी एक अभिलाषा व प्रेरणा रहती है। भारतके हिन्दूके लिये हिमालयका आकर्षण, पशुपतिनाथ एवं मुक्ति-नाथका दर्शन एक चिर आकांक्षा रहती है। संसारके किसी भागके निवासी होनेपर भी हिमालयका आमंत्रण उसको सदैव प्रेरित करता ही है। इतना ही नहीं तो अमेरिका, इंग्लैंड व अन्य पाश्चात्य यूरोपीय देशोंमें भी जहां-जहां हिन्दू संस्कृतिकी पावन गंगा पहुंची है, कभी विवेकानन्दके माध्यमसे, कभी रामतीर्थके संदेशसे वहांके जनजीवनको एक आवश्यक मोड़ मिला है। उसके पश्चात् वहांसे भी भगिनी खीस्टाईन, भगिनी निवेदिता, एनीबेसन्ट व मीराबेन, गंगाके पावन तटपर जन्म-जन्मान्तर व्यतीत करनेकी अभिलाषा लेकर ही इस पवित्र हिन्दू-भूमि, पुण्यभूमिमें, कर्मभूमिमें आयी हैं, यह इतिहासने हमें दिखाया है। सत्प्रवृत्तिकी, आध्यात्मिक प्रवृत्तिकी भूख पुनः जागृतकर एक प्रचण्ड सात्विक हिन्दूशक्तिका जागरण आज आवश्यक हुआ है। आज प्रत्येक हिन्दूमें समयानुकूल नवीन चेतना उत्पन्न कर अपनी जीवन रचनाका आदर्श विश्वके सम्मुख खड़ाकर पुनः आत्मासे परमात्माकी ओर बढ़नेका तत्वज्ञान व उस आधारपर व्यवहारमें निपुण, ऐहिक अभ्युदयशील मानवका सफल जीवन प्रत्यक्ष चरितार्थकर दिखानेकी आकांक्षा जागृत करनेकी आवश्यकता है। अपने श्रेष्ठ तत्वज्ञानके आधार-पर स्नेह व पारिवारिक आत्मीयतायुक्त जीवनका अभ्यास होकर उसके द्वारा सम्पूर्ण विश्वके लिये कल्याणकारी होनेवाले

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वातावरण व उस तत्वज्ञानका सृजन हमें ही करना होगा। अपने जीवनको आदर्श रूपमें उपस्थित कर आज भी अपनी विश्वबन्धुत्वकी श्रेष्ठ कल्पनाको साकार बनानेमें अमूल्य सहयोग देनेके लिए हिन्दूधर्मावलम्बी ही समर्थ है। नेपाल इसीके लिए अपनेको हिन्दू अधिराज्य घोषित कर अग्रसर होनेमें गौरवका अनुभव करता है। नेपालको पता है कि विश्वका प्रत्येक हिन्दू नेपालको एक स्वतन्त्र सार्वभौम हिन्दू अधिराज्यके रूपमें देखकर आनन्दित होता है, गौरवान्वित होता है। नेपालको इस पर अभिमान है व आज भी सम्पूर्ण हिन्दुओंके लिये आश्रय-स्थान देते रहनेका प्रयत्न नेपालद्वारा हो रहा है।

इसके लिए आवश्यकता है, हम सभी हिन्दुओंको एक सूत्रमें बंधकर, एक शक्तिके रूपमें खड़ा होनेकी। उस सूत्रबद्ध शक्तिको खड़ा करनेका सफल प्रयास "राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ" नहीं कर रहा है ऐसा नहीं कहा जा सकता। आज धर्म ही हमारा जीवन है। उस धर्म से अलग होकर, उसके प्रति उदासीन होकर, हम बच नहीं सकेंगे।

नेपालके लिए भारतके राजदूत महामहिम श्रीमन्नारायण द्वारा प्राप्त उनकी लिखित "भारतीय योजनामें समाजवाद" नामक पुस्तककी भूमिकामें स्वर्गीय पं० जवाहरलाल नेहरूने भी कहा है, "हमें इस तथ्यका विस्मरण नहीं करना चाहिये कि हमारा सर्वप्रमुख उद्देश्य व्यक्ति-व्यक्तिके आभ्यन्तरिक सद्-गुणोंका, जिसके पार्श्वमें धर्मकी भावना भी सन्निहित है, विकास करना है।" प्राचीन, महान् व विशाल हिन्दूधर्मके सदस्यके

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नाते आज हम सबको अपने हिन्दूत्वपर गौरव व अभिमान है। सम्पूर्ण विश्वके विभिन्न देशोंमें बसे हुए सम्पूर्ण हिन्दुओंके जीवनको आश्वस्त कर, उन्हें प्रखर, तेजस्वी, बलशाली, आदर्श जीवन जीनेकी प्रेरणा देने योग्य बनानेका दायित्व अपनी हिन्दू-भूमिमें निवास करनेवाले हम लोगोंपर ही है। इस सत्यको समझकर यहांके निवासियोंको सुसंगठित स्वरूप देनेके कार्यमें संघ संलग्न है, यह जानकर हमें प्रसन्नता होनी स्वाभाविक है। अखिल विश्वके हिन्दुओंकी यह सात्विक, अनुशासित, चारित्र्य सम्पन्न, प्रभावी शक्ति खड़ी करनेके अपने इस उद्देश्यकी लक्ष्यप्राप्तिमें संघ पूर्ण सफल हो, यही हम सबकी शुभेच्छा होनी चाहिये। विश्वके सम्पूर्ण हिन्दूमात्रके प्रतिनिधिस्वरूप एकमात्र सार्वभौम सत्ता सम्पन्न, स्वतन्त्र नेपाल हिन्दू अधिराज्यकी ओरसे हम नेपाली भी इस गतिशील हिन्दू शक्तिको सहयोग करनेकी कामना करते हैं व भगवान् श्री पशुपतिनाथ एवं माता गुह्येश्वरीसे प्रार्थना करते हैं कि इस कार्यको सफल बनाकर आदर्श हिन्दू तथा मानव-जीवन प्रस्थापित करनेका आशीर्वाद प्रदान करें।

धन्यवाद।

२०२१, माघ १ गते — जय नेपाल! जयहिन्द!

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री ५ महाराजाधिराज महेन्द्र वीर विक्रम शाहदेवद्वारा भारतस्थित तीर्थराज प्रयागमें कुम्भ पर्वके सुअवसरपर सर्वप्रथम होनेवाले 'विश्व हिन्दु सम्मेलन' के लिए प्रेषित शुभ-कामना सन्देश

सभापति महोदय,
हिन्दूधर्मावलम्वी मित्रगण,
उपस्थित महिलाएं तथा सज्जनवृन्द,

मित्रराष्ट्र भारतके पुण्यक्षेत्र प्रयागके त्रिवेणीतटमें युग-युगान्तरोंसे अनुष्ठान किए जानेवाले कुम्भके इस मेलेमें सर्व-प्रथम समस्त विश्वके हिन्दू प्रतिनिधिवर्गोंके द्वारा सम्मिलित रूपसे हिन्दूत्वके गौरव और महत्त्वको प्रकाशित करनेके उद्देश्यसे होनेवाले आजके सम्मेलनको नेपाली जनताकी ओरसे तथा अपनी ओरसे भी हार्दिक स्वागत करते हुए आजकी इस वृहत् सभामें स्वयं उपस्थित होकर अपने भावोंको प्रकट करनेका अवसर नमिल सकने पर भी नेपाल त्रिभुवन विश्वविद्यालयके उपकुलपतिके नेतृत्त्वमें भेजे गए नेपाली मण्डलके द्वारा कतिपय शब्दोंको अभिव्यक्त करनेका सुअवसर पानेके कारण मैं गौरवान्वित हूँ।

आज संसारमें भौतिकवाद और अध्यात्मवादका परस्पर महान् संघर्ष चल रहा है। वैज्ञानिक जीवनको ही सुखमय

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रसमय एवं आनन्दमय समझने वालोंसे भी ध्वंसात्मक विस्फोटक और घातक विषैली वस्तुओंके आविष्कारसे तथा पारस्परिक खींचातानीसे आखिर क्या होगा और किस परिणाम पर पहुँचना पड़गा इसकी चिन्तासे इन जटिल समस्याओंकी उलझनसे निकलनेके लिए हरतरह से प्रयास हो ही रहा है। पर बीचमें यदाकदा आशाजनक परिस्थितिके प्रस्तुत रहते हुए भी स्थायी रूपसे कुछ भी समाधान हो नहीं सका है यह कहना भी अत्युक्ति न होगी।

हमारी समझमें केवल भौतिकवादके आधार पर विश्व-शान्तिकी नींव किसी भी तरह ठोस तथा मजबूत नहीं बन सकेगी। अध्यात्मवादमें हमारे पूर्वज हिन्दू बहुत पहलेसे ही उच्च स्थितिमें प्राप्त नहुए हों एसी बात नहीं है। उस समय-में ही 'एकं सद् विप्रा वहुधा वदन्ति' 'सर्वभूतहिते रताः' एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' आदि महान् सिद्धान्तोंको प्रतिपादन करने-में हमारे पूर्वज समर्थ हो चुके थे। इसीसे न केवल मनुष्यों-में प्रत्युत कीट-पतङ्गों, चर-अचरों तथा समस्त प्राणियोंमें एकमात्र चैतन्यशक्तिको देखनेमें हम समर्थ हुए थे। परमात्म प्राप्तिको ही जीवनका परम साधन माना जाता था। इसी-से त्याग, सरलता तथा निष्कामकी त्रिवेणीका अविरल प्रवाह बहता था। आज उन्हीं महान् सिद्धान्तोंके वैज्ञानिक अनुसन्धान परिशीलन एवं प्रयोगकी अधिकतर आवश्यकता अनुभूत हो रही है। इसीलिए यदि **'विश्व-हिन्दू सम्मेलन'** विश्वशान्तिकी महती समस्याको व्यावहारिक तथा शान्तिपूर्ण ढङ्गसे सांस्कृतिक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्रोतके द्वारा सुलझा सके तो यह एक बहुत बड़ी देन होगी यह निर्विवाद है। इस दृष्टिसे भी हम सभी नेपाली इस सम्मेलनका स्वागत करते हैं।

'संघे शक्तिः कलौ युगे' यह हिन्दू शास्त्रका एक प्रमाणित वचन है। आधुनिक ढङ्गसे विश्व भरके हिन्दुओंको एक ही सांस्कृतिक सूत्रमें बांधनेका प्रयास भी उतना ही आवश्यक है। किसी संघटित संस्थाकी ओरसे उठी हुई सच्ची आवाज विशेष वजनदार होनेके साथ ही सामान्य तथा प्रभावपूर्ण होती है।

हमारे पूर्वज किसी भी क्षेत्रमें उच्चतम प्रगति न कर चुके हों ऐसा नहीं कहा जा सकता। परन्तु, दैनिक जीवनके व्यवहारों तथा विभिन्न आधारभूत कार्यकलापोंको भी धर्ममें रंगा देनेके कारण आजके दैनिक जीवनमें धर्मका मूलतत्त्व ही प्रायः भ्रान्तिपूर्ण और सन्देहात्मक दृष्टिकोणसे देखा जाने लगा है। कितने अहिन्दू तत्त्वोंके प्रभाव तथा कालगतिके परिणाम स्वरूप बाहरसे घुसे हुए दुराचार तथा रूढियां भी धर्मका अङ्ग मानी जाने लगी हैं। इसी तरह बाह्य आडम्बरमें ही भूलकर भटकनेकी एवं अपने परम्परागत वस्तु विशेष पर हँसी और तिरस्कार करनेकी प्रवृत्ति बढती हुई देखी जाती है। यह बडे दुर्भाग्यकी बात है और जहांतक हम समझते हैं असली बातोंको भी समय और समाजके परिवर्तनके साथ साथ सही रूपमें समृद्ध बनाकर उसमें प्रगति और परिवर्तन करनेमें हमारी असमर्थता ही इसका कारण है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

इस कारण ऐसी स्थितिके प्रति हिन्दूधर्मावलम्बी विद्वत्समाजका भी महान् उत्तरदायित्व है ऐसा हमें लगता है। हमारे आचार-विचारको समयके अनुकूल गतिशील तथा ठोस रूप देनेके उद्देश्यसे ही धार्मिक नियमोंका निर्माण हुआ है। आधारके बिना कोई भी आचार-विचार समाजमें प्रचलित नहीं हुआ होगा। हम हिन्दुओंकी दशकर्मपद्धतिमें कौन सी विशेषता है? क्यों इस तरहकी पद्धति चल पड़ी? इन सब विषयोंपर आजके वैज्ञानिक युगके नवयुवकों एवं बुद्धिजीवियोंको सन्तोषजनक रूपसे समझानेके लिए हमें अध्ययन और अन्वेषण करना होगा। केवल उपेक्षाकी दृष्टिको अपनाकर अपनी संस्कृति तथा सभ्यताकी नींवको हिलने देना कदापि वान्छनीय नहीं है।

इस हिन्दू सम्मेलनमें उपस्थित हुए सभी पण्डित, योगी और विद्वान् महानुभावोंकी एकता इस ओर दृष्टि लगाकर इन सब विषयोंका वैज्ञानिक अन्वेषण करनेके लिए तथा अपने आदर्श पर आधारित जीवनस्तरको उठानेके लिए आधुनिक ढङ्गसे पथ-प्रदर्शन कर सके तो हिन्दूमात्रोंके लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी इसमें हमें कोई शंका नहीं है। हमारा धर्म अनादिकालसे चला आरहा है। अपने भीतर रहे हुए उच्चविचार, उदारता एवं 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की भावनाके कारण विश्वके कई उथल-पुथलोंके बावजूद भी यह धर्म अपने अस्तित्वको अक्षुण्ण रखता हुआ आरहा है। आज भी इसी सनातन धर्मकी प्राणशक्तिको पाकर हमारा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अधिराज्य नेपाल अव्याहत रूपसे विराजमान है। यह कहते हुए हम सब नेपाली गौरवान्वित होते हैं।

हमारा देश हिमवत्खण्डकी तपस्याभूमि है। प्रकृतिकी लीलास्थली और वीर-वीराङ्गनाओंकी पुण्यभूमि है। अनादि-कालसे इसका अक्षुण्ण सार्वभौमिकता और स्वाधीनताका इतिहास है। संसारका सर्वोच्च शिखर सगरमाथा, वैष्णव-मात्रोंकी परम श्रद्धेय पावन शालिग्राम शिलाएं, शैवमात्रोंका परम पावन तीर्थ श्रीपशुपतिनाथ, शाक्तमात्रोंका परम साधन पीठ गुह्येश्वरी और भगवान् बुद्धकी पवित्र जन्मस्थली लुम्बिनी इसी देशमें हैं। देवताओंको प्रिय लगनेवाली कस्तूरी और पितरोंके प्रिय खड्ग पात्र यहीं उपलब्ध होते हैं। आजतक भी यहां हिन्दुओंकी रीतियां पूजा-पद्धतियां तथा आचार-विचार यथावत् मौजूद हैं। इस देशमें धार्मिक कट्टरपन नहीं है। इस देशका इतिहास धार्मिक कलहसे कभी कलङ्कित नहीं हुआ है। यहां सामाजिक भेदभाव पारस्परिक व्यवहारको दूषित नहीं कर पाया है। यहां क्या बौद्ध, क्या वैष्णव, क्या शाक्त, क्या शैव सभीमें समानता है। सभीके पर्वों उत्सव-यात्राओं, मेलों और आमोद-प्रमोदके अवसरोंमें सभी सम्मिलित होते हैं। हिन्दूमात्रोंकी परम पूज्य गो-माताका वध यहां नहीं होने पाता। और भी श्रुति-स्मृतिके नियमोंको आज भी यहां वही मान्यता है। नेपालकी राजकुमारी बौद्ध अध्यात्म जगत्-में **'भृकुटी तारा'** के रूपमें प्रकाशमान हुई है। इसी देशमें महाराज जनकने अध्यात्मक दर्शनका समुज्ज्वल उदाहरण

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रस्तुत किया था। जनकनन्दिनी सीताकी मातृभूमि बननेका महान् सौभाग्य भी नेपालस्थित जनकपुरको ही मिला है। गार्गी तथा मैत्रेयी जैसी विदुषी नारीरत्नोंके साथ महर्षि याज्ञवल्क्यका संवाद यहीं हुआ था। जड़ भरत ने यहीं पर पुलस्त्य ऋषिके आश्रमके निकट कृष्णा गण्डकीके तट पर तपस्या की थी। वात्स्यायनका कामसूत्र इसी देशमें पोखरा नगरके समीप लिखा गया माना जाता है। इतना ही नहीं कुछ ही वर्ष पहले की बात है हमारे नेपालमें ही महर्षि वाल्मीकिका आश्रम पाया गया जो सर्वजनसमक्ष है। इसी आश्रमके नामको लेकर उस समय भारतके स्व० प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरूकी अनुमतिसे बिहार सरकारके निर्णयानुसार बिहार प्रदेशके **'भैंसालोटन'** नामक स्थानका नामकरण 'वाल्मीकि आश्रम' के रूप में किया गया था जो हालहीकी एक ताजी घटना है।

इस प्रकार संसारके हिन्दुओंका एकमात्र गौरवका प्रतीक नेपाल और नेपाली समाज फूले फले यह भावना किस हिन्दूके हृदयमें न होगी ? इस प्रकारका अनुभव मुझे अभी हालहीके भारत-भ्रमणसे प्राप्त हुआ है। इसके लिए मैं भारतवासियोंका अनुगृहीत हूं। नेपाल तथा मित्रराष्ट्र भारतमें विकसित हुए मूर्तिकला, वास्तुकला, चित्रकला एवं संगीत आदि विभिन्न विषयोंमें परस्पर बहुत कुछ समन्वय पाया जाता है। साथ ही नेपालमें विभिन्न संस्कृतियोंके सम्मिश्रणसे एक विशेष मौलिक सांस्कृतिक रूप पाया है जिसकी वजहसे यहां सहिष्णुता

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

है और आवश्यकताके अनुसार जिस किसी भी तरहके सामाजिक परिवर्तनको अपनानेकी उदारता है।

मित्रराष्ट्र भारतके साथ हमारा सांस्कृतिक आदान-प्रदान प्राचीन कालसे चला आरहा है। हमारा देश प्रायः सभी समय विद्वताका केन्द्रविन्दु होता रहा है। समय समय पर भारतके ऊपर सांस्कृतिक आघात होने पर कई भारतीय विद्वानोंको नेपालने आश्रय प्रदान किया था। भारतमें नष्ट भ्रष्ट हुए हिन्दुओंके कई अनुपम ग्रन्थरत्नोंको नेपालमें संरक्षण प्राप्त हुआ है। भारतमें लुप्त हुई कई कलाकृतियोंका नेपालमें ही विकास हुआ। यहांके कई नेपालियोंने भारतका काशी और अन्य नगरियोंमें जाकर शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की और आज भी प्राप्त कर रहे हैं। चार धाम यात्रा, काशीवास, गयाका पिण्डदान और प्रयागका त्रिवेणी स्नान आदि बातों पर नेपाली मात्रोंको जितनी श्रद्धा है उतनी ही श्रद्धा भारतीयोंको भी नेपालके तीर्थोंके प्रति है। श्री पशुपतिनाथके दर्शनके लिए प्रतिवर्ष महाशिवरात्रिके पुण्य पर्व पर आनेवाले भारतीय धर्मप्राण यात्रियोंकी बहुलता ही इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। संक्षेपमें कहें तो सनातन धर्म इतना उदार है कि सभी मतोंके अनुयायी नेपालमें समाए हुए हैं। अनीश्वरवादियोंसे लेकर ईश्वरवादियों तकके सभी लोग इस धर्ममें सम्मिलित हैं। इसीके संरक्षणका भार आज नेपाल बहन कर रहा है।

हमारा नेपाल आज सनातन धर्मके ही आधार पर दल-विहीन पञ्चायत व्यवस्थाको अपनाये हुए हैं। गौतम बुद्धके

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जमानेमें और लिच्छवियोंके शासन कालमें यह पद्धति खूब फूली फली थी। बड़े महाराज श्री ५ पृथ्वीनारायण शाह-देवने कालू पांडेको प्रधान काजी (प्रधानमन्त्री) के पद पर नियुक्त करते समय पञ्चोंसे ही सलाह ली थी। आधुनिक युगमें भी काल, परिस्थिति और अपने देशकी भूमिके अनुकूल इसी देशकी धरतीकी गोदमें पनपे हुए पञ्चायती राजकी स्थापना हुई है। आज हमारी स्मृतियोंके द्वारा इङ्गित की हुई और आधुनिक मार्ग पर इस व्यवस्थाके द्वारा निर्णीत की हुई राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थिरताका क्रमशः विकास हो रहा है। शक्तिविकेन्द्रीकरणके द्वारा सुदृढ जन-शक्तिको उत्पन्न करना तथा उसके माध्यमसे देशकी सर्वाङ्गीण उन्नति सिद्ध करना इस व्यवस्थाका ध्येय है। इससे भी अधिक प्रत्येक नेपालीके परिश्रमसे नेपालको शक्तिशाली तथा समृद्धि-शाली आदर्श हिन्दूराष्ट्र बनाना है। वेद में उल्लिखित 'सह नौ भुनक्तु' के सिद्धान्तके अनुसार भूमिसुधार योजनाके द्वारा सामान्य जनताके जीवनस्तरको ऊपर उठानेका प्रयास किया जा रहा है। भूख, दरिद्रता, अशिक्षा एवं रोगको निर्मूल करनेके लिए कई योजनाएं कार्यान्वित की जा रही है। अपनी भूमिमें ही उत्पन्न हुई इस पञ्चायत पद्धतिसे अवश्य ही नेपाल और नेपालीका भविष्य उज्ज्वल हो सकेगा एवं हिन्दूमात्रोंकी आकांक्षा पूरी हो सकेगी हम सभी नेपालियोंको यही आशा है।

एक शताब्दी से भी अधिक समय तक अन्धकारपूर्ण स्थिति-में रहते हुए भी नेपालने हिन्दुओंके लिए शिवरात्रिके अवसर

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पर अपना द्वार उन्मुक्त रक्खा था। पूर्वकी ओरसे सप्तकोशियों, पश्चिमकी ओरसे सप्तगण्डकियों तथा कर्णाली (सरयू) नदीके द्वारा घिरा हुआ, हिमाच्छादित पर्वतमालासे सुशोभित यह देश हिन्दूमात्रोंको आह्वान करता है और अपने आदर्शको अक्षुण्ण रखनेमें सभीसे निष्पक्ष तथा समान सहयोग और सद्भावना प्राप्त करनेकी आशा रखता है। आज ऐसे महान् सुअवसर पर तीर्थस्नानके साथ ही अपने हिन्दूमित्रोंके इस महान् सम्मेलनमें सम्मिलित होनेकी हमारी आकांक्षा कारणवश पूरी न हो सकी इसके हमें खेदका अनुभव होना स्वाभाविक ही है। तथापि मैं आश्वासन देना चाहता हूँ कि जब हम सभी हिन्दू भाई सारे संसारका कल्याण चाहते हैं तो हिन्दूमात्रोंके अभ्युदय और उन्नतिमें हम सभीको कितनी प्रसन्नता होगी यह कोई कहनेकी बात नहीं है। अन्तमें आजके इस सम्मेलनके सभी परिश्रमी आयोजक महानुभावोंसे लेकर उपस्थित हुए सभी मित्रोंको हार्दिक धन्यवाद समर्पित करता हुआ इस सम्मेलनकी पूर्ण सफलताके लिए श्री पशुपतिनाथसे प्रार्थना करता हूँ।

धन्यवाद !

वि० सं० २०२२, माघ ९ गते।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दांग (नेपाल) में आयोजित बृहत् आध्यात्मिक सम्मेलनमें श्री ५ महेन्द्र द्वारा दिया गया उद्घाटन भाषण

सभापति महोदय,
उपस्थित महिला तथा सज्जनबृन्द,

आज संसारमें मानव मात्रके सर्वाङ्गीण उन्नतिके लिए विश्वशान्तिकी जब विशेष जरूरत है, इसप्रकार शायद सर्व-प्रथम इस जिलेमें ऐसा आध्यात्मिक सम्मेलनको संबोधन कर पाने और उपस्थित सभीका स्वागत करनेमें मुझे बहुत हर्ष हो रहा हैं।

आत्मा समान होता है, सर्वव्यापी होता है और सर्वत्र होता है, यह बात हिन्दूधर्मावलम्बी बच्चे-बच्चेके लिए भी कोई नई बात है ऐसा मुझे नहीं लगता फिर भी अध्यात्म विषय इतना गहन है कि इसकी व्याख्या कलम-सियाहीसे कहनेके बजाय शायद जो अपने आचार-विचार और अनुशासित जीवनद्वारा जितना अनुभव कर सकता है वही अधिक जान सकता है, जैसा लगता है। इसी कारण, यह देश, काल, धर्म या जाति विशेषमें ही सीमित रहनेवाला छोटा और संकुचित वस्तु नहीं है, ऐसी कहनेमें अत्युक्ति नहीं होगी। अनन्त, महान् और घनत्व द्वारा प्राकृतिक ढंगसे सम्बन्धित इस विषयमें नश्वर मानव मस्तिष्कसे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

निश्चय करते समय विभिन्न समयमें, विभिन्न देशमें, विभिन्न तरहसे मानव समाजमें इसका प्रयोग और प्रतिपादन भी विभिन्न ढंगसे होना अस्वाभाविक नहीं है इस कथनके बारेमें भी हमारे तत्वदर्शी पूर्वजोंका मन्तव्य भी हमारे सामने है ही। यह भी, जहांतक मुझे लगता है, स्वाभाविक बात है और किसी भी वस्तुका परिवर्तन करते ही प्रगति भी तो नहीं होता। इसीसे होगा, हिन्दू धर्म अति विशाल है, और हम हिन्दूलोग धार्मिक सहिष्णुता और विचार स्वतन्त्रताको सदैव काल और परिस्थिति अनुसार मानव जीवनका अभिन्न अंग समझते भी हैं। उपमाके रूपमें कहते तो, जैसा कि—विभिन्न रंगकी गाय, चाहे वे जिस किसी भी रंगकी हों उन सभीके दूधका रंग कदापि रंग बिरंगका नहीं हो सकता। इसी प्रकार ही, चाहे किसी भी रंगका जलने-वाला तेल अथवा विभिन्न आकार प्रकारके बत्तीका सूत हो जब वे जलते हैं तब उनमें सभीमें अन्धकारको दूर कर सकने की पवित्र क्षमता होती है, उसी प्रकार विभिन्न धर्म और दर्शन होनेपर भी उन सभीका सार एक ही है, देश, काल, अवस्था अनुसार विभिन्न बुद्धि और रूचिके सन्तुष्टिके लिए ही उनका रूपरंग विभिन्न हुआ है, इस सत्यका प्रतिपादन और परिशीलन आदिकालसे ही हमारे प्रातःस्मरणीय ऋषि-मुनियोंने भी हम-लोगोंको इसी हिन्दू धर्ममें नसिखाया हो ऐसा नहीं लगता। इतना ही नहीं, हमलोगोंको इसी हिन्दू धर्मने पत्थर, लकडी, आग, पानी, आकाश, पृथ्वी, पेड-पत्ते, कौवे और कुत्तो तकको भी पूजा करने, घृणा नकरनेकी शिक्षा दी है और अभी भी हम

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बहुतसे लोग समय-समयमें शायद ऐसा कर भी रहे हैं। यह विचारकी महानता है। यह नीचता और संकुचित भावना नहीं है, यही प्रजातन्त्रका मूल सार भी है।

इसी सारका ठीक तरीकेसे समाजमें प्रयोग करनेके लिए हमलोगोंने दलविहीन पंचायती प्रजातन्त्र अपनाया। आज संसारने भी क्रमशः हमारी नीतिको पहचानना शुरू किया है, यह हम सभी नेपालियोंके लिए सन्तोषकी बात है।

इस सत्य एकता और समानताके परिपालनको मानव भ्रातृत्व और विश्वशान्तिके लिए आजके संसारमें और भी अधिक समझकर मान्यता देनेकी जरूरत है, ऐसा मैं समझता हूं। संयुक्त राष्ट्रसंघके घोषणापत्रमें भी इसपर विशेष जोर दिया है जिसे हम सब जानते हैं।

इतना होते हुए भी यह अफसोस की बात है कि हम जिस हिन्दू धर्मका घमण्ड करते हैं, हममें एकता नहीं हैं, समष्टिकरणकी कमी है। दुखःद बात है, क्षणिक सुख और स्वार्थके लिए आदमी अनुशासन और नैतिकताको एक तरफ फेंककर न खुद कुछ करते हैं, न दूसरों द्वारा किया हुआ ही सहते हैं, इतना ही नहीं, दूसरोंको सतानेके लिए भी उद्यत होते हैं, अनावश्यक बातमें दूसरोंकी निन्दा, द्वेष भी करते हैं, यह दुःखकी बात है। यह मानव समाजके उन्नतिका मार्ग नही है, अवनतिका मार्ग है, कहना पड़ता है और किधर-किधर अपना मूल लक्ष्य, आदर्श और महानताको भूलकर हम उलझ गए हैं, ऐसा लगता है। इस सत्य बातको माननेके लिए हमें शर्म नहीं करनी चाहिए

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बल्कि समयमें ही ठीक ढंगसे सम्हलना पड़ेगा ऐसा मेरा सभी उपस्थित बिद्वान बर्गमें विशेष अनुरोध है।

मानता हूं, हमें आजके आधुनिक संसारमें रहकर वैज्ञानिक, भौतिक उन्नतिको भी अवहेलना करना उचित नहीं है और ईश्वरके सृष्टिमें कौन व्यक्ति ऐसा होगा जो अपनी उन्नति नहीं चाहता, लेकिन आदमीका लक्ष्य भौतिक उन्नति मात्र ही होनेपर वास्तविक एवं स्थायी उन्नति संभव नहीं होती, केवल इसीसे हम कोई भी मानसिक शक्ति और सन्तोष कदापि नहीं पा सकते। इसीसे हमारा लक्ष्य अवश्य भी विज्ञानके साथ साथ आत्मज्ञान और धर्म साधनकी ओर एवं नैतिकतामें आधारित भौतिक उन्नतिके तर्फ भी होना चाहिए, यही हिन्दू धर्म और दर्शनकी मूल शिक्षा है, यही मेरी धारणा भी है। इसलिए, आज यहां उपस्थित तथा विश्वके सभी हिन्दू धर्मावलम्बी विद्वान् महानुभावोंसे फिर अपील करता हूं कि हिन्दू धर्मके विशाल निचोड़को वर्तमान समय और परिस्थिति अनुकूल बनाकर सांसारिक दैनिक जिवनमें अपनानेकी चेष्टा सभी द्वारा होनेकी आवश्यकता है, जिससे कि मानव समाजका अधिक कल्याण हो, उन्नति हो। इस महान् कार्यमें संभव सहयोग और सहायता करनेमें नेपाल और नेपाली पिछे नहीं रहेंगे और इस कामके लिए इसी सम्मेलन द्वारा एक स्थायी समिति बने ऐसा भी मेरा अनुरोध है और आशा करता हूं इसमें सभीकी सहमति भी मिलेगी। जहांतक मैं समझसका हूं, संसारके सभी धर्म और दर्शनकी सारभूत शिक्षा भी यही है, ऐसा लगता

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

है। धर्म, दर्शन और आध्यात्मिकताको अवश्य भी आजके आधुनिक समाज अनुकूल परस्पर मेल, सहयोग और सद्भावना-का प्रमुख साधन बना सकता चाहिए तथा ऐसा होनेमें ही उनकी सार्थकता है और इस हिन्दू धर्मके, गहराईसे, हमारे पूर्वजोंके परिपक्व विचारको ही अपनाकर ढाला जा सकता है, ऐसा भी विश्वास है।

यदि और भी कहा जाय तो हिन्दू धर्म और दर्शन इतना विशाल और उदार है कि किसी भी समयमें भी इसके आधार-भूत सिद्धान्तोंमें समय और समाज अनुकूल विशेष परिवर्तन करके भी अपनाया जा सकता है लेकिन आदर्श जितना भी उच्च और विशाल होते हुए भी उनके उचित मान्यताओंका परिपालन ठीक ढंगसे ठीक जगहमें होने पर ही देश और समाजके लिए उपयोगी हो सकते हैं, यह तथ्य हमलोगोंको कभी नहीं भूलना चाहिए। इस सत्यकी ओर भी यहां उपस्थित सभी विद्वानोंका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं।

इस आदर्श और इसके मान्यताओंके व्यापकताको अभी और आधुनिक ढंगसे, अन्ध-विश्वासको त्याग कर स्पष्ट करनेमें और उसका परिपालन करने करानेमें यह आध्यात्मिक सम्मेलन महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा ऐसा आशा और विश्वास मैंने रक्खा है।

अन्तमें, अधिक समय नहीं लेना चाहता, और मुझे भी आज ही काठमाण्डू पहुंचना है, इसीलिए यहां एकत्रित अध्यात्म-प्रेमी विद्वान् महानुभावों और उपस्थित सभीका हार्दिक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अभिवादन करते हुए इस सम्मेलनके कर्मठ आयोजकों और खासकर योगी श्री नरहरिनाथजीको हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

दांग, पश्चिम नेपाल।   **जय नेपाल!**
चैत्र १, २०२२ बि. सं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हिन्दू राज्य—नेपाल

साधु-सन्तों और ऋषि-मुनियोंका आश्रम

पुण्यतोया हिमालयके गोदमें अवस्थित नेपाल एक स्वतन्त्र हिन्दू राष्ट्र है। सनातन कालसे यह हिन्दूधर्मावलम्बी साधु-सन्तोंका प्रिय वासस्थान रहा है। यहींके गिरी-कन्दराओंकी एकान्ततामें अनेक तपस्वियोंने अनेक शास्त्रों और पुराणोंकी रचना की। वैदिक आख्यानों एवं उपनिषदोंका जन्मस्थल यही रहा है, यदि ऐसा कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

संस्कृत-व्याकरणके रचयिता पाणिनि गण्डकी तटपर अवस्थित रीढी ग्राममें रहते थे। इसीप्रकार दुर्वासा ऋषिका तपश्चर्या-स्थल इसीके आसपास गण्डकी सिंचित किसी गिरि-गह्वरमें था, ऐसा सिद्ध हो चुका है। वाल्मीकि ऋषिका आश्रम भी भैंसालोटनके पास गण्डक नदीके तटपर था।

विदेह जनकका राज्य यहींपर था। यहीं संसारको शान्ति और अहिंसाका पाठ पढानेवाले गौतम बुद्धका जन्मस्थल था। जनककी राजधानी जनकपुर और बुद्धका जन्मस्थल लुम्बिनी आज भी समस्त हिन्दूओंके लिए तीर्थस्थल बना हुआ है। आज भी विवाह पंचमीके अवसर पर जनकपुरमें और बुद्ध-पूर्णिमाके दिन लुम्बिनीमें धर्मावलम्बियोंकी अपार भीड़ उमड़ पड़ती है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यही नहीं महाशिवरात्रिके अवसरपर भगवान श्री पशुपतिनाथका दर्शन करनेवालोंका अपार समूह हमें यह स्मरण कराता रहता है कि नेपाल सदैव हिन्दूधर्मका केन्द्र रहा है।

भारतमें बौद्ध धर्मके प्रचारसे शैव मतका क्रमशः क्षय हो रहा था और सनातन धर्मका ह्रास हो रहा था। फलतः जगद्गुरू शंकराचार्यने नेपालमें आकर पशुपतिनाथके मन्दिरकी स्थापना की। ऐसा आख्यान है कि अभी जहां भगवान पशुपतिनाथका लिंग है वहां पहले पारस लिंग था। जिससे वहां निरन्तर अग्नि प्रज्वलित होती रहती थी। कामधेनु अपने स्तनसे दूध निकालकर निरन्तर उसका सिंचन करती रहती थी। शंकराचार्यने उसी लिंगको पशुपतिनाथका स्वरूप दिया। प्रारम्भसे ही शक्तिके उपासक नेपालियोंको शंकराचार्यका शैव मत अपनानेके लिए कोई कठिनाई नहीं हुई क्योंकि नेपाली धर्ममें भेद नहीं करते थे। उन्हें बुद्ध और कृष्ण और राम एक ही लगते हैं।

प्रागैतिहासिक भूगोल

अब नेपालको हिन्दूराज्य कह लेने मात्रसे सन्तोषका अनुभव नहीं होता। यह अपने प्रारम्भिक कालसे ही सनातन (हिन्दू) धर्मका जनक और पोषक रहा है यह देखना अपेक्षित है।

सबसे पहले हम प्रागैतिहासिक भूगोलकी ओर जायें। क्योंकि मानव विकासका संबंध भौगोलिक परिवर्तनोंसे होता है और धार्मिक विकासका संबंध मानव विकाससे। यूरोपीय विशेषज्ञोंमेंसे एक विशेषज्ञ इ. एन. फलाइज लिखते हैं—"मानव

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विकासके स्थानोंमें हिमालयकी घाटीके महाभारत श्रृंखला या शिवालिक पर्वतमाला भी मुख्य है, यहां प्रागैतिहासिक समयसे न्यान्डार्टाल मनुष्योंके जैसे पंजर और अस्थि पाए गए हैं।" उन पचास हजार वर्षोंसे लेकर तीस हजार वर्षोंतक मानव विकास किस प्रकारसे हुआ होगा यह केवल अनुमान लगानेकी चीज है। हमारे प्राचीन पुराणोंमें वर्णित महाप्रलय और मानवकी पुनः सृष्टि नजाने इन वर्षोंमें कितनी बार हुआ हो। और नजाने कितनी बार आदिपुरूष मनुने नई सृष्टि की होगी।

सबसे ऊंचे पर्वत श्रेणियोंसे भरे हुए तथा सर्वप्रथम मानव विकास हुए हिन्दूराज्य नेपालको इन महाप्रलयोंका कई बार सामना करना पड़ा होगा। हजारों वर्षोंके बाद जमीनकी उष्णता बढती गई और केवल हिमाच्छादित पर्वतमालाएं वांकी रह गयीं और छोटे-छोटे पर्वत-खण्ड वनस्पतियोंसे भर गए। क्रमशः गंगा, गण्डकी, कोशी जैसी नदियां मैदानकी ओर जाने लगीं और उनके साथ ही क्रमशः यहांके निवासी भी दो भागोंमें बंट गए। एक पहाड़ोंमें ही रह गए जो 'किराती' कहलाए, स्वभावतः उनका जीवन पहाडोंमें संघर्षमय होनेके कारण वे योद्धा बने। जो तराईमें जा बसे, उनका जीवन स्वभावतः शान्त प्रकृतिका बन गया और राजा जनक तथा गौतम बुद्ध जैसे दार्शनिक पैदा हुए।

आर्योंका इतिहास

आजकल इतिहासमें यह सर्वमान्य हो गया है कि भारतवर्षमें आर्य बाहरसे आकर बसे और हम सब उन्हीं पूर्वज आर्यकी सन्तान हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विक्रम पूर्व २००० के करीब तासकन्द-समरकन्दके आर्य यूरोपकी ओर गए। उसके पहले ही इरान, अफगानिस्तान, और कश्मीर होकर हिमशिखरोंके किनारे-किनारे पामीरके पठारसे होकर नेपालमें प्रविष्ट हो चुके थे। तासकन्दसे अलग होतेसमय आर्योंने अपना चिन्ह "स्वस्तिक" (卐) आपसमें बांट लिया था। इरानसे अलग होते वक्त उन्होंने वेद और आवेस्ताके भावोंको बांट लिया। आर्य जैसे पश्चिमकी ओर फैलने लगे वैसे ही पूर्वकी ओर भी फैलने लगे। तासकन्द-समरकन्दके ही वातावरणमें पले आर्य अधिक संख्यामें सिन्धु नदीके किनारे आकर बस गए। पामीरके बर्फमें पले हुए लोग हिमालयकी गोदमें ही त्रिसप्तनदीके बीचमें आकर खेती करनेके बजाय 'वेद' गाने लगे। 'वेद' ही हमारी हिन्दू संस्कृतिका मूल आधार है।

इरान और अफगानिस्तानमें रहते समय आर्य कैसे--किस तरहका विचार करते थे, इसका पता हम 'आवेस्ता' और 'वेद' का तुलना करके कर सकते हैं। 'आवेस्ता' में मुख्य देवता अग्नि हैं--ऋग्वेदमें भी सबसे पहले अग्निकी ही स्तुति है। "अग्निमीळे पुरोहितम्।"

'वेद' संकलन है। इसके रचयिता एक नहोकर कई ऋषि हैं। इसका सम्पादन करके व्यास करके लिखनेवाले वेदव्यास हैं। वैदिक ऋषियोंमें नेपालमें प्रवेश करनेके बाद यहांके वातावरणके कारण कविताका अद्भुत प्रस्फुरण हुआ। प्रकाशको देवता मानना तो साधारण बात हुई। अन्तरिक्षके अत्यन्त बलवान विद्युत्शक्तिको इन्द्र मानने लगे। वेदमें प्रतीकवाद और आलंकारिक उक्तिकी प्रचुरता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्राचीन नाम "हिमाल"

नेपालका प्राचीन नाम 'हिमाल' है। 'नेपाल' शब्दकी उपपत्ति विद्वानोंने बादमें परिस्थितियोंके बस की। गौतम बुद्धसे जब राजा विन्दुसारने पूछा—"आपका घर कहां है?" तो भगवान बुद्धने उत्तर दिया—"मेरा घर हिमवान्के चरणमें है।" उनका तराईको 'हिमालयका चरण' कहना युक्तिसंगत है। प्राचीन पुराणोंमें तपस्याके लिए हिमालयमें जाते थे। भगवती पार्वती हिमालयकी पुत्री थीं। यानि वे हिमालयमें पलीं थी और शंकरका 'किरात' रूप भी 'कितातियों' के घर नेपालमें ही दिखा था। वेदमें इन्द्रको असंख्य स्थानोंपर 'अद्रिक' पर्वतमें वास करनेवाला कहा गया है। इसलिए इस भूमीको बराबर इन्द्रलोक, कैलास, हरिलोक, व वैकुण्ठ भी कहा गया है। अब हिमालयका भाग आधुनिक नेपालमें नहीं है। अभी हमें आधुनिक नेपालको ही पुनः उसी गौरवमय स्थान में पहुचाना है। वैदिक समयमें नेपालका नाम 'हिमाल' ही था।

ऋग्वेदमें हिरण्यगर्भ ऋषि गाते हैं:—

'यस्येमे हिमवन्तो महित्वा'
(जिसकी महिमासे यह हिमवन्त स्थित है।)

पणमय ऋषि कहते हैं:—

'अयं निधिः सरमे अद्रिवुध्नो'
[हे सरमा (इन्द्रकी दूती)! हमलोग इन पर्वतोंद्वारा सुरक्षित हैं।]

पर्वत और हिमालय तक ही सीमित न रहें। नदियोंकी ओर भी दृष्टिपात करें:—

देवताओंको तृप्त करनेवाले सोम सप्त नदियोंकी ओर

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

देखने हैं और पूर्ण होकर नदियोंको भी पूर्ण करते हैं। गयःप्लातः ऋषिके मन्त्रमें :—

"त्रिःसप्त सश्रा नद्यो महीरपो वनस्पतिन्पर्वतां अग्निमूर्तये।
क्रशानुमस्तृन्तिष्यं सधस्थ आ रूद्रं रूद्रेषु रूद्रियं हवामहे॥"

वेदवर्णित ये इक्कीस नदियां सप्तकोशी, सप्तगण्डकी और सप्तकर्णाली ही हैं। हिमवत्खण्ड आदि पुराणोंने भी यही समर्थन किया है। बल्कि सप्त सप्तक नदियां भी इसी देशमें हैं। सिन्धुक्षिप्तैयमेघ ऋषिके सूक्तमें है :—

'प्रसप्तसप्त त्रेधाहि चक्रमुः प्रसृत्वरीणामति सिन्धुराजसा।'

ये सप्त सप्तकी (उन्चास) नदियां इस प्रकार हैं :—

(१) सप्तकोशी, (२) सप्तगण्डकी, (३) सप्तकर्णाली, (४) सप्तमाई, (५) सप्तभेरी, (६) सप्तकाली, (७) सप्तमती।

इन सभी नामोंमें वैदिक समयसे अबतक बहुतसे परिवर्तन हो चुके हैं—श्वेतासे सेती, शुतुद्रिसे सतलज, रसासे रोसी, तृष्टामासे तिष्टा इत्यादि।

विराटनगरके पासकी जमीन प्राचीन कालमें जलमग्न थी। वैदिक कालमें पानी घटता गया और वैदिक ऋषियोंने उसका नाम 'वराहक्षेत्र' (वीरपुर-धरानके बीच) दिया जहां अब भी प्रतिवर्ष भारी मेला लगता है।

जिस समय भारतमें द्राविड़ सभ्यता फैला हुई थी नेपालमें किरात-सभ्यता थी। आर्य सर्वप्रथम पश्चिम नेपालमें प्रविष्ट हुए। आर्य सभ्यता किरात सभ्यतासे कहीं अधिक परिष्कृत थी। चतुर आर्योंने किरात-सभ्यताको अपने सांस्कृतिक प्रभावसे अपनेमें विलय, मिश्रित कर लिया।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अपने देवता इन्द्रको किरात-सभ्यतामें घुसानेके लिए आर्योंने इन्द्रको आकाशसे लाकर पर्वतपर उतार दिया। ऋग्वेदके शिव और रूद्र यजुर्वेदमें आकर और भी स्पष्ट हुए। सहस्राक्षी इन्द्र शिव हुए——'अद्रिव: इन्द्र' गिरिश पशुपति हो गए और किरातेश्वर और आर्य ऋषेश्वर एक ही हो गए। फिर परमेष्ठी कुत्स प्रजापति आदि ऋषि एक ही स्वरसे गाने लगे——

"पशूनां पतये नम:"——यजुर्वेद।

इन्द्रका केश हरे रंगका था। अब शिवको भी 'हरिकेशेभ्य:' कहने लग गए। शिवका वासस्थान कैलासपर्वत बन गया। पर्वतसे पार्वती हुई और कपिल मुनिके 'प्रकृति पुरूष' दर्शनके आगमनके बाद हिमगिरि पर्वतको अर्द्धनारीश्वरकी मूर्ति 'गौरीशंकर' बना दिया गया।

इसतरह किरात संस्कृतिका आर्य संस्कृतिमें विलय हुआ और क्रमश: दोनोंका रूपान्तर आजके 'हिन्दू'धर्ममें हुआ।

हिन्दूत्वका अस्तित्व

हिन्दूओंका अस्तित्व और संरक्षण नेपालके पुण्यभूमीमें ही रहा। क्योंकि नेपाल कभी किसी बिदेशी शक्तिका दास नहीं रहा। यह सर्वसिद्ध है कि जब भी कोई देश किसी बिदेशी शक्तिका दास हो जाता है उसकी भाषा, संस्कृति, कला और धर्मका उसपर स्थायी प्रभाव पड़ा रह जाता है। जैसे एशियाके बहुतसे देश यूरोपीय साम्राज्यवादसे छुटकारा पानेके बाद भी यूरोपीय संस्कृतिसे छुटकारा नहीं पा सके हैं। भारतमें ही कई

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

संस्कृतियोंका मिश्रण है। यथा मुगल, आंग्ल इत्यादि। और इसीकारण भारत आज अपनेको धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित कर चुका है।

इसके विपरीत नेपाल कभी भी बिदेशी शक्तिके प्रभावमें नहीं आया। सनातन कालसे ही हिन्दूत्वकी अविरल धारा नेपालमें बहती रही। हिन्दूधर्मका यहां निरन्तर विकास और विन्यास होता रहा। और तो और बौद्ध धर्म यहां हिन्दूधर्मसे अलग नहोकर एक ही धर्मसा माना जाता है। बौद्ध धर्मावलम्बी पशुपतिनाथका, दक्षिणकालीका दर्शन करते हैं और शैव धर्मावलम्बी यहां बुद्धको उतना ही मानते हैं जितना राम-कृष्णको। इसलिए यहां धर्ममें समानता है कोई किसी धर्मको हेय दृष्टिसे नहीं देखता।

भारतवर्षमें मुगल आक्रमणके बाद क्रमशः मुस्लिम धर्मका प्रभाव बढ़ने लगा और हिन्दू धर्मपर आघात पड़ने लगा। फलतः भारतवर्षके कई धार्मिक पण्डित एवं सन्त नेपालमें आए और यहीं बस गए। इनमेंसे सबसे प्रसिद्ध और उदाहरणीय सच्चिदानन्द भट्ट हैं। ये मुसलमानोंद्वारा कान्यकुब्ज जीत लिए जानेके बाद वेदोक्त धर्मका नाश होता देख पवित्र क्षत्रिय राजाद्वारा शासित राज्य जुम्ला (पश्चिमोत्तर नेपाल) में आकर बस गए। उस समय जुम्लामें राजा रणकेशरसिंह राज करते थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सनातनकालसे ही स्वतन्त्र होनेके कारण नेपालमें किसी बिदेशी धर्मका प्रभाव नहीं पड़ा और हिन्दू धर्म यहां अक्षुण्ण रूपसे विद्यमान रहा। हिन्दू संस्कृति यहां फलती-फूलती रही।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आधुनिक नेपाल

आधुनिक नेपालके निर्माता श्री ५ महाराजाधिराज महेन्द्र वीर विक्रम शाहदेव ने देशमें हिन्दूधर्मको जीवित रखनेके लिए संविधानद्वारा देशको "हिन्दूराज्य" घोषित किया है।

नेपालके संविधानके भाग १, धारा ३ में राज्यकी परिभाषामें उल्लेख है :—

"नेपाल एक स्वतन्त्र अविभाज्य और सार्वभौमसत्ता-सम्पन्न राजतन्त्रात्मक हिन्दूराज्य है।"

हमारे देश नेपालके सर्वोच्च अधिकारके श्रोत श्री ५ महाराजाधिराज होते हैं। "अधिकारका श्रोत श्री ५" की परिभाषा देते हुए इसी संविधानके भाग ५, धारा २० में उल्लेख है :—

"इस संविधानमें 'श्री ५' शब्दसे श्री ५ बड़ामहाराज पृथ्वीनारायण शाहके वंशज आर्य संस्कृतिके अनुयायी हिन्दूधर्मावलम्बी गद्दीनसीन श्री ५ महाराजाधिराजको संबोधन किया गया समझना चाहिए।"

इसप्रकार हम देखते हैं कि हमारे राजमुकुटसे ही देशमें हिन्दूधर्मका संरक्षण हुआ है। इसीप्रकार देशमें इस धर्मका ह्रास नहो इसलिए धर्मपरिवर्तनकी मनाही मुलुकी ऐनद्वारा की गयी है। धर्मपरिवर्तनके लिए प्रेरित करनेवालोंको कड़ी सजा की व्यवस्था है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नेपाल

(एक संक्षिप्त परिचय)

भगवान बुद्ध, तपस्विनी पार्वती, विदेह जनक तथा सती सीता का जन्मस्थान, देवाधिदेव शंकर तथा अन्य कतिपय ऋषि-मुनियोंकी पवित्र भूमि तथा विश्वका एकमात्र स्वतन्त्र हिन्दू राज्य नेपाल आपका हार्दिक स्वागत करता है।

भारत तथा चीन के बीच नगराज हिमालयकी गोद में बसा हुआ नेपाल पूर्वसे पश्चिम तक ५५० मील लम्बा तथा ८० से १५० मील तक चौडा है। तराईकी गर्मीसे लेकर हिमालयकी ठण्डी हवा तक यहां बहती है। संवैधानिक दृष्टिसे नेपाल अधिराज्य एक वैधानिक हिन्दू राजतन्त्र है। समस्त देश १४ अंचलों तथा ७५ जिलोंमें विभाजित है। प्राकृतिक दृष्टिसे इसके मुख्यतः ४ भाग हो सकते हैं—तराई, पर्वत प्रदेश, बडी घाटियाँ तथा हिमाच्छादित शिखर। तराई तथा घाटियोंमें अन्नकी उपज आवश्यकतासे अधिक होती है और पडोसी देशोंमे निर्यात होता है। पर्वत प्रदेश भी अपने लिए पर्याप्त अन्नकी उपज करता है। केवल हिमाच्छादित शिखरोंको ही अन्नके लिए अपने देशके अन्य भागों पर निर्भर होना पडता है। कीमती पत्थर, कस्तूरी तथा बहुमूल्य चमडोंको बेचकर वे भी खुशहाल जीवन व्यतीत करते हैं। प्रश्न है तो केवल घनी आबादी वाले काठमाण्डू जैसे नगरोंका। सम्पूर्ण नेपालकी जनसंख्या लगभग १ करोड है। इसके अतिरिक्त

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सम्भवत: ३० लाख नेपाली भारत, बर्मा, मलेशीया तथा विश्वके अन्य भागोंमें प्रवासी जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

नेपाली विशेषत: हिन्दू या बौद्ध ही हैं। वास्तवमें यहां के हिन्दू और बौद्धमें कोई अन्तर ही नहीं है। शिवका मन्दिर हो अथवा भगवान बुद्धका, प्रत्येक नेपाली श्रद्धापूर्वक सर नवाता है।

नेपालकी राष्ट्रभाषा नेपाली है। इसे सब नेपाली समझते हैं। और इसीमें सरकारी काम होता है। इसके अतिरिक्त कुछ और क्षेत्रीय भाषाएं भी हैं।

सैकडों वर्ष पूर्व हिन्दुस्तानमें ही जब हिन्दुत्वकी नीव हिलने लगी उस समय अपनी आस्था और संस्कृतिके संरक्षण-के लिए राजपूतोंके एक धर्मप्राण राजघरानेने इसी हिमवत्-खण्डको सुरक्षित स्थान समझ कर यहां प्रवेश किया। इतिहास-के एक लम्बे अरसेके बाद छोटे छोटे राज्योंमें बिखरे हुए नेपाल-को करीब २ सौ वर्ष पूर्व उन्हीं के वंशज पृथ्वीनारायण शाहने विभाजित शक्तियोंको एक ही सूत्र में गूंथकर शक्तिशाली नेपालका निर्माण किया। इस तरह लगभग २०० वर्षोंसे शाहवंश नेपालमें शासन कर रहा है। परन्तु इसी बीच करीब १०० वर्ष पूर्व प्रधान अमात्यका पद वंशपरम्परानुगत बना और १९५० तक नेपालमें एकतन्त्रीय राणा शासन रहा।

सन् ५० में राष्ट्रपिता त्रिभुवन वीर विक्रम शाहके ओजस्वी और वीर नेतृत्वमें एक क्रान्ति हुई। जिसमें तत्कालीन युवराजाधिराज (वर्तमान सम्राट्) श्री ५ महेन्द्रने शाही परिवारके अन्य सदस्यों सहित जानकी बाजी लगाकर पूज्य पिताकी आकांक्षाको सफलिभूत बनानेके लिए तन-मनसे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अपनेको न्यौछावर कर दिया। परिणामस्वरूप राणाशाही सदाके लिए धराशायी हुई और नेपालमें प्रजातन्त्रका अभ्युदय हुआ।

परन्तु आवश्यकताके अनुरूप, परम्परा, अनुभव और आदर्शवाद एवं लोकप्रियताके अभावमें एक दशक अन्दर आधे दर्जनसे भी अधिक मन्त्रिमण्डलोंका गठन हुआ। अन्तमें सन् ६१ के तत्कालीन सरकारका विघटन कर पंचायती पद्धतिका शुभारम्भ किया गया।

पंचायत व्यवस्था

पंचायती प्रजातन्त्रमें चार कडियां होती हैं। ग्राम, जिला, अंचल तथा केन्द्र। प्रत्येकमें एक साधारण सभा एवं एक कार्यकारिणीका प्रबन्ध है। प्रत्येक ग्राम सभामें औसतन १३०० सदस्य होते हैं। उन्हींमेंसे गुप्त मतदान द्वारा निर्वाचित ८ सदस्योंकी एक कार्यकारिणी अर्थात् ग्राम पंचायत होता है। चुनावके समय पहली बार निर्वाचित सदस्योंका कार्यकाल गोला प्रथाद्वारा २, ४ तथा ६ वर्षके लिए निर्धारित किया जाता है। तदनुसार प्रत्येक २ वर्षोंमें ३ सदस्य गोला प्रथाद्वारा अवकाश ग्रहण करते हैं। और रिक्त स्थानकी पूर्ति चुनाव द्वारा की जाती है। इसी तरह नगरी क्षेत्रमें भी नगर पंचायतके सदस्योंका निर्वाचन होता है।

जिला सभा :—प्रत्येक ग्राम पंचायतद्वारा अपने निर्वाचित सदस्योंमेंसे एकको तथा प्रत्येक नगर पंचायतके निर्वाचित सदस्योंके तृतीयांश जनप्रतिनिधिके समूहको ही जिला सभाकी संज्ञा दीगई है। इसी जिला सभाद्वारा ११ सदस्यीय जिला

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पंचायतका गठन होता है। निर्वाचित सभापति तथा उपसभापतियोंको दो तिहाई मतद्वारा अविश्वासका प्रस्ताव पारित कर हटाया भी जा सकता है।

अंचल पंचायत :—अंचलके प्रत्येक जिला पंचायतोंके सदस्योंद्वारा अंचल सभाका निर्माण होता है। उसी अंचल सभाके निर्वाचित सदस्योंद्वारा ११ सदस्यीय अंचल पंचायतका गठन किया जाता है। अंचल सभा ही राष्ट्रिय पंचायतके लिए प्रतिनिधि निर्वाचित करती है।

राष्ट्रिय पंचायत :—राष्ट्रिय पंचायतमें १२५ सदस्य होते हैं। जिनमें १४ अंचल सभाओंद्वारा ९०, वर्गीय एवं व्यावसायिक संगठनोंद्वारा १५, स्नातकोंद्वारा निर्वाचित ४, तथा श्री ५ महाराजाधिराजद्वारा मनोनीत १६ सदस्य होते हैं। राष्ट्रिय पंचायत ही राष्ट्रिय व्यवस्थापिका सभा भी हैं। श्री ५ के सरकारके बजेट और योजनामें स्वीकृति देना, सरकारी नीति सम्बन्धी बहस कर निर्णय करना और विभिन्न विधेयकमें विचार विमर्श आदि राष्ट्रिय पंचायतका मुख्य कार्य है। श्री ५ महाराजाधिराज राष्ट्रिय पंचायतके सदस्योंमें-से ही मन्त्रिपरिषदका गठन करते हैं।

यातायात

आधुनिक आवागमनके साधनोंके कारण आज काठमाण्डू ही नहीं अपितु नेपाल अधिराज्यके कई भागोंमें सुगमता पूर्वक जाया जा सकता है। विभिन्न स्थानोंमें रेल, मोटर, बस तथा हवाइ जहाजकी सेवा हमे प्राप्य है। इस तरह आप रायल नेपाल एयर लाइन्स अथवा आई. ए. सी. में

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कलकत्ते या दिल्लीसे लगभग ३ घण्टेमें और बनारस या पटनेसे एक घण्टेंमें ही विश्वके सबसे उच्च पर्वत शिखर सगरमाथा (माउण्ट एभरेष्ट) से सुशोभित इस सुन्दर देशकी राजधानीमें उतर सकते हैं।

रेलसे आनेवाले यात्री भारतके बिहार प्रान्तके चम्पारन (मोतीहारी) स्थित रक्सौल तकका टिकट लेते हैं। रक्सौल नेपाल और भारतकी सीमा पर है। रक्सौलसे ही सीधे काठमाण्डू तक बसद्वारा आ सकते हैं। अथवा ३ मील दूर वीरगंज घोडा गाडी या मोटरद्वारा पहुंचते हैं। वीरगंज एक अच्छासा नगर है। यहां जलपान करके हेटौंडामें दिवा भोजन करना हो तो वीरगंजसे प्रातः ६ बजे हमारी बस या मोटर काठमाण्डूके तरफ चलती है। घने जंगलोंको पार करते हुए लगभग ६ बजे हम हेटौंडा पहुंचते हैं। वीरगंजसे १३ मील दूर सिमरासे भी हम हवाइ जहाजद्वारा काठमाण्डू आ सकते हैं। वीरगंजसे प्रस्थान करनेके बाद हम अमलेखगंज, सिमरा और हेटौंडा होते हुए भैंसे पहुंचते हैं। भैंसे नामक स्थानसे हमारी गाडी पर्वत पर चढती है। फिर क्रमशः लामे डांडा, सिमभंज्यांग (यहां एक दृश्य स्तम्भ है जहांसे आप सैकडों मील फैले हुए हिम शिखरोंको देख सकते हैं) दामनके रास्ते पालुंग तथा टिष्टूंगके लहलहाती उपत्यकाओंके स्वर्गीय सौन्दर्यके साथ ही नैसर्गिक हिमालय के विहंगम दृश्यके पृष्ठभूमिमें हम अनवरत आगे ही बढते हैं।

इस तरह जगह-जगह मनमोहक झरनों, सुन्दर पगडंडियों, दिल लुभानेवाले उपवनों, कल कल करती हुइ नदियों तथा हरे-भरे जंगल और छोटी छोटी बस्तियोंको लांघतेहुए

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

लगभग सवासौ मीलकी यात्राके बाद कुछ थकेसे हम थानकोट पहुंचते हैं।

थानकोटसे काठमाण्डू ६ मील पूरबकी तरफ है। हमारी गाडी हमें लेकर राजधानीकी तरफ बढती है। काठमाण्डू के दक्षिण-पूर्वी भाग त्रिपुरेश्वरमें भी हम उतर सकते हैं। यहां सरकारी गेष्टहाउस तथा धर्मशालाएं हैं। वहांसे केवल पौंने मील आगे बढने पर हम काठमाण्डूकी जुद्ध सडक तथा इन्द्रचोक भी जा सकते हैं। काठमाण्डूमें प्रथम श्रेणीके होटेल तथा साधारण होटेलोंकी भरमार है।

होटेल डे ला अन्नपूर्णा, शंकर, रोएल, स्नो भ्यू, पारस और करोनेशन जैसे कीमती होटेल (नेपाली मुद्रामें प्रति दिन प्रति व्यक्ति रू० ५०।- से रू० १००।- तक) से लेकर महेन्द्र युवालय ललितपुर, और मारवाडी सेवा समिति जुद्धरोड, जैसे प्रतिदिंन ५।- रूपएंसे ही गुजारा होने वाले स्थानोंमें भी निवास-का प्रबन्ध हो सकता है।

काठमाण्डूके विस्तृत राजपथ, गगनचुम्बी अट्टालिकाएं, सिने भवनोंकी रमझम, बाजारकी चहलपहल, इनसे बस, हमारी सारी थकावट जाती रहती है। चारों तरफ पर्वतसे घिरा हुआ होते हुए भी आधुनिक सुखसाधनोंसे परिपूर्ण काठमाण्डू आपको वास्तवमें सुखदायक लगेगा।

आधुनिक चहलपहलसे दूर भगवान् शंकरके निकट ही पहुंचना हो तो सीधे पशुपति भी जा सकते हैं। काठमाण्डूसे पशुपतिनाथका पवित्र मन्दिर केवल २।। मील है, यहां अनेक धर्मशालाएं, अन्य निजी निवास तथा मठ हैं। इनके अतिरिक्त सरकारी तम्बुओंमें भी आप निशुल्क ही आवास सम्बन्धी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आतिथ्य स्वीकार कर सकते हैं। वास्तुकला, चित्रकला तथा अन्य ऐतिहासिक वस्तुओंका भी अवलोकन करना हो तो ललितपुर और भक्तपुर आदि स्थानोंमें जाना आवश्यक है। काठमाण्डूसे ३ मील दक्षिणकी तरफ ललितपुर है। वहां हम कृष्ण मन्दिर, ऐतिहासिक राजभवन, तथागत भगवान् बुद्धसे सम्बन्धित चैत्य एवं अन्य कतिपय स्थानोंमें जा सकते हैं। पाटनसे १ मील दक्षिण-पश्चिमकी ओर चिडियाखाना है।

काठमाण्डूके ऐतिहासिक स्थानोंके ही देखना हो तो काष्ठमण्डप (किंवदन्तीके अनुसार एक ही वृक्षकी लकडियोंसे बना हुआ जिससे काठमाण्डू शब्द बना है) दर्शनीय है। आप निकट ही गद्दी बैठक, तलेजु मन्दिर, भीमसेन थान, मच्छेन्द्र बहाल, नरदेवी तथा कुछ और दूर शोभा भगवती आदि मन्दिरों-का दर्शन कर सकते हैं। काठमाण्डूसे १ मील उत्तर नेपाल सम्राट श्री ५ महाराजाधिराजका नारायण हिटी राजदरबार तथा एक मील पूर्व सेन्ट्रल सेक्रेटरियट (सिंहदरबार) है। १।। मील पश्चिमकी तरफ नेपाल म्यूजियम है। यह म्यूजियम एशियामें एक बिशेष स्थान रखता है। म्यूजियमसे आधा मील उत्तर एक छोटेसे मनोरम पर्वतपर भगवान् स्वयंभुनाथका मन्दिर है। यहांसे काठमाण्डू उपत्यकाका विहंगम दृश्य देखा जा सकता है। काठमाण्डूसे २।। मील उत्तरकी तरफ बालाजु-का मन्दिर है। वहांपर भगवान् विष्णुकी एक विशाल प्रस्तर-मूर्ति जलमें सोयी हुई अवस्थामें है। यहां एक मनोरम वाटिका भी है। साथ ही बाइसे धारा है जहां पत्थरके बाइस नलोंसे निरन्तर जल प्रवाह होता रहता है। बगलमें बड़ेबडे जलकुण्ड भी हैं। निकट ही एक विशाल औद्योगिक केन्द्र है।

Jayatu Sanskritam; Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हम उत्तरमें लगभग ६ मील दूर भगवान नीलकंठ (बूढा नीलकंठ) के दर्शनके लिए जा सकते हैं। रास्तेमें हम जूतेका एक बडा कारखाना भी देख सकते हैं। काठमाण्डूसे ६ मील पूर्वमें स्थित भक्तपुरमें भगवान दत्तात्रय, राजकीय महल तथा अन्य कतिपय दर्शनीय स्थान हैं। काठमाण्डूसे १३ मील दक्षिणमें दक्षिण कालिकाके दर्शनके लिए रोपवे (काठमाण्डू-हेटौंडा रज्जु मार्ग) केन्द्र तथा त्रिभुवन विश्वविद्यालय होते हुए मोटरमें प्रस्थान कर सकते हैं। फर्पिङ्गके निकट बिजलीका एक पावर हाउस भी है। काठमाण्डूके दक्षिण पूर्वमें लगभग ६ मीलकी दूरीपर स्थित रमणीय गोदावरीके लिए भी हम तैयार हो सकते हैं। यहां का शाही वनस्पति उद्यान दर्शनीय है।

श्री पशुपतिनाथके मन्दिरसे १ मील उत्तर भगवान बुद्धका विशाल मन्दिर "बौद्ध" है। यहां पहुंचते ही ऐसा मालूम पडता है जैसे हम एक नयी जगहमें पहुंच गए हों। यहां तिब्बती तथा भोटियोंकी बस्ती है। काठमाण्डूमें ही लघु तिब्बतकी एक झांकी लेनी हो तो यहां अवश्य जाइए। वहांसे १ मील दूर गोकर्णका सुरक्षित शाही बन है। आप वहां हिरण, मयूर तथा अन्य बनजन्तुओंको स्वच्छन्दतापूर्वक अपने निकट ही बिचरते हुए देखेंगे। पास ही गोकर्णेश्वर भगवान् शंकरका सुन्दर मन्दिर भी है।

काठमाण्डू उपत्यकामें इतस्ततः घुमनेके लिए मोटर और बसों की व्यवस्था है। उपत्यकाके बाहर पचासों मीलकी यात्रा आप मोटरद्वारा कर सकते हैं। हवाई जहाजद्वारा नेपालके अन्य अंचलोंमें जाने की भी व्यवस्था है। काठमाण्डूसे पश्चिमकी तरफ लगभग सौ मील दूर "पोखरा" नामक एक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विशाल उपत्यका है। जैसा इसके नामसे ही स्पष्ट है, यहां मीलों लम्बी झीलें है। नारंगी अन्य रसीले फल तथा मछलियों-का भण्डार एवं प्राकृतिक सौन्दर्यकी खान पोखरामें आप बहुत कुछ पासकते हैं।

नेपालका प्रमुख औद्योगिक केन्द्र विराटनगर (भारत-के पूर्णिया जिलेसे सटा हुआ) जोगबनी स्टेशनसे २ मीलपर है। यहां हम काठमाण्डूसे ५५ मिनटमें हवाई जहाजद्वारा पहुंच सकते हैं। इसके अतिरिक्त भैरहवा आदि स्थानोंमें भी हवाई सर्भिस है। भैरहवासे हम १२ मील दूर भगवान बुद्धको जन्मभूमि लुम्बिनी भी मोटर गाडीद्वारा जा सकते हैं। रेल-द्वारा जाना हो तो भारतसे आने वाले यात्रियोंको नौतनवा उतरना चाहिए। माता जनकनन्दिनीकी जन्मभूमि जनकपुर भी हवाई जहाजद्वारा पहुंच सकते हैं। यदि भारतसे ही रेल-द्वारा जाना हो तो हमे पूर्वोत्तर रेलवेके जयनगर (बिहार) स्टेशनपर उतर कर नेपाल जयनगर-जनकपुर रेलवेद्वारा जनकपुर जाना चाहिए। राम नवमी तथा विवाह पंचमी (मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी) के दिन यहां लांखों जनता एकत्र होती है।

संचार साधन

नेपाल से भारत लिफाफेमें चिट्ठियां भेजनेके लिए नेपाली १५ पैसेके डांक टिकट, हवाई पत्रके लिए ।१० पैसे और पोष्ट कार्ड के लिए ।५ पैसे की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त रजिष्टर्ड और इन्स्योर्ड लेटरकी भी व्यवस्था है।

नेपाल अधिराज्यके अन्दर किसीसे बात करनी हो तो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जगन्नाथ जीके मन्दिरके निकट आकाशवाणीमें जाइए। नेपालका प्रत्येक अंचल आकाशवाणीद्वारा काठमाण्डूसे सम्बन्धित है। बातें रेडियो टेलिफोन द्वारा होती हैं। नेपालमें क्रमशः १००, १०, ५ और १ रूपयेके नोट होते हैं। एक रूपयेमें १०० पैसे होते हैं। पचास पैसेका एक मोहर होता है। एक मोहरमें दो सूके होते हैं। प्रत्येक सूका पच्चीस पैसेका होता है। इसके अतिरिक्त १०, ५, और २ पैसोंके सिक्के भी हैं। देवपाटन (पशुपतिके निकट) सिंहदरबार, भोटाहिटी, डिल्ली बजार, ललितपुर तथा भक्तपुरमें पोष्ट अफिस हैं। तार भेजनेके लिए धरहरेके निकट जाना चाहिए।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मुद्रक : श्री सरस्वती प्रस लिमिटेड, कलकत्ता-६

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

❀ श्री गणेशाय नमः ❀

श्री गंगासागर महात्म्य

॥ श्रीवाणी विनायकौ नमः ॥

गंगा, गंगा के कहे निर्मल होत शरीर।
गंगासागर स्नान ते मिटत सकल भव पीर ॥

ॐ नमस्तुभ्यं भगवते विशुद्ध ज्ञान मूर्तये।
आत्मा रामाय रामाय, सीता रामाय वेधसे ॥
ॐ सद्यः दुःख संहर्त्री, सर्व पातक नाशिनी।
सुखदा मोक्षदा गंगे, गंगैव च परमा गतिः ॥
ॐ जयंती मंगला काली च, भद्र काली कपालिनी।
दुर्गा शिवा क्षमाधात्री, स्वाहा स्वधा नमोस्तुते ॥

❀ दोहा ❀

अष्टम रोहित वँश में, प्रगटे सगर भुआल।
तिनके सुत ऋषि श्रापछे, भस्म गये तत्काल ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री सुखदेव जी बोले कि हे राजा परीक्षित! रोहित का पुत्र हरित हुआ। इस हरित से चम्पक ने जन्म लिया, जिसने चम्पापुरी बसाई, चम्पक का पुत्र वासुदेव और वासुदेव का पुत्र विजय हुआ, विजय का पुत्र भरुक और उसका पुत्र वृक और वृक से बाहुक ने जन्म लिया। जब शत्रुओं ने बाहुक का राज छीन लिया तब वह स्त्रियों सहित बनमें चला गया और वहां वह वृद्ध हो, मृत्यु को प्राप्त हुआ तब उसकी स्त्री सती होने को तैयार हुई। परन्तु महर्षि और्व ने उसको गर्भवती जान, मरने से रोक दिया। रानी की सौतों ने इसको गर्भवती जान हिंसा के बस हो इसके गर्भ को नाश करने को अन्न में विष मिला कर इसे खाने दिया। परन्तु विष देने से गर्भ नष्ट नहीं हुआ। तब इस गर्भ से जो पुत्र हुआ उसका नाम सगर हुआ। महाराज सगर ने और्व ऋषि के बताये हुए उपाय से अश्वमेघ यज्ञ करके सर्वदेव और सर्वदेवमय परमात्मा परमेश्वर भगवान हरि की पूजा की। जब उसने पृथ्वी भ्रमण करने को घोड़ा छोड़ा तब उसको देवराज इन्द्र ने हरण कर लिया। सगर महाराजा के दो स्त्रियां शुमति और

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

केशिनी थी। राजाने यज्ञ का घोड़ा खोजने को शुमति के (६००००) साठ हजार पुत्रों को आज्ञा दी। वे अहंकार करके यज्ञ के घोड़े को खोजने के लिये सारी पृथ्वी खोजने लगे। जब पृथ्वी पर घोड़ा नहीं मिला तो चारों ओर से पृथ्वी को खोदने लगे। कुछ दिन पीछे सगर के पुत्र उत्तर पूर्व के कोने में जहाँ कपिल मुनिजी का आश्रम था, वहाँ पहुँचे और वहाँ घोड़े को बँधा हुआ देख "इसने हमारे घोड़े को चुराया है यही चोर है, देखो कैसी आँख बन्द कर ली है! इस दुराचारी पापी को अभी मार डालो।" इस प्रकार से साठ हजार सहोदर भाई अस्त्र-शस्त्र उठा कर महात्मा कपिल देव मुनि को मारने दौड़े। भगवान कपिल देव जी उस समय समाधि लगाये थे। उन्होंने कोलाहल सुनकर समाधि त्याग दी और नेत्र खोल दिये।

हे राजन! देवराज इन्द्र की माया से सगर के पुत्रों की बुद्धि नाश को प्राप्त हुई इसलिये वे लोग महर्षि कपिल देव जी पर ऐसा अत्याचार करने को प्रस्तुत हुए, परन्तु इस महाकुकार्य करने के कारण अति महान अग्नि, जो कि महर्षि कपिल देव जी के शरीर से

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

निकली थी, इससे सबके सब क्षण मात्र में भस्म हो गये सगर राजा के एक पुत्र का नाम असमंजस था, जो केशिनी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। उनका पुत्र अंशुमान था। यह असमंजस पहिले जन्म में योगी था, किन्तु दुष्ट संग करने के कारण योग भ्रष्ट हुआ। यह अपनी जाति के अर्थ विपरीत कर्म करता हुआ खेल ही खेल में बालकों को सरयू के जल में डाल देता था। इस प्रकार के कर्म देख कर के पिता राजा सगर ने इसको त्याग दिया था। अब इसने अपने योग बल के प्रभावसे पुनः मृतक बालकों को फिर से जिलाकर सबको दिखाया और फिर उस पुरी से निकल कर चला गया। अयोध्या वासी प्रजा असमंजस के मारे हुए अपने-अपने बालकों को देख कर महा विस्मित हुए, फिर राजा ने असमंजस के लिये बड़ा संताप किया। अब इधर की कथा सुनिये जब सुमति के सब पुत्र मारे गये, तब राजा सगर ने यज्ञ के घोड़े को खोजने के लिये असमंजस के पुत्र अंशुमान को भेजा। तब वह इस मार्ग से चला जिस मार्ग को उसके चाचा लोगों ने खोद कर बनाया था और बहुत

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दूर जाकर भस्म किये हुए ढेर पर पहुँचा, वहाँ घोड़े को बन्धा हुआ पाया। उस स्थान पर साक्षात् भगवान रूप कपिल मुनि बैठे हुए थे। उनको बैठा हुआ देख महाराज अंशुमान हाथ जोड़ स्तुति करने लगे। जब स्तुति कर कपिल देव जी का प्रभाव गाया तब कपिल देव भगवान जी अनुग्रह कर सगर पुत्र अंशुमान से यह वचन बोले हे वत्स! अपने दादा के यज्ञ पशु इस घोड़े को ले जाओ।" जब अश्व पाकर भी आकांक्षा के साथ खड़े रहे तब मुनिजी इनके मनका अभिप्राय जानकर बोले तुम्हारे चाचा लोग जो भस्म हो गये हैं, वे गङ्गा जल पाने के योग्य हैं और जलसे ही इनकी गति होगी। यह सुनकर अंशुमान ने उनको शिर झुका कर प्रणाम किया और उनकी परिक्रमा कर के यज्ञ के घोड़े को ले राजा सगर के पास आया। राजा ने घोड़ा पाकर यज्ञ का शेष कार्य समाप्त किया। फिर राजा सगर निस्पृह हो गये, और अंशुमान के हाथ में राज सौंप कर बन्धनों से छूट और मुनि के बताये मार्ग में जाकर उत्तम गति को प्राप्त हुए।

———

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

निकली थी, इससे सबके सब क्षण मात्र में भस्म हो गये सगर राजा के एक पुत्र का नाम असमंजस था, जो केशिनी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। उनका पुत्र अंशुमान था। यह असमंजस पहिले जन्म में योगी था, किन्तु दुष्ट संग करने के कारण योग भ्रष्ट हुआ। यह अपनी जाति के अर्थ विपरीत कर्म करता हुआ खेल ही खेल में बालकों को सरयू के जल में डाल देता था। इस प्रकार के कर्म देख कर के पिता राजा सगर ने इसको त्याग दिया था। अब इसने अपने योग बल के प्रभावसे पुनः मृतक बालकों को फिर से जिलाकर सबको दिखाया और फिर उस पुरी से निकल कर चला गया। अयोध्या वासी प्रजा असमंजस के मारे हुए अपने-अपने बालकों को देख कर महा विस्मित हुए, फिर राजा ने असमंजस के लिये बड़ा संताप किया। अब इधर की कथा सुनिये जब सुमति के सब पुत्र मारे गये, तब राजा सगर ने यज्ञ के घोड़े को खोजने के लिये असमंजस के पुत्र अंशुमान को भेजा। तब वह इस मार्ग से चला जिस मार्ग को उसके चाचा लोगों ने खोद कर बनाया था और बहुत

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दूर जाकर भस्म किये हुए ढेर पर पहुँचा, वहाँ घोड़े को बन्धा हुआ पाया। उस स्थान पर साक्षात् भगवान रूप कपिल मुनि बैठे हुए थे। उनको बैठा हुआ देख महाराज अंशुमान हाथ जोड़ स्तुति करने लगे। जब स्तुति कर कपिल देव जी का प्रभाव गाया तब कपिल देव भगवान जी अनुग्रह कर सगर पुत्र अंशुमान से यह वचन बोले हे वत्स ! अपने दादा के यज्ञ पशु इस घोड़े को ले जाओ।" जब अश्व पाकर भी आकांक्षा के साथ खड़े रहे तब मुनिजी इनके मनका अभिप्राय जानकर बोले तुम्हारे चाचा लोग जो भस्म हो गये हैं, वे गङ्गा जल पाने के योग्य हैं और जलसे ही इनकी गति होगी। यह सुनकर अंशुमान ने उनको शिर झुका कर प्रणाम किया और उनकी परिक्रमा कर के यज्ञ के घोड़े को ले राजा सगर के पास आया। राजा ने घोड़ा पाकर यज्ञ का शेष कार्य समाप्त किया। फिर राजा सगर निस्पृह हो गये, और अंशुमान के हाथ में राज सौंप कर बन्धनों से छूट और मुनि के बताये मार्ग में जाकर उत्तम गति को प्राप्त हुए।

———

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अन्शुमान कुलके भागीरथजीका गंगाजी लाना

जिस प्रकार राजा सगर अपने पोते को राज भार दे तपस्या करने चले गये। अंशुमानजी भी उसी प्रकार अपने पुत्र को राज्य दे, गंगाजी के लाने की कामना से बहुत दिनों तक तपस्या करते रहे। परन्तु उनके मन की अभिलाषा पूरी न हुई। कुछ समय पीछे राजा अंशुमान मृत्यु को प्राप्त हुए। अंशुमान के दिलीप नामक पुत्र भी गंगा को लाने में असमर्थ होकर काल के कलेवर को प्राप्त हुए। इनके पुत्र भागीरथ जी ने गंगा के लाने के लिये बड़ी तपस्या की। तब गंगा जी इनको दर्शन देकर बोली "वत्स! मैं तुम पर प्रसन्न हो वर देने के लिये आई हूँ" यह सुन कर भागीरथ जी ने अपना अभिप्राय निवेदन किया, तब गंगा जी ने कहा कि 'हे राजन! जब मैं आकाश से गिरुँगी तब किसी पुरुष को हमारा वेग अवश्य धारण करना होगा, नहीं तो मैं पृथ्वी को फोड़कर पाताल को चली जाऊँगी, सो यह तो कहो कि हमारा वेग कौन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धारण करेगा ? और मुख्य बात तो यह है कि मैं पृथ्वी पर नहीं जा सकूंगी क्यों कि मनुष्य लोग उसमें अपवित्र पदार्थ धोवेंगे सो बताइये कि उस अपवित्रता को मैं कहाँ धोऊँगी ?" तब भागीरथ जी बोले कि हे जननी ! संसार त्यागी ब्रह्म निष्ठ साधू लोग अपने लोक पावन अंगों से आप की अपवित्रता को हर लेंगे क्योंकि उनके हृदयों में सर्व अघहारी भगवान नित्य विराजमान रहते हैं, इसलिये वे लोग पाप के विनाश करने को समर्थ हैं और भगवान रुद्र जो कि सब शरीर धारियों की आत्मा है और जिस प्रकार साड़ी सूत में पोही हुई है वैसे ही वे शिवजी इस संसार में ओत-प्रोत हो रहे हैं वे ही तुम्हारे इस प्रबल वेग को धारण करेंगे। राजा भागीरथ गंगाजी से इस प्रकार कह कर तपस्या करके देव-देव महादेव जी को प्रसन्न करने के लिये यत्न करने लगे। शिवजी इन पर शीघ्र प्रसन्न हो गये। भागीरथजी ने जो कुछ प्रार्थना की उसको महादेव जी ने तथास्तु कहा और सावधान होकर गंगाजी को धारण किया। हे राजन !

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गङ्गाजी का महात्म्य कैसे वर्णन करें उनका जल भगवान वासुदेव के चरणस्पर्श से पवित्र हुआ। भागीरथ जी भुवन पावनी गङ्गाजी को उस स्थान पर ले आये, जहां कि उनके पितृ लोगों की भस्म का ढ़ेर पड़ा था। भागीरथजी पवन के समान वेगगामी रथ पर सवार हो आगे चलने लगे और त्रिलोकी को पवित्र करने वाली पतित पावनी गङ्गाजी उनके पाछे पीछे बहती हुई सब लोगों को पवित्र कर भस्म हुए सगर पुत्रों पर अपना पवित्र जल डालने लगीं। हे राजन् सगर के पुत्र ब्राह्मण का अपराध करके भष्म हुए थे, जब उनकी राख के ऊपर गङ्गाजी का जल पड़ा, और स्वर्ग को चले गये तब उन लोगों को कैसा फल मिलेगा, जो कि श्रद्धा पूर्वक श्रीगङ्गा जी महारानी जगत सुखदायनी की सेवा करते हैं, सगर के पुत्र अपनी राख पर गङ्गाजी का जल पड़ने से जब पवित्र हो गये और स्वर्ग को सिधारे तब जो पुरुष गङ्गाजी का व्रत धारण करेंगे उनको स्वर्ग में जाना और निर्वाण पद पाना निश्चित है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ दोहा ॥

केवल जल छुइ ह्वै गए, सगरपुत्र उद्धार ।
नित मंजन जो करहि नर, सो न लहै दुखद्वार ।
हरिपद से प्रगटी कियो, भवभय अघको नाश ।
जो श्रद्धा से मंज हैं, सो पय है सुख राशि ।
गंगा की सेवा सदा, चंगा रहे अवश्य ॥
भूखा नंगा सबहि को, दे धन धान्य सुसस्य ।
जो नहिं महि पर आवती, गंगा रानी आज ॥
तो पृथ्वी भरि उठत, पापिन केर समाज ॥

श्री विष्णुपदी जगत जननी गंगा ही सब की गति हैं। कैसा ही पापी क्यों न हो, अन्त समय में यदि उसको गंगा लाभ हो सके तो वह सब पापों से मुक्त हो स्वर्गगामी होता है। जो व्यक्ति प्रेम से गंगा गंगा शब्द उच्चारण करता है, वह सब पापों से मुक्त हो विष्णु सायुज्य को प्राप्त होता है। पूर्व काल में महर्षि सनत्कुमार ने देवर्षि नारद जी से यही प्रश्न किया था, तब नारद जी ने जो कथा भाषण किया था,

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वह बृहद् नारदीय पुराण के नाम से विख्यात है। आप लोगों से वह कथा कहती हूँ एकाग्रचित होकर श्रवण करिये। श्री विष्णु भगवान जी ने इन्द्रादि देवों को स्वर्गराजच्युत देख तैंतिस कोटि देवताओं को दूषित चित से गिर गुहाओं में निवास करते देख देव माता आदित देवी की विनय एवं तप से प्रसन्न हो वावन अवतार धारण किया था, उन्हीं के पाद पद्म से श्री गङ्गा जी का जन्म हुआ। अर्थात् वावन जी ने दैत्यराज बलि का दर्प चूर्ण कर देवताओं को स्वर्गाधिकार देने के लिये राजा बलि से तीन पग पृथ्वी की याचना की थी। एक पद से तलातल पातालोदिक सप्त लोक नाप लिये और दूसरे पग से स्वर्गादि सप्तलोक माप लिये और उसी समय ब्रह्म लोक में ब्रह्माजी ने श्री हरि के पादपद्म को धोकर कमण्डल में रख लिया। वही पुण्यमय जल श्री गंगा नाम से विख्यात हुआ है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ दोहा ॥

गङ्गा महातम पढ़त ही, छूटी जात सब पाप।
श्री ब्रह्मा निज मुख कह्यो, गङ्ग महातम आप।

कनखल हरद्वार ब्रह्मावत । प्रयागराज, काशी बहुतायत ॥
भे प्रसिद्ध तीरथ जग माँही । तारय सब मन लोग काही ॥
सिन्धु समीप गई महरानी । ह्व सहस्त्र धारा समयानी ॥
साठिहु सहस्त्र तरे तेही काला । निकसि नर्क से भये निहाला ॥
पाप मुक्त नृप पुत्रन जानी । भाख्या धर्मराज मृदु बानी ॥
सुनहु सकल नृप सगर कुमारा । मम अर्चना करहु स्वीकारा ॥
तुम निज दोष बहुत दुःख पायो । दारुण नरक माहि तन तायो ॥
कुल सपूत भागीरथ भयऊ । तव मति हेतु कठिन तप कियऊ ॥
लख सोई पुण्य प्रभाव कुमारा । स्वर्ग द्वार अब खुला तुम्हारा ॥
जाहु बत्स अब हरि पुर माही । सुख आनन्द तहँ तुम्हे सदाही ।
आये विष्णु दूत तेही अवसर । सबहिं बिमान चढ़ायो सादर ॥
सूर्य्य वंस मह जो कोऊ रहेऊ । सब कहं आज सुगति तुम दयऊ ।
यहि विधि सगर पुत्र गण जेते । सुख युत बसे स्वर्ग मंह तेते ॥
वहां कपिल मुनि, आश्रम माही । हाथ जोड़ भागीरथ कहहीं ॥
जय जय श्री सुरसरि महरानी । पतित उद्धारणि जन सुखदानी ॥
आज मातु मोहिं अतिसुख भयऊ । जो मम पत्रिन गति तुम दयऊ ॥
देवन सहित विधाता आये । भागीरथ लखि पद शिर नाये ॥

——:❀❀:——

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री गंगा महात्म सवैया

सादर गंग को नाम लिये अरु ।
प्रणाम किये सब पातक नाशैं ॥
ध्यान धरें अघ दुई शत जन्म के ।
नाशत हैं यह वेद प्रकाशैं ॥
पान किये अघ नासत जन्म के ।
अन्त समय यम त्रास बिनाशैं ॥
बद्रि सुमज्जन जन्म सहस्र के ।
पाप कटे ओ हिये मुद भासैं ॥१॥
तीरथ जेते अहैं जग मैं ।
अघ भंजनि गंग सर्वाधिक ह्वै हैं ॥
देवसरो तट धर्म और कर्म को ।
बीस गुणों अघ को फल ह्वै हैं ॥
या थल काशी प्रयाग सुयोग ।
सहस्त्र गुणों फल प्राप्त ह्वैहैं ॥
अन्त समय एक बून्दहु जो मुख ।
माहि परी सो कृतारथ ह्वैहैं ॥ २ ॥
विष्णु पदी जल अंत समय शव ।
देह परे अधमोगति पै ह्वैहैं ॥
आज से भागीरथी कहवो नहि ।
गंग प्रभात अधर्महि ख्वै हैं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जो यह गावै पढ़े वो सुनै। नित बद्रि सोऊ सुर लोकहि जैहैं।

श्री

श्री जगन्नाथ जी का भजन

ठाकुर भलै विराजे जी। ओड़िया जगन्नाथपुरी मैं भले विराजो जी बलभद्र जी के भैया० ॥ टेक ॥ कब छोड़ा मथुरा नगरी कबसे छोड़ी काशी। झार खण्ड में आय विराजे, बृन्दावन के बासी ॥ २ ॥ उड़िया मांगे खिचड़ी, बंगाली माँगे भात। साधू मांगे दर्शन महा-प्रसाद ॥ ३ ॥ दाल रांधूं भात राधूं, परव? की तरकारी मीन मारि के भोग लगावै ऐसी जात बंगाली ॥ ४ ॥ गांव गॉव में बाग बगीचा गली गली फुलवारी। घर घर देखो केला नारियल घर घर ठाकुरबाड़ी ॥५॥ दो दो कोस पर हाट लगाई, पाँच कोस पर चट्टी। चलते चलते पाँव पिराने शरीर हो गया मट्टी ॥६॥ चट्टी २ बनियां लूटे और लूटे फिरंगी। पांच हाथ की साड़ी पहिरे ऊपर धरे किनारी। सास ससुर की लाज न रखे आधी टांग उघारी ॥ ७ ॥ नाल चक्र पर ध्वजा बिराजे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मस्तक सोहे हीरा । ठाकुर आगे दासी नाच गावै दास कबीरा ॥

* आरती *

आरती जगन्नाथ स्वामी मंगल कारी ॥ टेक ॥ निरखत मुखारविन्द परसत चरनारबिन्द, आपदा हारी ॥ १ ॥ कंचनमणि दीप दान ज्योति जगमगी गलिन धूप अगर बाती, पाप के जरी ॥ २ ॥ घनन घनन घण्टा बाजे बेणबासुरी । रात को मृदंगा बाजे और नारद खंजरी ॥ ३ ॥ इन्द्र दमन सिन्धु गाज रोहणी पास खड़ी मारकंडे सेत गङ्गा आनन्द की भारी ॥ ४ ॥ संतन की भीड़ भरी यात्रा जुरी बेतन की मार परे कब की खरी ॥ ५ ॥ सुर नर मुनि द्वारे ठाढ़े ब्रह्मा वेद उचारी धन्य २ माधो दास आजु की घरी ॥ ६ ॥

जगन्नाथ दयाल पोढ़े श्री जगन्नाथ दयाले । जेठ हलधर रानी सुभद्रा चक्र असुरन काल ॥ टेक ॥ रत्न भवन विचित्र पुतरी लसत हीरा लाल । दयाल मणि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शशि कोटि बारी २ रवि कोटि बाल ॥१॥ जरी चन्द्रक चन्द्र निंदहि तरन मोति माल। अमय तिनते झरत झिम झिम अखिल तिन्ह में ख्याल ॥ २ ॥ सेज बनके अनूप आभी रतिहु देखि बिहाल। कनक पवन धनन ...सु बिले युवती जाल ॥ ३ ॥ राय आरती करत मोहीं करत कंचन थाल बल्लभो देखन बाल बाल निहाल ।४।

बलभद्र अनंत पौढ़े बलभद्र देव अनंत। देवी सुभद्रा चक्र सुदर्शन सहित कमलाकांत। टेक। धाय मन्दिर चले पण्डा पलंग बिछे गजदन्त। जग जगदीश रात बहुत गई सोये सकड जीव जन्तु। धन्य हलधर धन्य माधव दास भनन्त।

जगन्नाथ अलसाने सलोने जगन्नाथ अलसाने लोचन कमल श्याम सिथिलाने सुघर अधिक अरुणाने ॥ टेक ॥ श्री भजु दक्षिण श्री के कंध धरि अगिरानेक जन्भूवाने औंघय झुकत धकित क्रिया धरे प्यरि हसि मुस्कान ॥ १ ॥ अद्भुत बिझिम बिहसि सेज रचाव लागी सुयस बखाने ॥ २ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ भजन बंगाली ॥

बोले भाई रामे राम। अयोध्या से पक्की सड़क किया औ उड़िया नारियल तेल। रानी गंज से तार खचलेल पुरी टेकाया रेल। कोनो मोहे मंदल भैया कौनो मुखे के मारे कवन मुखन चुकनी हाथी मारे पिचकार॥ पूर्व मुख मंदल भैया पूर्व मुख के मारे। पूर्व मुखे चुकनी हाती मार पोचकार। चारु वगल झाड़ बिच में त्रिशूल भोलानाथ चमके कमल के फूल बोले भाई राम। तुमने जगन्नाथ आ भये करम करे। रहिमन कहामा गमाले रथ यात्रा ऐसन दिन॥ करे करे रीहे खेती हारे भैया बुने री हैं। नगो बोहेन राम लिया रथ यात्रा ऐसन दिन॥तुते तहर खेती हीरे भैया तुठे हरे चीन बिहारी॥ बेटल बढ़िया लगाई तरीन। दस मन खेती हारे भैया बीस मन उदबो चीन बिहार बैठल माता खइये हये शीन। कहामा राम जी माखन खाइलेन कहाँ खइलेन खीर। कहामा राम जी वंशी बजालेन कहमाँ अस्तीर॥ अयोध्या मा रामजी माखन खाइलेन जनकपुर में खीर। वृन्दावन में वंशी बालेन पुरी में अस्तीर। कोन दूध के माखन खइलेन कौन दूध के खीर।

भारत-बन्धु प्रेस, ६६ नं० मटरूमल लोहिया लेन सलकिया,

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री पशुपतिमहात्म्य

श्री दैवारातके "श्री पशुपतिहृदयम्"
का हिन्दीमें रूपान्तर

प्रकाशक

श्री ५ की सरकार, प्रचार-प्रसार मंत्रालय,

प्रचार विभाग

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi.

पहली बार– २०,००० प्रति

महाशिवरात्रि, फाल्गुण २०२३ वि. सं.

हिन्दीमें अनुवाद :–

दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ "उपेन्द्र"

मुद्रक–श्री सरस्वती प्रेस लिमिटेड, कलकत्ता-९

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री पशुपतिमहात्म्य

॥ मङ्गलनमस्कारः ॥

"नमः शिवाय रुद्राय पशूनां पतये नमः ।
मातापितृस्वरूपाय श्रीगौरीशङ्करात्मने ॥"

"भगवन् भर्ग समग्रविभूते भावक भद्रद रुद्र नमस्ते ।
पूर्णात्मक परमेश्वरमूर्ते तस्मै पशुपतयेऽस्तु नमस्ते ॥"

॥ मङ्गलविजयघोषः ॥

"श्रीमन्नेपालराज्याद्यधिपतिपदभृद् राजराजेश्वरोऽयम्,
सर्वात्मा सार्वभौमः परमरसनिधी राजराजेश्वरीष्टः ॥
रुद्रः श्रीशक्तिपूर्णो वसुमयचितिभिः सत्कलाभिः प्रपन्नः,
विश्वस्यैव प्रशान्त्या जयति पशुपतिः पार्वतीशः परेशः ॥१॥

सभी ऐश्वर्योंसे परिपूर्ण इस नेपाल अधिराज्यके प्रधान और प्रथम आधिपत्यके राजपदवीको धारण करनेवाले राजाके भी राजा, सर्वान्तर्यामी, चेतना योग शक्तिके रूपसे भरे हुए, सारे संसारके सार्वभौम सम्राट्, अत्यन्त श्रेष्ठ परमानन्द रसके समुद्ररूपी, श्रीरूप शक्तियोंसे परिपूर्ण, अपने सभी सत्कलाओंसे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

युक्त श्रीपराशक्तिरूपिणी राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीके इष्ट देवतारूप, नेपालमें प्रत्यक्ष रूपसे प्रगट हुए पार्वतीपति परमेश्वर श्री रुद्र भगवान पशुपतिनाथ अपने क्षेत्ररूपी इस नेपाल-राज्यमें विलास करते हुए समस्त विश्वके परम शान्तिके लिए स्वयं निरन्तर विश्वविजयी होते हैं। यही एक नेपालका परम सौभाग्यका मूल बीजमन्त्र है।

।। नेपालनामकं श्री पशुपतिक्षेत्रम् ।।

सम्पूर्णे भारतेऽस्मिन्नपि वसुभरिते भूशिरःस्थानभूते,
शश्वच्छान्त्यादिकेन्द्रे हिमगिरिशिखरेऽध्युत्तरेऽप्युत्तमेऽन्तः ।।
पुण्ये नैसर्गरम्ये परगहनवने सद्विचित्रे पवित्रे,
क्षेत्रे नेपालसंज्ञे लसति पशुपतिर्ज्योतिरात्मा चिदीशः ।।४।।

सब ऐश्वर्योंसे पूर्ण भूमाताके शिरस्थानरूपी हिमालयके ऊंचे शिखरमें स्थित शान्ति सुखके केन्द्रस्थानरूपी उत्तर दिशामें, अति उत्तम स्थानपर, ऊंचे-ऊंचे पेड, हरे घांस, बनस्पति आदि अनेक तरहके बनलक्ष्मीकी शोभासे युक्त, पुण्य और मनोहर अति सघन जंगल और नैसर्गिक रचनासे विचित्र इस नेपाल-नामके अपने क्षेत्रमें परम शान्त परम शिवस्वरूपी श्री पशुपतिनाथ विराजमान हैं, जो हिमालयके शिखरमें स्थित श्री केदारनाथ ज्योतिर्लिंगके शिरोभागरूपमें मान्य हैं। इस कारण नेपाल "पाशुपत्त क्षेत्र" नामसे पुराणोंमें प्रसिद्ध है।

"हे अगस्त ! धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों बर्गोंका फल देनेवाला हिमालय जैसा इस पृथ्वीमें दूसरा नहीं है, नहीं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

है। सर्वत्र नेपाल नामसे प्रसिद्ध यह महान् पाशुपत क्षेत्र भुक्ति-मुक्ति देनेवाला और त्रिलोकमें महत्वपूर्ण है।"

——हिमवत् खण्ड (अ. ८.)

"इस संसारमें नेपाल नामसे विख्यात शहरमें सब इच्छा पूर्णकरनेवाला, सभी कर्मोंका फल देनेवाला पशुपतिनाथका शिरोभागरूपी शिवलिंग है।"

——महाशिवपुराण कोटीरुद्र (सं. अ. १)

"प्राचीन कालमें 'ने' नामके ऋषिद्वारा इस क्षेत्रका पालन होनेसे इसका नाम 'नेपाल' रहा है। भगवान पशुपतिके इस क्षेत्रमें धर्म धर्मकी रक्षा करता है।"

।। पशुपति शब्दार्थः ।।

कामाज्ञानप्रमोहप्रमुखविषयकैर्मृत्युपाशैः प्रबद्धाः,
ब्रह्माद्याः स्थावरान्ताः पशव इति मता जीवरूपाः समस्ताः ।।
सर्वेषां तत्पशूनां पतिरिह परमो मोचको मृत्युपाशात्,
मृत्योर्मृत्युः स रुद्रो जयति पशुपतिः सोऽमृतात्माऽमरेशः ।।५।।

काम (इच्छा), अज्ञान और मोह आदि विषयरूपी मृत्युपाशद्वारा बंधे हुए ब्रह्मादि स्थावरान्त चराचर प्राणीमात्र पशु माने जाते हैं। उन सभी पशुओंको उस मृत्युपाशसे छुटकारा दिलानेवाले उनके परमपति परमेश्वर हैं। इसलिए वे स्वयं अमृतात्मरूपी अमर, देवादिदेव मृत्युके भी मृत्यु (महाकाल),

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

संहार शक्तिरूपी मृत्युञ्जय रुद्र ही पशुपति हैं, वे विश्वविजयी हैं।

इस तत्वसे पाशुपत मतमें पशु, पाश और पति ये तीन पदार्थ प्रधान माने जाते हैं।

"मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् (ऋ.मं. ७।५९।१२)
"मुमुग्ध्यस्मान् निधयेव बद्धान्" (ऋ.मं. १०।७३।११)
ऐसी ऋषियोंकी प्रार्थना है, वे यही अर्थ बताते हैं।

।। पञ्चमुखी पशुपति ।।

**श्रीमन्नेपालनिष्ठः प्रभवति भगवान् सर्वशक्तिप्रपूर्णः,
ब्रह्मात्मा वेदवक्त्रः परमसुखमयो ज्ञानसत्त्वप्रकाशात् ।।
तत्पूर्वादक्षिणोदग्वरुणमुखयुतो मध्यलिङ्गोर्ध्ववक्त्रः,
पञ्चब्रह्मस्वरूपो लसति पशुपतिः प्राणपञ्चाननोऽयम् ।।६।**

इस नेपाल क्षेत्रमें श्री पशुपतिनाथ सभी शक्तिसे परिपूर्ण होकर विराजमान हैं और अपने ज्ञान सत्वका प्रकाशन करते हुए विलास करते हैं। चैतन्य परब्रह्म परमात्मा ही उनका सच्चा स्वरूप है। चार वेद उनके मुख हैं, वे स्वयं परमानन्द-मय हैं। पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर और ऊर्ध्व यिन पांच दिशाओंमें स्थित पंच प्राणरूप पांच मुंहवाले पंच ब्रह्मरूपी, इस विश्वरूप तत्वसे सम्पन्न अद्वितीय श्री भगवान् पशुपतिनाथ सर्वसमर्थ प्रभु हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ पूर्वमुखम् ॥

रुद्रः पूर्वामुखस्ततपुरुष इति नुतः पारमैश्वर्ययोगात्,
इन्द्रः सन् सर्वदेवाद्यधिपतिरमलो वैद्युतः पूरुषोऽयम् ॥
प्राच्यामन्तः स इष्टः सकलचिदुदयाद् ब्राह्मशक्त्याप्रपन्नः,
नाम्ना धाम्ना महिम्ना भुवि भवति भवो भद्ररूपस्त्रिनेत्रः ।७॥

पशुपतिके पूर्वमुखका नाम "तत्पुरुष" है। यह 'तत्' शब्द परोक्ष अर्थका वोधक और परमपुरुषका वाचक है। परम ऐश्वर्यके योगसे पूर्व दिशाके अधिपति इन्द्र ही तत्पुरुष माने जाते हैं।

"इति परमैश्वर्ये" इस धातुसे 'इन्द्र' शब्द बना है। ये इन्द्र सभी देवताओंके राजा हैं, ये परिशुद्ध वैद्युत् पुरुष हैं। सूर्यादि सभी दिव्य देवादि वस्तुओंका उदय पूर्व दिशामें होता है। इसलिए वे ब्राह्मी शक्तिसे युक्त होते हैं। उस पूर्व दिशाके रुद्र अथर्व वेदमें 'भव' कहलाते हैं।

"तस्मै प्राच्या दिशो अन्तर्देशाद् भवमिष्वासमनुष्ठातार-मकुर्वन्।" (अथर्व. १५।५।१)

ये 'भव' नाम, धाम और महिमासे इस भूमीमें तीन नेत्रोंसे युक्त मंगलरूपी हुए हैं।

"तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।" (ना. उ.)

उन तत्पुरुषको हम जानते हैं, उन महादेवका हम ध्यान करते हैं, वे रुद्र हमें प्रेरणा दें।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

"कुङ्कुमाभं विशालाक्षं त्रिनेत्रं रक्तकुण्डलम् ।
चन्द्राङ्कितजटाजूटं प्राचि तत्पुरुषाननम् ।।"
(ईशान शिव गुरु देव पद्धतिः पटले ४०)

।। दक्षिणमुखम् ।।

रुद्रो घोरोऽप्यघोरो भवति पशुपतौ दक्षिणास्यः परः सन्,
दक्षः कालाग्निरुद्रः शिव इह यमराडुग्ररूपस्त्रिनेत्रः ।।
वामे सर्पावतंसादपि तदितरतः कुण्डलाद् वृत्तरूपाद्,
घोराघोरस्वरूपो लसति पशुपतिर्भीषणः शर्वनामा ।।८।।

दक्षिण मुखका नाम अघोर है, जो घोर नहीं हैं, अर्थात् शान्तरूप ही अघोरका अर्थ है। वे घोरोघोररूपी हैं। वे दक्षिण दिशाके अधिपति साक्षात् कालाग्निरुद्र "यमराज" हैं। इसलिए तीन नेत्रवाले वे अत्यन्त उग्ररूपी माने जाते हैं। इस दक्षिण मुखके दाहिने कानमें सर्प का कुण्डल हैं। बाएं कानमें गोल कुण्डल है, इसलिए घोराघोर स्वरूपवाले हैं।

इस मुखमें पशुपति भयंकर रूप धारण करके रहते हैं। इस कारण वेदमे इनका नाम 'शर्व' भी है।

"अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः
सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ।।"

शान्त और घोररूप धारण किए हुए, अत्यन्त भयंकर,

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सब प्राणियोंका संहार करनेवाले तुम्हारे उग्ररूप सभी रुद्रोंको नमस्कार हैं।

"तस्मै दक्षिणाया दिशो अन्तर्देशात् शर्वमिष्वासमनुष्ठातारमकुर्वन्" (अथर्व १५।५।४)

"भिन्नाञ्जननिभं सिंहत्रिनेत्रं सिंहनासिकम्।
दंष्ट्राकरालं दष्टोष्ठं संलिहद्रसनोज्ज्वलम्॥
पिङ्गश्मश्रुजटाजूटं सर्पप्रोतशिरः स्रजा।
सेन्दुखण्डमरालभ्रूः स्यादघोरं तु दक्षिणे॥"

॥ उत्तरमुखम् ॥

रुद्रोऽसौ वामदेवः परशिव उदगादुत्तरास्यः स सोमः;
उग्रो वामार्धभागे स भवति जटया कुण्डलान्नागरूपात्॥
दक्षार्धे स्त्रीविलासाभरणगुणकलाभूषितः सन् विचित्रः,
संसिद्धः सुन्दरोऽयं पृथगुदितकचाच्छक्तिवृत्तावतंसात्॥६॥

पशुपतिके उत्तर मुखका नाम 'वामदेव' है। उत्तर दिशाके अधिपति 'सोम' ही वामदेव है।

"उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः" (अथर्व ३।२७।४)

यिनका नाम 'उग्र' है।

"तस्मै उदीच्या दिशो अन्तर्देशात् उग्रं देवमिष्वासमनुष्ठातारमकुर्वन्" (अथर्व १५।५।१०)

पशुपतिके अन्य तीन मुखोंसे इस मुखमें विलक्षण रूप है। इन वामदेवके बाएं कानमें नागकुण्डल है, फिर बायीं तरफ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शिरपर ऊंचा जटाजूट है। दाहिनी तरफ जटासे भिन्न स्त्रीकी भांति बंटे हुए केशका मुकुट जैसा है, कानमें कमलके जैसा गोलाकार नकाश्शीदार कुण्डल है। इस प्रकार ये 'वामदेव' दायीं ओरके अर्ध भागमें स्त्रीविलासके योग्य आभरणोंके गुण कलासे विभूषित हैं। इसीलिए ये सुन्दर रूपवाले हैं।

"वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः" (ना. उ.)।

ज्येष्ठ श्रेष्ठादि गुणसे युक्त यीन् वामदेवको नमस्कार है।

"बन्धु जीवारुणं रम्यं स्त्रीविलासविभूषितम्।
उत्तरे वामदेवाख्यं मुखं कुर्यान्मनोहरम् ॥"

(ई. शि. पटले ४०)

॥ पश्चिममुखम् ॥

सद्योजातोऽयमीशो जगति समुदितः पश्चिमास्यः प्रचेताः,
सिद्धोऽयं बालभावात् प्रथमगुणदशायोगतो निर्विशेषः ॥
दिव्यः सोऽयं किरीटी त्रिनयनलसितः पद्मसत्कुण्डलाप्तः
श्रुत्योद्दिष्ठः प्रतीच्यां भवति पशुपतिः पूरुषः प्रत्यगात्मा ॥१०॥

पशुपतिके पश्चिम मुखका नाम 'सद्योजात' है। ये पश्चिम दिशाके देवतारूपी वरुण हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

"प्रतीची दिक् वरुणोऽधिपतिः" (अथर्व ३।१७।३)

सद्योजातका अर्थ 'अभी-अभी पैदा हुआ' होता है। ये बाल भावसे सिद्ध प्राथमिक निर्विषय अवस्थाके रूप हैं। इस मुखमें तीन नेत्र हैं, शिरमें किरीट और दोनों कानोमें एक ही तरहका पद्मकुण्डल हैं। अथर्व वेदमें इस पश्चिम मुखका नाम पशुपति प्रसिद्ध है।

"तस्मै प्रतीच्या दिशो अन्तर्देशात् पशुपतिमिष्वासमनुष्ठातारमकुर्वन्" (अथर्व ५।१५।७)

अर्थात् ये पश्चिममुखी पशुपति सद्योजात अवस्थाके बालकके समान निर्विषय निर्विशेष बालभावसे प्रसन्न मुद्रामें रहते हैं।

"सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः।
भवे भवे नातिभवे भवस्वमां भवोद्भवाय नमः॥"

सद्योजात रुद्रको मैं पाता हूं, उन सद्योजातको बांरबार नमस्कार है।

"पूर्णेन्दुकुन्दधवलं प्रसन्नं रक्तकुण्डलम्।
चन्द्राङ्कितजटाजूटं सद्योजातं तु पश्चिमे॥"

॥ प्रत्येकस्मिन् मुखे हस्तद्वयम् ॥

प्रत्येकं श्रीमुखं तत् करयुगकलितं सत् स्वरार्णै रसार्णैः,
पूर्णं वाक्प्राणशक्तिप्रणिहितकरयुक् साक्षमालोदकुम्भम्॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वाक्छक्त्या गङ्गया च प्रतिदिशमुदितः सोऽष्टशक्तिप्रपूर्णः,
वेदास्यो ब्रह्ममूर्तिः पशुपतिरुभयैः संहितः सोऽष्टमूर्तिः ।।११।।

पशुपतिके चारों मुखोंमें प्रत्येक मुखके दो-दो हाथ हैं, उनमें भी हर एक मुखमें दाएं हाथमें १६(१२) दानेवाला रुद्राक्षोंकी माला ग्रौर बाएं हाथमें कमण्डल रहता है।

स्वर ग्रौर वर्णरूप तत्वसे युक्त वाक्शक्तिरूप वर्णमाला ही वह रुद्राक्षमाला है। रुद्रसे निकले हुए ग्रकारान्त क्षकारान्त वर्णमाला ही रुद्राक्षमाला माने जाते हैं।

रसतत्वसे युक्त प्राणशक्तिरूप ग्रमृतसे परिपूर्ण कलश प्राणशक्तिका बोधक है।

इस प्रकार वाक्शक्तिरूपिणी गौरी, प्राणशक्तिरूपिणी गंगा—ये दोनों शक्तियोंके साथ श्री पशुपति प्रत्येक दिशामें प्रगट हुए हैं। इस कारण उन ग्रष्टशक्तियोंसे युक्त वेदमुख परब्रह्म विश्वरूपी ग्रष्टमूर्ति तत्वोंसे ही प्रगट है। वे ग्राठ भुजाएं ही ग्राठ शक्तियोंके बोधक हैं।

।। ऊर्ध्वमुखम् लिङ्गरूपम् ।।

ऊर्ध्वज्योतिः स लिङ्गात्मकमुखतनुभृत् सर्वविद्येश्वरोऽसौ,
ईशानः शक्तिपूर्णस्त्रिजगदधिपतिस्त्र्यम्बकस्त्रीक्षणः सः ।।
मध्ये बिन्दौ स्थितः सन् दशदिगनुगतज्योतिषैकादशात्मा,
श्री रुद्रो रोरवीति श्रुतिवचनमुखाज्ज्ञानसञ्जीवनीयम् ।।१२।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ऊर्ध्वमुखका नाम 'ईशान' है। वह ऊर्ध्वमुखी ज्योतिरूप केवल लिंगरूप मुखधारी है। इस कारण वह लिंगशरीररूपी माना गया है। हाथ, पैर आदि सभी इन्द्रियोंसे रहित लिंग मात्र शरीरस्वरूप है, वही पशुपतिका प्रधान स्वरूप है। इस कारण सर्वत्र शंकरजीकी प्रतिमा केवल लिंगरूप ही बना हुआ है। वे सभी विद्याओंके अधिपति हैं।

उपरका लिंगरूपी मुख सभी शक्तियोंसे पूर्ण है। जहां कोई रूप नहीं रहता, वही सभी रूपोंका अधिष्ठान है। इस कारण वह ऊर्ध्वमुख परम शिवसे अभिन्न पराशक्तिरूप ही माना जाता है।

श्री चक्रके सारभूत बिन्दु और त्रिकोणात्मक तत्वयुक्त होनेके कारण वे 'भूर्भुवः स्वः' इन तीनों लोकोंके अधिपति माने जाते हैं। और ज्ञान, इच्छा, त्रियात्मक तीन शक्तिरूपक— 'सोम, सूर्य, अग्निरूप' तीन नेत्रवाले हैं। उस त्रिकोणात्मक पराशक्तिके प्राणपीठके बीचमें अथवा सारे ब्रह्माण्डके मध्य-बिन्दुरूप अन्तरिक्ष स्थानमें निराधारसे ईशानरुद्र स्थित है। इसी कारणसे उनकी किरणें दसों दिशाओंमें फैलती हैं, इसीसे वे एकादश रुद्र माने जाते हैं।

सर्व विद्याधीश वे भगवान रुद्र सर्वज्ञान शक्तिसे पूर्ण अपने परावाक्शक्तिरूप वेदवचनके मुखसे ज्ञानरूप संजीवनीय रसकी अन्तस्फूर्ति और वाहिरी उच्छ्वासरूपमें हरदम उद्गार निकालते रहते हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

"ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपति-र्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम्" (ना. उ.)।

सब विद्याओंके मालिक, सब प्राणियोंके नेता, चालक, ब्रह्माण्डके बरिष्ठ, हिरण्यगर्भके भी अधिपति, प्रत्यक्ष ब्रह्मरूप वेदके भी अधिपति, परब्रह्मरूपी वे शिव हमें सदैव मंगल करनेवाले हों। इन पांचो मुखोंका पांच आम्नाय संज्ञा तन्त्रमें प्रसिद्ध है।

।। पञ्चमुखानां पञ्चप्राणात्मकत्वम् ।।

सर्वान्तर्यामिणोऽन्तर्हृदयचितिमतो रुद्रहृद्यात्मनस्ते,
पञ्च प्राणाः प्रमुख्या मुखवदभिहिता दिक्स्थिता द्वारपालाः ।।
प्राणः पूर्वस्त्वपानो वरुणदिशिहितो दक्षिणो व्यानसंज्ञः,
सोमाख्यो वै समानो ह्युपरितनमुखः सन्नुदानः श्रुतीष्टः ।।१३।।

सभी प्राणियोंके अन्तर्हृदयके चेतनशक्तिके रूपमें रहनेवाले सर्वान्तर्यामी परम पुरुषरूपी रुद्रनामक अन्तरात्माके प्राणा-पानादिरूप पांच प्राण ही मुख माने जाते हैं। वे पांच प्राण ही पंच ब्रह्मपुरुष हैं, पांच दिशाओंके अधिपति स्वर्गलोकके द्वारपाल हैं।

पूर्व मुख ही प्राण है, पश्चिम अपान, दक्षिण व्यान, उत्तर समान, और ऊर्ध्वमुख उदान है, ऐसा छान्दोग्योपनिषद्में स्पष्ट उल्लेख है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

"अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया" (ऋ.)

इससे सब मनुष्योंमें बुद्धिसे परे वे रुद्र बसते हैं ऐसा सिद्ध होता है। वे हृदयमें रहते हैं इसलिए हृदयरूपी हैं।

"वोचेम शन्तमं हृदे" (ऋ. मं.)

"स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृद्ययमिति तस्मात् हृदयम्" (छा. उ. ८, ३, ३)

यह आत्मा हृदयमें है, इस कारण इसका नाम 'हृदय' हुआ है। वही हृदयरूप रुद्रके पांच प्राण कहलाते हैं।

"तस्य वा एतस्य हृदयस्य पञ्च देवसुषयः स योऽस्य प्राङ्सुषिः स प्राणः योऽस्य दक्षिणः सुषिः स व्यानः, योऽस्य प्रत्यङ्सुषिः सोऽपानः, योऽस्योदङ्सुषिः स समानः, योऽस्योर्ध्वः सुषिः स उदानः इति।"

"ते वा एते पञ्च ब्रह्मपुरूषाः स्वर्गस्य लोकस्य द्वारपाः" (छा. उ. ३, १३)

इससे अन्तरात्मारूपी रुद्रके पांच प्राण ही पंच ब्रह्मपुरुष-रूपी पांच मुख हैं, सिद्ध होता है।

- रुद्रके यिन पांच मुखोंका उल्लेख रुद्रीमें स्पष्ट है।

"नमो रुद्रेभ्यो० तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वास्तेभ्यो नमः ।।" (य.वा.१६,६४) (तै.सं.)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ रुद्रस्य षड्दिङ्मुखानि ॥

	अथर्व सं. ३, २६, १–१६ दिङ्नाम देवाः इषवः	अथर्व सं. ३, २७, १–६ अधिपतिः रक्षिता इषवः	अथर्व १५, ५, १, १–२१ अन्तर्देशात् अनुष्ठाता (इष्वासः)
१	प्राची हेतयः अग्निः	अग्निः असितः आदित्याः	भवः
२	दक्षिणा अविष्यवः कामः	इन्द्रः तिरश्चिराजिः पितरः	शर्वः
३	प्रतिची वैराजाः आपः	वरुणः पृदाकुः अन्नम्	पशुपतिः
४	उदीची प्रविध्यन्तः वातः	सोमः स्वजः अशनिः	उग्रः
५	ध्रुवा निलिम्पाः ओषधीः	विष्णुः कल्माषग्रीवः वीरुधः	रुद्रः
६	ऊर्ध्वा अवस्वन्तः बृहस्पतिः	बृहस्पतिः श्वित्रः वर्षम्	महादेवः
७	सर्वे अन्तर्देशाः.........	....	ईशानः

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

।। समष्टिरूपस्य पशुपतेर्विश्वविचित्ररूपम् ।।

रुद्रः संवित्प्रधानो लसति परशिवः सर्वसत्वप्रपूर्णः,
इच्छाज्ञानक्रियात्मत्रिपुरभगवतीसुन्दरीशक्तियुक्तः ।।
एतत्तत्त्वं विशिष्टं भवति पशुपतौ तत्समष्टचा सुसिद्धं,
चित्रं सन्दर्शनीयं जगति महदिदं विश्ववैचित्र्यपूर्णम् ।।१४।।

वे समष्टिरूप पशुपति ज्ञानप्रधान, सब सत्वसे पूर्ण परम शिवरूपी हैं। वे 'इच्छा ज्ञान और क्रिया' तीन शक्तियोंसे युक्त त्रिशक्तिरूपिणी त्रिपुरसुन्दरीरूप पराशक्तिसे मिलकर विलास करते हैं। पशुपतिका ऊर्ध्वमुख लिंगरूप होनेके कारण पराशक्ति युक्त होकर पशुपति गुप्त रहते हैं। यह अलौकिक विश्वविलक्षण चित्र इस जगतमें महत् दर्शनीय है। सारे संसारमें यहीं यह एक विचित्रतासे भरा हुआ बड़ा भारी तत्व है। सगुण और निर्गुण ये दोनों तत्वोंका वोधक यही एक लिंग है। केवल भारतवर्षमें मात्र नहीं, सारे संसारमें अन्यन्त्र देख नपानेके कारण यह एक बड़ी विशेषता पशुपतिमें है। यह प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूं।

।। केवलशिवस्वरूपत्वम् ।।

सत्यं ब्रह्मात्मरूपं परममृतमयं ज्योतिरूर्ध्वास्यलिङ्गं,
लिङ्गं ब्रह्मात्मनस्तत् सकलकरणकं स्वाङ्गदेहादिशून्यम् ।।
पूर्णात्मा लिङ्गदेहः परचितिकलितः श्रीशिवात्मैकरूप्याद्,
ईशानस्तूर्ध्वरेता लसति पशुपतिः पूरुषो विश्वरूपः ।।१५।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

त्रिलोकमें स्वयं यथार्थ और सत्यरूप हुए परब्रह्म परमात्म-स्वरूप, परम अमृतमय ज्योतिस्वरूप वह ऊर्ध्वमुख लिंग ही अदृश्य परब्रह्म वस्तुको बतानेवाला हेतुरूप लिंग है। वह देह, इन्द्रियोंसे शून्य है, फिर केवल चेतनरूप सब इन्द्रियोंका आश्रय-स्थान भी है। वह पूर्णरूपी परमात्माका लिंगदेहरूपी चिन्हवाले, परम चैतन्य कलाओंसे युक्त, परम कल्याणकारक और हमेशा एकरूप हैं। वे रुद्र भगवान ऊर्ध्वमुख लिंगरूपी होनेके कारण ऊर्ध्वरेता माने जाते हैं और अपने आत्मरूप स्थितिसे कभी च्यूत नहीं होते। वे परम पुरुष विश्वरूपी पशुपति परम शिवरूपसे ऊर्ध्वमुखमें सदा रहते हैं।

"ऋत ँ सत्यं परं ब्रह्म पुरूषं कृष्णपिङ्गलम्।
ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः॥" (ना. उ.)

यथार्थ और सत्यरूप, परब्रह्म, काले पीले रङ्गवाले ऊर्ध्व-रेता, विषम नेत्रवान्, विश्वरूपी पशुपतिको नमस्कार है।

॥ सर्वात्मता ॥

भूतं भव्यं भवद्वै जगदिदमखिलं सर्व एवैष रुद्रः,
पूर्णः सन् पूरुषात्मा लसति पशुपतिः सर्वभूतात्मकोऽयम्॥
रुद्रः सन्नद्वितीयो निजमहिमचितेरेक एव स्वयम्भूः,
द्वधा भावादिहीनः परमरसमयः पूर्णशक्त्याभ्युदीर्णः॥१६॥

भूत, भविष्य और वर्तमान ये तीन काल सहितके सारे जगत्, प्रत्येक वस्तु रुद्ररूप हैं। इस कारण ये रुद्र ही विश्व-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रूपमें स्वयं प्रकट हुए हैं। वही पूर्ण पुरुष पशुपति स्वयं चराचर विश्वात्मक होकर विलास करते हैं। वे रुद्र, अपनेसे समान और ज्यादा अन्य वस्तुसे रहित अद्वितीय हैं। यह बात वेद-मन्त्रोंमें प्रसिद्ध है।

"विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बहुधा जातं जायमानं च यत्,
सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु।।" (ना. उ.)
"एको हि रुद्रो न द्वितीयाय तस्थौ" (श्वे. उ.)

इस प्रकारसे अपने महिमाकी शक्तिसे स्वयं प्रकट हुए, एकमात्र सर्व सारभूत, अपने-अपने स्वरूपसे एक ही रूपके भावसे रहित होकर प्रकाशित हुए और अपने शक्तिके योगसे यहां अवर्णनीय हैं इस कारण पशुपति शक्ति और शिवात्मक हैं।

प्रत्यक्षं विश्वमेतत् पुरुष इति नुतः तत्त्वमत्राधिभूतं,
ईशानः सन् परोक्षः परमचितिमयः सोऽमृतत्वेश्वरोऽसौ।।
जीवः सर्वान्तरात्मा सकलतनुगतस्तत्त्वमध्यात्मरूपं,
तत्त्वैक्यान्नित्यसिद्धः पशुपतिरचलः सत्स्वरूपः समस्तः।।१७।।

इस जगत्में भूत,वर्तमान और भविष्य ऐसे ये तीन कालोंको यह प्रत्यक्ष विश्व जो आधिभौतिक तत्व माना गया है, यह विश्वरूपी पुरुष ही है। अघिदैवत तत्वसे परम चैतन्यरूप मोक्षके भी ईश्वर जो परोक्षसिद्ध हैं वह भी पुरुष ही है। पांच भूतोंके मेलसे अन्नद्वारा सशरीर बने अध्यात्मत्वसे अपरोक्ष

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सिद्ध सर्वान्तरात्मा जीव भी पुरुष ही हैं। ये तीन तत्वोंके ऐक्यसे नित्यसिद्ध समष्टिरूप पशुपति अचल हैं।

"पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥" (ऋ. सं. १०, ९०,२)
"उतामृतत्वस्येश्वरो यदन्येनाभवत् सह ॥" (अथर्व १९।१।६।४)

वह सर्वात्मरूपी परम पुरुष ही रुद्र हैं।

"सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु।
पुरुषो वै रुद्रस्तन्महो नमो नमः ॥" (ना. उ.)

यह सारा विश्व ही रुद्र हैं, उस रुद्रको नमस्कार है। वे परम पुरुष रुद्र हैं, परम तेज हैं। वे तेजोमय रुद्र पुरुषको बारम्बार नमस्कार है।

तत्त्वं सद्भौतिकं तज्जगति सुविततं वैद्युतं ज्योतिराद्यं,
पूर्णं ब्रह्माधिदैवं स्वरदमृतचितिप्रत्नवाक्च्छक्तिपूर्णम् ॥
अध्यात्मं जीवनिष्ठं निखिलतनुगतं प्रत्यगात्मस्वरूपं,
सिद्धो व्यस्तः समस्तो लसति पशुपतिर्विश्वरूपः सदैकः ॥१८॥

इस जगतमें सर्वत्र व्यापी, सबसे आगे अत्यन्त सूक्ष्म विद्युत तेज ही रुद्रका "भौतिक तत्व" है। स्वर और रससे युक्त चेतनाशक्तिरूप परावाक्शक्तिसे युक्त परोक्ष परब्रह्म ही 'अधिदैवत' तत्व हैं, सब जीवोंमें रहनेवाले सब प्राणियोंके शरीरमें बसे हुए चेतनरूप प्रत्यात्मा ही रुद्रका 'आध्यात्मिक' तत्व है। ये तीन तत्वोंके मेलसे सदा एकरूपी विश्वरूप बने हुए ये पशुपति सर्वत्र विलास करते हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

।। तुरीयात्मकत्वम् ।।

त्रीण्यप्येतानि यत्र त्रिवृतनिजगुणान् स्वानि रूपाण्यतीत्य,
नाम्ना रूपेण शून्याद् गतिकृतिरहितात् पूर्णनैर्गुण्ययोगात् ।।
त्रिष्वप्येतेषु नित्यं परचितिकलया यो ह्यनुस्यूत आस्ते,
पूर्णात्मैक्येन सिद्धः पशुपतिरमृतः स स्तुरीयात्मकोऽयम् ।।१६।।

जहां ये और इनके गुण तथा रूपोंको अतिक्रमण करके नामरूपादिसे शून्य, गति और कृतिसे रहित होकर पूर्ण निर्गुणके योगसे रहते हुए इन तीन तत्वोंमें सदा परम चैतन्य कलासे जो अनुस्यूत रहते हैं, वे पूर्णात्मा इन तीन तत्वोंके ऐक्यसे सिद्ध पशुपति स्वयं अमृतरूपी तुरीयात्मक हैं।

"नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय" (बृ. उ. ५ १४, ७)

"अमात्रश्चतुर्थः" (मां. उ.)

इत्यादि वचनोंसे सिद्ध परम पदरूपी परमात्मा ही पशुपति हैं।

।। शक्तिशिवात्मता ।।

दिव्यं चिच्छक्तिपूर्णं शिवसमरसतो मध्यवक्त्रोर्ध्वलिङ्गं,
श्रीमच्छक्तित्रयेष्टं त्रिगुणपरतरं तत्पराशक्तिरूपम् ।।
पूर्णं सद्विन्दुसज्ञं परमपदमयं तत्तुरीयात्मरूपं,
पूर्णात्मैवेह सोऽयं लसति पशुपतिः शक्तिशैवोभयात्मा ।।२०।।

श्री पशुपतिमें एक रससे मिलकर अपने उस चैतन्यरूप पराशक्तिसे परिपूर्ण होकर दिव्य हुए यह मध्यमुखरूप ऊर्ध्वलिंग

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

त्रिगुणात्मक तीन शक्तियोंसे युक्त हैं। वह त्रिगुणसे परे भी हैं। अर्थात् तुरीयात्मक पूर्ण बिन्दुरूप हैं। इस कारण वह ऊर्ध्वलिंग पराशक्तिरूप माने जाते हैं। वह पूर्ण होनेके कारण त्रिकोणके भितर रहनेवाले पूर्ण बिन्दुरूप परम पदात्मक तुरीय-पादरूपी परमात्माके स्वरूप हैं।

इस प्रकार ये पशुपति 'शक्ति और शिव' दोनोंके तत्वसे पूर्ण होनेके कारण सदा पूर्ण ही रहकर अपने पूर्णतामें ही विलास करते हैं।

वाक्शक्त्या वेदवक्त्रः पशुपतिरुदगाज्ज्ञानशक्तिप्रधानः,
दिव्यं प्रज्ञानपूर्णं वितरति सुरसं वेदवक्त्रेण नित्यम् ।।
रुद्रः शक्तित्रयाप्तस्त्रिभुवनविजयी सर्वदेवादिदेवः
ईशः सन्नूर्ध्ववक्त्रे लसति पशुपतिः सर्वविद्याधिराजः ।।२१।।

सारे भारत खण्डमें प्रायः सब जगहमें शिवजीकी प्रतिमा केवल लिंगरूपमें ही पाई जाती है। इस लिंगरूप शरीरमें यहां जो चारमुंह बने हुए हैं, इसका तात्विक अर्थ बहुत ही गूढ है।

'परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी' रूप चार पावोंसे युक्त वाक्शक्तिके योगसे ये चार मुंह बने हुए हैं। ये चार मुंह ही चार वेदके स्वरूप हैं। वाणीमें ज्ञानका प्रकाश करनेका सामर्थ्य स्वतःसिद्ध होनेके कारण वे ज्ञान प्रधानरूपी पशुपति अपने उस देववाणीसे मिलकर चतुर्मुहसे यहां प्रकट हुए हैं,

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

इस कारण सभीको अपने अग्निरूप मुखोंसे उस वेदवाणीद्वारा अपने प्रज्ञानसे पूर्ण दिव्य अमृत रससे भरे रहते हैं। तथा इच्छा, ज्ञान, क्रियाशक्तिसे मिलकर सारे विश्वको पैदा करनेवाले विचित्र कलात्मक ऐश्वर्यरूप त्रिकोणात्मक, सारे जगतके कारणीभूत प्राणपीठमें शक्ति और शिवात्मक हुए पशुपति पूर्ण बिन्दुमें अर्थात पूर्ण बिन्दुरूपसे विराजमान रहते हैं।

ओमित्येकाक्षरात्मप्रणवपरतरब्रह्मसन्मात्रभूतः,
तारो रुद्रः परोक्षः पुरूषगुणमयो दिव्यवाच्यार्थरूपः ।।
प्रत्यक्षब्रह्मरूपा परिविततमा वाचकात्मा परा वाक्,
श्री गौरीशङ्करौ तौ जगति विलसतो युक्तवागर्थरूपौ ।।२२।।

"ॐ खं ब्रह्म" (शु.थ.सं.) "ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म" (ना.उ.) इत्यादि वचनोंसे 'ओंकार' ही ब्रह्मवस्तुका निर्देशक और वाचक मन्त्राक्षर माना गया है। "तस्य वाचकः प्रणवः" योगसूत्रमें यह ओंकार--परम पुरुष ईश्वरके वाचक प्रणवाक्षर कहलाते हैं। रुद्राध्यायमें 'नमस्ताराय' इस यजुर्मन्त्रमें रुद्र भगवान् "तार" हैं और वे तारक मन्त्रात्मक प्रणवरुपी हैं। ऐसा माना जाता है।

ओंकाररूप प्रणवाक्षरसे भी अधिक रहनेवाले परब्रह्म वस्तुके सत्तामात्र रूपसे रहनेके कारण परोक्ष माने गए वे परम पुरुष "तार" नामक रुद्र इस प्रणवाक्षर ओंकारके वाच्यार्थ रूप हैं। उनका वाचक शब्द ब्रह्मरूपिणी ओंकारात्मक परा-वाणी सर्वत्र पूर्ण है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

इसप्रकार वाच्य वाचक सम्बन्धसे मिलकर वाक् और अर्थरूपी गौरी और शंकर इस जगत्में विलास करते हैं।

"वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥"

(रघुबंश मङ्गल श्लोक)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ॐ स्वस्ति

नमो गोरक्षकालीभ्याम

गोरक्षग्रन्थमालायामशीतितमं पुष्पम् ८०

दिव्य उपदेश

अनुवादसहित

(गोरखाराष्ट्रिय-एकतासूत्रधार श्री ५ वडा महाराजा पृथ्वीनारायणसाहदेवको घतुलाग्दो अर्ति)

वरदीकृतगोरक्षः करदीकृतभूपतिः ।
नरभूपालजो राजा नरभूपालकोभवत् ॥

१. गोरक्षनाथ-जयन्ती वैशाखी पूर्णिमा
२. पृथ्वीमल्ल-जयन्ती श्रावण शुदि दशमी
३. पृथ्वीनारायणसाह-जयन्ती पौष २७ गते

मूल्य रू. १ ।

अष्टमवार ५००० प्रति

प्रकशकः-
बृहद् आध्यात्मिक परिषद्
मृगस्थली, काठमाडौं

शाके १८६५
संवत् २०३०
शिवरात्रि

सम्पादक र अनुवादकः-
योगी नरहरिनाथ
सिद्धाचल मृगस्थली
गोरक्षपीठ, काठमाडौं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पृथ्वीनारायणले राखेको गोरखनाथको झझल्को

वावा गोरषनाथ सेवकसुखदाये, भजहुँ तो मन लाये ।।
वावा चेला चतुर मचिन्द्रनाथको, अधवुध रूप वनाये ।
सिवके अंस सिवासनकाये, सिद्धिमाहा वनि आये ।।१।। वावा:गो०
सिंघिनाद जटाकुवरि, तुम्बी वगल दवाये ।
सम्‌थन भाग वघम्बर वैठे, तिनहि लोक वरदाये ।।२।। वावा:गो०
मुद्रा कानमै अतिसोभिते, गेरुवा वस्त्र लगाये ।
गलै माल रुद्राछे सेली, तनमै भसम चढाये ।।३।। वावा:गो०
अगम कथा गोरषनाथकि, महिमा पार न पाये ।
नरभुपालसाहृजिउको नन्दन, पृथिनारायन गाये।।४।।
वावा: गोरषनाथ सेवकसुखदाये, भजहुँ तो मन लाये ।।

(श्री ५ पृथ्वीनारायणले दर्शन पायेर गायेको)
(गोरखा पन्यालीथोक चौ० छत्रजङ्गसाहगृहात्प्राप्तजीर्णपत्रात्)

हाम्रो देश गोर्खा

हाम्रो देश हिमालका हृदयमा जेठो र अग्लो सदा
मेची कालि हिमाल माल भरिमा फैली वसेका छदा ।
माई कौशिकि गण्डकी हिम तिला भेरी र कर्णालिले
मुक्ताहार सरी गरी वरि परो राम्रो छ गोर्खा मिले !
गोर्खाराष्ट्र भयो प्रसिद्ध जगमा गोरक्षले कालिले
गोर्खालीहरुले स्वधर्म–वलले राष्ट्रीय एकत्वले ।
गोर्खा जाति जगत् भरी छरि वस्यौं जातीयताले सवै
एकै भै मिलि मातृभूमि महिमा राखौं न फाटौं कवै !
हाम्रो मौलिकता कतातिर गयो ? मूलस्थलो हो कता ?
भाषा भूषण वेष संस्कृति कला आदर्श शैली कता ?
कस्मा छन् थरका थला ? तल हुदा थारू कसोरी भयो ?
जेठो वेद हिमाल हो सकलको कैलास साक्षी छ यो !

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वैदिक–राष्ट्रिय प्रार्थना

ॐ आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर ऽ इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतान्दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥

तेजी ब्राह्मण वेदमा सब बनुन् आ राष्ट्रमा तेजिला,
शूरा स्वस्थ महारथो धनुधरा रक्षाक्षम क्षत्रिय ।
गाई धेनुसमान दूध दुहुने गोरू र साँडे बली,
घोडा वायुसरो सुशील विदुषी नारी पुरन्ध्री भली ।
योद्धा वीर रथस्थ शत्रुविजयी विद्वान् युवा सभ्य हुन्,
देवार्ची यजमानका सुत हउन् वीराग्रणी सद्‌गुणी ।
हाम्रा खेति किसानिका समयमा पर्जन्य वर्षुन् जल,
बाली-नालि फुलुन् फलुन् पजुरियुन् पाकुन् सबै औषधी ।
योग क्षेम समानरूप सबको होस् कल्प–कल्पान्तमा,
मेधावी धन–धान्य धर्म धृतिले सम्बद्ध सारा रहुन् ।
शान्ति स्वस्ति र सङ्घशक्ति जनमा जागुन् जगाउन् जगत्, ।
विश्व स्वस्थरहोस् सदाजय होवोस् कल्याण होस् लोकको

ॐ वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः ।

हामीहेरू सदा जागौं, राष्ट्रमा राष्ट्र–भक्तिले,
अगुवा हौं हित गरौं, सबैको सङ्घशक्तिले ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ॐ स्वस्ति

पृथ्वीको परिचय

पृथ्वीप्रादुर्भावमा प्रथम प्रकट भयेका विश्वोत्तुङ्ग कैलाशकूट व्योमकूट हेमकूट प्रभृति हजारौं हिमहेममणिमय मुकुटहरूले विराजमान वेदवर्णित विराटपुरुष हिमवान्का जगज्ज्येष्ठ अपाडराजवंश परम्परामा जन्मेका आदिपाल नागराज क्राचल्ल अशोक चल्ल जितारिमल्ल प्रतापमल्लहरुका उत्तराधिकारी करदीकृतकोंकणकर्णाटलाटमुरलकेरलडहालांगवंगकलिंगमिथिलमालवनेपालगुर्जरजालंधरांध्रप्रमुखमेदिनीनाथसंसेव्यमानास्थानीनिकेतनाजिर काम्बोजवानायुजवाल्हीकपारसीकाद्युद्गत वररत्नसंघसाहरसमुद्र शवलसामन्तमण्डलीमौलिमण्डितचरणसरोज तुरङ्गवन्धाढ्यविपुलचीननृपतिप्रदीक्षितराजदीक्षाशिक्षागुरु धर्मपाल महीपाल पुण्यश्लोक पुण्यमल्लदेवका पुत्र—

साम्राज्ये स कुलापातसमायातमहीभृताम् ।
वीरश्रीपृथिवीमल्लः ख्यातकीर्तिर्विराजते ॥

धनानि ददतार्थिभ्यो धर्मकर्माणि कुर्वता ।
पृथ्वीमल्लेन भूभर्त्रातिथ्य- कृतयुगीकृतः ॥

भनियेका कीर्तिमूर्त्ति धर्मराजराजतारातराण पृथ्वीमल्देवले—

यो यस्मिन् समये राजाजायतेत्र तपोवलात् ।
तेनायं धर्मिणा धर्मः पालनीयः प्रयत्नतः ॥

भने अनुसार तेस विशाल हिमाली जगज्ज्येष्ठ अपाडसाम्राज्यको गोरखाराष्ट्रिय एकता गर्न ३६६ वर्ष पछि पृथ्वीनारायणसाहदेवले जन्म लिये। गोरक्षाधीश. द्रव्य-पूर्ण-छत्र-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राम-डम्बर-कृष्ण-रुद्र-पृथ्वीपति-वीरभद्र-नरभूपाल-पृथ्वीनारायण-प्रतापसिंह-रणबहादुर- गीर्वाणयुद्धविक्रम- राजेन्द्रविक्रम-सुरेन्द्रविक्रम- त्रैलोक्यवीरविक्रम- पृथ्वीवीरविक्रम- त्रिभुवन-वीरविक्रम महेन्द्रवीरविक्रम-वीरेन्द्रवीर विक्रम साहदेवहरुका मध्यमणि गिरिराजचक्रचूडामणि वीरशिरोमणि गोर्खाली वीर वीराङ्गनाहरुका नायक पृथ्वीनारायणकी जननी पालपाली सेनराजकुमारी कौशल्यादेवी हुन् । जनक गोरक्षाचलभूपाल नरभूपालसाहदेव हुन् । जन्मभूमि गण्डकीनगमालिका मूल-राजधानी गोर्खा कैलासकूटभवन हो । पृथ्वी सात्तै मासमा जन्मेका हुन् । जन्मसमय शाके १६४४ संवत् १७७९ पौष कृष्ण आमावास्या गुरुवार रात्रि घडी १० पला १६ अभिजित् नक्षत्र सौर मानले पौष २७ गते हो । त्यसैले प्रतिवर्ष पौष २७ गतेका दिन राष्ट्रभर पृथ्वीजयन्ती राष्ट्रिय-एकतादिवस मानिन्छ । शाके १६५० मा ६ वर्षका आयुमा कैलासकूट गोरक्षगुहामा शिवगोरक्षनाथबाट पृथ्वीनारायणले दृधिवर पायेका हुन् । वंशावलीहरुमा—

अथ गोरक्षानाथस्य कृपयार्जितसद्बलः ।
पृथ्वीनारायणः सम्राड् दिग्जयेषु मतिं व्यधात् ॥

इत्यादि भनियेको छ । पिता गोरक्षकालीका पुरश्चरण-मा लाग्दा ज्येष्ठा माता चौतारा महारानी चन्द्रप्रभादेवीका सुशासन कालमा ६ वर्षका अवस्थादेखि क्रियात्मक विशेष मातृशिक्षादिका आदिका साथ मामा युवराज उद्योतसेनको

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राम्रो अर्ति पाएर पृथ्वीले राजकाजमा सक्रिय सहयोग गरेका हुन । यस विषयमा पनि वंशावलीहरुमा:—

गुरुदेवप्रसादेन मातृमातुलशिक्षया ।
पृथ्वीनारायण: सम्राट् पृथ्व्यां नारायणोऽभवत् ।।

इत्यादि भनियेको छ । १३ वर्षका अवस्थामा मकवानपुरका राजा हेमकर्णसेनकी राजपुत्री इन्द्रकुमारीसित विवाह भयेर साला दिग्बन्धनसेन सित ट ठ भयेको हो । तेसैले अर्को विवाह काशीका भूमिपति अहिमानसिंहको छोरी नरेन्द्रलक्ष्मीका साथमा भयो र ३५ वर्षका अवस्थामा संवत् १८०४ मा युवराज प्रतापसिंहसाह पछि वीर बहादुरसाह दुइटा राजपुत्र जन्मे । संवत् १८०६ मा इन्द्रकुमारीबाट यौटी विलासवती राजकुमारीमात्र जन्मिन् ।

पृथ्वीनारायणको राज्याभिषेक शाके १६६४ चैत्र शु० दि० रामनवमीका दिन २० वर्षका अवस्थामा गोर्खा-राजधानी कैलासकूटभवनका रामसाहका सिंहासनमा समस्त गोर्खाली नरनारीहरुबाट वैदिकविधिपूर्वक भयो । जनसहयोगद्वारा पूर्वापेक्षया तीव्रगतिले रणसज्जा र पार्ष्णिशुद्धि गरी विधर्मी विदेशीबाट स्वधर्म स्वदेशको सुरक्षा स्वतन्त्रता अटल राखी पृथ्वीमल्लको आदर्श दर्शाउन विजिगीषु वीर पृथ्वीनारायणले पूर्व प्रयाण गरे । २२ वर्षका आयुमा शाके १६६६ मा शल्यानकोट की महिषमर्दिनी त्रिपुरसुन्दरी देवीबाट पृथ्वीनारायणले खड्गवर पायेर भाइ भारदार सैनिक जनका तरवारले खिञ्चेतकोबाटो नुवाकोटमा प्रवेश गरे ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एवं बेलकोटक्रमेण मुख्यतया शाके १६७८ मा शिवपुरी प्रवेश भयो । शाके १६८४ मा मकवानपुरप्रवेश भयो । तेसै वर्ष सिन्धुलीप्रवेश भयो । शाके १६८७ मा कीर्तिपुर-प्रवेश भयो । शाके १६९० मा काठमाँडुप्रवेश भयो । ११ दिन पछि पाटनप्रवेश भयो । शाके १६९१ मा भात-गाउँप्रवेश भयो । शाके १६९३ मा तनहुँ प्रवेश भयो । तेसै वर्ष भीरकोट गरहूँ सतहूँ पैञ्यु ऋसिङ्ग विरिङ्ग आदि प्रवेश भयो । शाके १६९५ मा चौदण्डी विजयपुर तथा तेसै ताक सुखिम तिष्टा आदि प्रवेश भयो र गोरखाराष्ट्र-को विशाल एकता हुँदै आयो । पृथ्वीनारायणले स्वयं सर्वत्र प्रायः पैदलयात्रा गरेर स्वावलम्बी भयेर धर्मशासन गरी जनमनो योग द्वारा धर्मविजय गरेका हुन् ।

पृथ्वीनारायणले अघि संवत् १८११ मा जाजरकोटका हरिसाह प्रभृति कतिपय प्रमुखराजाहरुलाइ मित्रिसव्व काशीमा डाकी मणिकर्णिकाका अर्धगङ्गाजलमा पसी धित धर्म (सन्धिपत्र) गरेका थिये । एवं अन्यान्य राजाहरुसित धर्मसन्धि भैसके पछि संवत् १८२५ माघ शु. दि. ५ रोज मा हरिसाहका छोरा गजेन्द्रसाह सित ७०१ रुपियामात्र बुझाउने गरी सन्धिपत्र भयो । यसैगरी पालपा शल्यान प्यूठान कास्की लमजुङ्ग पर्वत दुल्लू डोटी कुमाउ सित धर्मसन्धि भये । संवत् १८३१ भाद्रमा सिद्ध भगवन्त-नाथका सम्पर्कले जुमलेश्वरसित धर्मपत्र भयो । एवंप्रकार लासा कलकत्ता पुरैनिया पटना अवध काशी बेतिया

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

लखनौ आदिसग दौत्यसम्बन्ध सन्धिहरु भये । यसरी गोर्खाराष्ट्र निर्माणको भूमिका बन्यो ।

पृथ्वीनारायणभन्दा पहिले त्रिशूली चम्पावती देवघाट लाकै मनाङ् रुद्रभोट भित्र १२००० बाह्र हजार धुर हुनाले १२ हजारिया गोर्खा भन्ने परिभाषा चलेको हो । रामसाह्का विधानलाइ १२ बाह्र हजारिया गोर्खाका २४ चौविश स्थिति भन्ने चलन भयो । रामसाहको स्थिति र शासन विवेक पूर्वक हुनाले 'न्याय हराया गोर्खा जानु, विद्या हराया कास्की जानु, भन्ने उखान प्रशिद्ध भयेको हो । गोरक्षकालीवरलब्धतेजा धर्मविजयी पृथ्वीनारायणले सैनिक र जनताको हातेमालो गरी ३० वर्षसम्म निरन्तर अथक प्रयाण गरेर राष्ट्रियएकताकेन्द्रबिन्दु १२ हजारिया गोरखा-राज्यबाट अपाङराज पाछ छुटएका सानातिना अनेक टुक्राटाक्रीलाइ राष्ट्रियताका रसायनले जुटायेर विधर्मी विदेशीहरूलाइ हटाइ भूमण्डलमा अखण्ड दण्डायमान हिमवत्खण्डलाइ मार्कण्डेयपुराणवर्णित रणचण्डी दैवैक्य-शक्ति दुर्गाको आदश दुर्धष दुर्ग, विशाल गोरखाराष्ट्र बनाए । महिषमर्दिनी दुर्गाबाट खड्गवर पायेर सबत्र पत्र-हरुमा 'श्रीदुर्गा सहायः' लेखने र 'श्रीकालिका सहाः ।। श्री ३ सिव गोरषनाथ सहा-।।' लेखने चलन चलाये ।

पृथ्वीनारायण पूर्वस्मृति राखेर आफ्नु प्राचीन वैदिक आदर्श आर्यसभ्यता हिमवत्संकृति कला कौशल धर्मनीति रीति स्थिति मान मर्यादा वेष भूषा भाषा साहित्य इतिहास

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भूगोल जननीजन्मभूमिभक्ति आत्मविश्वास आत्मगौरव राष्ट्रियएकता स्वतन्त्रता स्वावलम्बन खानि पानी कृषि घरेलु कुटीर उद्योग विकाश द्वारा देशलाई ऐश्वर्य सम्पन्न पारेर नुवाकोटमा राष्ट्रका भावी सन्तान लाइ यो दिव्य उपदेश दियेर शाके १६६६ संवत १८३१ माघी संक्रान्ति का दिन पौष शु० दि० १० सूर्योदय वेलामा गण्डकी पारकोटक्षेत्र नुवाकोट त्रिशुली तादी त्रिवेणी जालपापीठ देवीघाट मोहनतीर्थमा जलयोग प्राप्त गरी कैलासवासी भये ।

पृथ्वी को अर्ति

पृथ्वीका अर्ति = दिव्य उपदेशमा पृथ्वीका जीवनचरित्रको सिंहावलोकन र राष्ट्रको भावी कार्यक्रम छ । सदाचारमय तपोमय संघर्षमय निर्माणमय प्रगतिमय एकतामय आदर्शमय पृथ्वीजीवनका विशिष्ट घटनाहरुको संक्षिप्त उल्लेख गोरखावंशावली गोरखाधीशसैन्यवर्णन गोरखासैनिकइतिहास भक्तविजय विजयतिलक कवितानिकषोपल पृथ्वीन्द्रवर्णनोदय पृथ्वीनारायणदिग्विजय पृथ्वीप्रतापसवाद जयरत्नाकार त्रिरत्नसौन्दर्यगाथा राजनीति-कल्पद्रुम राजविधानसार संस्कृतसन्देश (१८ अङ्क) इतिहासप्रकाश (४ भाग) गोरखा-मनःकामनाताम्रपत्र नुवाकोटभैरवीताम्रपत्र कनकपत्रहरु नुवाकोटदुर्गद्वारशिलालेख, नुवाकोटमाडिदरबारसिलालेख वसन्तपुर नौतले राजप्रसादका दुइटा शिलालेख चक्रपाणि-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

लिखितज्योतिषपुस्तक प्रभृति अनेक कोरी पुस्तक कनकताम्र-शिलालेखहरुमा पनि छ र यस्ता अनेकन ऐतिहासिक ग्रन्थआदिको अनेक कारणबाट नाश भयो। शेषको पनि क्रमशः हुँदैछ। यस्ता राष्ट्रिय सम्पत्तिको सुरक्षा र सदुपयोग सबैले गर्नु पर्छ। तिष्टा काङ्डा गङ्गा दिगर्चा सम्मका बिशाल हिमाली गोर्खाराष्ट्रको उत्थान गर्ने ५२ वर्षका कर्मठ जीवनका ३२ वर्षका राज्यशासन र ३० वर्षका बिजय कालमा स्वयं अनुभव गरेका र एकाग्र चित्तले सम्भावना गरेका कतिपय अर्तिका कुरा—

'बुढा मरै, भाषा सरै' भनि भन्छन्. तिमिहरु सबै छेउ सुनाइ गयाको भन्या. तम्रा सन्तानलाइ. सुनाउला र तम्रां सन्तानले. हाम्रा सन्तानलाइ. सुनाउनं र यो राजे थाम षानन्. भन्ने उत्थानिका उठायेर पृथ्वीले सबैसा सारी गर्येका छन्। यस्ता दिव्य बिचारधाराहरु पृथ्वीका हृदयबाट समय समयमा फुटेका छन् र श्रोताहरुले लेखि राखेका कतिपय फेला परेका क्रमशः प्रकाशमा आउने छन्। नेपाल जितेर दशैं मान्न गयेका बेलामा गोर्खामूलराजधानीमा बाँधेको धुवाँवर्तीको स्थिति तथा देवीघाटमा प्राण प्रयाणका समयमा दियेको मर्मस्पर्शी करुण अनुकरणीय दिव्य अर्ति आदि अनेक प्राप्त एवं अनुसन्धेय छन्।

पुस्तकपरिचयः— त्रिशूलीघाट आउनु भन्दा अगाडी नुवाकोटैमा भीष्मशय्यावाट क्रमशः शनैः शनैः जीवनका

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रमुख घटनाहरूको स्मृति लियेर अनेका अर्तिका कुरा सभासङ्गहरुमध्ये धेरैले जस्ताको तस्तो टिपि राखेका थिये । कसैले घटमा कसैले कागतमा । तिनमध्ये गोरखाली वडा वीर शिवरामसिंह वस्न्यातका सुपुत्र सुमति काजी अभिमानसिंह वस्न्यातले लेखि राखेको पाण्डुलिपि पुस्तक निजका सन्तान श्यामकाजी (वखमानसिंह) वस्न्यातका घरमा सुरक्षित छ । यस पुस्तिकामा बलीयो नुवाकोटी कागत छ । १० दश पृष्ट छन् । पौने ११ एघार इञ्चि लम्बाइ छ । साड़े ८ आठ इञ्चि चौडाइ छ । तल १ एक इञ्चि चाकलो १½ इञ्चि लामु टुक्रा मुसाले काटेको छ । तर विशेष गरी अक्षर भेटन पायेको छैन । पुस्तक अर्ध जीर्ण अवस्थामा छ । कालो पाको मसी छ । पुराना नागराक्षर छन् । विरामसूचक (˙) यस्ता बिन्दुहरू छन । अनुनासिकसूचक यस्ता (¨) दुइटा ठाडा बिन्दुं छन । प्रसङ्गसमाप्तिसूचक (।।) यस्ता दुइ छेका छन् । (उप्रान्त ।।) भनेर नौलो धारा उठाउयेको छ । लेखता प्रत्येक धारा प्रघट्ठक (पैरा) छुट्याइ लेखियेका छन् ता पनि छापता सबैलाई संम्झन सजिलो होस भनेर पृथक पृथक प्रसङ्गका काण्डकाहरु छुट्यायेर छापियेका छन् । अरू मूल जस्ताको तस्तो छापियेको छ । मुखपत्रमा आदि अन्त मध्यका र पृथ्वीको चित्र छापियेका छन् । आदि अन्तमा एक एक मढ्यायेका दुइ पत्रे आवरण पत्र लेख रक्षार्थ खामी छन् । मुख पत्रमा 'श्रीगणेसाय नमः श्री श्री श्री पृथिनारानसाहको

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

किताप हो: ।। स्वस्ति सर्वोपमायोग्येत्यादिसकलगुणगरिष्टराजभाराखाद्यर्थं' यति लेखियेको छ । अन्तिम पत्रमा ।। 'श्रीगणेशाय नमः ।। ।।इश्वरौवाच।। श्रीकालीका सहायः।। यस्तो लेखियेको छ ।

पुरुषविद्यानित्यत्वात् । भाषा परिवर्तनशील हुनाले र तेल बेजाको परिभाषामय संक्षिप्त वीरभाषा आज दुरूह भै सकेको हुनाले जन साधारणलाई सुबोध होस भनेर अन्तमा अनुवाद पनि प्रकाशित गरिएको छ । तर समस्त धर्मनीतिशास्त्रहरूको सारस्वरूप पृथ्वीको अति केवल अनुवादमात्रले बुझ्नु सजिलो छैन । शब्दार्थमात्र बुझेर पनि काम लाग्दैन । देश काल पात्र हेरीकन कुन ठाउँमा कुन शब्दले कुन आशय प्रकट गरेको छ ? त्यो कुरा पृथ्वीकै भूमिकामा नबसेर हृदयङ्गम गर्न सकिन्न । धेरै कुरामा धेरै जनालाई "यसो किन भने होलान् ? भन्ने पनि पर्दो हो । परन्तु आपातालनिमग्नपीवरपुजोनाति मन्थाचलः ।

पृथ्वीका अर्तिमा प्राधान्येन—अवतरणिका । उद्देश्य । उत्थानिका । रूपका सन्धि । रोज खोज=चुनाव । हाते-मालो । पृष्ठरक्षा । वरप्राप्ती । प्रयाण । प्रथम जय । प्राणि शुद्धि । परराष्ट्र नीति । युद्ध नीति । गृहनीति । शैलदुर्ग । स्थितिरीति । ३ सहर । व्यापारनीति । कुटीरउद्योग । जनधीन । कर्मचारिनीति । राष्ट्रियता । नियुक्ति । न्यायस्वरूप । सैनिकनीति । जनसैनिकराजसम्पर्क । राजाज्ञा । मौलभृत्य ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मुद्रानीति। न्यायव्यवस्था। खनिजविकाश। कृषिविकाश। सिंहावलोकन। मुगलदमन। फिरिङ्गिदमन। इतिहास सैन्यविन्यास। राष्ट्ररक्षा इत्यादि। सभ्य समृद्ध राष्ट्रलाई चाहिने कुराको सूत्ररूपमा उपदेश छ।

पृथ्वीलाई आफ्ना राष्ट्रको भौगोलिक स्थितिको यथावत परिचय थियो। दुई ढुङ्गाको तरुल भनेर लघु रूपकमा महत्त्वपूर्ण निर्देश गरेका छन्। पृथ्वीले आफ्ना इतिहासको सिंहावलोकन र सारोद्धार पनि गरी उपयोग गरेका थिये। मगरातको राजा मैंहु भनेर इङ्गित गरेका छन्। पृथ्वीलाई देशानुकूल युद्धमा ठूलो अनुभव थियो। जाईकटक न गर्नु झिकिकटक गर्नु भनेर सामरिक हानि लाभ दर्शायेका छन। पृथ्वीले देश जनतालाई धनधान्य समृध्द बनाई राखने स्वानुरूप उपाय जानेका थिये र सर्वे भवन्तु सुखिनः भन्ने उदार भावना राखेका थिये। गोढप्रसाह देखि उभो आउन न दिनु नमना देषाइ सधाउनु षानि चलाउनु, अवाद गर्नु, राजाका भण्डार भन्याका रैतिहरु हुन, प्रजा मोटा भया दरबार बलीयो रहन्छ, इत्यादिवाक्यहरू तेस बातका निदर्शन छन्। मालमा ५ पाथीको भाव छदैछ। पृथ्वीले आफ्नै जीवनमा माथिका पध्दतिले गोर्खा राष्ट्रलाई सामर्थ्यशाली बनाई सकेका थिये। फत्य गर्थ्या, र यो ऐश्वर्य गर्‍याको हों, भनेर प्रत्यक्ष दर्शायेका छन। भ्रष्टाचारी कर्मचारीका आडमा परचक्रीले खुट्टा टेकछन। हरिपले दगा गर्छ। भनेर पृथ्वी न्यायपालिका र कार्यपालिकाको नियुक्ति ठूलो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विवेक राखेर गर्थे । घुस दिन्या र घुस खान्या इन दुइको ता धन जित गरि लियाको पनि पाप छैन। दुनिया जस देषि राजि रहन्छन उसैलाई कजाइ दिनु इत्यादि वाक्य तेस कुराका साक्षी छन र पानमक्षाः स्त्रियो द्यूतं … अष्टौ दोषान् विवर्जयेत्। पृथ्वीको सिध्दान्त थियो।

राजानः सन्ति नो किं दिशि दिशि धरणीपालवंशाब्जिजाता द्यूतस्त्रापाबलासु प्रणिहितमनसो दानयुध्दप्रहीणाः । पृथ्वीनारायणेशो रिपुदल-दहन-प्रौढ-दावानलोसौ दाने मेघोपमानो जयति नीज धरा-वारित-द्यूत-दोषः । इत्यादि अभिलेख प्रमाण छन्। पृथ्वीमा जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। भन्ने सच्चा मातृभक्ति र मातृ-भूमिभक्ति थियो, फलस्वरूप मातृमातुलशिक्षाले पृथ्वीलाई पृथ्वीनारायण बनायो। पृथ्वीनारायण र मानदेवका जीवनचरित्रमा आमाको र मामाको योगदान छ। संसारका प्रायः सबै जसो महान् व्यक्तिहरू मातृशिक्षाले फष्टायेका छन। तेसैले मातृशिक्षा मातृभाषा मातृभूमिहरुले गौरव पायेका हुन। आपकी कमाइ र बापकी कमाइका अन्तर हुन्छ। पृथ्वीले गरेका राष्ट्रिय एकतामा पृथ्वीको ठूलो ममत्व थियो र आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरद शतम्–भनेर राष्ट्रका सच्चा प्रतिनिधि सबै जनालाई सम्बोधित गरेर बुढा मरै. भापा. सरै. भनि भन्छन. तिमिहरू सबै छेउ सुनाइ गयाको भया. तम्रा सन्तानलाई सुनाउला र. तम्रा सन्तानले हाम्रा सन्तानलाई सुनाउनन् र यो राजे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

थामि घानन् भनेर दिव्य उपदेशको पृष्ठभूमि रचेका छन । राष्ट्र थामनु तथा फुलाउनु फलाउनु नै यस दिव्य उपदेश को मुख्य उद्देश्य हो। खुडालेमात्र आर्जेको देशलाई आफ्नु न ठान्नु. जुन देशमा आफ्नु स्थिति रीति (सभ्यता–संस्कृति) चल्दछ. त्यो मुलुक स्थायी हुन्छ–भन्ने रामसाहका सिध्दान्तानुसार बाह्र हजारिया गोर्खाको राम्रो स्थिति बाँधी राष्ट्रका अङ्ग प्रत्यङ्गमा एक नाश स्थायी राखने इच्छाले पृथ्वीले. रामसाहले बाँध्याको स्थिति पनि हेरी सकें. ईश्वरले दियो भने म पनि बाह्रहजारको स्थिति बाँधि जाला. आफना जात विसेषको कर्म गर्नु, कुलाधर्म न छोडनु–इत्यादि भनेका छन् र उठान गरी स्वर्ग हुनेका अनुयायीहरुले बैठान गर्नु पर्छ। तर हामीहरु त्यो नीति बहादुरसाह पछिबिर्सेर बसेका छौं । ऋमै संझौं । क्रिया केवलमुत्तरम् '। पृथ्वीले मनुस्मृति शुक्रस्मृति आदि नीति शास्त्रानुसार शैलदुर्गको महत्व बुझेका हुनाले. चिस्व ढुंगो छोडेर दहचोकका डाँडालाई औल्याएका छन । ऐतिहासिक सिंहावलोकन गर्दा मानव समाज जति तल ओर्लदै गयेको छ. उति तल ओर्लदैछ। वैदिक सभ्यता डाँडामाथि उम्रेको हो। पृथ्वी लुगा लत्ता भन्दा अन्न पानी लाई विशेष महत्व दिन्थे । च्यांगा पांगालाई राज्य आर्ज्य थ्यउ. कुलो काटी अबाद गर्नु; इत्यादि बाक्य स्मारक छन। वैदिक सभ्यताले पनि अन्नं बहु कुर्वीत तद्व्रतम भन्दछन। विलासिताले देश जातिको विनाश गर्छ भन्ने कुरा पृथ्वीले

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रत्यक्ष गरेका थिरे र. राग तानको अभ्यास कसैले न गर्नु भनेका छन। परिमितमात्रामा स्वदेशी साहित्य संगीतको अनुमति दियेका छन। द्रव्यदोषदर्शी दुर दर्शी पृथ्वीले अति सर्वत्र वर्जयेत भनेर राजानुजीवीवर्गको दुर्मत मात्रै राष दिनु दौलथ भयेकाले तरवारमा पसि मर्न मार्न सक्तैनन र हरिपको चमक हुन्छ, भनेका छन। हो पनि। दाल भात तर्कारी. जिउ धन सर्कारी. भन्नेले देश जाति धर्मका निमित्त जत्तिको कम्मर कस्छ उत्तिको धनीहरुले कस्तैनन्। उनलाइ जिउ कन बचाउनको फिक्रि हुन्छ। स्वतन्त्रता बचाउने उत्तिको चिन्ता राखतैनन्। बिरलाकोटी अपवाद हुनु अर्कै कुरा हो। प्रजा मोटा भया दरबार बलियो रहन्छ, भन्ने पृथ्वी-विभज्यभोजी नीति हो। पृथ्वीले बिधर्मी बिदेशीको विरोध गरेर स्वधर्म स्वदेश राष्ट्रिय एकता गर्ने—कार्यं बा स धयामि कार्यं बा पातयामि. भन्ने संकल्प गरेर बाल्यावस्थै देखि भोक प्यास नींद सुख न भनेर स्यापु बढी बढी सर्वत्र धायेर आफुजस्ता भाइभारधार द्वारा स्वय पनि भगीरथ प्रयत्न गरी समस्त जनतामा चेतना जगायेर राष्ट्रनिर्माण गरेका हुनाले—मेरा साना दुषले आर्ज्याको मुलुक होइन. सबै जातको फुलबारि हो. सबै लाइ चेतना भया यो फुलबारको छोटा बडा चारै जात छत्तिसै बर्नले. कुलाधर्म न छोडनु. इत्यादि. भनेर राजा प्रजाका सहयोगले सच्चा प्रजातन्त्रको दृष्टान्त देखायेका छन्। हाम्रा बैदिक उदार उदात्त नीतिका अगाडी अचे-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

लका अरु कुनै अधुरा नीति महत्व राखतैनन् । पृथ्वीलाई राजा सबैको साजा. यथा राजा तथा प्रजा· भन्ने आदर्श थाहा थियो र राजाले न्यायी विवेकी हुनु पर्छ भन्ने कुरामा आस्था थियो । तब राजाले ठुलो निञा निसाफ हेनु अन्याय मुलुकमा हुन् न दिन्. भनेका छन । किनकि राजाको र राज्यको पतन अन्यायले हुन्छ । राजाले प्रजालाई दिनु पर्ने सबभन्दा ठूलो कुरा न्याय हो । प्रजाले सम्मान दिनु पर्छ । मानो हि महतां धनम् ।। अन्यायले प्रजा कुपित हुन्छन् र प्रकृतिकोपो हि सवकोपेभ्यो गरीयान् ।। हन्ति राष्ट्रं सनायकम् । प्रजाका फुलवारीलाई सदा फुलाइ फलाई राखनु पर्छ । मालाकार इव प्रयोगकुशलो राजा चिरं नन्दति । राजा प्रजा र सैनिकहरू आपसमान मिलेर टाडिदा छुल्याहा फटाहा स्वार्थीहरूले मौका छोपछन् । पर-चक्रीको आक्रमण भन्नु हुल बठछ । घरफगडा गृह-कलह भन्नु कुल खेल मच्चन्छ । तेसमा राजा प्रजाको संहार हुन्छ । तैस्तो न होस भनेर पृथ्वीले संकेतमा राजा चतुर भया· सिपाहि र· रैति हात हात गरि राषनु र हुल कुल हुन पाउदैन, इत्यादि भनेका छन् । पृथ्वीका एक एक अमर वाक्यमा राजनीति धर्मशास्त्रहरूका अनेक अध्यायको सारांश छ–

गोर्खा दक्षिण-बाहु सैनिक भये बायाँ भुजा हुन् प्रजा

गोर्खाराष्ट्र विराट वैदिक पुरुष कैलास राष्ट्र ध्वजा ।

मुक्ताहार नदी वनालि कपडा राष्ट्रीयता जीवन

राजाले जनता संगै हुनु सदा कर्तव्य हो पावन ।६

पृथ्वीले–स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारसेवितो दृढभूमिः– ।७

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भने झैँ कुनै पनि पुरानु अभ्यास कार्यकुशल हुन्छ भन्ने कुरा वुझेर-मौलान् भृत्यान प्रकुर्वीत-भनाइ अनुसार-घरका पुराना सेवक जाचि घर (गृह विभाग) बलीयो राषनु. बाहिरिया भान्छ्याले दरवारमा विथित गराउँछन्. इत्यादि भनेका हुन्। गुलियो खाने लाइ लुनो लाग्दछ। नून धेरै खानै सकिन्न। घूस खानु र भूस खनुएकै हो। अन्यायोपार्जितं वित्तं दशवर्षाणि तिष्ठति। प्राप्ते त्वेकादशे वर्षे समूलं च विनश्यति॥ त्यो न होस् भनेर-गुड पाछ लाग्न न दिनु. नून पछि लाउनु. भनेका छन्। अर्थात् कसैको घूस खान न दिनु। सत्यका कमाइमा लगाउ भनेको हो। देशका निमित्त देह अर्पण गर्ने सैनिक वीरका पुण्यस्मृतिमा विवेक राखी उसका परिवारलाइ वीरता दिनु कर्मठ सैनिकको आह्वान गर्नु हो र राष्ट्रलाई बलिष्ठ पार्नु हो भन्ने नीतिको निदर्शन पृथ्वीले यसरी गरेका छन्-लडाइमा पनि हान्न्या र. सष दिन्या. दुबै बरोबर हुन्. मऱ्यो भन्या. उसका छोरा षुडाहान्न्या न हुञ्ज्याल मरवट दिनु षुडा हान्न्या भया पछि. जागिरमा उकालि दिनु र. राजाले विवेक राषी दिया देस देसका सिपाहि पनि आसा राषि आउन्छन् र. यस्व भया तरबारिया सिपाहि हात लाग्छन् इत्यादि यथा नाहरसिंह केहरसिंह अभिमानसिंह धौकलसिंह अमरसिंह प्रभृति। पृथ्वी अर्थशास्त्रका प्रयोगात्मक विद्वान थिये। हुन पनि यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान्। अन्यथा ज्ञानं भारः क्रियां विना। अनीति असफल भयो भने घुँडा टेकाउँछ। मुद्रास्फाति गर्न सकियेन भने व्यापार अर्काका हात पर्छ। हुदा हुदा एक दिन घर खेत अर्काका हात पर्न जान्छ। सो नहोस् भनेर टक्सार पनि चोषो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चलाउनु. भनेका हुन् । चोखो टक्सार चल्यो भने धतु तुल्य मूल्यमा सर्वत्र टक चल्दछ र कुनै अवस्थामा मुद्रास्फीति कुण्ठित हुदैन धातुप्राप्तिका निमित्त खानि चलाउनु पर्छ । हाम्रा देशमा खानिका अखण्ड भण्डार छन् । यसबारेमा पृथ्वीले-षानि भयाका ठाउमा. गाउभया पनि गाँउ अरु जगामा सारि कन पनि षानि चलाउनु-भनेका छन् र स्वयं यसै गरेका थिये । यसो गरियो भने कहिले पनि देश दरिद्र हुदैन । पृथ्वीले न्यायको गुण तथा अन्यायको दोष जानेका थिये । अन्यायको डडेलो सबलाई पोल्छ । प्रथम प्रजा पोलिन्छन् । अनि फिजाले मुक्षा सल्काउछन् । तस्मात्-निव्यासास्त्र बमोजिम अदालत चलाउनु अदालतका पैसा दरवार भित्र नहालनु. यस्व भया असत्यको दोष लाग्दैन. तव राजाले ठूलो निव्या निसाफ हेर्नु. अन्याय मुलुकमा हुन निदनु इत्यादि भनेका छन् । पृथ्वीले देशानुकूल खेती बढाउन जानेका थिये । सम-तल भूमिको देखासिखि गरेर अलिकति थाइलो पायोको ठूल्ठूला क्याम्पा र अनावश्यक प्रपञ्च फैलायेर कृषियोग्य भूमि रोकेर अनिकाल डाक्ने नीति थियेन । आकाश जति उछिन्न सके पनि हुन्छ । यस सिद्धान्तका प्रत्यक्ष प्रमाण नुवाकोटदुर्ग र वसन्तपुर कैलास प्रभृति छन् । आकाशमा सात तला नौ तला जति भये पनि कृषि-योग्य समथर भूमि न मासियोस् भन्ने विचारले गह्रो बन्न्या जग्गामा घर भय पनि. घर अरू जग्गामा सारि. कुलो काटि षेत वनाई अबाद गर्नु भनेका छन् र गिन्चेत आदिमा गरेका पनि छन् । अन्न प्रशस्त छ भने गुफामा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

र डाँडाँमा बसेर खाये पनि हुन्छ। पृथ्वीका सिद्धान्तमा यथासाध्य जल वायु स्वच्छ भयेका रमाइला डाँडा काँडामा बसति गर्नु पानी लाग्ने खेती हुने ठाउँ न रोक्नु भन्ने छ। परन्तु अचेल विपरीत चलेको हुनाले यो हालत छ। आर्थिक दृष्टि र चरित्रका दृष्टबाट राष्ट्र तथा समाजको हानि गर्ने कुनै वस्तुको आयात निर्यात (निकासी पैठारी) न गर्ने नीति थियो जसका प्रभावले पृथ्वी भन्थे यो ऐश्वर्य गर्‍याको हो।

दिव्य उपदेशलाई पृथ्वीको अर्ति भन्न सकिन्छ जीवन भन्न सकिन्छ राष्ट्रनिर्माणपद्धति भन्न सकिन्छ राष्ट्र-सञ्चालनविधान भन्न सकिन्छ र धर्मानुशासन भन्न सकिन्छ। यस्ता कुराको अध्ययन सबैले गम्भीरतापूर्वक गरेर सार-ग्रहण गरी सदुपयोग गर्नु राम्रो छ।

गोरक्षाधीशरक्ष्यामरवरनगरप्रोद्यदुद्दामधाम-
ग्रामग्रावाभिरामावनिधरनिकटस्थायिगोर्षापुरीशः।
नेपालाधीशभालास्थिततिलकमपाकृत्य संप्रीतचेताः
पृथ्वीनारायणाख्यः क्षितिपकुलमणिर्वृवृतीतिस्म लोके॥

(नुवाकोटभैरवीकनकपत्रमा)

योगी नरहरिनाथ सिद्धाचल मृयस्थली
गोरक्षपीठ काठमाँडु शाके १८८१ शिवरात्रि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राष्ट्रध्वजवन्दना

यो हाम्रो शिवशैलका शिखरमा राष्ट्रध्वजा वैदिक
रातो सूर्य र चन्द्र अङ्कित सदा गोर्खालि आह्लादक ।
हाँगा छन् छरिता त्रिकोण दुइटा फर्फर्गरी नाचने
जस्मा राष्ट्रिय एकता र ममता जातीयता बाँचने ॥१॥

हाम्रा भाल हिमालको तिलक यो कैलासको यो टिको
भूमी मातृ–निधारको चहकिलो सिन्दूरबिन्दू निको ।
राष्ट्रोत्थान वसन्तको कुसुम यो एकत्वको दूत हो
हिउँचूलीहरुका हजार शिरको चूडामणी शोण हो ॥२॥

यो हो मानवता–विकाश–दिनको सन्ध्या उषाकालको
झुल्के घाम हिमालको प्रकृतिको रातो कमल् तालको ।
हाम्रो राष्ट्रिय शक्ति भक्ति शिवको सौभाग्य हो भूमिको
गौरीको अनुराग हो हृदय हो राष्ट्रध्वजा हो निको ॥३॥

यै राष्ट्रध्वजको छहारि पृथिवीनारायणधीशको
पाई नायकता भयेर विजयी गोरक्षकालीशको ।
गर्दै त्यो जयकार वीरहरूले गोर्खा गरे विस्तृत
रक्षा देश र धर्मको पनि गरे संसार भो विस्मित ॥४॥

स्वर्गै देखि गरीयसी छ जननी यो जन्मभूमी भनी
हाम्रो शान निशान ली समरमा सर्वत्र जेता बनी ।
पाये वीरगती ति वीरहरुले वीराङ्गनाले पनी
गोर्खाली इतिहासमा अमर छन् सत्कीर्तिका ती धनी ॥५॥

गोर्खा–सैनिक-कोटमा कटकमा कैलासका कूटमा
गङ्गाका तटमा हिमाल्मुकुटमा राष्ट्रध्वजा भोटमा ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हल्ली हल्ली बतासले विजयका बाजासितै तालमा
लम्कयो लम्कि रहोस् सदा अटल यो शार्दूलका चालमा ॥६॥
राष्ट्रीयध्वज लाइ राखि धुरिमा सम्मानका साथमा
पुर्खाका इतिहासका सुपथमा शिक्षादिका साथमा ।
गर्दै देशविकाश सर्वविधिले बाचौं सबै साथमा
हाम्रो राष्ट्रिय भावना स्थिर रहोस् सौजन्यका साथमा ॥७॥
राष्ट्रीयध्वजवन्दना स्थिर सदा राष्ट्रीयता राखने
गोर्खालीहरुले मिलेर पढने कण्ठा अटल् राखने ।
जोडी हात झुकाइ माथ सबले गर्नै सदा वन्दना
भन्दै लिन्छ विराम यो नरहरी योगी छ यो प्रार्थना ॥८॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गोरक्षग्रन्थमालायामशीतितमंपुष्पम ८०

ॐ स्वस्ति

श्री ५ वडा महाराजा पृथ्वीनारायणसाहदेव
को
दिव्यउपदेश
(पृथ्वी को अति)

स्वस्त श्रीगणेशाय नमः ॥ ॥ श्रीकालिका सहाः 卐 ॥ ॥ श्री ३ सिव ※ गोरषनाथ सहाः ॥ ॥ श्री ५ प्रिथिनारायण ❂ सहाः । ॥ ॥ श्री श्री श्री ५ बुढा. महाराजा ❋ ले तिन महर. नेपाल र. हिंदुपति + को राज लिया पछि, पछिल्ला पटक. नुहाकोट ⚘ मा पाउ लाग्नु भया मा. ✤ गुरु

卐 शुद्धरूप 'श्रीकालिका सहाय' । यो वाक्य पृथ्वीनारायणसाहका समयदेखि राजेन्द्रविक्रमसाहका समय सम्म निजामति लेखकहरु प्रत्येक लेखको शिरमा लेख्दथे । ※ शु. रू. 'शिव गोरक्षानाथ सहाय' । ❂ श्री पृथ्वीनारायमसहाय । ❋ रणवहाहादुरसाहको समयदेखि पृथ्वीनारायणसाहलाई वडा महाराजा भनी लेखने र बीलचालमा बुढा महाराजा भन्ने चलन १७० वर्ष जति चलेको देखिन्छ । + विजयपुर र मकवानपुरका सेन राजाहरुले हिन्दुपति भन्ने पदवी लियेका थिये । अचेलको किरात र पर्सा देखि तिष्टा सम्मको प्रदेश इनका राज्ममा थिये । ⚘ प्रसिद्ध नुवाकोट तिन छन् यो पहिला नुवाकोट त्रिशूलीका वांयां पट्टिको हो ✤ वि सं. १८३१ मा ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रोहित.[1] थर.[2] घर. भैयाद.[3] भारादारा.[4] र. आयना ददा. सुरथिसिं.[5] राना. सबै का.[6] बुढा पाका छेउ. हुकुम भया का कुरा.[7]

बुढा मरै. भाषा[8] सरै. भनि भन्छन्. तिमि हरु सबै छेउ सुनाइ गयाको भया. तम्रा[9] सन्तानलाई. सुनाउला[10] र तम्रा सन्तान ले. ह्राम्रा सन्तान. लाई सुनाउनं र. यो राजें[11] थामि षानन्: ॥

उप्रान्तः ॥ ह्राम्रा. मुमा हरु. तिन हुन्. ह्ामि तिन षोपिका. पाच पांडुवा[12] को अवतार भयाका थियौं. मेरा बिवाह[13] मकुवानपुर मा भया को थियो. डोला[14] सुम्पेको थियन[15] र. डोला पनि लैयाउ.[16] नेपाल पनि देखि आउ भनि मकुवानपुर गव्यु र. पुग्य[17] पाछ. दिकबन्दसेन[18] लाई. यघटा[19] कुरा को. करेउलि.[20] लियेर. भने एक.दन्ता हात्ति र. नवलाषि꙰ हिराको हार, दिन्छौ भन. डोला पनि लै जाला. दिन्न भन्या. काढ तरवार सित पनि लै जाला. भनि. ह्राक पारि. नपाले. राजाले चिन्नन् र. पक्रनन् भनि स्याघु꙰ वढि. रापतिका꙰ तिरै तिर. भानु꙰ जैसि. कुलानन्द जैसि. अरु. थर. घर. पनि,

१ शु रू. 'गुरु पुरोहित' । २ परिशिष्टमा छ । ३ महाराजाका भैयाद । ४ मन्त्रिवर्ग । ५ शु. रु. सुरथसिंह । ६ अरुहरूका पनि बुढा पाका । ७ यतिसम्म प्रस्तावना पछिका कुनै लेखकले जोडेको देखिन्छ । ८ शु. रू. बुढा मरे सरे । ९ शु. रू तिम्रा । १० शु रू सुनाउनन् । ११ शु. रू. राज्य । १२ पाण्डव । १३ शु. रू. विवाह । १४ दुलही । १५ थियेन । १६ लियेर आउँ । १७ गर्यौं । १८ पुग्या पछि । १९ दिग्बन्धनसेन । २० एउटा कर लगायेर ।

꙰परिशिष्टमा ꙰ घुम ओढेर ꙰ भैंसेबाट ह्याटुडा तर्फ गयेको सानु नदी ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

साथै मा थिया. चन्द्रागिरि.१ मा आइ पुग्या पछि. नेपाल कुन्होर२ भनि सुध्याज्या र. त्यो भादगाउँ हो. त्यो पाटन हो. त्यो काठमाडौ हो. भनि देखा (या) र. मेरो मनमा (य.)तनै सहर को. राजा हुन. पाया ता. हदो हो. भन्ने यस्तो. मन मा परि रहेथ्यो. उसै वेला मा. ३ दुवै जोस ले भन. हजुरको मनकान्छ्या अबिलाष्. पुग्ला. महाराजा भन्या र. मलाई आसर्जे लाग्यो र मेरा. पेटका. कुरा कसो गरि जानेछ र. त्यस्व३ भनेछ र. भनि मैले चन्दा. जसै नेपाल मा नजर दिनु भये थ्यो. उसै वेला. मोच मा वाहुाल. दिदा४ मनमा नेपाल को राजा. हुन पाया ता. हुदो हो भन्या जस्तो परे छ. भनि. बिन्ति हजूर मा. गन्या कै हो भने र यो कुरा पुग्ला भनि मैले भन्दा. हजूर ले. गौ ब्रह्मान.५ अतित६ फकीर. देउ देवता को मानिता. बहुत. राष्नु. भया को छ. हाम्रा. हात. मा पनि. सरसोति७ को. वर्दान छ. हजुर लाई नेपाल को राज.८ बश्य हुनै छ. भने र. थांकोट को. ठुलो भन्ज्यान् काटि. रात. दिन. गरि कल्लहारि घाट. तरि. षादिन्. चक्लउ र. चेप्या को. षावा लिग्लिग्को आड़ गरि. राष का. मरा तिन. विर छन्. तिन लाई वोलाहाट. को रुका लेषन जास भन्दा. तिन को नाउ के के हो. भनि सुध्याया र. रणाजत

---

१ भानु ज्योतिषी अर्ज्याल । कुलानन्द ज्योतिषी ढकाल । २ कुन हो । । ३ जुँगा । ४ दिदा । ५ ब्राह्मण । ६ अतिथि पाहुना । ७ सरस्वती । ८ राज्य वंशमा ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बरन्यात्. मानसिं. रोकाहा१ विरभद्र पाठक्. मैथि मा रात. दिन. गरि आई पुक.२ भनि लेषी पठाव्या र. आइ पुगे र. तिन छेउ यकान्त. गर्‍या. भने दिकवन्धसेन सित. हाक दि. आव्या. नेपाल पनि देषि आव्यां. हाम्रा को. मनसुवा पनि राषी आव्यां. तिमि हरु क्या भन्छौ. भनि. मैल भन्दा. हान्नु हवस्. महाराजा. भने र. वस्लाइ दिया र. मैले भने म जसै. अर्का को छत्रभङ्ग.गर्न.म जांछु.मेरो छत्रभङ्ग३ गर्न अर्कोआयो भन्या.कसो होला.भनि.मैले.भन्दा.हजूर का. हाति.हउवा४ इ वाइसी५ चौविसि.आयो भन्या. चेप्या मा.रगत को.नदि वहाउला. माहाराजा. भन्या र. यकान्त वाट. उठि गोर्षा. गया र. पुगे पछि. मामा६ ज्यू. पनि निलकण्ठ७. पसुपति को दर्सन. लाई. देउघाट को. वाटो गरि. जानु भया को रहे छ. निलकण्ठ. पसुपति को. दर्सन भया. पछि. श्रीगोरषनाथ को दर्शन लाइ. गोर्षा मा आउनु भयो र. दर्सन भया पछि. म सित भेट भयो र. मैले भन्या. मामा ज्यू. मकुवानपुर. पनि. पुगि आव्या नेपाल पनि देषि आव्या. हाम्रा को. मनसुवा पनि. राष आव्यां. कति. कुरा ले. मेरो काज. फत्ये होला. चर्ति वक्सनु भया हुदो हो. भनि मैले भन्दा. मलाइ पनि. पञ्चरात्री मा. द्रिष्टान्त भयो. हामि ले देवता. पाच. पाण्डुवा को अवतार भया जस्तो लाग्द छ. कुरुक्षेत्र८ को मेला न भै. नेपाल फुट्ने

१ रोकाया। २ पुग। ३ राज्यनाश ।४ हात्ती होवा = हात्तीलाई हाउ भनि तर्साउने ५ परिशिष्टमा।
६ पालपाली युवराज उद्योतसेर। ७ नीलकण्ठहृद (गोसाई कुण्ड) का ८ महाभारतको युद्ध, अर्थात ठूलो लडाई

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

छैन. लमजुन्. भन्या को गरुड़ हो. गोर्षा भन्या को· सरप हो· नेपाल भन्या को· भ्यागुतो हो. अघी· गरुड को· आषा छलनु तव सर्पले भ्यागुतो षान पाउछ· मेरा साथमा· चार जातका सिपाहि छन्. इन्मा. कस्को सवार. गऱ्या चाडो काज. फत्य होला. भनि सोद्धा. के के जात छन्· भनि सोधनु भयो र. बाहुन्. षस. मगर. ठकुरि इन मा. कस्को सवार. गऱ्या चाडो काज फत्य होला भनि सोद्धा: वाहुन्. को· सवार. भन्या को· बयेल होला· पातक् लाग्छ. ठकुरि को सवार. भन्याको सिंघ हो. पछाडि· दगा हुन्छ मग्र१ को सवार. भन्या को टागन घोडा हो ढिलो हुन्छ. षस को सवार. भन्या को ताजि· तुर्कि घोडा हो. षस को. सवार. गऱ्या. चाडो होला, भन्या जस्तो लाग्छ· भनि. अरू ढेरै कुरा को· अर्ति· दि जानु भयो थ्यो. उनै अर्ति. लिन्या र. लमजुग्या. राजा· रिपुमर्दसाह सित. भेट गर्न भनि गर्यां र. चेपे घाट मा. भेट भयो र घाहार घरेस्२ का बात गर्दा. जौना४ कुरा ले. घाहा. वाधुला. भने. अढ कुरो. मेरा पेट मा थियो. सोहि जढ कुरो. कालुपाडे ले. गऱ्यो र. घाहा वलियो बस्यो र. मलाइ आसर्जे लाग्यो र. तर मलाइ. ता रिझागो. दुनिञा जस् देषी. राजि रहन्छन्. उसै लाइ. काजाइ दिनु. भन्ने. सास्त्र५ मा पनि कहे को छ. दुनिया मा. बुझि हेरु. भनि. बुझि हेर्दा दुनिञा· बाट पनि. कालु पाडे को घाहा रहे छ र कालुपाडे लाइ.कजाई दिनु भया.

---

१ मगर २ सन्धि । ३ गृहप्रबन्ध । ४ जुन । ५ परिशिष्टमा ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हामी दुनिञा. दार मा. छाहारि रहदो हो भंन्या. सल्लाहा दिया र. अब वाइसि चौविसि. ले क्या भन्छन् भनि. बुझ्नु. हुदा. बाईसि. चौविसि. वाट. पनि. कालुपाडे कै चाहा रहे छ र. कालुपाडे लाइ. कजाञ्चि भया. घाहा घराईस. वलियो राष्न्यै छ. भन्ने. सल्लाह दिया. मेरा मन मा ता. विराज१ वर्षात. लाई. कजाइ. दिन आटे को थियो. थिवो. तर. ज्याधा. बुढी. कालुपाडे कै ठहऱ्यो र. कालुपाडे लाई कजाञ्चि. भया को हो. अव. पाड़े. बस्न्यात. को जुग बाधि दिंछु. तेरि. छोरि. सिवराम बस्नतात् को छोरो. केहेसिंह वस्न्यात् लाई. देउ. भनि. मागि बिहे पनि गरि दिञा र. पाडे. बस्नयात् को जुग बाधि. पाडे को ढाल. वस्न्यात को. तरवार गरि. नेपाल मा चढाइ गऱ्या को हो. ॥

उपान्त ॥ रणजित वस्न्यात. मानसिंह रोकाहा. वीरभद्र. पाठक. इन लाई. गौटा२ को. विराइ. लिग्लीग. को. आड मा. राषि.मं पनि. सल्ल्यान्३ कोट. की देवी. साछ्यात. छन्. भनि. भन्छन् म. पनि. सायेत गरि. जान्छु" भनि विदा. गराया र. सायेत गरि. म पनि गञु र. बारि मा. थपुं४ पऱ्यो. र. सल्ल्यानीक को. थर. घर. वराहा.५. उमराउ. हरु. खित सुघाञा. माइ को दर्सन् गर्नु.

---

१ परिशिष्टमा। २ परिशिष्टमा। ३ बुढी गण्डकी का वार्पार पट्टिक घाँस काठवाँस र बाबियाले वनेको। ५ दर्शन।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हुन्छ की. भन्दा. भित्र दर्शण१ पुजाहारि. टहलुवा लाइ मात्रै भित्र दर्सन गर्नु हुन्छ. जो हुकुम्. भन्या र. ढोका मा ता हुन्छ कि. भन्दा ढोका मा ता हुन्छ, भन्या र साम्फ. यिहचान ढोका सम्म. जाइ. पाठ. पुजा. जप् दर्सन्. गर्थ्यां र.. यक दिन का. रात मा. सोपना भयो र दुइ हात मा. दुइ षड्ग. लिया कि. सात आठ वर्षकी कन्न्या. कुसुमे. पछ्यिउरा को घुगुटि२ पारि, म छेउ: आइन् र. मैले सोध्याव्यां. तिमि कसकि छोरी हौ। भनि मैले भन्दा. पुजाहारि राना कि छोरी हूं. भनिन् र. उ दुवै. षड्ग: मेरा,हातमा दिन र आरसि प्रमीन को, लाल टलवल्. गर्थ्यो षोकीला. वाट मिकी. मेरा मुष सम्म. मा ल्याई. यो पनि निल भनिन. र. तम्रो. मन कान्छया. पुर्‍याई. दिया को छ. म पनि केही माग्छु. थपि जाउ भनि. जसै. दुंई पाईला गै थिन्. उसै वेलामा म पनि विमझ्यौ र. भानु जैसि. कुलानन्द जैसि. पुम्फाहारि. राना लाइ. डाक्या र. सुध्याव्या. जैसि ले पनि, पुम्फाहारिले पनि. ति माई हुन्. दर्सन पाउनु भय छ. भने र उसै वेला मा. धुप दिप. धजा नैवेदे. नित्य पुजा लाई. सात रागा. सातै बोका थपि. बोर्लां घाटको, आम्दानी. र घाटै छेउ को टार. माई लाई. संकल्प गरि दिन्या र. उसै घरि को. सायत गरि. रात. दिन गरि. सरासरी आया र. सिमल्चौर. चोतारा मा थपुं हालि. वस्या को

१ दर्शन २ घुम्टोहाली

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

थिव्या. दाबा भन्या. नुवाकोट् को. वहना. भन्या षिंच्यात् को. फुलो काटि षेत विराउना को. यरि राष्या थ्या. वेत्रावति का. वेनि इन्द्रायेनि का थान मा. डुंगा तरि. जप. पाठ लाइ जांथ्या. ध्यान भन्या. सल्ल्यान् कोट् की देवी को र. इन्द्रायनि१ भैरवी को गथ्या. महामण्डल भने को नुहाकोट२ को सवता रहेछ महामण्डल मा ग्यामि,राना थीयो. तं हाम्रा भर को ग्यामि होस्. महामण्डस छोडि दे. म छेउ आईज. भनी पठाव्या र. हुना ता म. हजुरै को हुं. तर. जयप्रगासमल्ल३ को. नुन् षाई हाल्या मरि मेटन्या छु. भनि हाक पारि. पठायो र. येक दिन. कचहरि मा. बस्या को थिव्यां. तान्रा लागे छ र तान्रै मा ता. इन्द्रायनि का थानमा वस्याको रहेछु" आजका, साता दिन मा. ठूलो सायेत छ. तेसै दिन. को सायतले. नुहाकोट साध्ये हुन्या छ,भन्याको सुन्या र पात्र हेरन. जैसी. भन्या र. पात्रो हेर्‍या र आजका. साता दिन. विहाउदो४ सनिश्चर५ वार ठूलो सायत रहेछ. भनि विन्ति गर्‍या र. उहि सायत मा महामण्डलमा. चक्लेउ र. तरवार. पर्‍यो६ र हाम्रा नुन का लेषले. भुकाई दिने पन्थ, वार्है बर्षमा, मेरा भाई. दलमर्दनसाह. ले जेठी रवार७ रानाको थापलामा हाल्यो र नुहाकोट साधे

१ वेत्रावती तल त्रिशूली तटको इन्द्राणी देवी। २ नुवाकोट।
३ ग्याँमी राना मगरको एक थर। ४ जयप्रकाशमल्ल।
५ विहाउदो। ६ शनैश्चर। ७ लडाई भयोर।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गरि वढाई गरेछ र। कर्कनि. खिवपुरीमा ठाना हालि. मुर्चा१ लाइ राषथ्यछ मलाई प्रसुराम२ थापाले नेपाल हाम आछ भनि हात दिइ. राष्याथ्यो. आफ्नाभाईलाई लाष३ बिषि पुऱ्याउनु वाईसि. चौविसी. उठाई पछाडि हान्नु. भनि पठायछ र. मैले थाहा. पाञा र. कहा पुक्याको छ. भनि सुष्याञा र. पोषराको हटिया४ मा डेरा गरि बस्याको छ. भनि सुन्या र. त्यसलाई बैठाई आउनको सकौला भनि. सल्लाह गर्दा. कसैले. पनि ठहराउन. सकेन र मैले. भन्या म्कागल गुरू सक्ला भनि डाकी. अन्हाई मेरा. कंमरको कोवा५ षान्. दियां र. गयो र. पुाग. गाइनेको भेष गरि. हातमा. वल्लीको टागो लि. काषमा. सारङ्गी च्यापी. २४ धानिको. सहर लैगी. अरु उसका. लस्कर हरू. भात षान्या वषतमा. अवसर हेरि. बैठाई आयो र. पछाडी. युद्ध६ गरि. नेपाल. षोल्याई. पुरुव. पश्चिमका दुनियां हात गरि. नेपाल. लियथ्या ॥

उप्रान्त ॥ यो राजे दुई दुङ्गाको. तरल जस्तो. रहेछ चीन बादसाह. सित. ठुलो घाहा. राषनु. दषिनको. समुद्र७ का बादसाह. सित षाहा ता राषनु. तर. त्यो महाचतुर छ. हिन्दुस्थाना दबाई. राषे छ. सरजिमीन८ मा परि

---

१ सेनापतिलाईमानें तरवार। २ मोर्चा। ३ परशुरामथापा। ४ हाट। ५ खुकुरी सहित पेटी। ६ लगी। ७ अग्रेज
८ समथर भूमि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रहेछ· हिन्दुंस्थाना, जाम्यो१ भन्या· कठिन पर्ला. भनि· किल्ला षोज्न आउन्या छ. सन्धी. सर्पन· हेरि. गढि तुल्याई राषनु र रस्ता· रस्ता. मा. भाजा हालि· राष्नु र यक दिन. त्यो वलर आउन्या छ. जाई कटक३ न गर्नु. फिकी कटक गर्नु र. चुरे घाटि मा· षुपै काटिन्या छ. पाच· सात. पुस्ता लाई. षाजना पनि · मिल्ने छ· श्रीगंगाजी को साथ पनि लाग्नै छ· लडाई मा पुकेन४ भन्या· लोलो पोतो अनेक· कल छल· गरि· कन पनि· यो नेपाल को तषत किल्ला हो· यो किल्ला पायो भन्या । चारै व दसाह५ लाई. ब·हाला· लाउनै छ· इस्वरले रचना गर्न्याको. किल्ला रहे छ. स्वधनु पर्ने रहेन छ· सिवपुरी १ फुल्चोक २ चन्द्रागिरि ३ महादेव पोषरि ४ पालुं ५ दाप्चा ६ काहुल्या ७ ईन मा पनि किल्ला पक्की· वनाउनु किल्ला पिछे तोप लस्कट् गरि· रापी दिनु. र जति भन्ज्यांई छन् भन्ज्यां पीछे यक. यक फलामे. ढोका वनाई ढोका पिछे यक· यक. तोपलस्कट् गरि· राषी दिनु र. पपांच सिपाहि· राषी दिनु र· यस्व भया, पछि चेवा गर्या चर्चा गर्न्या भगन्या. नाम्न्या. दुकूवा फसादि. पुनि यस्ताहरू को पनि केही. चल्ने छैन. चारै. वादसाही चढ़ाई गरि आयो. भन्या पनि कसै को. केही चलन्य· नहने छ ॥

---

१ हिन्दुस्थानका राजा प्रजा आपसमा मिलेर जमेमन २ भूाम सेना । ३ लडाइ । ४ पुगेन सकिएन । ५ परिशिष्ट ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उप्रान्त ॥ राजा. रामशाह ले. वाध्याको थिति पनि हेरि सके. राजा. जयेथितिमल्लले१ वाध्याको थिति पनि हेरि सके. राजा. महिन्द्रमल्ल२ ले वाध्याको थिति पनि हेरि सके. इस्वर३ ले दियो भन्या. म पनि यस्ता. वन्देज. को. बाह्र४ हजार को थीति. बांधि जाला. भन्या. अबीलाषा थीयो.५ पुरव. पछिम् को रस्ता. बन्ध गरि.६ नेपाल को रस्ता चलाई दिउला. आफ्ना अना जात. विसेष.७ को. कर्म गर्नु. (भन्न.) बन्देज गरि जाला. यो तिन सहर. भन्याको. चिस्व८ ढुंगो रहे छ. षेल षाल. मात्रै. ठुलो रहे छ. कुप को पानि षान्या छेउ. वुधि९ पनि. हुदैन. सुरो. पनि हूँदैन. षेल षाल मात्रै रहेछ. मेरो. मनसुवा ता. दहचोकमा. दरवार वनाउला र. चारै दिसा. थर. घरको. गुरु प्रोहित भैयाद. भारादार. मिर, उमराउ को. घर बनाई छुट्टा. दरवार. वनाउला र. ई तिन सहर. मा ता. दरवार. बाट स्वष१० सयल्. लाई मात्रै जाला भन्न्या यस्तो. अबिलाष थीयो. ॥

उप्रान्त ॥ देश का महाजन लाई. गोड्‌ऊँ प्रसाह. देषो उम. आउन. न दिनु. देस का महाजन. हरु. हाम्रा. मुलुक मा. आया भन्या. दुनिञा कङ्गाल गरि छाड दछन्. हामी ले. स्यां गा.११ पांगा लाई तिन. सहर नेपाल र. नौलाष. किरा-

१ जयस्थिमिमल्ल—स्थितिराजयल्ल । २ महेन्द्रमल्ल । ३ ईश्वर । ४ परिशिष्टमा । ५ पूर्व—पश्चिम । ६ परिशिष्टमा । ७ विशेष । ८ परिशिष्टमा ९ बुद्धि १० सोख । परिशिष्टमा ११ परिशिष्टमा ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यत१ र· हिन्दूपति को राज· आर्ज्य. थ्येउ. देस२ का कापरा. लगाउना· लाई· मन्हाई गरि दिनु· आपना देस को· कपरा बन्न जान्या लाई· नमना देषाई सघाउनु र· वन्न लाउनु र· यस्व३ भया· नगद विदेस जादैन. अपना· देस को जीनिस जरि बुटि. देस लै जानु र. नगत षैचनु· नगद षचि राषनु र. प्रजा मोटा· भया· दर्वार४ बलियो रहन्छ. राजा का. भंडार भन्या! का. रैतान हरु हुन· मुलुक मा. ईजारा५ पनि न दिनु· सर्षार बाट अमानित६ राषि· सर्षारिया तहसिल राषी· साल· व साल को कचा७ लिनु· क्या चुनी सिपाई भया· क्या भैभारादार भया· इन लाई दवलथ८ कमाउन. न दिनु· आदमी हेरि हुर्मत्९ मात्रै राषी दिनु. क्यान भनौला दवलथ् भाया का ले. तरवार मा पसि मर्न. मार्न. सकैनन् र· इरिप१० को चमक हुन्छ सिपाहि. भैं भारादार. ले, स्वष गरेनन् भन्या, चारै षुट् मा मेरो, तरवार. बजनै छ· स्वषमा, पसो भन्या. मेरा साना दुष ले आर्ज्या को. मुलुक होईन, सबै जात११ को. फुलवारि हो सबै लाई. चेतना भया, यो फुलवारिको छोटा बडा, चारै जात, छतिसै वर्न ले यो असिल्१२ हिन्दुस्थाना हो· अपना कुलाधर्म. न छोडनु.

---

१ किरात २ परदेष निषेध । ३ यसो । ४ स्वराज्य । ५ ठेका ६ अमानत । ७ लेखा बुझनु । ८ परिशिष्टम ९ सम्मान । १० शत्रु ११ परिशिष्टम १२ खास हिन्दुस्थानशुद्ध आर्यहरूको निवासस्थान

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्वामिन्१ को नुन्को उधार गर्नु. कालु२ बकर्दार का सन्तान लाई कबर्दारि. न छुटाउनु. दृषिन को. घाहा. सिवराम बस्न्यात् का सन्तान लाई· न छुटाउनु. भोट को. घाहा. कालु.· पाडे का. सन्तान लाइ न छुटाउनु पाडे. वस्न्यात्. पंथ. भैयाद. मंत्र लाई. मारातप्३ दिदा [?]आलो पालो पालो गरि. षान दिनु. ई. मेरा. नुन. गुन. का. स्वफा४ सेवक हुन्. ईनी हरु को जीव जान्या त्रिराम. गऱ्या को. भया पनि. आफुले न मार्नु बरु. मारातप दियेर लडाञी मा फोस्रि दिनु र. जिव. जोगाई आयो भन्या. बढिया भयो. मरि गयो भन्या. आफुले मार्नु अकैं बाट मारि दिया को बढिया हुन्छ. तब. राजा ले. सेवक लाई. घर मा न मार्नु. तब. राजा ले ठुलो. निव्या निसाफ. हुँदैन्. अन्याक मुलुक मा हुनः ब दिनु. निव्या. निसाप. विगार्या भन्या को. घुस लिन्या र. घुस षान्या. ईन. दुई को ता धन जीव. गरि लिया को पनि. पाप छैन. ई राजा का महासतुर५ हुन्. ॥

उप्रान्त ॥ जढ कुरो· राजा लाई चाहीन्या सिपाहि· हरु को. घर षेत· मिलाइ· दिनु र· मल्· जल गर्छन् र· डुवौ६ वोटि· भित्र हाल्न· पाउछन् र· कविला को निफिक्री७ हुन्छ. ढोका· मा भया· पनि· गौडा मा भया· पनि· सिपाहि हरु. को.

१ राजा। २ परिशिष्टमा। ३ अधिकार। ४ सोझो। ५ महाशत्रु
६ परिशिष्टमा। ७ निश्चिन्त.

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

छाति वलियो रहन्छ. पजनि१ गर्दा मा पनि· सये नाल का· कम्पनी जभाउनु र· सये नाल२ का· सुवेदार चार. पाच· लडाञी मा जस पाई· आया का यस्ता· आफुलै३ जाचि सुवेदार· हाल्नु· सुवेदर· ले पनि· सात४ पगरि· दुइ चार· बाढ षाया५ का यस्ता सात पगरि हाल्नु. सात पगरि ले. स्वह्न· हुदा·६ हाल्दा आफु सित. मर्ने मान्र्यं जाची १६ हुदा. हाल्नु १६ हुदा ले पनि. आफु सित. मर्ने. मान्य. जाची. सिपाहि हालि. आपना आपना पट्टि भर्ना गर्नु. पट्टो पट्टी मा. सिपाहि पनि, षस. मगर. गुरूँ. ठकुरि. ईनै चार जात, मात्रै. षिचोला७ गरि. हालनु. र तर्वार, पर्दा साह्रो हुन्छ, लुहा क्यापन्या८ पनि, यिनै चार जात, मात्र हुन्, र तरयार पर्दा सह्रो हुन्छ र. वैरि त क्या. इन्द्र को· आसन् पनि डगाइछ. हजारौ धना हजारौ. पथर्कोला९ हजारौ· पुडा· हजारौ तोप, भया. इन्द्र को. आसन पनि डगाईछ. लडाञी मा पनि हान्न्या र सष१० दिन्या. इ. दुवै बरोवर हुन. जागिर दिदा. पिनल११ दिदा. दुवै लाई. बरोवर. दिनु. मन्नो

। १ सँचालन ।

२ बन्दूक । ३ ले । ४ परिशिष्टमा । ५ दुइ चार लडाइमा सफल प्रवेश गरेका । ६ हवलदार ७ मिसायेर ८ शस्त्रसञ्चालनमा समर्थ । ९ पत्थर ले चलाउने बन्दुक । १० सगाउने । ११ वितलप-तिरो न लाग्ने विर्ता (वीरता) ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भन्या. उसका छोरा. षुडा. हान्न्या. न हुन्ज्याल् मरवट् दिनु. षुडा हान्न्या भया पछि जागिरमा उकालि दिनु र राजाले विवेक. राषी दिया. देस देशका सिपाहि पनि आसा राषी आउन्छन् र. यस्व भया. तरवारीया सिपाहि हात लाग्छन्. राजाका सार भन्या को. सिपाहि र रैंत हरु हुन्. राजा चतुर भया. सिपाहि र. रैंति. हात हात गरि. राष्नु र. हुल्[1] कुल्. हुन पाउंदैन. सिपाहि भन्याको. तिषारि. राषनु. तिषारि. राष्या. का. सिपाहि कसैका मलाजा[2] मा. पर्तैनन् र. आफ्नु काज फत्य हुन्छ गुरु. मगर. षान जादा. भैयाद. भारादार. मिर. उमराउ. थर. घर. पुराना पुराना. जाची. घुंडा.[3] गौडा. मा राषनु. पुर्व. पछिम्. का षसवाहुन्.[4] लाई. दरवार मा. पैठ् हुनु न दिनु. क्यान. भनौला. वाहिडा मान्छयाले दरवार. मा विथिति. गराउन्छन्. राजा को हुकूम्. जफत[5] गरि राषनु. मैले ति थुम्[6] का. वह्रहा. उमराउ लाई ईन्द्रवज्र तुलाइ राष्या थ्या. नगरा. निसान. पनि दिई राष्या थ्या. वाह्र विस[7] को. गाडो (ठो) वावी (नी) दिया को थियो र. सल्ल्यानि. लिग्लीग्. धार्दि. का मुहुडा मा. जाहा जाहा काज गर्थ्यो. फत्य गर्थ्या. र यो अैस्वर्ज गऱ्या को हो. आफ्ना. घर का पुराना सेवक. जाची. हजूर मा. हरोदम् राषी. दरो-घस्त. वाधि. घर. वलियो राष्नु. यस्व भया. दरवार वलियो रहन्छ. राजाको चतुराइ भाया. सिपाही. रैति हात गरि. राषनु. कसै का. मजाजा. पछि. गुण7 लाग्नु न दिनु. नुन् पछि लाउनु. ॥

१–विद्रोह। २–पक्षपात। ३–आफूमङ्ग। ४–परिशिष्टमा।५–आफ्नै हातमा अटल। ६–परिशिष्टमा ७–२४० । को खानगी ७–घुस

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उप्रान्त: || टक्सार[1] पनि चोषो चलाउनु. अदालथ मा पनि ढकुरि[2] जाचि डिष्ठा राप्नु मगर जाचि विचारि थाप्नु कचहरि पिछे यक यक पण्डीत राषी निआ शास्त्र वमोजिम अदालथ चलाउन् अदालथ का पैसा दरवार भित्र न हाल्नु फकीर फकिडा अतित जोगि सन्न्यासि ब्राह्मणहरू इनै लाई दछिना[3] भोजन चलाई दिनु उप्रे[4] का पैसा दक्षिणा चलाई धोति रुमाल् चलाइ दिनु यस्व भया असत्य को दोस् लाग्दैन षानी भया का ठाउमा गाउ भया पनि गाउ अरु जग्गा मा सारि कन पनि षानि चलाउनु गह्रो वन्न्या जग्गा मा घर भया पनि घर अरू जग्गा मा सारि कुलो काटि षेत्त बनाई आवाद गर्नु ||

उप्रान्त || केही वेलामा हात दिनामा पस्या र म लाई झिकाया र पछाडी दगा दिया र महादुष गरि पछाडि सुद्ध गरि वेपाल लाई मुर्चा लाआ थ्या जय प्रकासमल्ल का मतलप् लाई दषिन वाट नागा[5] झिकाया र नेपाल भित्र पस्न न दि सात गाउ भित्रै मा मिलाआं कास्मेरि[6] षान् नवाफ् मकुवानपुर मा चढ्यो र छअविस्[7] षोडा ले काटि धर्काई सिवाना कटाई आआं तिन चार पल्टन् लियेर सिदुलि गढि मा हांडीसाहेव[8] चढ्यो र वावाही पनि काटि पथर्काला च्यापि लाआ र लषनै[9] वाट तिन मुसल्मां मेरो चाकरी लाई नुवाकोट मा पिछा परि अयाका थिया ईनै वन्दुक को तुल[10] कलायेत तिनै मुसर मानले जान्या को रहे छ र सेषजग वर मम तकि भेषासिसं तिनै जना लाई अजिटनी दिया र तिलङ्गा[11] सधाया को हो नेपालको किताप[12] हेर्दा तुरकाना[13] मंग्रःत् मुग्लाना हुन्या रहे छ र तुरकाना अघि भइ गये छ

१ परिशिष्टमा । २ परिशिष्टमा । ३ दक्षिण भोजन । ४ उब्रेका । ५ परिशिष्टमा । ६ कासिम अली । ७ एक सय विस खाँडा ८ मेजर किनलाकूका साथमा आवेको प्रबन्धक निजामति आफसरहाँडि । ९ लखनऊ । १० सञ्चालन कौशल (तुल कलामत ठ्याक्ठुक् ढ्याङ्)। ११–परिशिष्टमा । १२–वृत्तान्त । १३–परिशिष्टमा ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मगरात् को राजा मै हुं. मुग्लानाको दोष मेटना लाई. आधा[1] थुम मेटी कम्पनी जमाया को हो. आधा पुडा आधा पथर. काला. बनाया को हो. सहे. नालका. कंपनीले. छरितो हुन्छ र. यस्व भया सय नालका. कम्पनिन्ने हजार. जवान लाई पाउंछ किल्ला किल्ला पिछे. यक् यक्. कंपनी राषी. गर्षा[2] दाषी. दिनु रजगेरा[3] वाधी. भरि. राषनु. ॥

उप्रान्तः ॥ म लाई. यवटा कुरा. को संध्यह[4]. लागि रहे छ. कुन्कुरो भन्या. मुग्लाना. नजिकै रहे छ. त्यस् जग्गा मा. छोकडा[5] पत्रीया[6] रह्या छन्. चित्रकार. भन्या का. कोठा मा. ढोलक् सितार. राग. तान. मा. भुल्नन्. राग तान् मा वडो ठुलो. मोहो हुन्छ र. दवलथ. पनि. षोलिन्छ. देस को. भेद. पनि. तिनै. ले. लै. जान्छन् र. हरिप ले दगा गर्छ. राग को अभ्यास. पनि. कसैले. न गर्नु. तिन जात लाई. पहाड आम. फदरफ[7] पनि. कसैले न षोल्नु. अथवा. फागु लाई. यक् दुई गरी. झिकि. चाडै विदा. गराई दिनु र. देषको भेद पनि. पाउदैनन्. आपना. स्वष सयलले. लाई ता सास्त्रत्रमोजिम्. को. तिनै सहर नेपाल को. नेवार हरु को नाच झिकाई हेर्‍या पनि. हुन्छ. यिन मा ता दिया को पनि. आफ्नै देश मा रहन्छ. यस्व भया. आफ्नु देस ग म न[8] रहन्छ. ॥

१–परिशिष्टमा । २–थुम् । ३–शेषभूमिको तिरो भरि राखनु ४–सन्देह । ५–पात्तर केटा । ६–पात्तरहरु । ७–आवत जावत । ८–सुरक्षित । परिशिष्टमा पनि ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

परिशिष्ट

(पृष्ठ ३) एकदन्ता हात्ति र नवलाषि हिराको हार—

दिग्बन्धनसेन की वहिनी श्रीइन्द्रकुमारी संग मकवानपुरमा श्रीपृथ्वी नारायणसाहको विवाह हुदा कन्यालाई पहिराएका गहनाको नाम गोर्खावंशावलीमा चन्द्रहार लेखिएकोछ (पृ० १२९) त्यस चन्द्र-हारले सो ठाउ उज्यालो हुदा दीप जलाउनु परेन भन्ने पनि लेखि-एकोछ । पृथ्वीनारायणसाहले भनेको नवलाषि हीराको हार यही होला । 'नवलाबि' भन्ने एक पारिभाषिक शब्द हो । यसको अर्थ वहुमूल्य हो । कन्यादानका साथमा लगाएको यो हार दुलहीलाई दाईजो दिनदिग्बन्धनसेनले स्वीकार न गर्दा, उसै समय खलबल भै पृथ्वीनारा-यणसाह रित्तै फर्कनु भएको थियो । एकदन्ता हात्तीमा सम्भवत: दुलही लाई अन्माएका थिए । पछिबाट त्यसका सट्टामा साधारण हात्ती दिएका थिए । यस प्रकार एकदन्ता हात्तीका विषयमा पनि विवाद चलिरहेकै थियो ।

(पृ० ३) थर गर— श्री ५ द्रव्यसाहलाई गोर्खामा राज्यस्था-पना गर्नामा पसेका भारदारहरुमा गणेशपाँडे, नारायणदास अर्ज्याल, भगीरथ पन्थ, गङ्गाराम राना, सर्वेश्वर खनाल र केशव वोहारा यी छ थर मुख्य थिये । इनका सन्तानमा एक २ जना राजसभामा र युद्ध आदिमा राखने गोरखाली राजाहरुको नियम थियो । इनी छ थर कहिन्थे । बोलचालमा थरघर भनिन्थ्यो ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(पृ० २६) बाइस् चौबिसी–उस समय शल्यानादेखि बझाङ सम्म २२ राज्य र लमजुङ् तनहुँ देखि प्यूठाना सम्म २४ राज्य थिए। गोरखालीहरु यीनलाई बाइसी चौबिसी भन्दथे। बाइसी राज्यहरु:– जुमला–रुकुम–शल्याना–मालनेटा–फलाबाङ्–गुर्भाकोट–दाङ–छिल्ली जाजरकोट–जाहारी–रोल्पा–बाँफी–। दुल्लू–दैलेख–गोताम–। अछाम बिमकोट-मुसिकोट– (पल्लो) दर्ना–बझाङ–बाजुरा–थलहरा।

चौबिसी राज्यहरू:– लमजुङ–कास्की–नुवाकोट–तनहु–गरहु, भिरकोट–ढोर–पैयूँ। तनहुँ–रिसिङ्ग–घिरिङ्ग–गजरकोट। पालगा– गुल्मी–अर्घा–खार्चा। पर्वत–गलकोट–मुसिकोट–धुरकोट–इस्मा। प्यूठाना–खुङरी-भिङरी॥

(पृ० २७) शास्त्रमा पनि कहेकोछ—मनुस्मृति (७–५४) अनुसार सात वा आठ मन्त्री आवश्यक थिए।

मौलाञ्छास्त्रविदः शूराँल्लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।
सचिवान् सप्त चाष्टौ वा प्रकुर्वीत परीक्षितान्॥

कामन्दकीय नीतिसार (४–२५) अनुसार राजा र प्रजाका प्रेमापात्र भएका मन्त्री आवश्यक हुन्छन्—

कुलीनाः शुचयः शूराः श्रुतवन्तोऽनुरागिणः।
दण्डनीतिप्रयोक्तारः सचिवाः स्युर्महीपतेः॥

महाभारत शान्तिपर्व (८५-११) अनुसार मन्त्रीहरूले आफ्नो नीति प्रजाका सामुन्ने राखेर उनको स्वीकृति लिनु आवश्यक थियो—

अष्टानां मन्त्रिणां मध्ये मन्त्रं राजोपधारयेत्।
ततः सम्प्रेषयेद्राष्ट्रे राष्ट्रियाय च दर्शयेत्॥
अनेन व्यवहारेण द्रष्टव्यास्ते प्रजाः सदा।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यिनै प्राचीन राजनीतिशास्त्र अनुसार रामसाहका समय देखि गोरखामा वैध शासन चलिआएको हुनाले पृथ्वीनारायणसाहले प्रधान मन्त्री नियुक्त गर्दा प्रजाको अनुमति लिएको देखिन्छ।

(पृ० २८) विराज बखेति– पृथ्वीनारायणसाहसंग काशीयात्रामा सफल परिश्रम गरेका हुनाले इनलाई मन्त्री गराउने इच्छा हुनु स्वभाविक थियो। तर निरंकुश शासन नहुनाले र प्रजाले न पत्यायेका हुनाले कालुपांडेलाई मन्त्री बनाउन बाध्य भये।

(पृ० २८) गोटान्को विराई—गोरखा देखि पर लमजुङ्ग देखि वर दरौंदी पारी चेपे वारि लिगलिग कोटमा वरिपरि गोपलिङ्ग खोपलाङ्ग भुशुण्डी छोप्राक आपपिप्पलभञ्ज्याङ् मिरकोट र गाईखुर्क आदि ठाउँलाई गोटानको विराई भनेको हो। खावाको अर्थ खाइहो।

(पृ० ७) वराहा उमराउ— चौविसी राजाहरुले राज्यका सीमानामा गढी बनायेर अध्यक्ष वा अमीर राखने गरेका थिये। इनको पदवी अमीर शव्दको बहुवचन उमाराउ चलि आयेको थियो। गढीका आसपासका जग्गा खानगीमा दियेर सैनिक भर्ना गर्ने अधिकार इनलाई थियो। उमराउहरू स्थायीरूपले रहदा भ्रष्टाचार पनि चल्दथ्यो। यसै कारणले पर्वतका राजा कीर्तिबम मल्लले आफ्ना भारदारलाई एक पत्रमा लोखेका थिये–'उमराहरूले कटक गर्न्या बल ल्यायाको छकि देश बुझाउन्या बल ल्यायाको छ त्यो याद पनि गर' स्थायी उमाराउहरूमा यो दोष हुने देखेर पृथ्वीनारायणसाहले प्रत्येक वर्ष परिवर्तन गर्ने नियम गरेका थिये।

(पृ० ३१) लाषिविषि– सैनिक सहायताका सट्टामा पहिले

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एक लाख विम रुपैंया दिने नियम थियो यतिको रूपैंया छोटा मोटा राजाहरू दिन समर्थ थियेनन् ता पनि जति दिये पनि लाखविसि भन्ने परिभाषा भनेको थियो । यो कुरा वंशावलीहरुमा पनि पाईन्छ ।

(पृ० ३२) चारै वादसाहि —भारत चीन रूस र रूमसंग अभिप्राय होला ।

(पृ० ३२) शिवपुरी ... काहुल्या—पहिले राजधानीको रक्षा अत्यावश्यक हुनाले उपत्याका का वरि परिका डांडामा चार दिशा पट्टी शिवपुरी फुलचोकी चन्द्रागिरि र महादेब पोखरीमा किल्ला (गढी) भनाउने निर्देश गरेका र यहाँ पछी उपत्याका देखि निकै टाडा रहेका पालुङ दापचा र काहुल्यामा किल्ला बनाउने निर्देश गरेका हुन । यी ठाउ नाकामा परेका हुनाले गढ बनाउन योग्य थिये ।

(पृ० ३२) फलामे ढोका— नाकाका गढीबाट वार पार गर्ने ठाउमा जो फलामे ढोका राखियेको थिये । तिनमध्ये सिन्धुली र चिसापानीका गढीका ढोकाहरु श्री ५ राजेन्द्रविक्रमसाहका समयसम्म रहेको उल्लेख यदुनाथ पोखऱ्यालले यसरी गरेका छन्—

पल्टन् को त निवास् उदेपुर गढी गढ् मत्स्यरेखा पनि ।
पौवा गढ् सिधुली महाँ तखतमा किल्ला त पक्का बनि ।।
पत्थरको गढ त्यो उचाइछ अती ढोका फलामका तहाँ ।
लाखौं वैरि निपता हुन्या छिनमहाँ यस्तो वषत्को कहाँ ।।६।।
चीसापानि गढो बढी तषतमा ऊँचा पऱ्याको अति ।
शीशागढ् भनि नाउँ चोषुट महा प्रख्यात् न जान्नू गति ।।
किल्ला जव्वरमा समूचंल अती लोहाक ढोका तहाँ ।
पान्हो अमून पानि पाश्चिमदिशा गढ् स्वर्गवास् लेक् महाँ ।।८।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(पुराना कवि र कविता)

(पृ० ३३, वाह्लहजारको थिति– पहिले गोरखामा बाह्र हजार घर हुनाले राज्य भरको घर संख्या वाह्ल हजार मानियेको थियो। राज्यवृद्धिका साथ घरका संख्याको वृद्धि हुदै जादा पनि लागु हुने गरि वाह्ल हजार भन्ने शब्द एक परिभाषा बनेको थियो। पृथ्वीनारायणसाहका अन्तिम समयमा राज्य भएको घर संख्या पुगनपुग तीन लाख भएको हुँदो हो तापनि वान्ह हजार भन्ने पारिभाषिक शब्द प्रयोग गरेको देखिन्छ।

(पृ० ३३) रस्ता वन्द गरि–भोट र बङ्गाल विहारको व्यापार मुख्य गरि नेपाली महाजलका हातमा थियो ता पनि मुगलाना का सन्यासी र वैरागीहरु पूर्व पश्चिमका मुख्य हिमालयका घाटाबाठ लुकि छिपि व्यापारि माल लैजान्थे। यसबाट नेपाली ब्यापारीको हानी भैरहेको हुनाले सन्यासी वैरागी आदिको कालो वजार बन्द गर्ने पृथ्वीनारायणसाहको उत्कट इच्छा देखिन्छ।

(पृ०३३) चिस्व ढुङ्गो–उस समय ढुङ्गो शब्द राज्यका अर्थमा ब्यवहार हुन्थ्यो। चिसो ढुङ्गाको अर्थ सेलायेको वा फुर्ति न भयेको राज्य हो!

(पृ० ३३) गोढप्रसाह– शु. रू. गढ पर्सा पर्सा जिल्लाका लगभग माद्धमा पारसनाथको मन्दिर छ। इनै देवताका नामबाट जिल्लाको नाम रहेको र यस मन्दिर देखि थोरै पूर्व पट्टी पर्सा गढको खण्डहर अचेल पनि पाइन्छ। यसलाई गढपर्सा भनेको हो। यहाँ देखि वाहिरी तराइ समाप्त भयेर चुरेको जङ्गल सुरु हुन्थ्यो। बाराजिल्ला पट्टी यस्तै नाका बारागढीको खण्डहर पनि पाइन्छ। गढपर्साको अर्थ यस्ता सबै गढी सग सम्बन्ध राख्तछ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(पृ० ३३) च्यांगा पांगा– स्वदेशी घरबुना लोग्नेले लाउने सेतो खाँडी कोरालाई च्याँगा र हर्रो मजिठो पाँगामा रंगाएका स्वास्नीले लाउनेलाई पाँगा भनेको हो। भाङ्रा पाखी खाँडी कोरा मोटा खस्रा जस्तै भये पनि स्वदेशीको नै व्यवहार गर्नु भन्ने अभिप्राय हो।

(पृ० ३४) सबै जातको फुलबारि हो– यहाँ सबै जात भनेर सम्पूर्ण प्रजालाई लियेको छ। सबै प्रजाको योटै फुलवारी मानेर पृथ्वीनारायणसाहले उदार विचार थामि लोकतन्त्रको भावना जगाई राखेको देखिन्छ।

(पृ० ३५) दुवौ वोटि–शु. रू. दुवै बोट। अर्थात्, मोहीबोटि र तलसीं बोटि। कविलाको अर्थ हो परिवार। ढोकाको अर्थ हो राजधानी।

(पृ० ३६) सात पगरि– अनुमान गर्न सकिन्छ कि, जमादार, सार्जङ्, निसान, अजिटन, भाट, पुरोहित र वाजानाइक्या होलान्।

(पृ० ३७) षसबाहुन– क्षत्रिय र ब्राह्मण। पूर्व पश्चिम भन्नाले आफ्ना राज्यदेखि वाहिर पूर्व पश्चिममा रहेका।

(पृ० ३७) तिन थुम– लिगलिगशल्यान र धादिङका गढीहरू वलियाँ भयेर पुराना राज्यलाई डग्न नदियेकाले राज्य बढाउन सजिलो भयेको हो भन्ने वाक्यको सारांश हो।

(पृ० ३८) टकसार पनि चोषो चलाउनु– मल्ल राजाहरूका टक शुद्ध चाँदीका ढालिन्थे। खाली चाँदीको मोलमा र टक मारेका चाँदीको मोलमा अन्तर रहँदैनथ्यो। जयप्रकाशमल्लले अलि २ गरि अरु धातु मिसायेर चाँदीका टक ढालेका थिये। पछि २ कसर ज्यादा बढाउदा खराव देखिन लागेका थिये। पृथ्वीनारायणसाहले शुद्ध

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चाँदीका आफ्ना नामका टक चलाउदै गरि खराब टकहरू चलनमा आउन रोके। खराब टकहरु भोटमा ज्यादा पुगेका र तिनको चलन नेपालमा रोकिंदा भोटसंग कलह चलेर वि० सं० १८४९ का चीन युद्धका समाप्ति पछि त्यो कलह शान्त भयेको थियो।

(पृ० ३८) ठकुरि जाची डिट्ठा राषनु—उस समयमा ठकुरि र मगरहरुमा स्वार्थीपन कम रहन्थ्यो र द्रव्यका लोभी हुँदैनथे। यसै कारणले घुस न चलोस भनेर इनलाई अदालत सौंपने काम पृथ्वीनारायणसाहले गरेका थिये।

(पृ० ३८) नागा झिकाया र—नागा झिकाउने रणजितमल्लको नाम पृथ्वीनारायणसाहले न लिई उनको सम्मान राखेका हुन्। पृथ्वीनारायणसाहले गुरु मानेका गुलावराम वैरागी उनसंग असन्तुष्ट भै जयप्रकाशमल्लसंग मिलेर ५००। सय नागा वैरागी लाई हतियार दी गोरखालीको घेरा उठाउन सिदुलिको बाटो गरि भक्तपुर तिर पठायेका थिये।

(पृ० ३८) तिलङ्गा—अंग्रेजहरुले पहिले तैलङ्ग देशमा युरोपीय शैलीसङ्ग जो सैनिक तयार गरेका थिये ती सैनिक वंगालमा आउदा बंगालीहरुले तिनलाई तिलंगा भनेका हुनाले यो नाम वन्दूक धारी सैनिकका निमित्त रूढि नाम बन्यो। वा गुरुङ् भाषामा पठ्ठा ठिटालाई तिलङ्गा भनिने र चुनि सिपाही पठ्ठा हुनाले सैनिकलाई तिलङ्गा भनिन्छ।

(पृ० ३८) तुरकाना पहिले भारतमा आक्रमण गर्ने महमूद गजनवी तुर्क थियो। तेस कारण पछिका अफगान र पठान आक्रमण

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कारिहरुलाई पनि तुर्क भन्ने चलन चल्यो। पन्ध्रौं शताब्दीका आरम्भमा बंगाल का बादशाहले नेपालमा गरेका आक्रमणलाई यहाँ तुर्काना कहियेको छ।

(पृ० ३९) आधा थुम् मेटि— पृथ्वीनारायणसाहका राज्यमा थुम थुममा उमराउका अधीनमा सैनिक रहन्थे। उनले ई सैनिकलाई आधा मात्र थामी शेष आधा सैनिकलाई वन्दूकधारी कम्पनीमा परिणत गराएका थिये। मुगलका राज्यबाट आयेका बन्दूकले पनि शासन चलायेकाहुनाले मुगलका अधिकारको दोष मेटियो भनेका हुन्। सैनिक शक्ति वढाई अजेय हुनु पर्छ भन्ने अभिप्राय हो।

(पृ० ३९) गमन—गमनको अर्थ गम्भीर गम खाने खदिलो हो राज्यको धन वाहिर नगयेमा धन धान्यले पूर्ण भै फलने फुलने कुरा स्वाभाविकै हो।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२०२१ साल माघ १ गते

श्री ५ महाराजाधिराज सरकारबाट भारतको नागपुरमा मकर संक्रान्तिका शुभ दिन भयेको हिन्दु सांस्कृतिक मेलाको लागी पठाई बक्सेको शुभकामना सन्देश

मित्रहरु,

सम्पूर्ण हिन्दु संस्कृतिमा हिमालयलाई देव भूमि मानिको छ। तेसको मध्यमणि समान विधाताःले नेपालको स्थापना गरी हिमालयको शोभा र नेपालको महत्व बढायेको छ। सम्पूर्ण हिन्दु जातिका आराध्य भगवान, पशुपति नाथले येस कारण येसलाई आफ्नो संरक्षणमा राख्नु भएको छ। शालिग्रामको मूर्त्तिको प्रादुर्भाव हुने पुण्यतोया गण्डकीले नेपाललाई पवित्र पारेको छ। स्वयं भगवान शङ्कराचार्यको इष्टदेव नृसिंह रूपमा शालिग्राममनै हुनु हुन्थ्यो, जसको विधिवत पुजन अहिले सम्म उहाँको शृङ्गेरी मठमा हुँदैछ। हिन्दू जगतमा भगवान् मुक्तिनाथको त्यहीर दर्शनि मान्यता छ, जति भगवान् बद्री नारायणको। यस प्रकार नेपाल हिन्दु समाजको परम पवित्र र महत्वपूर्ण देश हो भन्नु कुनै अत्युक्ति हुँदैन।

भारतीय हिन्दुहरूको लागि नेपाल सधैं प्रेरणाको अक्षयस्रोत बनेको छ। यतिमात्र होईन नेपाललाई गौरव छ कि भारतको धर्म संकटको वेलामा हिन्दुहरूको आश्रयदाता पनि नेपाल रहिआएको छ। भारतको प्रथम स्वतन्त्र संग्रामका सेनानी नाना शाहेब पेशवा आदि वीर नेपालमा नै आएका थिये। त्यसै पछि पनि भारतीय स्वतन्त्र संग्राममा नेपालको योगदान संधै रहि नै रह्यो।

नेपाल सदैव भारतको प्रहरीको रूपमा रहेको छ। दुवैको प्राय: एउटै संस्कृति छ र दुवै एउटै आदर्श जीवनबाट अनुप्राणित छन्। हाम्रो वैवाहिक सम्बन्ध विभिन्न रीतिरीवाज र खानपान कण्डै एउटै

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

छ । हामी सबै हिन्दुहरुको लागि यो खुशीको कुरो हो । यो सम्पूर्ण हिन्दु जगत्को लागि एउटा गौरवको कुरा हो ।

धर्म नै मानव जीवनको सर्वश्रेष्ठ तत्व हो । धर्मकै प्रेरणाबाट मानवले प्रारम्भ काल देखिनै महान् कार्य गर्दै आयेको छ । मानव-समाजको कल्याण धर्ममानै आधारित छ । यसै कारण नेपाल आज स्वतन्त्र सार्वभौम सत्ता सम्पन्न "हिन्दु" अधिराज्यको रूपमा छ । विश्वमा एक मात्र घोषित हिन्दुराज्य भएकोले हामी सबै हिन्दुहरुलाई हिन्दुत्वको नाताले गौरवको अनुभव हुनु स्वाभाविक हो । तर हिन्दु राज्य भयेता पनि हिन्दु धर्मको श्रेष्ठ तत्व ज्ञानमा अन्य सबै धर्महरुको प्रति सहिष्णुता र सम्मानको भाव हुनाले हिन्दु अधिराज्य नेपालमा धर्मको आधारमा कुनै पनि नागरिक सित भेदभावको व्यवहार हुदैन । संसारमा सुख, विश्वशान्ति' मानव मात्रमा भ्रातृभाव समता, असीम उदारता जस्ता महान् तत्व छन्, जसले हिन्दु धर्मलाई हजारौं वर्षदेखि अविभाज्य र अक्षुण्ण बनाई राखेको छ । यस धर्मको महानता यसैमा छ कि यसले विभिन्न धर्महरुलाई एउटै लक्ष्य प्राप्तिको लागि भिन्न भिन्न पथको रूपमा स्वीकार गरेको छ र यसले कहिले पनि कुनै धर्मको विरोधमा प्रचार गर्दैन । अरु धर्मप्रति सहिष्णुता, उदारता र सम्मानको भावना राख्नु हाम्रो नीतिमात्र होईन, हाम्रो मूलभूत सिद्धान्त र विश्वास पनि हो । यसै तत्वको प्रत्यक्ष आचरण नेपालको जन जीवनमा देखापर्दछ । नेपालका नागरिक अनेकौं उपासना पद्धतिका पालन गर्दा गर्दै पनि परस्पर स्नेह-पूर्वक बसेका छन् र नेपालको हितको कार्यमा संलग्न छन् । धर्मलाइ जोगाउन स्वतन्त्रता र सम्पन्नताको आवश्यक हुन्छ । यस दृष्टिबाट नेपालले आफ्ना नागरिकहरुको भौतिक सुख र समृद्धिको लागि पनि सफलता पूर्वक प्रयत्न गरि रहेकोछ । तर यसको अन्तिम उद्देश्य धर्मको पालन नै

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हो । आज संसारलाई धर्मले मात्र रक्षा गर्न सक्दछ । यसै कारण, नेपालले प्राचीन हिन्दु परम्परा र राज्य नीतिमा आधारित पञ्चायत व्यवस्थालाई अपनाएको छ । यसको मूल लक्ष्य व्यक्तिको आध्यात्मिक विकास हो जसले गर्दा जीवनका आधारभूत मूल्यहरूको प्राप्ति गर्न सक्दछ । यसको निमित्त यस व्यवस्थाले समाजको प्रत्येक व्यक्तिलाई आपनो कर्तव्य उत्तरदायित्व तथा अधिकार प्रति चेतना उत्पन्न गराई उसलाई धर्मको मार्गमा अग्रसर गराउन चाहन्छ । देशका असंख्य किसानहरूलाई जीवित र जागृत पार्नको निमित्त यसै कारण भूमि-सुधार जस्तो महान र व्यापक कार्यक्रमको प्रारम्भ पनि नेपालमा गरिएको छ । नेपाललाई सर्व दृष्टिबाट विश्वका समक्ष एउटा आदर्श हिन्दु राज्यको रूपमा खडा गर्नो हाम्रो इच्छा छ र यसका लागि हामी नेपाली सधैं प्रयत्न शील छौं ।

नेपाल माथि हजारौं वर्ष देखि आक्रमण र संकटहरु बराबर परिरहे तापनि नेपालले आफुलाई त्यसबाट सुरक्षित राख्न सकेको छ । महान्, विभूति, सन्त र महापुरुषहरूले हाम्रो मार्ग प्रदर्शन गरेका छन् । धर्मले हाम्रो रक्षा गरेको छ । आफुलाई हिन्दु भन्नमा पनि भय र लज्जाको अनुभव गरिने कृत्रिम वातावरण उत्पन्न भयेको कालमा पनि नेपालले आफुलाई हिन्दुराज्यको रुपमा अक्षुण्ण राख्यो । सबै हिन्दुहरुलाई यस कुराको विशेष अभिमान हुनु पर्दछ ।

हिन्दुसमाज धर्ममा आधारित छ । एकता, भ्रातृत्व र प्रेमका शाश्वत सिद्धान्तहरू अन्तर्गत रही धर्मको बाह्य रूप परिवर्तनशील रहन्छ । सामाजिक र राजनैतिक संस्थाहरूको विकास भई रहन्छ र राष्ट्रिय जीवनमा नयाँ–नयाँ कुराहरूको प्रादुर्भाव हुदैजान्छ । हिन्दु समाजपनि समयको गति अनुसार अग्रसर हुदै जान्छ र हिन्दु समाज जहिले पनि गतिशील रहेको पनि छ । वातावरणमा हुदै गयको परि-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वर्तनको अभाव यसमा परिने रहन्छ र समयको गति र माँगअनुसार यसमा पनि आवश्यक प्रतिक्रिया पर्दै जान्छ। श्रुतिहरूमा भनिएका मूल सिद्धान्तहरूलाई समय अनुसारको आज नयाँ रूप दिनु पर्ने आवश्यकता परेको छ। हिन्दुसमाजको भविष्य यसै माथि निर्भर गर्दछ। अतः आज समस्त हिन्दुहरूले यस कुरामाथि ध्यान दिनु आवश्यक हुन गएको छ। आजसम्म आफूलाई हिन्दु भन्नमा लाजवा। सङ्कोच मान्ने हिन्दु समाजलाई जोगाउन सुदृढ पार्न तथा विकसित पार्न धर्मको पुनरुत्थानका लागि अग्रसर भएर नै हामी आफ्नो राष्ट्र र समाजको रक्षा र विकास गर्न सक्नेछौं। समस्त हिन्दुहरूले यस कुरालाई राम्ररी हृदयङ्गम गर्ने आवश्यकता भएको छ।

यो खुशीको कुरो होइन। आज हिन्दुसमाजमा केही शिथिलता देखा पर्न थालेको छ। आजको हिन्दु विचलित हुन लागेको छ, धर्ममा उसको श्रद्धा डगमगाउन थालेको छ र यसलाई उदासीनताले घेर्न थालेको छ। अतः उसलाई फेरि स्वस्थ बनाई, आफ्नो उच्च उदात्त प्रकृतिमा स्थिर गर्नु र आफ्नो श्रेष्ठ हिन्दु जीवनको रचना तर्फ अग्रसर गराउन आवश्यक भइ सकेको छ। हिन्दुधर्म विश्वको सबभन्दा प्राचीन धर्म हो। यसको आफ्नो एउटा श्रेष्ठ तत्वज्ञान छ। संसारभित्र अनेक प्रकारका संघर्षलाई हटाई सबैको कल्याण गर्ने र सबैलाई सुस्थिर शान्ति प्रिय बनाउनको लागि प्रशस्त मार्ग यसमा छ। मानव भित्रकै दैवी अंशलाई जगाउने आध्यात्मिक तत्वज्ञान यसमा छ। आत्मालाई उत्तरोत्तर शुद्ध संस्कारित गरी परमात्मतत्वसंग तादात्म्यको अनुभूति गराउने क्षमता यसैमा छ। जबसम्म मानव समाजका आफ्ना यी आध्यात्मिक जीवनमूल्यहरूलाई पुनःस्थापित गर्नमा सफल हुँदैन तबसम्म आधुनिक संहारक शस्त्रहरूको निर्माणको होड् विश्वयुद्धको विभीषिका र विनाशतिर जाने भवितव्य हट्न सक्दैन। कारण परस्पर द्वेष र घृणाको भावनानै सङ्घर्षको कारण हुन्छ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

र भौतिक सुखको लालसालेनै स्वार्थ तथा मानवताभयेको पाशविक वासनालाई आमन्त्रित गर्दछ । आजको मानव दुर्भाग्यले यस विनाशको दिशामा बढ्दै गईरहेको छ र यसैकारण आपसी विद्वेष र संघर्षमा अल्झिँदै गइरहेको छ—मानवलाई यस डरलाग्दो स्थितिबाट धर्मले मात्र रक्षा गर्न सक्दछ । आज यसै धर्मको तत्वलाई प्रतिपादन गर्ने आवश्यकता छ । स्नेह र आत्मीयता प्रेम र सद्भावयुक्त जीवन बिताउनु नै हिन्दू धर्मको श्रेष्ट तत्त्वज्ञान हो । इनै गुणहरुमा आधारित जीवन रचना जसमा ईर्ष्या, द्वेष, कलह वा संघर्षको कुनै स्थान हुँदैन, न हुनुनै एउटा आदर्श जीवन रचना हो । नेपालले आफ्नो यसै जीवन रचनाको आधारमा समयलाई अङ्गालेर पञ्चायत प्रजातन्त्रको पद्धतिलाई स्वीकार गरेको छ भन्दा गौरवान्वित भयेको छ ।

आजको विश्व संघर्ष युगमा सुखी मानव जीवनको लागि हामीले यसै श्रेष्ठ तत्व ज्ञानको प्रतिपादन र परिचालन गर्नु पर्दछ अघि पनि सम्पूर्ण विश्वमा "वसुधैव कुटुम्बकम्" को रूप लिने यो तत्वज्ञान परिचालित भयेको थियो । अनेक प्रचारकहरू विभिन्न देशहरुमा गई यसको परिचालन गर्नमा सफल भयेका थिए । नेपालीकी सुपुत्री राजकुमारी भ्रकुटीको नाउ यसमा उल्लेखनीय छ । जसले गर्दा तिव्बत चीन र मङ्गोलियासम्म यो सांस्कृतिक उच्च जीवनको अनुसरण हुँदै आयेको थियो पश्चिमका अनेक देशहरूमा र पूर्वशियामा पनि हाम्रो संस्कृतिको प्रचारका अवशेष आजसम्म प्राप्त भइरहेको देखा परिरहेका छन् । कम्बोडियाको खुदाइमा शिव, उमा, शेषशायी, बिष्णु, ब्रह्मा, गणेश, स्कन्द, नन्दी र बुद्ध आदिका

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्राचीन मूर्त्तिहरु फेला परेका छन । अङ्कोरको विशाल मन्दिरमा संस्कृतको शिलालेख रामायण र देवासुरसङ्ग्रामका चित्रहरु र ब्रह्मा बिष्णु तथा महेशका मूर्त्तिहरु पनि पाइन्छन् । थाइल्याण्डमा त हिन्दू संस्कृत भाषाको स्पष्ट प्रभाव देखिन्छ । चम्पा अर्थात अनाम मा सबै शिलालेख संस्कृत भाषामा पाइन्छन् । त्याँहा हिन्दू र बौद्ध मन्दिर नेपालमा जस्तै संगसंगै छन् । इ दुवै धर्मंमा त्याहाँ पनि नेपालमा जस्तै मेल देख्न पाइन्छ । फिलिपाइनमा पनि यही हिन्दु जीवनको प्रभाव मलाया र जावा हुँदै पर्न गएको छ । उनीहरुको भाषा र बोलचालमा संस्कृत शब्द प्रचुर मात्रामा पाइन्छ । बोर्नि-योको मूल निवासीहरुको आचार, व्यवहार, भाषा र मन्दिरमा हिन्दूधर्मको प्रभाव प्रष्ट झल्किन्छ । यति मात्र होइन जापानका मन्दिरहरुमा पनि धर्मचक्र मणिवन्ध कमलदल र ताण्डवको चित्र आदि अङ्कित छन् । मन्दिरहरुको गुम्वजमा कलश र चक्र अङ्कित भयेको पाइन्छ । सयकडौं चित्र हिन्दू कलामा आधारित छन् चीन मा पनि हिन्दुहरूको जस्तै सूर्यलाई अर्घदिने र पितृलाई श्राद्धगर्ने चलन पाइन्छ । मैत्रेय, अश्वघोष, नागार्जुन, बासु बन्धु, कुमारजीव आदि ग्रन्थकारहरूका संस्कृत ग्रन्थहरूको चीनी भाषामा अनुवाद भयेको छ ।

यसबाट यो स्पष्ट हुन्छ कि दक्षिण पूर्वी एशियामा हिन्दू संस्कार पर्याप्त मात्रामा पुगेको छ । वास्तवमा हामी सबैको एउटै आध्या-त्मिक प्रवृत्तिरहेको छ । यो यस्तो सूत्रहो जसलाई आफ्नो जीवन बाट कहिले पनि पृथक् गर्न सकिदैन । यो प्रवृत्ति जहाँ जहाँ—छ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

त्यहाँ–त्यहाँ यसको स्मरण गर्नाले ऐतिहासिक धार्मिक स्थान, नाम र महापुरुषहरू प्रति श्रद्धा सधैं अटूट रहन्छ। यहीनै हाम्रो एकता–को सूत्र आज पनि छदै छ। जापानका बौद्धलाई आज पनि सार–नाथ बुद्ध गयाको दर्शनको अभिलाषा हुन्छ। नेपालका हिन्दूको गङ्गास्नान काशीसेवन र कन्या कुमारीदेखि काश्मिरसम्मका पुण्यस्थलहरूका दर्शन जीवनको एउटा अभिलाषा र प्रेरणा भइ रहन्छ भारतका हिन्दूको लागि हिमालयको आकर्षण पशुपतिनाथ र मुक्तिनाथका दर्शन एउटा चिर आकांक्षा भईनै रहन्छ। संसार का कुनै भागका निवासी भये पनि हिमालयको आमन्त्रण सधैं उसलाई प्रेरित गर्दछ। यति मात्र होइन, अमेरिका, बेलायत र अरु पाश्चात्य युरोपीय देशहरूमा पनि जताजता हिन्दु सस्कृतिको पावन गङ्गा पुगेको छ। कहिले विवेकानन्दका माध्यमले त कहिले राम तीर्थको सन्देशबाट त्याहाँको जन जीवनले एउटा आवश्यक मोड पायेको छ र त्यसपछि त्यहाँबाट पनि भगिनी क्रिष्टइन भगिनी निवेदिता, एनिबेसेण्ट र मीराबेन गंगाको पावन तटमा (पावन) जन्मजन्मान्तर व्यतित गर्ने अभिलाषा लियेर नै पालन (पालन हिन्दू पुण्यभूमि' मा कर्मभूमिमा आयेको कुरा इतिहासले हामीलाई देखायेको छ।

सत्प्रवृत्तिको, आध्यात्मिक प्रवृत्तिको भोक फेरि जागृत गरी, एउटा प्रचण्ड सात्विक हिन्दु शक्तिको जागरण आज आवश्यक भइ सकेको छ। आज प्रत्येक हिन्दूमा समयानुकूल नवीन–चेतना उत्पन्न गरी आफ्नो जीवन रचेताको आदर्श विश्वको सामु खडा गरी पुनः

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आत्मादेखि परमात्मा तर्फ बढ्ने तत्त्व ज्ञानको आधारमा व्यवहारमा निपुण ऐहिक अभ्युदयशील मानवको सफल जीवन प्रत्यक्ष चरितार्थ गरी देखाउने आकांक्षा जागृत गर्ने आवश्यकता भयेकोछ । आफ्नो श्रेष्ठ तत्त्व ज्ञानको आधारमा स्नेह र पारिवारिक आत्मीयतायुक्त जीवनको अभ्यास तथा त्यस मार्फत् सम्पूर्ण विश्वको लागि कल्याण दायी हुने वातावरण र सो तत्त्व ज्ञानको सृजना हामीले नै गरेकोछौं । आफ्नो जीवनलाई आदर्श रूपमा उपस्थित गरी आज पनि हामीले विश्वबन्धुत्वको यो श्रेष्ठ परिकल्पना साकार बनाउनमा अमूल्य सहयोग दिनका लागि आज हिन्दू धर्मावलम्बीले नै सक्तछौं । नेपाल यसको लागि आफूलाई हिन्दू अधिराज्य घोषित गरी अग्रसर हुन पायेकोमा गौरव मान्दछ । नेपाललाई थाहा छ कि विश्वको प्रत्येक हिन्दू, नेपाललाई एउटा स्वतन्त्र सार्व भौम "हिन्दू" अधिराज्यको रूपमा हेरी आनन्दित हुन्छन् । गौरवान्वित हुन्छन् । नेपाललाई यस माथि अभिमान छ र आज पनि सम्पूर्ण हिन्दूहरूको लागि आश्रयी स्थलयमी बाँच्ने प्रयत्न नेपालले गरि-रहेको छ ।

यसको लागि आवश्यकता छ हामी सबै हिन्दूहरू एउटै सूत्रमा बाँधिई एउटै शक्तिको रूपमा खडा हुनु । त्यससूत्रबद्ध शक्तिलाई खडा गर्ने सफल प्रयास राष्ट्रिय स्वयंसेवक संघले गरिरहेको छैन भन्न सकिन्न । आज धर्म नै हाम्रो जीवन हो । यस धर्मसंग अलग भयेर, यसप्रति उदासीन भयेर हामी बाँच्न सक्दैनौं ।

नेपालका लागि भारतका राजदूत महामहिम श्री मन्नारायण

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बाट प्राप्ट उहाले लेख्नु भएको " भारतीय योजनामा समाजवाद " भन्ने पुस्तकको भूमिकामा स्वर्गीय पं० जवाहारलाल नेहरूले पनि भन्नु भएको रहेछ, हाम्रो प्रमुख उद्देश्य प्रत्येक व्यक्तिको आन्तरिक महिमा र यसलाई सञ्चालन गर्ने धर्मको परिभाषा नै हो भन्ने कुरा हामीले विर्सनु हुदैन ।" प्राचीन, महान् र विशाल हिन्दू धर्मका सदस्य भयेर आज हामी सवैलाई आफ्नो हिन्दूत्वमा गौरव र अभिमान छ। सम्पूर्ण विश्वका विभिन्न देशहरू मध्ये सम्पूर्ण हिन्दूहरूको जीवनलाई आश्वस्त पारी प्रखर तेजस्वी, वलशाली आदर्श हिन्दू जीवन विताउने प्रेरणा दिन योग्य वनाउने दायित्व आफ्नो हिन्दू भूमिमा बस्ने हामीहरुकै हुन आएको छ। यस सत्यलाई संकेर यहाँका वासिन्दाहरूलाई सुसंगठित स्वरूप दिने कार्यमा "संघ" संलग्न छ भन्ने थाहा पाउदा हामीलाई खुसीलाग्नु स्वभाविक हो। अखिल विश्वका हिन्दूहरूको यो सात्विक, अनुशाशित चरित्र सम्पन्न प्रभावी शक्ति खडागर्ने आफ्नो यस उद्देश्यको लक्ष्यप्राप्तिमा "संघ" पूर्ण सफलहोस, यही नै हामी सवैको शुभेच्छा हुनु पर्दछ। विश्वका संपुर्ण हिन्दू मात्रमा प्रतिनिधि स्वरूप एक मात्र सार्वभौम सत्तासम्पन्न स्वतन्त्र नेपाल हिन्दू अधिराज्यका तर्फबाट हामी नेपाली पनि यस गतिशील हिन्दू शक्तिलाई सहयोग गर्ने कामना राख्दछौं र भगवान श्री पशुपतिनाथ एवं गुह्येश्वरीसित प्रार्थना गर्दछौ कि यस कार्यलाई सफल वनाये र आदर्श हिन्दू तथा मानव जीवन प्रस्थापित गर्ने आशीर्वाद प्रदान गरून्।

धन्यबाद।

जयनेपाल।

जय हिन्द।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री ५ महाराजाधिराज सरकारबाट दाङ्गमा आयोजित बृहद् आध्यात्मिक सम्मेलनमा बक्सेको उद्घाटन भाषण

सभापति महोदय,

उपस्थित महिला तथा सज्जनवृन्द,

आज संसारमा मानवमात्रको सर्वाङ्गीण उन्नतिको निम्ति विश्वशान्तिको विशेष जरूरत परेको बेलामा यस किसिमले शायद सर्वप्रथम यस जिल्लामा यस्तो आध्यात्मिक सम्मेलनलाई संबोधन गर्न पाउँदा र उपस्थित सबैको स्वागत गर्न पाउँदा मलाई ज्यादै हर्ष लागिरहेको छ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आत्मा समान हुन्छ, सर्वव्यापी हुन्छ र सर्वत्र हुन्छ भन्ने कुरा हामी हिन्दूधर्मावलम्बी बच्चा बच्चाको लागि पनि नौलो कुरो हो जस्तो मलाई लाग्दैन, तापनि अध्यात्म विषय यति गहन छ कि त्यसको व्याख्या कलम-मसीले गर्नु भन्दा शायद जसले जति आफ्नो आचार, विचार र अनुशासित जीवनले अनुभव गर्न सक्छन् त्यसले नै बढी जान्न सक्ने कुरो हो जस्तो लाग्दछ। त्यसैले यो देश, काल, धर्म या जाति विशेषमा मात्र सीमित रहने सानु र संकुचित वस्तु होइन भन्नु अत्युक्ति नहोला। अनन्त, महान् र घनत्वसंग प्राकृतिक ढङ्गले सम्बन्धित यस विषयमा नश्वर मानव मस्तिष्कले अठोट गर्दा विभिन्न समयमा, विभिन्न देशमा विभिन्न तरहले मानव समाजमा यसको प्रयोग र प्रतिपादन पनि विभिन्न ढङ्गले हुन जानु अस्वाभाविक होइन भन्ने पनि हाम्रा तत्वदर्शी पूर्वजहरूको मन्तव्य हाम्रो सामु छँदैछ। यो पनि जहां सम्म मलाई लाग्दछ, स्वभाविक कुरो हो र जुनसुकै वस्तुको पनि परिवर्तन नगरेर प्रगति पनि त हुँदैन। यसैले होला हिन्दुधर्म अति विशाल छ र हामी हिन्दुहरू धार्मिक सहिष्णुता र विचार-स्वतन्त्रतालाई सदैव काल र परिस्थिति अनुसार मानव जीवनका अभिन्न अङ्ग पनि सम्झन्छौं। उपमाका रूपमा भनुं भने जस्तो विभिन्न रङ्गका गाईहरू चाहे ती जे रङ्गका छन्, तर ती सबका दूधको रङ्ग कदापि रङ्गिविरङ्गी हुन सक्तैन। त्यसरी नै चाहे जेसुकै रङ्गका बल्ने तेल वा विभिन्न आकार-प्रकारका बत्तीका सुनहरु छन् जब ती बल्दछन् त तिनीहरु

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सबैमा अन्धकार हटाउने एउटै पवित्र क्षमता हुन्छ, त्यस्तै विभिन्न धर्म र दर्शनहरु भए पनि तिनीहरुको सार एउटै हो, देश, काल, अवस्था अनुसार विभिन्न बुद्धि र रुचिको सन्तुष्टिको लागि मात्र तीनीहरुका रुपरङ्ग विभिन्न भएका हुन् भन्ने सत्यको प्रतिपादन र परिशीलन परापूर्व कालदेखि नै हाम्रा प्रातः स्मरणीय ऋषि मुनिहरुले पनि हामीहरुलाई यही हिन्दुधर्ममा नसिकाइं आए जस्तो लाग्दैन। त्यति मात्र होइन, हामीलाइं यही हिन्दु धर्मले ढुङ्गा, मुडा, आगो, पानी, आकाश, पृथ्वी, रुख, पात र काग, कुक्कुरसम्मलाई पनि पूजा गर्ने घृणा नगर्ने शिक्षा दिन्छ र अद्यावधि हामी धेरैजसोले समय समयमा शायद गर्दै पनि छौं। यो विचारको महानता हो। यो नीचता र संकुचित भावना होइन, यही नै प्रजातन्त्रको मूल सार हो।

यही सारको ठीक तरीकाले समाजमा प्रयोग गर्न हामीले दलविहीन पञ्चायती प्रजातन्त्र अपनाउनु पर्‍यो। आज संसारले पनि क्रमशः हाम्रो नीतिलाई चिन्न थाले, यो हामी सबै नेपालीको लागि सन्तोषको कुरा हो।

यो सत्य, एकता र समानताको परिपालनलाई मानव भ्रातृत्व र विश्वशान्तिको निमित्त आजको संसारमा अँझै बढी बुझेर मान्यता दिनुपर्ने जरुरी छ भन्ने ठान्दछु। संयुक्त राष्ट्र–संघको वडापत्रमा पनि यसमा विशेष जोड दिएको कुरा हामी सबैले जानेबुझेकै छौं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यति हुँदाहुँदै पनि यो अपशोचको कुरा छ कि हामी जो हिन्दु धर्मको घमण्ड गर्दछौं, हामीमा एकता छैन, समष्टिकरणको कमी छ। दुःख लाग्दो कुरा छ, क्षणिक सुख र स्वार्थको लागि मान्छेले अनुशासन र नैतिकतालाई एकातिर पन्क्याई न आँफू केही गर्दछौं, नअर्काले गरेको सहन सक्तछौं, अँझ त्यति मात्र होइन, अर्कालाई सताउनसम्म पनि तम्सिदै, अनावश्यक कुराम अर्काको चेंवा, चासो र जाहाँसम्म पनि गर्दछौं, यो दुःखको कुरा हो। यो मानव समाजको उन्नतिको बाटो होइन, अवनतिको मार्ग हो भन्न कर लाग्दछ र कता कता आफ्नोमूल लक्ष्य, आदर्श र महानतालाई विर्सेर हामी अलमलिएकाछौं जस्तो लाग्छ। यो सत्य कुरालाई मात्र हामीले लाज मान्नु पर्दैन बरू बेलैमा ठीक ढङ्गले सम्हाल्नु पर्दछ भन्ने मेरो उपस्थित सबै विद्वान्-वर्गमा विशेष अनुरोध छ।

मान्दछु, हामीले आजको आधुनिक संसारमा बसेर वैज्ञानिक, भौतिक उन्नतिलाई पनि अवहेलना गर्न मनासिव हुँदैन र ईश्वरका सृष्टिमा कुन व्यक्ति त्यस्तो होला जसले आफ्नो उन्नति नचाहोस्, तर मान्छेको लक्ष्य भौतिक उन्नति मात्र भएमा वास्तविक एवं स्थायी उन्नति सम्भव हुँदैन, यसले मात्र हामी कसैले पनि कदापि मानसिक शान्ति र सन्तोष पाउन सक्तैनौं। त्यसैले हाम्रो लक्ष्य अवश्य पनि विज्ञानको साथसाथै आत्मज्ञान र धर्मसाधनतर्फ एवं नैतिकतामा आधारित भौतिक उन्नतितर्फ पनि हुनुपर्दछ भन्ने नै हिन्दुधर्म र

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दर्शनको मूल शिक्षा हो भन्ने नै मेरो धारणा छ। तसर्थ, आज यहाँ उपस्थित तथा विश्वका सबै हिन्दुधर्मावलम्बी विद्वान् महानुभावहरूसँग फेरि अपील गर्दछु कि हिन्दुधर्मक विशाल निचोडलाई आजको समय र परिस्थिति सुहाँउदो बनाई सांसारिक दैनिक जीवनमा अपनाउन चेष्टा सबैबाट हुनुपरेको छ जसले मानव समाजको बढी कल्याण होस्; उन्नति होस्। यो महान् कार्यमा सबदो सहयोग र सहायता गर्नमा नेपाल र नेपाली पछि पर्ने छैन र यस कामको निमित्त यसै सम्मेलनबाट एउटा स्थायी समिति बनोस् भन्ने पनि मेरो अनुरोध छ र आशा गर्दछु यसमा सबैको सहमति पनि मिल्ने छ। जहाँसम्म मैले बुझ्न सकेकोछु, संसारका सबै धर्म र दर्शनको सारभूत शिक्षा पनि यही नै जस्तो लाग्दछ।। धर्म, दर्शन र आध्यात्मिकतालाई अवश्य पनि आजको आधुनिक समाज सुहाउँदो परस्पर मेल, सहयोग तथा सद्‌भावको प्रमुख साधन बनाउन सक्नु पर्दछ, तथा यसो हुनुमै तिनीहरूको सार्थकता छ र यो हिन्दुधर्मको गहराइबाट हाम्रा पूर्वजहरुको परिपक्व विचारलाई नै अपनाई ढाल्न सक्तछौं जस्तो पनि लाग्दछ।

अझै भन्ने हो भने हिन्दुधर्म र दर्शन यति विशाल र उदार छन्, कि जुनसुकै समयमा पनि यसका आधारभूत सिद्धान्तहरुमा समय र समाज सुहाँउदो विशेष परिवर्तन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गरिकनै अपनाउन सकिन्छ । तर आदर्श जतिसुकै उच्च र विशाल भए पनि तिनीहरुको उचित मान्यताको परिपालन ठीक ढङ्गले ठाउँमा भएमा मात्र देश र समाजको लागि उपयोगी हुन सक्तछ भन्ने तथ्य हामी कसैले पनि कहिल्यै विर्सनु हुँदैन । यस सत्यतर्फ पनि यहां उपस्थित सबै विद्वान्‌हरुको ध्यान आकर्षित गर्न चाहन्छु ।

यस आदर्श तथा यसका मान्यताहरुको व्यापकतालाई अँझ आधुनिक ढङ्ग ले, अन्धविश्वासलाई त्यागेर स्पष्ट गर्नमा र त्यसको परिपालन गर्न गराउनमा यो आध्यात्मिक सम्मेलनले महत्वपूर्ण योगदान दिन सक्नेछ, भन्ने आशा तथा विश्वास राखेको छु ।

अन्तमा, धेरै समय लिन चाहन्न र मैले पनि आजै काठमाण्डौं पुग्न परेको छ, त्यसैले यहां भेला भएका अध्यात्म प्रेमी विद्वान् महानुभावहरु र उपस्थित सबैलाई हार्दिक अभिवादन गर्दै यस सम्मेलनका कर्मठ आयोजकहरु र खासगरी योगी श्री नरहरिनाथजीलाई समेत हार्दिक धन्यवाद दिन्छु ।

जय-नेपाल !

दाङ्ग, पश्चिम नेपाल चैत्र १ गते, वि. स. २०२२

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दाङ्गमा आयोजित विद्वत्सम्मेलनमा स्व. श्री ५ महाराजाधिराजबाट बक्सेको भाषण

उपस्थित विद्वद्वर्ग, महिला तथा सज्जनवृन्द !

आज गौरवमय इतिहास, परम्परा र संस्कृतिले ओत-प्रोत भएको हाम्रो नेपालको यस भागमा संस्कृतिसंग सम्बन्ध भएको संस्कृतका विद्वान्हरूको बीच आफुलाई पाउँदा हर्ष लाग्नु स्वाभाविक हो र उपस्थित सबै अतिथिवर्गको हार्दिक स्वागत गर्दछु । संसारको सभ्यताको ईतिहासको विकाशमा संस्कृतको महत्वपूर्ण देन छ । वैदिक कालमा कस्ता उच्च आदर्शहरु र उत्कृष्ट भावनाहरूको ऊठान भएर आर्य संस्कृतिको प्रवाह बग्दै आयो, हाम्रो दैनिक जीवनमा नै त्यसको कस्तो प्रभाव परेको छ, प्रत्यक्ष छ । संस्कृतको ज्ञान नभई हामीले आफ्नै आचार-विचारको मर्म पनि बुझ्न सक्तैनौं । सायद, समयको परिवर्तनले गर्दा होला त्यही ज्ञान नभएर हामीले हाम्रा गहकिला कुराहरूमा पनि नबुझेर श्रद्धा घटाउँदै लगेका छौं र खास गरी हाम्रा नेपाली नवयुवक-युवतीहरू यस विषयमा दुविधामा परी न अलमलिएका छैनन् भन्न करै लाग्दछ ।

पुरातन कालदेखिनै नेपालले संस्कृतमा दिलचस्पी लिएको बुझिन्छ र तरक्की पनि गर्दै गएको हो । हामीले हाम्रै शैक्षिक इतिहासलाई नियालेर हेर्‍यौं भने पनि यो भन्न सक्दछौं कि धेरै कालसम्म नेपालको शिक्षा पद्धतिनै संस्कृतमय थियो । शायद सबै नेपालीले यसलाई अङ्गालेका थिए । यी कुरा हामीसंग भएका शिलापत्र, ताम्रपत्र, सन्धिपत्र र ग्रन्थपत्रहरुबाट पनि प्रमाणित हुन्छन् ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हाम्रो सगरमाथा जस्तो संसारको सबभन्दा अग्लो चुचुरो भएको हिमवत्खण्डको माहात्म्य पनि सांस्कृतमानै पाइन्छ। हुन पनि सतीशिरोमणि तथा आदर्शगृहिणी श्री जानकीजीको मात्र होइन, विश्वशान्तिका प्रसिद्ध पूजारी युवराज सिद्धार्थ (भगवान् गौतम बुद्ध) को पनि यही पावनभूमिमा प्रादुर्भाव भयो। यही भूमिमा वाल्मीकिले रामायण महाकाव्य लेखे, जड भरतले वानप्रस्थाश्रम बनाए, पुलस्त्य र ऋष्यश्रृङ्ग ऋषिले तपस्या गरे। वात्स्यायनले कामसूत्र लेखे। गोरखनाथ, मत्स्येन्द्रनाथवाट र नाथसम्प्रदायवाट पनि देश-भाषालाई ठूलो प्रेरणा मिल्यो। पछि पनि छिमेकी राष्ट्रहरू तथा विदेशमा नष्ट–भ्रष्ट भएर गएका कैयन ग्रन्थहरुको यहींनै संरक्षण भयो। कैयन विद्वान्‌हरु आएर यहीं बसे, यहीं फूले-फले। यी सब कुराको पुष्टि हाम्रा पुस्तकालय, आगम, मन्दिर, गुम्बाहरुमा रहेका ग्रन्थहरुवाट मिल्दछ। धेरै जसो विषयमा एक-से-एक अमूल्य ग्रन्थहरू हामीकहाँ हस्तलिखित रूपमा अद्यावधि छँदैछन्। यो सबैलाई जान-कारी भएकै कुरा हो।

तर समय परिवर्तनशील छ र समयले पल्टा खाँदैं आयो। संसारका विभिन्न उन्नत राष्ट्रहरूमा भौतिकवाद जतासुकै व्याप्त हुन थाल्यो, सांसारिक भोग विलासनै मानव-जीवनको लक्ष्य बन्दै आयो। अनि आध्यात्मिकवादलाई चाहिदो नचाहिदो बुढी-रूढी र मत-मतान्तरले धमिल्याउनु प्रायः स्वाभाविकै भयो। हाम्रो प्राचीन र उप-युक्त ग्रन्थहरूको अध्ययन पश्चिमी विद्वान्‌हरूले गर्न थाले, सार निकाले, आलोचना गरेर फाइदा पनि उठाए। पश्चिमी शिक्षा र चाल चलन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मा विस्तारै रङ्गिएका हामीहरूले पनि ऊतैतिर आँखा लगाउन लाग्यौं । उनीहरूले प्रतिपादन गरेका विषयहरूमा क्षणिक सुखभोगको लालसाले आँखा चिम्लेर वढ्ता आस्था देखाउन लाग्यौं र हाम्रो महत्ता चिनाउने आज उनीहरू भए भन्न कुनै अत्युक्ति हुँदैन र यतातिर संस्कृतज्ञहरू सेलाउँदै गए । हामी खाली हाम्रो शास्त्रमा यस्तो छ भन्ने कुरामा मात्र गर्व लिन लाग्यौं र व्यावहारिक हुन सकेनौं । रटन्ते विद्यामा मात्र ज्यादा जोड दिन लाग्यौं । समयलाई चिन्ने कोशिश गरेनौं, आवश्यक अनुसन्धानपट्टि दृष्टि दिएनौं । यो ज्यादै दुख:को कुरा छ, यसैको फलस्वरूप आज हामीहरूमा क्रमश: आत्महीनता आयो, मानसिक दुर्बलता हुन लाग्यो, अनुशासन, आचरण र सच्चाईबाट हामी पछि पर्न थाल्यौं । यसैले अब हामीले यस्ता कुरामा लाज मान्नु हुँदैन, बरू भएका भूलहरू सुधारेर समयलाई चिन्हेर सुहाउँदो ज्ञान र विज्ञानको समन्वयले प्राचीन इतिहास र परम्पराको जग न खलबल्याई, तर आधुनिक व्यावहारिक कर्म र चरित्रमा कसरी आवश्यक सुधार गर्नु पर्दछ, आज म यसै विद्वत् सम्मेलन द्वारा संसारका सम्पूर्ण संस्कृतका अनुयायी, लेखक, कवि, विद्वान्, पण्डित, विशेषज्ञ सबै छेउ हार्दिक अनुरोध गर्दछु अपील गर्दछु कि अब यस कुरामा ठोस अनुसन्धान र व्यावहारिक कार्यान्वयन हुनु नितान्त आवश्यक भएको छ, हुनु पर्दछ ।

हुन त यस्ता गहन विषयमा बढता कुरा गर्नु म कुनै विद्वान् होइन तैपनि यो खुसीको कुरा छ कि आज हाम्रा संस्कृतज्ञहरुको दृष्टिकोणमा पनि परिवर्तन देखिन लागेको छ र त्यसकै फलस्वरूप

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हामी आज यहाँ जम्मा भएका छौं, उदारता र आत्मगौरवका साथ समय सुहाँउदो गरी हामीले हाम्रा पुस्तकालयहरूमा भएका ग्रन्थहरूको अध्ययन र अनुसन्धान निष्पक्ष ढंगले गर्दै गयौं भने हामी यो पनि फेरि एक दिन देख्नेछौं कि विज्ञान पश्चिमी सभ्यताको मात्र पेवा होईन । हामी संग पनि एकसे एक वैज्ञानिक ग्रन्थहरु छन् । त्यसबाट जीव-शास्त्र वनस्पति-शास्त्र, आयुर्वेद र रसायनशास्त्रमा ठूलो असर पर्न सक्दछ । विज्ञानज्ञाताहरुलाई संस्कृतको ज्ञान भएन र संस्कृतज्ञहरुलाई विज्ञानमा अभिरुचि भएन भने अब हामीले यो समस्या हल गर्न सक्दैनौ र यी दुवैको समन्वय हुनु पर्दछ । अनिमात्र शुद्ध अनुसन्धानको वातावरण बन्दछ र अनिमात्र संसारमा ज्ञान र विज्ञान द्वारा सुख, सुविधा र शान्ति हुने छ, मानव-समाज फल्नेछ फुल्नेछ ।

अर्कोतिर-दर्शनमा पनि हाम्रो नेपालको एउटा विशेष देन छ । विदेहदर्शन याज्ञवल्क्यस्मृतिको साथसाथै बौद्धदर्शनको पनि यहाँ प्रादुर्भाव भयो, परन्तु यी दुबै दर्शनको समुन्नतिबाट नेपालीहरुले समन्वयवाद निकाले, अन्यत्र भैं आपसमा अमेल हुन दिएनन् । धार्मिक तथा व्यावहारिक सहिष्णुताने हाम्रो दर्शनको आधारस्तम्भ भयो र हो । 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को भावनाने यसको स्रोत हो । हामी तर्पण गर्दछौं, जड चेतन सबै प्राणीमात्रको तृप्तिको कामना गर्दछौं, देवता पितृ सबैलाई मान्छौं, कुनै कर्म गर्दा पनि फलको आशा न राखेर कर्तव्य सम्झेर गर्नु नै उत्तम हो भन्ने कुरामा विश्वास सिद्धान्तहरुमा मनि गहिरिएर जरो हाल्न सके विश्वास भइरहेका विघ्नबाधाहरू

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पन्छिन्थे र 'सर्वभूतहिते रताः' को सच्चा स्वरूप देखन पाइन्थ्यो भन्न म असमर्थ ठान्दिन, तथा यही समन्वयवादमा नै हाम्रो निर्दलीय पञ्चायती प्रजातान्त्रिक व्यवस्था आज निर्विकल्प व्यवस्था हुन आएको छ भन्दछु ।

हामी समन्वयवादमा विश्वास राख्दछौं । समन्वयात्मक दर्शन द्वारा नै विश्वासमस्या हल हुन सक्तछ भन्ने हाम्रो धारणा छ । हाम्रो असंलग्न परराष्ट्रनीति पनि यसैमा आधारित छ । त्यसैले पनि यस तर्फ आज हामीले पाईला चाल्नुपरेको छ भन्नु म आफ्नो यो कर्त्तव्य ठान्दछु । अध्ययन, अनुसन्धान र अध्यापनको दरकार परेको छ । यी सबै कार्यमा संस्कृतका विद्वान्हरुको ठुलो उत्तरदायित्व थियो, छ र हुन्छ भन्ने कुरामा पनि मलाई शंका छैन ।

यो खुशीको कुरा छ—विशेष रूपले परापूर्व काल देखिनै बखत बखतमा आई परेका अनेक विघ्नबाधालाई पन्छायेकाले परिस्थिति र जन–आकांक्षा अनुरूप नेपालले आफ्नो अस्तित्व र नेपालीले आफ्नो व्यक्तित्वलाई बचाई आएको छ । यस कार्यमा पनि हाम्रो संस्कृति परम्परा र हाम्रा वीरपूर्वज तथा विद्वान्हरुको ठूलो देन छ । यो पनि संसारका सबै विद्वान्बाट छिपेको कुरा होईन ।

आज एकमात्र हिन्दु राष्ट्र नेपालमा संस्कृत विश्वविद्यालयको खाँचोको हामी नेपाली सबै र खास गरी नेपाली विद्वान्हरुबाट महसुस नगरेका होईनौं, तर यो कहिले सम्भव हुनसक्छ, कस्तो साँचो-मा ढाले देश सुहाउँदो हुन सक्ला, के गरेर आधुनिक ढंगले हाम्री

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विद्वत्ताको परम्परा कायम रहन्छ भन्ने कुरामा यहाँ उपस्थित विद्वान्‌हरूबाट यो छलफल हुन लागेकोछ, त्यसको म सहर्ष र सहृदय स्वागत गर्दछु तथा यो पनि भन्न चाहन्छु कि अब हाम्रो कसैले पनि आँखा चिम्लेर अंधविश्वासमा विना कारण कुनै कुरामा पछि लाग्नु नेपाली समाजलाई शोभा दिदैन र जुनसुकै शिक्षालय तथा विश्वविद्यालय सम्म त्यस्तो कार्यक्रम तैयार पार्नुपर्दछ कि त्यस शिक्षालय वा विश्वविद्यालयबाट निस्केको कुनैपनि नेपाली विद्यार्थी सर्वप्रथम अनुशासित, चरित्रवान् र आधुनिक नेपाली हुन सकोस, बन्न र वनाउन सकोस। यसमा अर्को कुनै तर्क हुन सक्तैन। यो पनि म आज यहाँ भन्न चाहन्छु।

यसै सिलसिलामा यस जिल्लाका जनता छेउ पनि फेरि एक पल्ट आइ यसरी भेटघाट गर्न पाएकोमा म ज्यादै खुसी छु। आज हाम्रो देशको सफलता र समस्या पनि कुनै नेपालीबाट छिप्न गएको छैन र त्यसैले यस विषयमा बढी बोलीरहनु पर्ने दर्कार देखिदन। मैले पनि मलाई लागेको प्रायः सबै जसो कुराहरु जनसमक्ष पोखी सकेकोले अब प्रत्येक नेपाली छेउ यही मात्र भन्न चाहन्छु कि कुनै पनि नेपालीवाट मैले बखत बखतमा जनसमक्ष राखेका कुराको कुशल कार्यान्वियनमा मात्र ध्यान पुगे म संधैंको फैं सबै सग कृतज्ञ हुनेछु। हामी सम्पूर्ण नेपालीले जसरी गहकिला कुराहरुको सुरुआत गर्दछौं त्यसै गरी त्यसलाई पूरा गर्न पनि सक्नु परेको छ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अन्तमा उपस्थित सर्व विद्वान्वर्गमा माथिका कुराको फेरि एक पल्ट सम्झना दिलाउँदै यस सम्मेलनको सफलताको कामनाका साथै यस समारोहसम्बन्धित सबैलाई हार्दिक धन्यवाद ज्ञापन गर्दछु ।

जय नेपाल ।

दाङ

२०२४ चैत्र १ गते बृहस्पतिबार

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शवरिको भज़न

दक्षिणको अति राम्रो डण्डक भन्ने वनमा।
ऋषि धेरै वास गर्थे शांन्ति लिई मनमा॥
लहराका धारि थिये वृक्ष थिये राम्रा।
जुन देश खोजदै होउँडथे रघुपति हाम्रा॥

मृग वाघ संगै खेल्थे नलिएर रीस।
वस्थ्यो किन अहिं साम रीष जस्तो बिष॥
शवरीको सानो झुप्रो थियो वन भित्र।
पशु पञ्छि मात्र थिए उनका ईष्ट मित्र॥

गरथे ऋषि वेद पाठ हरी भेट्न लाई।
शवरीत रून्थि खाली नाम राम गाई॥
छैन केहि धन दिउँ खाली यो मन।
चाँडो गरि लौन हरी देउ दरशन॥

मेरो राम भोकै होला वयेर टिपि राखछु।
ठर्रो पर्ला घाँट कोर्ला अलि अलि चाखछु॥
वन पातको खोलचा पारि पानी ल्याई भरथिन।
कोमलस्या उला बिछायेर सुघर सफा गरथिन॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कागै मात्र आए पनि डण्डा वत गरथिन ।
मेरो राम कहिले आउला भनि पाउ परथिन ॥
दिन विते वर्षैं विते ढोकै खुला राखि ।
तेतिस कोटि देवी देवता सकिन् सवै भाकी ॥

झुपडि को फरिएको किन वन्द हुन्थ्यो ।
राम आउने ढोका थुन्दा मन साहै रून्थ्यो ॥
चराले मात्र खोस्याङ्ग गरे रामै हुन भनेर ।
वाहिर आईको किल्ला छाडथिन पागलै वनेर ॥
हे घनश्याम हे मेरा राम आउन भनेर ।
हे रघुनाथ रुमाल हाथ दयालु वनेर

भगवान सवारी भै भन्नु भयो

सीते सीते भन्दै भाई लक्ष्मण साथमा लिई ।
ऋषि मुनिको आश्रम छाडि शवरी मा अति प्रेम गरी
मेरी शवरी मेरी शवरी भन्दै पाल्नु भयो घन श्याम हरि ।
जुन झुपडिको छैलामा वसि रून्थिन शवरि ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शवरि ले भन्छिन

स्याउला माथि वसि देउ वावा पनी लिई आँछु ।
छुन्छु पाउ हे मेरा वावु भन्दै दौड़िन गङ्गे जी ।।
वाटामा जाँदा ऋषिलाई छोइन ऋषि जी रिसाये
शवरी आईन श्रीराम पाईन हरिजी रिझाईन ।।

श्री राम राम श्री राम राम श्री राम जपेर ।
वनमा पीथ वस्ने शवरी कन्या विरह खयेर ।।
सारा रामै लाई देखिन ऋषि लाई देखिनन ।
छोयेको देखि वढेर सेखि रिसाये ऋषि भन ।।

शवरीले प्रभु लाई वयेर खुवायेर सोधछिन

गङ्गाको जल वयेर फल वनमा सस्तो छ ।
भनन भन हे मेरा राम वयेर कस्तो छ ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भगवान राम बाट आज्ञा हुन्छ

अयोध्याको महल मा जेल्ले सम्म थिञ्चे ।
कौशल्याको स्वामि सित खावा धेरै पिञ्चे ।।
दाख खाञ्चे अनार खाञ्चे रस धेरै पिञ्चे ।
तर आज ब्राह्म सुख वयेग मा लिञ्चे ।।

ऋषिहरूको ममता तोड़ेका

गङ्गाजीमा ऋषि जीले रगत र कीरा ।
मन्त्रौ देखि जिल्ल परि फर्के कुटितिर ।।
शवरी को झुप्रो भित्र पर ब्रह्म देखि ।
ऋषिजीको गए सबै मैहूँ भन्ने सेखि ।।
शवरीको पाउपरि राम तिर हेरि ।

माफि माँगे ऋषि जीले रूँदै फेरि फेरि ।।
राम जीको सङ्केतले ऋषि जीले छुँदा ।
गङ्गा भईन बङ्गा शवरीले छुँदा ।।
रामकोभजन गर्न लागे
ऋषिहरू खुशी भएर
राजा राम सीता राम राजा राम सीता राम — — — —

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भजन

आउने वेला भो कृष्ण आउने वेला भो ।।
भक्त जनको रक्षा गर्न आउने वेलाभो ।। ।।
देखाउने वेला भो कृष्ण देखाउने वेला भो ।।
मानव लिला देखाउने वेला भो ।। धु' ।।
धर्म हानि पाप वृद्धि हुन्छ जैले जैले ।
रूप अनेक धारण गर्छ मैले तैले तैले ।।
आफ्नो यो वाणी पुन्याउने वेलाहो ।। १ ।।
अन्धकार अकर्तव्य छाई रहेछ मनमा ।
लोभ पाप बढि धेरै सुख छैन जनमा ।।
कर्तव्य कर्म चिनाउने वेला भो ।। २ ।।
आपसको फुठले गर्दा शान्ति छैन कतै ।।
अशान्ति र अत्याचार बध्या जता ततै ।।
शान्तिको धारा वगाउने वेला भो ।। ३ ।।
र.सुन्द्रको शेष सैया छोडि व्याँहा 'आईं ।
अज्ञानको अँध्यारोमा भूलिरहने लाई ।।
गीताको ज्ञान सुनाउने वेला भो ।। ४ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भजन

सपना झैं सन्सार छ भूल्नु है वेकार छ ।
राम भजो हर्दम भाइ यहि यौटा सार छ ॥
यता आउने जाने गर्ने आफ्नो मन विचारछ ।
बाटो हिड्ने बटुवा जस्तो कसको के परिवार छ ॥२॥
येति भए गरौँला भन्ने तृष्णा अपार छ ।
यस्तो ममता राखता राखतै नरक यसलेपर्छ ॥२॥
अनित्य छ चोला ब्योहाँ वस्तु दिन चार छ ॥
मूर्ख भई रहनलाई पृथ्वीलाई भार छ ॥३॥
पारि तर्ने नारायणको नाम एक आधार छ ।
पाप पुन्य खरिद गर्ने अनौठा बजार छ ॥४॥
पाप ठुलो भनी गर्नु आर्काको विगार छ ।
धर्म ठुलो भनी गर्नु पर उपकार छ ॥५॥

★

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सूचना

जीवन भर रामको नाम लीई जीवन विताउ, सत्यता बोलो हामीले सधै शान्ती लेउ आज मानव जीबन पाई काम हामीले आफै लाई चिन्नु ठर्दैनौ कही मानव लाई भन्नु अगाड़ी आफैले पहिले विचार गरी आफ्नु मुख आफैले हेरि मात्र अरकाको नीन्दा गर्नु पर्दछ ।

॥ समाप्त ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नवराज
श्री नवराज कार्की

❀ श्रीः जयदुर्गे ❀

भूमिका

करार विन्देन पदारविन्दं
मुखारविन्देऽभिनिवेशयन्तम् ॥
वटस्य पत्रस्य पुटे शयानं-
बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि ॥

स्तुति भनेको ईश्वरको प्रार्थना हो । प्रार्थना आस्तिक मनुष्यको प्राण हो, दुःखी हृदयको आवाज हो अनन्त भगवानको साथ अभिन्न गराउने साधन हो। भक्त-हरूमा यो सानो 'गजेन्द्रमोक्षको' पुस्तक तृतीयवार दृष्टिगोचर गराउन पाएकोमा सारै खुसी छु। भक्त वत्सल प्रभुले दोषको वास्ता नगरी यो सानो आफ्नो स्तुतिलाई स्वीकार गरी वक्सीयको छ, कुनै रसा-त्मक काव्यकला यस्मा छैन तै पनि यस्मा प्रभुको दया दृष्टि छ, यो पुस्तक प्रेम मूल्यमा वितरण गर्ने स० सोम प्रसाद दम्पती हुनु हुन्छ। प्रभुमा भक्तिको इच्छा गर्ने वहाँहरूलाई गजेन्द्र दुःखहारी हरिले चिरायु राखी भक्ति प्रदान गरोस ।

हरिः ॐ तत्सत ।

२०२७ साल माघ अर्धकुम्भ मेला, प्रयागराज ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वाग्मती स्तुति

श्री वाग्मती भगवती नरसिंह वाणी-
हे अम्बिके जयहवस् अमृताम्बु वाहिनी ॥
संसारको तापर पाप नाशिनी,
लेऊ शिवे शरणमा तिमी हामिलाई ॥
सद्बुद्धि देउ जननी तिमी हाँमीलाई,
यो जीवनी सुखमयी र चिरायु राखी ॥
यस्तै सुकर्म गरदै दिन यो बिताउँ,
आखीर यो तन पनि तिमी मैं विसाउँ ॥
यो प्राण पन्छी जब जान तयार हुन्छ,
तिम्रो किनार जलको यही आश गर्छ ॥
स्वस्थै भएर तन मन् हरिमाथि दिंदै,
श्री राम नाम जपदै तन यो छुटोस् है ॥

॥ शुभम् ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गजेन्द्रमोक्ष

श्री शुक उवाच—

एवं व्यवसितो बुद्ध्या समाधाय मनो हृदि ।।
जजाप परमं जाप्यं प्राग्जन्मन्यनु शिक्षितम् ।।

गजेन्द्र उवाच—

ॐ नमो भगवते तस्मै यत एतच्चिदात्मकम् ।।
पुरुषायादिबीजाय परेशायाभिधीमहि ।।२।।
यस्मिन्निदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयम् ।।
योऽस्मात्परस्माच्च परस्तं प्रपद्ये स्वयम्भुवम् ।।

य: स्वात्मनीदं निजमाययार्पितं
क्वचिद्विभातं क्व च तत् तिरोहितम् ।।
अविद्धदृक् साक्ष्युभयं तदीक्षते
स आत्ममूलोऽवतु मां परात्पर: ।।४।।

कालेन पञ्चत्वमितेषु कृत्स्नशो—
लोकेषु पालेषु च सर्वहेतुषु ।।
तमस्तदासीद् गहनं गभीरं
यस्तस्य पारेऽभिविराजते विभु: ।।५।।

न यस्य देवा ऋषय: पदं विदु-
र्जन्तु: पुन: कोऽर्हति गन्तुमीरितुम् ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यथा नटस्याकृतिभिर्विचेष्टतो-
दुरत्ययानुक्रमणः स मावतु ॥६॥
दिदृक्षवो यस्य पदं सुमङ्गलं
विमुक्तसङ्गा मुनयः सुसाधवः ॥
चरन्त्यलोकव्रतमव्रणं वने
भूतात्मभूताः सुहृदः सम्मे गतिः ॥७॥
न विद्यते यस्य च जन्म कर्म वा
न नामरूपे गुणदोष एव वा ॥
तथापि लोकाप्ययसम्भवाय यः
स्वमायया तान्यनु काल मृच्छति ॥८॥
तस्मै नमः परेशाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये ॥
अरुपायोरुरूपाय नम आश्चर्यकर्मणे ॥९॥
नम आत्मप्रदीपाय साक्षिणे परमात्मने ॥
नमो गिरां विदूराय मनसश्चेतसामपि ॥१०॥
सत्वेन प्रतिलभ्याय नैष्कर्म्येण विपश्चिता ॥
नमः कैवल्यनाथाय निर्वाणसुखसंविदे ॥११॥
नमः शान्ताय घोराय मूढाय गुणधर्मिणे ॥
निर्विशेषाय साम्याय नमोज्ञानघनायच ॥१२॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

क्षेत्रज्ञाय नमस्तुभ्यं सर्वाध्यक्षाय साक्षिणे ।।
पुरुषायात्ममूलाय मूलप्रकृतये नमः ।।१३।।
सर्वेन्द्रियगुणद्रष्ट्रे सर्वप्रत्ययहेतवे ।।
असताच्छाययोक्ताय सदा भासायते नमः ।१४
नमो नमस्तेऽखिलकारणाय
निष्कारणायाद्भुतकारणाय ।।
सर्वागमाम्नायमहार्णवाय
नमोऽपवर्गाय परायणाय ।।१५।।
गुणारणिच्छन्नचिदुष्मपाय
तत्क्षोभविस्फूर्जितमानसाय ।।
नैष्कर्म्यभावेन विवर्जितागम-
स्वयं प्रकाशाय नमस्करोमि ।।१६।।
मादृक् प्रपन्नपशुपाशविमोक्षणाय
मुक्ताय भूरिकरुणाय नमोलयाय ।।
स्वांशेन सर्वतनुभृन्मनसि प्रतीत-
प्रत्यग्दृशे भगवते बृहते नमस्ते ।।१६।।
आत्मात्मजाप्तगृहवित्तजनेषु सक्तै-
र्दुष्प्रापणाय गुणसङ्गविवर्जिताय ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मुक्तात्मभिः स्वहृदये परिभावितायं
ज्ञानात्मने भगवते नम ईश्वराय ॥१८॥
यं धर्मकामार्थविमुक्तिकामा--
भजन्त इष्टां गतिमाप्नुवन्ति ॥
किन्त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययं
करोतु मेऽदभ्रदयो विमोक्षणम् ॥१९॥
एकान्तिनो यस्य न कञ्चनार्थ-
वाञ्छन्ति ये वै भगवत्प्रपन्नाः ॥
अत्यद्भुतं तच्चरितं सुमङ्गलं-
गायन्तआनन्दसमुद्रमग्नाः ॥ २० ॥
तमक्षरं ब्रह्म परं परेश-
मव्यक्तमाध्यात्मिकयोगगम्यम् ॥
अतीन्द्रियं सूक्ष्ममिवातिदूर-
मनन्तमाद्यं परिपूर्णमीडे ॥ २१ ॥
यस्य ब्रह्मादयोदेवा वेदा लोकाश्चराचराः ॥
नामरूपविभेदेन फल्ग्व्या च कलया कृताः॥२२
यथार्चिषोग्नेः सवितुर्गभस्तयो-
निर्यान्ति संयान्त्यसकृत् स्वरोचिषः ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तथा यतोऽयं गुणसंप्रवाहो-
बुद्धिर्मनः खानि शरीरसर्गाः ॥ २३ ॥

सवै न देवासुरमर्त्यतिर्यङ्
न स्त्री न षण्ढो न पुमान्न जन्तुः ॥
नायं गुणः कर्म न सन्न चासन्
निषेधशेषो जयतादशेषः ॥ २४ ॥

जिजीविषे नाहमिया मुयाकि-
मन्तर्बहिश्चावृतयेभयोन्या ॥
इच्छामि कालेन न यस्यविल्पव-
स्तस्यात्मलोकावरणस्य मोक्षम् ॥ २५ ॥

सोऽहं विश्वसृजं विश्वमविश्वं विश्ववेदसम् ॥
विश्वात्मानमजं ब्रह्म प्रणतोस्मि परं पदम् ॥ २६

योगरन्धितकर्मणो हृदि योगविभाविते ॥
योगिनो यं प्रपस्यन्ति योगेशं तं नतोऽस्म्यहम् २७

नमो नमस्तुभ्यमसह्यवेग—
शक्ति त्रयायाखिलधिगुणाय ॥
प्रपन्नपालाय दुरन्तशक्तये
कदीन्द्रियाणामनवाप्य वर्त्मने ॥ २८ ॥

नायं वेदस्वमात्मानं यच्छक्त्याहंधिया हतम् ॥
तं दुरत्ययमाहात्म्यं भगवन्तमितोस्म्यहम् ॥ २९ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री शुक उवाच—

एवं गजेन्द्रमुपवर्णितनिर्विशेषं-
ब्रह्मादयो विविधलिङ्ग भिदाभिमानाः ॥
नैते यदोपससृपुर्निखिलात्मकत्वात्
तत्राखिलामरमयो हरिराविरासीत् ॥ ३ ॥
तं तद्वदार्त मुपलभ्य जगन्निवास
स्तोत्रं निशम्य दिविजैः सह संस्तुवद्भिः
छन्दोमयेन गरुडेन समुह्यमान—
श्चक्रायुधोऽभ्यगमदाशु यतो गजेन्द्रः ॥ ३१ ॥
सोन्तस्सरस्युरुबलेनगृहीत आर्तो
दृष्टवागरुत्मति हरिं ख उपात्तचक्रम् ॥
उत्क्षिप्य साम्बुजकरं गिरमाह कृच्छ्रान्
नारायणाखिलगुरो भगवन्नमस्ते ॥ ३२ ॥
तं वीक्ष पीडितमजः सहसावतीर्य
सग्राहमाशु सरसः कृपयोज्जहार ।
ग्राहाद्द विपाटितमुखादरिणा गजेन्द्रं
संपश्यतां हरिरमूमुचदुस्त्रियाणाम् ॥ ३३ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायामष्टम स्कन्धे गजेन्द्रमोक्षणे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री

जय दुर्गे

हरिः शरणम्

गज स्तुति

मङ्गलम पाउँजननी,
वीणा स्फटिक धारिणी ॥
पुस्तक् मयूरभैं तिम्रो,
बनू प्रिय सधैं भरी ॥ १ ॥

ग्राहले गजको पाऊ,
समात्ता अति आत्तिदैं ॥
नाथलाई पुकारेर,
भन्दछन् यहि वाक्यनै ॥ २ ॥

आतुर्भएको, म अनाथलाई,
इ ज्ञातिवन्धू, सब हात्तिआई,
छुटाउनु के, गरि नाथ इन्ले,
शरण महा पर्दछु दैव ऐले ॥ ३ ॥

यो काल सर्पैं, भनि भस्कियेर,
जो जोडले धाँउछ नाथनेर ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

त्यस्ताशरणमा, पनि लीनयोग्य,
भक्तै जनैको, सब दुःखभोग्य ॥४॥
नाशेर आफ्नो, पनि साथलीने,
हरी छ सबको सबदुःख हर्ने ॥

यस्तो मनैमा स्थिर खुबगरेर,
गजेन्द्रजीले अति आत्तियेर ॥
त्योपूर्वको नै जुनिमा गरेको,
अत्यन्त योग्य प्रभुको स्तुतियो ॥२॥
सम्झेर खाली प्रभुलाई मात्र,
रोयेर गर्छन्, बनि धेर आर्त ॥

गजेन्द्र भन्दछन्

जो चेतना रूप हुँदात फेरी,
संसार यो, चेतन उत्नी खेरी ॥
योदृश्य सबको, पनि आदिकारण,
ईश्वरप्रभो, गर्दछु आज वन्दन ॥२॥
यो विश्वजस्मा जसबाट हुन्छ,
जस्लेत संसार स्वरूप बन्छ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो विश्वदेखी पनि जोछ टाढा,
यो जीव भन्दा अति जो छ गाढा ॥३॥
त्यस्तोस्वयंभू, प्रभुको शरणमा,
पर्छू अहीले, अति आत्तिदामा ॥
आफ्नी ति माया तिनले रचेको,
कहिं प्रकाशको कहिं गुप्तरूप्को ॥४॥
दुवै अवस्था बिच साक्षि पर्ने,
रहेर हेर्ने सब कार्य जस्ले ॥
यो कार्यनाशै, दुइकोत द्रष्टा,
तेस्ता हरीले गर आज रक्षा ॥ ५ ॥
इन्द्रादि दिक्पाल सब नाशियेर,
यो बिश्वनै कालमहाँ परेर ॥
सारै तमोरूप सब बाँकिहूँदा,
तेस्देखि पारै रहनैत जाँदा ॥ ६ ॥
सकिन्न जान्नै हृषिदेवताले,
हामीहरूले कसरी त जान्ने ॥
जस्तो नटूवाहरूले अनेक,
स्वरूप लींदा कसलेत चिन्छ ॥ ७ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सकिन्न भन्नै जसको चरित्र,
रक्षा म हूँ दुर्गमले पवित्र ॥
जसको सुमङ्गल पद हेर्नलाई,
संसारको सङ्ग सबै छुटाई ॥ ८ ॥
घुम्छन्मुनीश्चर्वनमा बसेका,
तेस्ता हरीनै गति दिव्य मेरा ।
नां रूपकत्ति अनि जन्मकर्म,
गुणदोष आदीहरू देखि भिन्न ॥ ६ ॥
छौतापनी यो सब विश्वलाई,
रचेर नाश्ने गरछौनि खाली ॥
आफ्नीति माया लिइ जन्मकर्म,
गर्नै प्रभुमा शिरले प्रणाम ॥ १० ॥
अनन्त शक्ति पर ब्रह्म रूप;
अरूप भै त्यो अनि धेर रूप ॥
आश्चर्य कर्मै गरने प्रभूमा,
गर्छु नमस्कार शिरले उनैमा ॥ ११ ॥
सब्को प्रकाशकभइ आफुचाहीं,
स्वयं प्रकाशक सबको त साक्षी ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वाँणी र बुद्धि मनदेखि टाढा,
रहन्छ त्यस्मा शिरले प्रणाम ॥१२॥
यस्तै भएता पनि पण्डितैले,
त्यो शुद्ध कर्मैफल त्यागनाले ॥
पाइन्छ जोनाथ् प्रभू मोक्ष धाम,
लाई म गर्छु शिरले प्रणाम ॥ १३ ॥
मोक्षैहरूको सब सौख्य भोग्ने,
हरे हजुर्को मर्छु पाउपर्ने ॥
विडम्बगर्ने गुणधर्मखाली,
जसदेखि उत्तम अरुछैन कोई ॥१४॥
त्यो शान्त रूपको अनि घोररूप्को,
त्योमूढरूप्को अतिज्ञान रूप्को ॥
त्यो साम्यरूपको प्रभूलाइ खाली,
गर्छु नमस्कारशिर यो झुकाई ॥१५॥
स्वामी सबैको परमात्मरूप,
जीवस्वरूपी सवसाक्षिरूप ॥
त्यो पूर्णरूपी अतिहेतु रूप,
लाई नमस्कार छ धेर खूप ॥ १६ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

इ इन्द्रियैका विषयै जतीहुन्,
द्रष्टा सबैको प्रभुलाइ भन्छन् ॥
स्पर्शादिवृत्तीहरूकोत हेतु,
असत्यदेखी पनि जो छ मेतु❀॥ १७॥

जस्तै त छायाँहरू देखिदामा,
वस्तू यहीहो भनि जान्नमाहाँ ॥
सकिन्छ तेस्ता प्रभुनाथलाई,
बिन्ती म गर्छु शिरयो नुहाई ॥१८॥

हेतू सबैको पनि आफु चाहीं,
कारण नभै अद्भुत कार्यसाक्षी ॥
जस्तो नदीले ति समुद्रलाई,
प्राप्तैतगर्छन् अति वेग बहाई ॥१९॥

तेस्तैगरी वेद र पाञ्चरात्र,
प्रभो हजूर्मा पुगिहुन्छ शान्त ॥
मोक्षस्वरूपी अति उत्तमैमा,
गर्छू नमस्कार शिरले उनैमा ॥२०।

काठ्रूपगुण्झैं भइढाकिएको,
चैतन्य आगो भइ आफुजोहो ॥

❀ यस्तै भनी अनुमान गर्न सकिने

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रपञ्चि ति गुणहरूको त कार्यमा,
ब्याप्तैहुने चेतन रूप सब्मा ॥२१॥
यो आत्म तत्वै अनुभवहरूमा,
खाली भएका जति शास्त्र सबमा ॥
आफ्नै प्रकाशले रहने हजूर,
लाई नमस्कार छ धेर धेर ॥ २२ ॥
जती मजस्ता पशुछन्प्रपन्न,
अज्ञान पाशो तिनको त काट्न ॥
मुक्तै स्वरूपी करूणा निधान,
आलस्यले हीन सुधासमान ॥ २३ ॥
जो अन्तरात्मा मनमा झलक्क,
ईजीव सबमा हुकुमी समर्थ ।
संपूर्ण वस्तूहरूमा त टम्म,
हुने प्रभुका पद्मा प्रणाम ॥ २४ ॥
सर्वान्तरात्मा प्रभुनै भयेपनि,
स्त्रीपुत्र देहादि वृथाभिमनी ॥
जो मोहमा मग्न भई रहन्छन्,
तिन्ले कहिल्यै पनि पाँउदैनन् ॥२५॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

निर्गुण भएता पनि कार्य गर्नें,
समर्थ आत्मा सब रूप हूने ॥
यो देहमा क्यै प्रियनै नगर्नें,
तेस्ता जनैले अनुभव गरीने ॥ २६ ॥
ईश्वर्प्रभूमा मत एक खाली,
गर्छु नमस्कार शिरयो झुकाई ॥
धर्मार्थ मोक्षै सब कामनाले,
युक्तै भएरै मनमन्दिनाले ॥ २७ ॥
मन्ले रचेको सब कामना को,
भन्दा विशेष्ले फलधेर्दिने जो ॥
दयालु सारै हरिरूप देखी,
मुक्तै मर्हूं यो अति दुःखदेखी ॥२८॥
हजूर बाहेक कुनै विशेषले,
जान्दैं नजान्ने प्रभुका स्वजन्ले ॥
सबै कुराको फल आश मूल्य,
छाडी हजूरको यशकीर्ति तुल्य ॥२९॥
कथा समुद्रै बिच खूब डूबी,
गाएरमस्तै, बनने तिकोई ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आनन्दको रस्कन खूब चाटी,
मिल्छन्हजूर्मा सब दुःखछाडी ॥३०॥
अनन्तरूपी सब व्याप्त आद्य,
खाली छ आध्यात्मिक योगवाद्य ॥
अव्यक्तरूपी सबआत्मसाक्षी,
स्तुती म गर्छू, सुनिदेउ यत्ती ॥३१॥
एकांशलेनै सब ई चराचर,
ब्रह्मादि धौता सबमा बराबर ।
नांरूपको भेद् गरेर खाली,
सर्वत्र आफैं रहनेनि फेरी ॥ ३२ ॥
जस्तै ति अग्नी अनि सूर्यबाट,
ज्वाला र कान्ती खुप फैलिदात ॥
तेस्तैइगुणका मन बुद्धिद्वारा,
शरीरकार्यैं उतपन्नहूँदा ॥ ३३ ॥
आखीरफेरी उहिलीनहुन्छन्,
तेस्तै इकार्य जसबाट बन्न्हन् ॥
न स्त्री नपुंसक न पुरूष मर्त्य,
पक्षी न जन्तु नत देव दैत्य ॥ ३४ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नसत्नकमैं नत व्हो असत्नै,
निषेध गर्दा सवदेखि भिन्नै ॥
रहन्छ बाँकी सवको पछाडी,
प्रकट हवस्त्यै अहीले अगाडी ॥३५॥
वाँचूँ म भन्ने पनि योत इच्छा,
उठतैन करि अहिलेत ज्यादा ॥
बाहीर भित्रै जसले त ढाक्ता,
जानिन्न कत्ती अति मोह पर्दा ॥३६॥
तेस्तोत जीवन्पनि हत्तिमा यो,
वाँचेर हुन्छु अनि फेरि केपो ॥
यो आत्मको ज्ञान्पनि ढाक्छ जस्ले,
तेस्देखि मोक्षै यहि माग्छु ऐले ॥३७॥
जो विश्वरूप त्यसदेखि भिन्न,
छतापनि ऊ सव स्टृष्टिगर्न ॥
संसार धन्नै सँगमालिएका,
यो विश्व आत्मा निजनै बनेका ॥३८॥
ब्रह्मस्वरूपी पद श्रेष्ठलाई,
गर्छ नमस्कार शिरयो तुहाई ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

त्यो योग द्वारा सबकर्म पोली
त्यै योगलेनै मनशुद्ध धोई ॥३६॥
तियोगिजन्ले जसलाई भज्छन,
समाधि द्वारा जलसाई देखछन ॥
उनै प्रभूमा मत एक खाली,
गर्छू नमस्कार्शिरयो झुकाई॥४०॥
जिती नस्कनु इनि लोभ क्रोध,
उत्साहमन्त्र प्रभु शक्ति जोछ ॥
इनी हरूले जब युक्त हुन्छन्,
योगैंहरु को अनि केत हुच्छन्॥४१॥
इ इद्रिन्यैका गुणलेत देखने,
प्रपन्नभक्तैहरुलाई पाल्ने ॥
असत्छ ई सब् जस को त इन्द्रियै,
तेसता जनै को अति दूर टाढै ॥४२॥
अगस्य सारै प्रभुनाथलाई,
गर्छू नमस्नार्शिरयो झुकाई ॥
जस्की ति माया तिनले गरेर,
जान्दैन कत्ती मति नाशिएर ॥४३॥
माहात्म्य जस्को कठिनैत बुझ्छु,
उनै प्रभुको मत पाऊपर्छु ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कुनै ति द्योताहरूको विशेष,
गरेन गज्ले स्तुतिमा हमेश ॥४४॥
हरेकिकसिंका अवतार्विशेष्ले,
ब्रह्मादि जोहुन्सब देवताले ॥
दर्शन्दिएनन्जब ती सुरैले,
संपूर्ण देवाश्रयनै हरीले ॥४५॥
प्रपन्न गज्को स्तुतियो सुनेर,
गरूडमानै झट्पट् बसेर ॥
स्तुतीतगर्नै सब देवताले,
संयुक्त संसार निवास बान्ले॥४६॥
दुःखी भएका ति गजेन्द्रलाई,
देखेर सारै अतिहडबडाई ॥
जहाँथिए गज तिहि जानलाई,
हातैमहाँ चक्रलिई उजाई ॥४७॥
खाली❀ पयलैं पतगेन्द्रमाहाँ,
सबाहु ने श्री हरिलाई ताहाँ ॥

❀ गजको पुकारा सुन्नासाथ पाउमा खराउ र गरूडमा काठी केही पनि लागेन भन्ने कथा पुराणान्तरमा र मूलमा पनि (सहसावतीर्य) यस्तो पाठ भएकोले हतार्लें गर्दा लागनेछ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आतैंवनेका तिगजेन्द्रजीले,
आकाश बिचमा हरिलाई देखे॥४८॥
सुँढले चढ़ाई अनि त्यो कमलफ्कन्,
सारै कठिन्ले यहिवाक्य भन्छन्
जगत्गुरो हे भगवन् समात्मन्,
नाराणैमा गरछु मवन्दन् ॥४९॥
गजको अवस्था अति दुःखी देखी,
गरूडको नै गतिमन्द बूझी ।
आकाशविचमै झटपट्ट वर्ली,
चढ़ाएको पङ्कज टप्पलीई ॥५०॥
चक्रै चलाई त्यसलाई मारी,
त्यो ग्राहदेखी सहजै छुटाई ॥
हेर्दाछँदाती सब देवतानै,
गजेन्द्रलाई सरदेखि झट्टै ॥५१॥
चारैतिहात्को[१] पनी काम लीई,
उतारि वक्स्यो गजराजलाई ॥

---

१. एकहातले चढाएको फुल बलीक्स्यो अर्कोहातले चक्रचलाई अर्को-हातले गजलाई पाखामा झिकी अर्कोहातले शरीर सुम्सुम्याई बक्स्यो भन्ने कथा पुराणान्तर्मा छ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्पर्शैं हुँदामा भगवान कोनैं,
वन्धन्छुटीगो सव दुःखकोनैं ॥५२॥
पीताम्बरादी भुजचारयुक्त,
भए तुरुन्तै सहयूज्यमुक्त ॥२॥
उसैवखत्मा शिव ब्रह्मआदी,
सवै सुरैले जय[२] खुब्मनाई ॥५३॥
वाजावजाये सवरङ्गको ताहाँ,
नाचेर गाये ऋषिवृन्दले वहाँ ॥
सिद्धैहरूले स्तुति गर्नलागे,
ती अप्सराले फुलछर्न थाले ॥५४॥
भगवान् भन्नुहुन्छ
प्रियगज तिमिलेनैं जोगर्‍यौ योस्तुतीले,
उठिकनत सवेरै पाठगर्नैछ जस्ले ॥
तिनिहरू सवलाई प्राणजाने वखत्मा,
अतिशयशुभबुद्धी दिन्छु ती भक्तजन्मा॥५५॥
एति भनेर हरिले अतिहोई खूसी,
त्यो पाञ्चजन्यकन जोड्सित खूवफूकी ॥

२. जय भन्ने भगवान्को पार्षद भये ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सारा ति देवहरूको सब फौजलाई,
पारेर खूसि मनमा भइगो सवारी ॥५॥
आत्माबोध शबै हटेर रहने,
गजको पनि देहमा ॥
पूजा श्रीहरिको हुँदा अघि अती,
भैगोस्मरण हात्तिमा ॥
हे राजन गजमोक्ष कृष्णमहिमा,
मैले जति यो भने ।
कीर्तिस्वर्ग दिनेपढेर सुनदा,
दुःस्वप्नपाप नाशने ॥५७॥

१. हाईक्षुँ ठेसलाग्दामा, अकस्मात्हरयेनमः,
जसलेभन्छ चिच्याई, अति आर्त बनीकन ।
उसैबखत्सबैपाप, पनि नाशभईकन ॥
प्रभुको पाउ पायेर, बस्छ मगन भईकन ॥

.१ पतितस्खलितोबार्त छुत्वावा विवशोब्रुवन् ॥
हरये नम ईत्युच्चैर्मुच्यते सर्व पातकात् ॥ "भागवते"

हरि ॐ तत्सत् श्रीमद्भागवतको गजेन्द्रस्तुति समासम् ॥

॥ शुभम् ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्रीः

श्रीगणेशायनमः

शिवपराधक्षमापनस्तोत्रः

पैल्हेका कर्मवल्ले मकन दु:खदियो पापले जोर्गरेर,
विण्मुत्रादी अशुद्ध जननीजठरमा जाठराग्नी वलेर ॥
दिने वाधा बहूतै यति छ दु:खतहां, भन्न सक्तैनकोभो,
माफी पाउं मत्योपाप शिवशिवशिवहे श्रीमहादेवशंभो ॥ १ ॥

वालखमा दु:खसारै जिउभर गुहुभै, दूधको प्यास भारी,
शक्तिनै क्यै थिएन भवगुण जनित, जन्तुले टोकीमारी ।
रुन्थै व्याधीहरूले दिक भई शिवको संझनापो कहांभो, माफी० ॥ २ ॥

पुग्दा यौवन्दशामा विषय विषलिने पांचले मर्मताकी—
डस्तागैगो विवेक सुतधन युवती सोखको स्वादचाखी ॥
शैवी चिन्ता हराई हृदय विचमहां मान सेखी प्रवलभो–माफी० ॥ ३ ॥

वृद्धावस्थां जसैं भो गतिमति सव गो तापले इन्द्रियैको–
पापी व्याधीहरूले भई शिथिलअती छैन तागत्शरीर्को ॥
झूटो मोहाभिलाष्मा घुमिस्न शिवको ध्यान छोडीदिनेभो माफी० ॥ ४ ॥

पद्पद पिच्छे कठोरै अतिशय कशंरी गर्नु त्योस्मार्त कर्म–
झन्केसक्थें म ब्रम्ह विषयक चतुरो गर्न त्यो श्रौत धर्म ॥
जाने धर्मै विचार्ले श्रवण मननको गर्नुके लौन शंभो माफी० ॥ ५ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रातः काल्मा नगङ्गाजलललिई शिवको स्नानलाई मआजे,
पूजाका निंतिमानै दुखसहि कहिल्यै बेलका पत्रल्याजे ॥
पद्मैमालार चन्दनफुलहरू प्रभुका निंतिल्याइन शंभो- माफी० ॥ ६ ॥

चीनी दुध ध्युहरुले नत दहिमधुले स्नानमा चित्तलाजे-
फुल्चन्दले नपूजा गरिकन शिवको लिङ्ग शोभितगराजे ॥
धुपदीप नैवेद्य कर्पूगरिकन कहिल्यै भक्तिलाईन शंभो-माफी० ॥ ७ ॥

संझी मन्मा सदाशिव धनहरू कहिल्यै विप्रलाई दिइन-
बीजमन्त्रैले हर्जुकों अनलविचमहां लक्षहोमै गरीन ॥
गंगातिर्मा नियंले तप पनि गरिन मन्त्रसंझेर शंभो-माफी० ॥ ८ ॥

स्थिर्भै आसन्विचैमा प्रणवमयमरूत्कुण्डलै जो रहेको-
शान्तैरूप्को दवेको कनल अति असल ज्योतिरूपी भएको,
वेदैका वाक्य माहां नतघट विचका शङ्करैको स्मरण भो— माफी० ॥ ९ ॥

नाङ्गोभै सङ्गछोड़ी तिनगुण सहितै मोहको नाशपारी-
टुप्पैमा नाशिकाको लगिकन ति नजर्ध्यान् गरीयोन भारी ॥
हेनाथ ! गाढा विचार्ले नत अति असलरूपको संझनाभो—माफी० ॥ १० ॥

गङ्गाधारी स्मरारी शङ्कर शशी शोभितभएका अनी—
सर्पैं शोभित कण्ठ नेत्र विचमा आगोउठेको पनी ॥
लूगा त्योगजचर्म को छ वढिया चौधै भुवनका धनी
शंभुको गर मुक्ति खातिर भजन्छोडी अरूका पांनी ॥ ११ ॥

घोडा हात्तीर राज्य धन्हरू सवै ऐस्वर्यले गर्नु के-
छोरामित्र कलत्र देहपशुघर्पाएरपो हुन्छके ॥
जानी त्यो सवथोक अनित्य मनले टाढै हटाई दिनू-
आफ्नैनींति सदालीई गुरुवचन् श्रीशंभुनै सेवनू ॥ १२ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

देख्तैमा बिति जान्छ आयु दिन दिन् यौवन उसै चालले
फर्की त्यो दिन आउ दैन कहिल्यै खायो जगत्काललें ॥
जल्को छाल समान चञ्चल धन विद्युत्सरी जीवन
रक्षा गर्नु पऱ्यो प्रभो मत शरण पर्छु गरी वन्दन ॥ १३ ॥

कर चरण वचन्ले कर्मले देहले यो, श्रवण नयन मन्ले पाप जो जो गरीयो ॥
अविहित विहितादी पाउं लौ माफ शंभो, जय जय करुणाकर
श्री महादेव शंभो ॥ १४ ॥

अभयकुमार द्वारा आर्यभूषण प्रेस, ब्रह्माघाट, वाराणसीमा मुद्रित

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्रीः

मीठो कथा

[उखुको परिवारमा झगडा]

लेखक र प्रकाशकः–
हाकिम, अनङ्ग नाथ पौड्यालयः
कुमारी गाल गुहेश्वरी पारी
काठमाण्डू, नेपाल ॥

[सर्वाधिकार सुरक्षित]

संवत २०१७ प्रथमा बृत्तिः—
ऋषि तर्पणि एक हजार (१०००)

मूल्य १।

मुद्रितः– नरेन्द्र यन्त्रालय फो. नं. २९४, काठमाण्डू, नेपाल ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

लेखकको केही वक्तव्य

मलाई केही कामका निमित्त धुनीबेशी गै १०।८ दिन बस्नुपर्‍यो। वहाँ प्रशस्त ऊखुको खेतीपाती देखेर रमाइलो लागि ऊखुको विषय लिएर सानु यौटा लेख लेख्न इच्छा लागेकोले "मीठोकथा" नाम राखी ऊखुका ३ छोरा २ छोरीको अली कती चरित्र लेखेर नेपाली भाषा साहित्यको सेवा गरेको हुँ यसमा परेका त्रुटी र भूल क्षमागरी सज्जन वर्गले हेरीदीनु भएमा आफ्नो परिश्रम सफल सम्झने छु।

अनङ्गनाथ पौड्यालयः

प्रशंसा

अहा राम्रो सारै अतिशय मिठो यो उखु कथा
उनैका वंशैको गुण कथन कार्यादिछ पुरा
प्रशंसा पाँचैको सुनिमन अती हर्ष हुन गै
मदिन्छू धन्यै खुप् द्विजवर अनङ्गै कन सधैं
विश्व भर्मा सबैलाई मन् पर्ने गुलियो कति
रसको कथाछ यो मीठो फैलोस् यो घरैं प्रति

२०१४।११।२०।२

पं. गंगा प्रसाद चावहिल

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ॐ स्वस्ति परिचय

ॐ अथ मीठोकथा

मीठो कथा छ उखुको यसमा रसीलो
अन्योक्ति पूर्ण उपदेशछ यो सजीलो
जीवेश्वर प्रकृतिका कृतिछन् विचित्र
हुन्छ वर्तमान युगका जनका चरित्र

योगी नरहरि नाथ गोरक्षा पीठ
२०१४।६।१५।२

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मीठो कथा

—★★—

अस्या सुखं स्वप्न सुखं दधीति
ग्राम्यौ दका नूपरसाः पयांसि
नवान्न पानं गुडवै कृतञ्च
प्रमेह हेतुः कफ कृच्च सर्वम्

सौखीन निद्रा दहि मांस दुग्ध
नवीन अन्नै गुलियो समस्त
प्रमेह रोगीहरूले प्रसस्त
भोगे भने हुन्छ झटक्क अस्त

यो एक केही उखुको छ दोष
वाहेक सम्पूर्ण गुणी प्रपोष
बनेछ यो पद्य "अनङ्ग" बाट
बडो रसीलो गरि छाँट काँट

शोम नाथ घिमिरे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

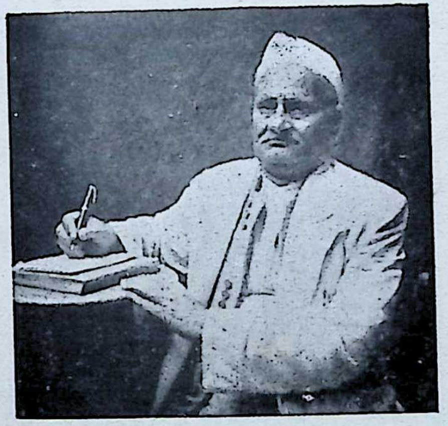

लेखक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

परिचय—

" अङ्गद दशावण संवाद " का लेखक मेरा भिनाज्यू श्री अनङ्गनाथ पौड्यालयको आर्को एक रचना सरल पाठकका साम्नु उपस्थित भइरहेछ मैले एक वार पढ़ि हेर्दा जन साधारणलाई एक छंदोबद्ध मनोरंजनको काव्य जस्तो लाग्यो तर नेपालीपना राम्रो छ। उखुको विषय लिएर त्यसैमा वाद विवाद, प्रतियोगिता, नयाँ जवानाको झलक, सामाजिक व्यंग र उपहास समेत मिलेको देख्दा छंद भथ्याइ सरल बुझ्ने कविता पढ्ने गाउँले पाठकहरूलाइ रोचक होला भन्ने आशा गरिन्छ।

साथै उखूका जातका नामहरू र अरू कुराछन् अरूका लागि पनि काम लाग्लान्।

यस्ता छंदहरूको पनि एक विशेष काम छ—अस्तु !

कविकुंज, मैतीदेवी,
नेपाल
२२—७—१५

लक्ष्मी प्रसाद देवकोटा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मीठो कथा

१

माता जगत्की जननी सुरसुन्दरीले
पक्रेर हात उखु पौंड्रक धारणाले
कल्याण दायक निकै महिमा अडेर
फैली रहेछ उखु सन्तति झन् बढेर

२

यस्मा यै छ कथा विचित्र उखुका सन्तान जम्मा हुँदा
आपस्मा झगडा कचिङ्गल परी, पाँचै जना टेढिदा
झोका झोकि रमाइलो छ, गुलियो धाराप्रभाभै वह्यो
जस्को सार अनङ्गबाट खिचिदा चास्नी सरी यो भयो

३

आफ्ना सन्तति लाइ देखि उखुले सोधे कुरा क्यै शुभ
सेवा कुन रितले गरेर जनको आनन्द मान्छौ सब
मेरो व्यापक रूपदेखि जगतै मैलाइ नै मान्दछन्
प्यारा पुत्र खुदो बताउ जनले चाहा कती गर्दछन्

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

४

जेठो पुत्र खुदो म कृष्णरंगको लौ शक्ति च्याच्च्याटको
ठूलैभै म बसीरहेछु भवमा मान्छन् सबैले निको
प्यारा मध्यम भाइ सुन्दर तिमी केकाममा मस्त छौ
बावालाइ सुनाउहाउ बढिया जेमा रमी मग्न छौ

५

दाजै मध्यम भाइ सुन्दर महुँ, उद्योग गर्छु ठुलो
मै जस्तो गुणवान देखिन कुनै, मीठो छ मेरो धुलो
खानेलाइ छ थाह त्यो कति भनौं आफ्नो म आफैं गुण
चाकूभाइ बताउ शक्ति तिमीमा कस्तो छ के छन् गुण

६

चाकूभाइ महूँ शरीर बलियो सान्हो निकै पाछु म
मैलाई सबमानि बस्छ जनता आनन्दमा डुल्छु म
दाजूवैनि सबै जितेर भवमो वस्तैछु ढेलावनि
प्यारी वैन्हि चिनी निकै घरडुली नाच्छ्यौ भनी सुन्छुनि

७

ठूलीं कान्छि चिनी सिपालु हुनगै घुम्छू सबै विश्वमा
गोरी सुन्दर पूर्ण छू चहकिली नाच्छू यही भेषमा
बम्बै दिल्लि कताकता पुगि मता लागें जसै खारिन
पारें देह सफा पसेर कलमा आफ्नो गरें मार्जन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

८

भद्दा कैलि र थैलि मैलि जिउको फाल्दै खसालें मल
हे दाजै ? कलबाट निस्कि अहिनी राम्री भएँ झल्झल
जन्मीयौं उखुबाट पेलिन गयौं दाजै अगाडी जब
साथी कोल र गोरू मानिस थिए दाजैहरूका सब

९

मेरा ता कल कारखान पुरजा मेशीन छाने कति
गर्नू सम्म गरें र उद्यम ठुलो, ऐले भयो उन्नति
राजाका गृहमा समेत म पसें नाचें घुमें खोपिमा
मंत्रीका घरमा घुमी सवडुलें चीया वनी हातमा

१०

हातैहात चिया पियी घरघरै ठीटाठिटी मस्तछन्
बूढी वृद्ध जवान बालक सवै प्यूनै अघी सर्दछन्
सेवागर्न तयार छु दिनदिनै नाच्छु जहाँ तैं पनि
बैनी मिश्रि तिमी वताउ कसरी डल्ली भयौ लौननी

११

भन्छिन् मिश्रि म सुन्दरी हुन भनी जाँदा विदेशै पुगें
कयै डल्ली रसिली र यौवनवती चौपट्ट राम्री भएं
दिज्यू कष्टसहेर देश घुमदै उद्योग जो गर्नु भो
संस्कार् धेर गरी शरीर सुकिलो पार्नु भयो बेस हो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१२

कालो गाज लिएर फर्कनु हुँदा राम्री भनौं के गरी
धेरै मेशिन चालि चालि म भएँ यस्ती महाँ सुन्दरी
गाग्री अग्नि चुलो ठुलो खडकलो साथी खुदो दाजुको
टाल्हो खाडल टीन साथीहरू हुन् चाकू सखर्दाजुको

१३

त्यस्तै नै कल कारखान पुरजा चाल्नू भएता पनि
मेरै नै वढिहुन्छ साछि बकने केमा महूँला कमी
संसारै वशमा गराइ हिडछू जोडी हिरा झैं बनि
प्यारी कान्छि दिदी यसोरि किनलौ चूर्णै हुनू भो चिनी

१४

भन्छिन् चिनीलौं कतिधाक छोड्छयौमतुल्यराम्रीनवनेरगुछयौ
मेरो छ जो उज्वल कान्ति राशी॥ त्यो छैन दाजूहरू बैनिमा यी
देखिन्छ चंचं सब अङ्ग मेरो॥ आहा!मसीनो जिउ शोभिएको
झल्कन्छु पेंडाँबरफीहरूमा ॥ पाइन्छ त्यो दाजु कहाँ अरूमा

१

पल्काउँदै देश बिदेश धाँएँ ॥ आनन्द पारो जनता रिझाँएँ॥
देखी मलाई मुखबाट राल ॥ काट्छन् सबै, व्यापक यैछ चाल
व्यानै च्वियाभित्र मलाइ हाल्छन्॥ सन्मान मेरै सब गर्न थाल्छन्
चीयार सर्वत् जब हुन्छु मीठो॥ पीएकि पल्के म छु ज्यादि छीटो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१८

आईपुगेमा गुलियो गिलाँस ॥ आनन्द मानी गरछन् बिलास॥
मेरोठुलो चलित चल्यो बयान॥ चीया न खाने जन कोछ जान॥
चम्कन्छ मेरो जिउठीक तार॥ दाजै नराम्रा हुनु भो अध्यार॥
त्यस्माषनी चाकु हुँदा बिबकाम॥ ढेला हुँदैमा कुन चल्छ नाम॥

२०

देखेर मेरो झलमल्ल अङ्ग ॥ हून् भयोकी मनमा भरङ्ग॥
गर्छन् मलाई जन स्नेह धेर ॥ को हेर्छ दाजै तिर उभिएर॥
पीपीहरूमा कतिरूप फेर्छु ॥ रातो पहेलो हरियो निलो छु॥
गोली वदामी बनि चार पाटे ॥ मैले हजारौं रंग फेर्न आँटें

२२

तीषड्रसै मध्य हुने वयान । हे दाजु! मैछू यउटी प्रधान ॥
अभागिले मात्र मलाइ छोड्छ। पीरो समातीखुरसानिटोक्छ।
पीरो अमीलो नुनिलो मिलेर। खोजेर मौका सब झुमिएर ।
मैलाइ भेट्छन् मुखमा हुलेको। सानो ठुलो भोजनमा मिलेको

२४

देखी मलाई दहि खूब् रिसायो। भोकी शरीरै अमिलो गरायो॥
खानै सकेनन् जिभरो डरायो। आखीर लत्री पछिमिल्न आयो॥
जहाँ म आएँ अमिलो हरायो। पीरो उड्यो नून कहाँ बिलायो
टर्रो कतागो पर टर्टराई। तीतो म देखेर लुक्यो डराई॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२६

चिनी र मिश्री विजयी भनेर । डाहा हुँदा नून अघी सऱ्यो र।
भुलेर हाले मुखमा कसैले । थुके पछी हँस्सि गरे सबैले ॥

देखेर मेरो सबयो चरित्र । सन्तोष मान्छन् अब इष्ट मित्र
मजस्ति छोरी उपकार गर्ने । को जन्मिएला भवमा दगुर्ने।

२८

हुँदैन मेरो रिस गर्न दाजु । चिनी मिलेंकी जनहुन्छ राजू
उद्योगले कोशिस गर्नुपर्छ । चिनीभरी मानिन सक्नु पर्छ

वात्राउखूले गरि पुण्य भारी। जन्माइएछौं दुइटी कुमारी
संसारमाछन् जति आइमाई। हामी सरीका सवपार्न लाई

३०

छोरीतिरै पुण्य सवै बसेछ । अधर्म छोरा तिर गै घुसेछ
हामी भयौं झल्मल रूप छोरी।छोरा नराम्रा हुनुभो अघोरी

दोकानमागै जनहेर्न लाग्छन मैलाइ रोजी रूपियाँ खसाञ्छन्
पानीचिनी घीउ पिठो मिलाई । धेरै थरी स्वाद हुने गराई

३२

हल्वाइले गर्दछ पाक्य मेरो ॥ मिठाइको बाध्दछ पण्डित घेरो
नेप्टी र चेप्टी गुलियै महुन्छु ॥ धूलो फुलो झन् कतिमिष्ट बन्छु

खान्छन् मिठाई जनले वनाई ॥ किन्छन् कुनैले गरछु भलाई
मेरा हजारौं हुनजान्छ नाम ॥ वर्फी फिनी जिलिफ सुधासमान

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

३४

स्वादिष्ट राम्रो जब रोटी देखछन्। जवान बूढा शिशु लट्ठ पर्छन्
मिश्री मराम्रीभ नि फुर्फुरीन्छयौ। हेलामलाई विनसिचि गर्छयौं
जस्ले चिनीका संग प्रेम गर्छ।उस्लेकयौं मिष्ट सुस्वाद फेर्छ
मीठो रसीलो म छदैछु चीनी घिऊ पिठोमा बनिहाल्छु फीनी

३६

सेता तिरौलि जब बन्न वस्छू। छापेर सेतैं तिलमा रमीन्छू
रङ्गी र चङ्गी भइ भाँति भाँति। हल्वाइको वस्त छु थालमाथि
हात्ति र घोडा घर वृक्ष नाग। राता पहेला वनि सिंह बाघ
देखी मलाई लिन लागिताँती। स्त्रीबाल लान्छन् घरमाथि माथी

३८

राम्री ठ्यौली रसिली जनाना। रोज्ने मलाई यहिहो जवाना
चीनी नभै हुन्नमिठो पदार्थ। जानीसके यो सबले यथार्थ
संसारजम्मै घुमिखोजि हेर्दा मिल्दीन अर्कोमसमान जोडा
घोडीसरी बेगवतीछु भारी। ढोई सरी लस्कनमा तयारी

४०

नारीहरुमा सिरकी म ताज। संसार मेरै बसमाछ आज
चाकू कहन्छन् नलगाउ धाक। रहस्य मेरो अब जानिराख
वैनी पुग्यौ देश भयौ बिहोस। नयाँ ठिटी पोइल जान खूस
चिनी भयौ चञ्चल बोल्न वाठी। ठान्छयौ सबैलाइ अजानलाई

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

४२

ग्वाङ्ग्रा वनाएर निकै छकाई। नठान जित्छु भनि चाकुलाई
गर्छु म मेरो गुणाकयै प्रचार। पवित्रता शुद्धि सबै विचार
सुत्केरिकोमै, कतिकाम लाग्छु। धेरैजसो नै उपकारमा छु
म चाकु कस्तो बढिया छु जान।जान्दैन कोही जन झट्ट खान

४४

पैंले मलाई दुदमा पकाई। बदाम छोरा मसला जुटाई
गुझासरी गोलि बनाइ राख। भो पुष्टकारी रसदार चाख
भो नाममेरो किन पुष्टकारी। खायोकि पायो बलको भकारी
गोरी चिनीछौ मछुकिन्तु कालो हाल्छन् ममा मङ्गलले अंगालो

४६

गणेश चाकूमिलि दङ्ग हुन्छन्।त्यस्लाइ धेरै वरदान दिन्छन्
पवित्रता वंश यही बुझेर। जन्मे उखूको कुलमा रहेर
त्रयोदशीमा घरछोडदामा। खाएर चाकू हिडसाइतैमा
आनन्द मिल्ला परदेश जाँदा।यो ज्योतिषी कै छ प्रमोण सादा

४८

जन्मोत्सवैको दिनमाजनैको। पूजागरी अष्टचिरञ्जिवीको
नैवेद्य खान्छन् यजमान चाकू। उन्कै बढी जान्छ विशेष आयू
जान्यौमलाई अवशुद्ध ज्ञानी।लाने र खाने कति भाग्यमानी
चैनीचिनी होटलभित्र घुम्छ्यौ।यो शक्तिमेरो कुनजान्नसक्तथ्यौ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

५०

छोडी अहंकार म योगि झैं छू। संक्रान्ति माघेदिन विश्व घुम्छु
खानेसबैलाइ गरी पवित्र। शरीर टुक्रै गरि बन्छु मित्र
संक्रान्ति मान्छन् जतिले मलाइ। पुग्छू सबैका घरमा रमाईं
जस्ले मलाई जलमा पकायो। सुगन्धि वास्ना घरमा चलायो

५२

...ीचिनीअग्नि विषे पर्यौकी। दुर्गन्धि बन्छ्यौ छिछि केभएकी
छौ शुक्ष्म गोरी जिउमात्र राम्रो। केही न हूँदा गुण, भो नराम्रो
पवित्र छौकी अवित्रनै छौ। केके जिऊमा बटुली रहीछौ
न ढाँटि वैनी! सबयो बताउ। न भाग भोभो नडराउ आउ

५४

के स्पर्शले सुन्दर रूप पार्यौ। सेतो सफा वैनि भएर आयौ
नानी तिमी सुद्ध असुद्ध के छौ। जवाफ झट्टै दिनलाइ सक्छ्यौ?
भन्छिन् चिनी दाजु! म चञ्चली छू। लाखौं करोडौं घरपल्किरैछु
मलाइ देखेकित मोहपर्छन्। सन्मान गर्दै घरभित्र लान्छन्

५६

जान्छू म नाच्तै जनलट्टुपारी। आनन्द खानी म बनी तयारी
यस्ती छुको बाठि महुत्र लाटी। खान्छन् मलाई लगी चाटिचाटी
धनी गहाकी जनले सकारी। लाँन्छन् मलाई रहँदीन थारी
केटा र केटो उसका जहान। हुन्छन् मदेखी खुशि झट्ट खान

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

५८

दाजू र वैनी कुन भाग्यमानी आखीर मेरै रहला निशानी
द्यौता तथा पितृप्रसन्न पार्न। बन्छ मिठो पायस कंति हुन्न
आहा अपुङ्गो जब बन्न लाग्छ श्रीसत्यनारायण दङ्ग पार्छु
पाक्छ जसै शेल अतीव मीठो। खान्छन् खुशी भै जनछानि मोटो

६०

रायो तितोछ नमिठो उसमा ममिल्दा
गर्छन् बयान जनता कतिलडडु निल्दा।
दाजै बिगारि मुख कुच्च गराइ ब्यर्थ
जान्नै भएन किन लड्डु गणेश तत्व।

६१

चाकू चिनी दुइथरी जनखीर खाउन्
हाम्री सुनौ कुनमीठो उनले बखानुन्।
मद्दत् लिनू परछता सखरै लिनू होस्
मिश्री चिनी नपरि पायस के मिठो होस्

६२

दाजै खुदो! केगरि टिक्नु हुन्छ। छोयो कि लीसोसरि टाँस्सिइन्छ
उठ्नै नसक्ने भइ चाकु थासे। खान्छन् लगी सख्खरलाइ पाखे
चरित्र दाजै सबमालुमै छ। ऐठे तिलौरी फिर बन्नु हुन्छ
बन्दालटेपा पनि देहकैलो। देखीन राम्रो थपिदैछ मैलो।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

६४

काला र कैला तिनदाजु मेरा।गोत्रै र च्याङ्के खुइरा नराम्रा
मैजस्ती राम्रो हुनख्वै सकेको।सेतो भए चाह कती हुँदोहो
यस्तो नराम्रो रूप धारि बस्ने।नाङ्लो कुन्ही गल्लि धुलो वटुल्ने
भन्कन्छ झिंगा हगि पार्छ वुट्टा।मागेर खान्छन् दुखि एकटुक्रा

६६

राजारजौटा जन-भाग्यमानी।लान्छन् मलाई घरसंमछामी
धनाढ्यप्यूछन् दिनहूँ सुट्टुक।पदार्थमेरै पिउछन् घुट्टुक
बसेर खोपी विच मानिनीको।मिची निचोरी रसकोगतीको
घुट्टुक निल्दा जलसाथरानी।आनन्द मान्छन् सुखको छुखानी

६८

हेदाजु।चाकू कुटि हालिपानी।खान्छन् भने कै हुनभाग्यमानी
भन्नोस् नराम्रो अनुहार कालो।कोहाल्छदाज्यै हरूमाअंगालो
स्त्रीजाति ळाई जुनगर्छ हेला।त्यस्लाइ कस्ले सनमान देला
जोमर्दमा कामदिई रहेछौ त्योकाम खोसी सव हामि गर्छौं

७०

पन्छाइ सारा अवमर्ददाई।आँटीसक्यौ त्योपनि गर्नलाई
हाँसोउठी चाकु यही कहन्छन्।वैनी चिनीपागलभै भईछन्
लौमर्द वस्छौं सवछोडिकाम।स्त्रीजातिलेनै गरिवीश्व थाम
फैलाइ नारी जनमात्र धेर।संसार ढाकी नर सुन्यमार

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

७२

पुरूषदेखी फरकै रहेर।एक्लै बसीस्त्री हरू जन्मपार
सक्छौ भने यो ठिकहो विचार।स्त्रीजाति हैनन्?नरलोकसार
सुन्दाकुरायो चिनि मुस्मुसाइन्।फर्केर खूदो तिरहेर्नलागीन्
निकैबनिबुज्रुकबोल्नआइन।कालोखुदोव्यर्थउमाल्नथालीन्

७४

जेठादाजु खुदो अतीव हुनुभो कालोयसैले अनि
राम्रोहुन्छु चिनीसमान मपनी अैले कसोरी भनी
सेतो चामलको पिठो संगजसै दाजै गई मिल्नुभो
वारीपारि कतै नभै पसलमा काहाँ कुना लाग्नुभो

७५

सेतो मजस्तै हुनखोज्नु हुन्थ्यो। कैलो र सेतो मिलि देहकेभो
जैले मजस्तै झलमल्ल होला । त्यहाँपछि इज्जतलोक देला
होला गरे के अब वेस हाम्रो। कसारमा उन्नति छैन राम्रो
गणेश बाट्नै अबदेखि छोड्छन्। ब्यर्थै विवाहा किन गर्नुभन्छन्

७७

नवाबु आमाहरूलाई मान्छन्। आफै सिपालू भइ काम गर्छन्
उद्योग अर्कै चुनि गर्नु पर्छ। गर्दैन जस्ले ठहरै उपर्छ
घटेर जाँदैछ पुरानु चाल। नयै नयाँ भो जब विश्वहाल
आयो प्रजातन्त्र विचित्र काल। इच्छा उठेको अब चर्छचाल

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

७६

स्त्रीजाति लेखापडि गर्नलाग्छन्।माष्टर्नि भै इस्कूलजानथाल्छन्
घर्को झमेला पतिपुत्र बोक्छन् स्त्रीजातिले नै धनल्याइ पाल्छन्
स्त्रिजातिको मान निकै हुनेछ। जस्तोमलाई जनमानि रेछ
सृष्टी भएथे जबमर्द नारी। पाए समाने हकठिक पारी

८१

पुरूषले स्त्रीहक दिन्नभन्न। कोसक्छ एले अव मर्द बोल्न
अन्धो र स्वार्थी किन बन्नुहुन्छ। स्त्रीलाइ माने कति बेस हुन्छ
चोल्यो खुदो के गर्छौ नि हेला। बूटो भएँ छोडिसकें कुचाला
सत्तेवित्यो यैरितले मलाई। त्रेतागयो द्वापरगो विलाई

८६

एले कली भर्खर भो प्रवेश। गणेश बाट्ने गर्दैछ देश
अगाडि यस्तै कति कुन् दशा भो। म्लेच्छादिले संपरि गैगरीगो
यस्तैहुने काल यहीरहेछ। कयैकालमा यो सबजाइजान्छ
न ह्वौनछाडा यत्री डुलेर। सहूं कसोरी मलुरे बनेर

८५

दिदी र बैनी सुनलौ दुबैले। अर्शामिठो बन्दछ हो खुदैले
भन्ने कुरो यादबिचार छैन। अर्शाचिनेको अथवा छछैन
पहाड उल्की चुलिपुग्नलाई। डाँडा र काँडा हुनगै डराई
पाहाडियाले अनभोग गर्नें। अत्तोन पत्तो। दुइलाइ सुन्ने

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

८७

भन्छिन् चिनी हाँसि मके कमीछु । निस्के कयौंपार्टि म हेर्न जान्छु
काहाँ कहाँ होटल खुल्न लाग्यो । जतातते काम बढेर आयो
हुँदैन नी अल्मलिएर बस्न । खोज्दाहुनन् होटल भित्र पसुँ न
कैले ननिस्की घरभित्र वस्ने । निस्के जनाना अबकोछ रोक्ने

८९

भलो चिताई डुलदैछु देश । गर्दिछु सेवा बदलेर भेष
गृहादि होटेल त्रिपे जुटेर । गर्छन् सबैसान चिया चुसेर
दाजै ? दुकानै कुरि वस्न सक्ने । मता सबैका संग मिल्न पुग्ने
आनन्दखानी रसिली छदैछु । संसारलाई वसधारी रेछु

९१

हेलाखुदोलाइ गरेर फेरी । भन्छिन् चिनी सखसरलाइ हेरी
आयो प्रजातन्त्र नभै विहोस । अडाइराखे पछिहुन्छ वेस
यो तंत्र हेला गरनै हुँदैन । हेलागरे देशत शुध्रदैन
कैलोछ जस्को अनुहार धूलो । के जान्नु होला अन्न मर्म ठूलो

९३

सारै दरिद्री हुनुभो तपाई । रमाउँ छन् खान गरीप आई
पुवामकैको दुखले पकाई । मागेर फोसा सखरै मिलाई
चिल्लो चिनाको गुलियो लिस्वाद। आनन्द मान्ने दुखिकोछजात
यो कष्ट कैले इनबाट छुट्छ । के खान्छ मिठो कुनशास्त्रपढ्छ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

९५

चिनी घिऊ मिश्रि कुनैपदार्थ। मिल्दैनस्वप्ना विचमा पनीत
त्यस्सै बुढो दाजु हुनू भएछ। थोत्री तिनौटै युगनै गएछ
रमाइलो भै कलिफैलिदैछ। पालोठिटीकै अब आइरेछ
विवाह गर्नै जववात चल्छ। ठिटीहरूका मन ठस्सपर्छ

९७

नामीघराना कुरु बाबुखोज्छ। धनीपढेको जनज्वाइ रोज्छ
ठिटीहरू इस्कुलमा पढेर। जान्नेपुरा भै म सकें भनेर
के गर्न आँटे अवयो समाज। विचार गर्नोस् सवथोक आज
मान्दीन स्वास्नी परहुन्छ छोरो।भाई भनीजा वनछन् यकोरो

९९

कस्ले वुढाको उपदेश मान्छ। साँचै वुढाले अवकष्ट खान्छ
खाने नखाने अवको विचार्छ।आफ्नो भलो जेगरि हुन्छ गर्छ
करु आइ भन्छन् सब धर्म कर्म।भन्नोस् मलाई अव खोलिमर्म
वोक्रे बनी केहि नजानि आज।हुनेछ यस्मा अव बोल्न लाज

१०१

चल्ती चल्योजे जनतेहिगर्छ। सबैमिल्यो सुखआइ मिल्छ
भन्छन् सखर्दिक मलाइ गर्छौ। हुनै नसक्ने किनकलिप इन्छौ
लाग्नेछँदैको भनहालि म्वाली।सुम्पन्छ स्वास्नीसंगफस्छ खाली
झिकेर थोरै निहु क्रुद्ध वन्छौ। भैनाग पत्नी सरि सास फेर्छौं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१०३

आफ्नो भए दोष वनेर चूप। गर्छौंतुरुन्तैशिकि आँशु सँु क
पायौ भने क्यै अधिकार शाली। अनर्थ गर्छौं सवधर्म फाली
जम्माहुँदै दस्तिरवाट नारी। फोओचलाई गफको भकारी
राम्रोगरें काम भनेर भन्छौ। विग्रेपछीमात्र झल्याँस्स हुन्छौ

१०५

हूँदैन नारी जन गर्न खूला। सर्वस्व सक्छन् वनि आफु धूला
जान्ने हरुले यहि गर्नुपर्छ। स्त्रीलाइ राम्रो संग राख्नु पर्छ
मायादया धेरगरेर राख्नु। छाडानपारी अति यत्न गर्नु
नाङ्गीर भोकी नरहुन् जनाना। शोभाव राम्रो हुनुपर्छ नाना

१०७

वैनी चिनीले पनि लौ यसोरी। हो वैन राम्रो धनमात्र सोरी
वोल्छौ विचारै नगरी कुराको। छोड्यौ किलज्जा तव मं परी भो
स्त्रीधर्ममानै सवथोकअड्छ। अढयो भने धर्म सुधार वड्छ
आदर्श नारी जनको चरित्र। नाघ्यो भने हुन्छ अती अनर्थ

१०९

हेलागर्‍यौ झन् यसरी मलाई। डुवीसकीछौ भवमा रमाई
निर्धक्क त्यस्तो हुनसक्छ कैले। वुझाइ भन्छ सुन वात मैले
सेता र काला डुइपक्ष छन् यी। घुमीरहन्छन् महिना भरी यी
दिन् प्रन्द्रपालो गतिछन् अपार। छ सार यस्को समया नुसार

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१११

रहन्छ धेरै दिनयो कसोरी । त सर्थ नानी नहऊ अटेरी
संसार जस्ले रचियो बनायो। उस्ले मिलाई नियमै चलायो
त्यो झ्याल खाना किन हो बनेको।छ कष्ट भोग्ने स्थल ख्वै चिनेको
त्यस्भित्र नेल्मा किन गै परेको। हो विश्व यस्तै बुझहै भनेको

११३

भन्छिन् चिनी!दाजु जवाफ द्यूँ त देखनू भयो दोष म माथिकै त
सेवा सबैको दिनरात गर्छु । पैसा मिले जीवन सोर्न दिन्छु
समस्त नारी नर जोजतीछन्। चाटी चिनी मस्त बनी रहन्छन्
हओस् अयोग्यै तरहुन्छ योग्य। मेरो भयो सेवनकै अयोग्य

११५

ढ्याक्रा र बोरा टिनमा भरिन्छु।सीसी र सन्दूस भरीं छरिन्छु
पोका र पोकी रूपबन्न सक्छु। जोदिन्छ पैसा उसमै न रम्छु
साहू पलेंटी कसि धार्नि जोख्छ। छंछं बजाई रूपिया बटुल्छ
गाहाकि आयो कित सार्छु पाउ। खोले र घुम्टो गरि हाल्छु भाउ

११७

आट् गर्छु पक्का जवजान दाजु। उल्कन्छु चाडै भरि भै तराजु
ओर्लेर भैंमा जब कस्सि बस्छु। बोक्छिन्छु पोको परि मस्कि इन्छु
धुग्छु र घर्मा बनिहाल्छु चिया।उहाल्छ ल्याई मसला बढीया
प्राणेश्वरी ठानि मलाई प्यूँछ। रक्षा म गर्छु अनि दङ्ग पर्छ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

११६

यस्तो ममाथी जुन प्रेम गर्छ। त्यो भाग्यमानी बनि डुल्छ फिर्छ
हाले चिनी थोर प्रसन्न हुन्न। चीया नमीठो भइ कोहि छुन्न
डुल्ने बस्यो बानि मलुभ्रि हुन्न। हे दाजु ? कोहीसंग न्यूरिइन्न
हाम्रै उदायो अब भाग्यकाल। शक्तैन काही पनि गर्न जाल

१२१

नारीहरूका पदमा परेको। चाँदी थियो कल्लि बनी रहेको
त्यो चाँदी गो ब्याज बनेरमाथि। उलट् पुलट् यैछ अनेक भाँति
बत्ती हुन्नी लाल्टिन यारलक्का। बल्थे तलैबाट प्रकाश सफ्फा
माथी बलेको बिजुलीछ ऐले। कोठा उज्याला तर हुन्छ पैले

१२३

गर्थे खसंको अभिमान नारी। ऐले सबै छन् पतिका पियारी
दाजू ? मजाको कलिकाल कस्तो। रमाइलो लाग्छ मलाइ यस्तो

१२४

स्त्रीलाई शिक्षा अघि के ? त ? दिन्थे
लट्ठग्नि नारी कति भैं रहन्थे
कूचो बढ़ान्नु घर लिप्नु पोत्नु।
पकाउनू भात पछाडि सुत्नु ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१२५

खप्थे हजारौं दुःखकष्ट पैले। आनन्दमाछौं चिनी मिश्रि ऐले
आफू भनेक्या मनमोजि आँटी। चीयो र चर्चा अझहामी माथि
संसार यस्तो छकियो विचित्र। देखिन्छ नारी जनकै चरित्र
सावित्रि सीताहरूको बयान। जानीसकेकी छु सबै प्रमाण

१२७

ठूलाबढाको बढियाछ चाल। सानातिनाको घटिया कुचाल
धर्मात्म मात्रै सबकोहि हुन्नन्। अधर्मि मात्रै पनि देखिंदैनन्
राम्रो नराम्रो निज जान्नसक्छ। जस्तो गऱ्यो त्यै सबलोक भन्छ
आफ्नो सबैठान्छ निको चरित्र। यौटासुनाऊँछु कथा विचित्र

१२६

दरिद्रिनी दुःखखिनी दाउरीनी। राम्रीनराम्री उनका तरुनी
चुरोट खाली नगरेर हात। खान्छन् चिया दाजु? दरोछ आँत
त्यस्ता जनाना सुखखोजि हिड्छन्। ठट्टागरी मर्द भुलाउँदै झन
हामी चिनी मिश्रित मोहिनीछौं। संसार बोरी धनखिच्न सक्छौ

१३१

ली दाउरागै जनविक्रि गर्छन्। भारी बिसाई सकि सासफेर्छन्
थैली उघारी रूपियाँ घुसारी। चुरोट सल्काउन छन् तयारी
होटेल देख्छन् झन दङ्गपर्छन्। आफ्ना घरैका सबदुःख भुल्छन्
छोरा र छोरी घर भित्र रुन्छन्। आफू चियाप्यून सुटुक्क पस्छन्

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१३३

फोहोरि मैलीतँ भसारनी छस्। दिन्छू चियाला परछेउमा वस्
भन्दा पनि लौ भनि ली गिलास। पिएर चीया गरेछे विलास
पैसा दसौटा झिकि सुस्तसुस्त। तीन्बाजि गन्छे भईदङ्ग मस्त
चोलोफरीया चिथडाछ जस्को। खान्छेचिया कालभएछ कस्तो

१३५

राजीखुशीछन् मनमोजिचल्छन्।आनन्दमानी संगोसाथमिल्छन्
कोदोमकै खाइरमी रहन्छन्। जाड्मघ मांसैतिर चित्तदिन्छन्
पल्कीसके ई पनि खान चीया। कोदोमकैवेचि सके फरिया
हेर्छन् सिनेमा कसरी रमाई। तान्दैछु हम्ला गुलियो पिलाई

१३७

कान्ति,लली,भक्त,तिनै निवासी।चिया सिनेमाहलमा विलासी
पैसासकीयो किन वोकि थाल केटादगुर्छन् टिपि चोरि माल
पर्देस लागी कित तीर्थ जावस्। वंवैर डिल्ली उ जनाविलाओस्
हाँमीहरूकै बसपर्नु पर्छ। जाहाँ पनीछौ गुलियै हसुर्छ

१३९

ठुलाधनी मालिकले मलाई। खान्छन् चिया सर्वतमा मिलाई
दाजै १ गरीवै जन मात्र आई। खान्छन् हरे सख्खरमै रमाई
भन्छन् सखदंङ्ग परेर हाँसी। मैछू तपस्या गरने सहासी
जान्यौ? मलाई मनको उदार। हे वैन्हि ! राम्रो गरयो विचार

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१४१

नछोडि आफ्नो गरी धर्म बस्छु यस्तै तपस्यागरि कष्ट खप्छु
गङ्गासरी निर्मल स्त्री जतीछन् । उन्ले कहाँनाल शरीर पाछन्
आदर्शनारी अघीका भएजो । शिक्षादिदै धर्म बढाउँथे पो
चटक्कबैनी सबधर्म टोडी । घुम्छ्यौ जनानामिलि जोडिजोडी

१४३

बन्छ्यौ र चीया फुलभित्र पुग्छ्यौ । मुखैनधोय पनि ठिक्कनैछौ
यस्तोगराई सकिछौ समाज । होटेल नाचीघुमछ्यौ छ लाज
बाल्टीनको पानिबिषे डुबाई । पाछ्यौ तिमी सुद्धगिलासलाई
हज्जार जूठो उसभित्र घुस्छ । जुठोजुठोमा कतिलोक खुस्छ

१४५

भन्छ्यौ सपारें सतसङ्ग यैहो । वैनीमता सक्किन सुन्न ओहो
सीताजिको कारणबाट रावण । मरेर लंका हुनगो विनासन
जान्यौ महाभारतको ठुलोरण । पर्दो भयो द्रौपदिबाट कारण
पाएर दोटा अधिकार कैकयी । फुकींनिकालीन् रघुनाथलाई

१४७

आदर्श त्यस्तातिरबाट यस्तो । भो लौ तिमीबाट हुनेछ कस्तो
चीया पिलाऊ घीउहालि धेर । बिगार गर्दैन बिचारि हेर
थाम्यौ भने मान असलहुनेछ । छाडा भयौकी सब नासिनेछ
धनीधनैमा भुलि मस्त बन्छन् । गरीपको दुःखति जाँन दैनन्

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१४६

अझ पनि सुन भन्छु व्यर्थ यो मान लिन्छ्यौ
हुनगइ बहुरङ्गी नाच्नमानै रमीन्छ्यौ
सखर असल भन्छन् मर्मजानी सकेका
जनहरु किनि खान्छन् स्वाद पाई रहेका

१५०

असुखि जनसवैको काममा जाइ लाग्छु
वनिम सितन च्यूरा एक पोल्टो निखाछु
अधनि सकल हेर्छन् नेत्र तानेर धेर
खिनि नकिनि मलाई लान्छ पैसा झिकेर

१५१

नासैमिठा धरि सवै मधिसे कहन्छन्
नेपालिता सखर मीष्ठ भनी रहन्छन्
यस्तो मिठो मगुलियो छकि के टुसिन्छ्यौ
निर्लज्जझैं भइसके पछि के सुरिन्छ्यौ

१५२

लज्जात्यज्यौ भयत्यज्यौ त्यजिसर्म छोड्यौ
कल्सापसेर भनलौ कतिपल्ट लोट्यौ
जाउ मधेसतिर हेर घुमेर हाट
वेच्नीमलाइ कति कंपनि गन्छ हात

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१५३

वेपारिनी तरूनिले कतिमान गर्छन्
बोकी मलाइ शिरमा धरि वेच्न लाग्छन्
आम्रो मिठा खरिदलो मुहमे लगाओ
स्वादिष्ट चीज यह तागत बाल खाओ

१५४

भन्दै अलीकति झिकी-जब चाख्न दिन्छन्
चाटेकि पल्को अरू किन्न थचक्क बस्छन्
हाँस्तै अनी तरूनिले जब-तौलि दिन्छन्
कोसक्छ अडन् अनिता किनि खाइ हाल्छन्

१५५

हे बैनी ? मनरूप हात्ति फुसक्यो माहूत देखीभने
इच्छामाफिकले दगुर्दछ जतापायो उतै लंकने
बाध्नू त्यस्कन पर्छ बन्धन कसी आफ्ना कुला चारको
लज्जासिक्रि र चित्त अंकुश तिखोधैयैछ जस्को निको

१५६

लागीन् भन्न चिनी नवास घरको मैंमा पनी सुत्तछ
गोडाहात गराइ नोकर उही टाल्हा टुली लाउँछ
आफूलंफु बनेर खाडल विषे बैरीइदै बस्तछ
हे दाजै दुखिले गरेर सुखिका हेला कहाँ पुग्दछ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१५७

भन्छन् सरखर हेर पातहरूमा वस्तै अघायें मत
लाखौं मंसुवली चिनी डुलदछ्यौ त्यो पेट कस्तो छत
वैनी धेर चिनी अघाउन कवै शक्तीन ह्वौली मन
आफ्नो भन्न हुदैन वेगउसको पर्लो छिटो रोकन

१५८

पायो क्यै रूपियाँ भने गरिपले हज्जार इच्छा गऱ्यो
जम्माभो उतिनै भने पनि पछी इच्छा बढ्यो लाखको
त्यो पाए पछि चक्रवर्ति हुनको इच्छालियो इन्द्रको
ब्रह्माविष्णु समेत भैकन पनी इच्छा नपुग्ने छ यो

१५९

पैले कोहि थिएन हेर पछिई कोही हुँदैनन् सुन
ऐले ईष्ट र मित्र दाजु वहिनी भन्छयौ तिमी जस्कन
चीनाजानि र प्रेमराखि घुमछ्यौ क्यैकालकामात्र हुन्
यो आधार बिछोड मेल दुइको के हो ? सबै अज्ञ छन्

१६०

सारै ब्रुज्रक दैवले भवखडा पारेर राखे तर
यस्मा हेर ? बडा बडा जनकयौं हुन्छन् बिरक्तै पर
हे वैनी भवमा लुटूपुटु गरी यत्रो अहङ्कार भो
सामर्थी अघिका कतातिर गए इच्छा पुराको भयो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१६१

यस्तो विचार मन भित्र गडेर हेर ।
हेनानि चञ्चल नह्वौ यसरी डुलेर
कस्तोसमाधि गरि थामिरहेछु सत्य ।
सेवागरेर जनको म रहन्छु नित्य

१६२

मित्र भाव जब गर्दछ सूर्त्ती।निस्कि जान्छ उसको कति फूर्ती
भै तमाखु म खरो जनवन्छु।लाग्छ किन्न घुइचो दङ हुन्छु
गर्दछु म जनको कति सेवा । आइ भन्छ पसले–झट–देवा
खल्तिखल्ति जनका चडि जान्छु।खाइ शक्छ रूपियाँ थुतिलान्छु

१६४

लौ वताउ वहिनी नतढाँटी । को रहेछ उपकारि र आँटी
चाहगर्छ जनले कसलाई । कान्छि बैनि भन मिश्रि मलाई
मिश्रि लाटि भइछौ, चुप लाग्यौ । या त बोल्न नसकेर डरायौ
राम्रि हुन्छु म भनेर गई थ्यौ । क्याकि पुट्की कसरी भइ आयौ

१६६

दाजु के भनन्नुभो मछुराम्री । गाजसाथ दिदि देख्लु नराम्री
क्याकिछु तर म चन्द्र समान। वर्ण ज्योति रवि तुल्य प्रमाण
गाइको दुदसमान छु गोरी । छूम सीतलसृखण्डकि छोरी
वर्ण सुन्दर हिरा संग मिल्छु।झल्कि जोति रवि चन्द्र म वन्छु

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१६८

राम्रि बन्न तरूनी किनि लाग्छन् ।
घोटि सिन्दुरममा टलकीन्छन् ॥
किस्तिमाझ मकनै जब देख्छन्
छेउ छाउ मसला मिलि बस्छन् ॥

१६९

हेदाजै भनुके ममिश्रि वहिनी राम्री छदैछु सदा
देख्तैछु तिन दाजु मात्र कइला राता र काला तथा
यौटी छू अति सुन्दरी तरूनीभै झल्काउँदै यौवन
पर्दैछू मुखमा गएर जनको वस्मा गराई लिन्न

१७०

भेटीघाटि चढाइ लान्छ संगमा आशा निकैनै गरी
काँडाचास्नि वनाउछन् घर भरी नारी अगाडी सरी
वाक्लो चास्नि बनेपछी सवजना लाग्छन् वसी चाटन
मेरो चल्तिछ भक्त कान्तिपुरमा घुम्छू कि ता पाटन

१७१

मैं राम्री भनि भन्नु हुन्छ चिनिले हेलामलाई गरी
दाँजेमा मछु राम्रि गाजदिदिमा कालो हुनाले भरी
डाक्तैनन् मुरूवा र चास्नि बढिया काँडाँ तिनै काममा
मैलेनै दगुरेर पुग्नुपरने भ्याऊँ म कुन् ठाँउमा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१७२

दाजैको किन बुद्धि भ्रष्ट हुनगो निस्तेजभै सक्नु भो
यौटा गर्नु भएन उद्यम कुनै तेसै बुढो बन्नु भो
कान्छी मिश्रि म छू ठिटी तर घुमी आएँ सबै देशमा
पाएँ सर्टिफिकेटनै अति मिठो, यै मिश्रिको नाममा

१७३

पाटे अल्छि वनेर मात्र कसरी निर्वाह गर्नें अहो
यस्सै अल्मलिनू भयो यदिभने केकाम लाग्ने छ यो
मीठोबन्छ चिया भनेर चिनिगै कस्तो मजा गर्नु भो
खाष्टोछोडि लगाइकोट युवती पाल्नू हुदै प्यूनु भो

१७४

पूजापाठ जपादि ध्यान कसरी सारा हराई सक्यो
यस्तो चाल चलीसक्यो कि अवता को मान्छ संध्यानिको
भक्षाभक्ष विचार छोडि जनले खाने इरादा लियो
इच्छामाफिक कामपूर्त्ति गरछन् कस्तो जवाना भयो

१७५

भन्छन् सरखर छैन हेर त्यसरी बिग्रीसकेको अब
यो नेपाल छ पुण्यभूमि यसमा धौता रहन्छन् सब
धर्मैंनै वढला अधर्म घटला सन्तापछोडी रहु
आयो तंत्र प्रजा अवश्य यसमा आनन्द मानी रहु

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१७६

पशुपति तिर गैकन हेर। झलमल सब मन्दिर घेर ॥
अवत हुन गयो दिन राम्रो। सकल भय हराउँछ हाम्रो ॥
भन्छिन् चिनी चित्त बुझ्यो मलाई। बोल्दीन भैगो अबदेखि दाई॥
संसारिले धर्म अधर्म गर्छन्। हामीहरूनै लगि पेट भर्छन् ॥

१७८

चाकूकहन्छन् सुन वैनि दाजू। ल्याएर चूपी घन भो तराजू॥
काट्छन् मलाई जिउ हुन्छ टुक्रै। टासिन्छु त्यसमा भरिदै गुलीयै
बोल्यो सखकोमलछ्र बलीयो।धुलो मजाको रसिलो गुलीयो॥
खान्छन् मलाई जन प्रेम साथ। आनन्द लिन्छन् जब मिल्छ स्वाद

१८०

बोल्यो खुदो च्चामल जित्न खोज्छ।
च्याट्च्याट शक्तीसंग कुस्ति गर्छ॥
मीठोमजाको जबस्वाद मिल्छ।
प्रभाव फैलेर प्रकाश खुल्छ ॥

१८१

यौटै थियौं हाँमिसवै अगाडी। व्यर्थै फुटेछौ बिचमा पछाडी॥
मिल्यौं भनेझन् कति बेशहोला। तसर्थ छोडौं अवयो कुचाला॥
नेपाल कल्याण बढेर जाला। आनन्दको उर्लिइनेछ खोला॥
राम्रोगराउँ पर सम्म गाऊँ। हामीसवै भै गुलियो भराऊँ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१८३

सल्लाह यो ठिक हुँदा मनसान्त भैगो।
शेखी घमण्ड रिस डाह समस्त गैगो ॥
जम्मा भएर सबले दुइहात जोडी।
भन्छन् खुशी भइपिता उखुलाइ ढोगी ॥

१८४

बाबाविरायौ अबसाम्रु आयौं। हामीहरू व्यर्थ उसै करायौं ॥
आपस्तमा फूट हुँदा डरायौं। नजानि व्यर्थै कति कष्ट खायौं ॥
कस्तोछ हाम्रो कुलको वयान। संझाइवाबा दिनुहोस्न ज्ञान ॥
बाबाहजुर्को कतिकेछ नाम। कुन्नामको कुन् निकलन्छ काम॥

१८६

हामीहरूको मनसाय जानी। आनन्द आफ्नो मनभित्र मानी॥
भन्नोस् भनेरै जबसोध्न थाले। चरित्र राम्रो उखुले निकाले ॥
मेरो स्वरूपै गुलियो छ जान। संसारले अमृत गर्छ पान ॥
ठूलानसाना सबको रूची छु। धन्यै म कस्तो उखु जन्मिएछु॥

१८८

राम्रो नराम्रो जनगर्छ काम। मेरै सबैले लिनु पर्छ नाम ॥
दयालु दाता महुँदा प्रधान। संसारि मेरै गरछन् वयान ॥
गर्छ म जस्तो उपकार जान। भनौ म कस्को दिइलौ प्रमाण ॥
आनन्द मान्छन् जगतै रमाई। चुसेर मेरो रस निल्न लाई ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१६०

यस्तो मिठो अमृतको लि स्वाद।
गर्छन् सबैले उखुमात्र याद ॥
यसै गरी डुल्छु सबै रिझाई।
धारा गुलीयो मुखमा बहाई ।

१६१

भुवन भर सबैले सर्व माङ्गल्य काम।
जनहरू जतिगर्छन् गर्छु मैत्यो तमाम ॥
यदि म उखु नहूँ ता काम यौटा हुँदैन।
उपनयन विवाहा भार छोडी भएन ॥

१६२

अशुभ सकल हर्दै हेर पैले म जान्छु ।
अनि पछि सब जन्ती ताँति लाएर लान्छु ॥
अरू जति फल फल्छन् विश्व संसार भित्र।
उनिहरू सबमेरै दाजु भाई विचित्र ॥

१६३

सीता वैनि विचित्र सुन्दर थिइन् तीराज कन्याकन
मानी पुराय अयोनि संभव बुझी जानेर उन्को गुण
आईराम जसै विहे गरनुभो श्री जानकीका संग
हाम्रोबंस अहा पवित्र हुनगो होलाकहाँ बर्णन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१६४

जन्मेका सबछौ पवित्र कुलमा छैनौ कमी क्वैपनि
छौपुरा गुणमा छिछीभनि कहीं भन्दैन सानागनि
आफूमात्र ठूलो वनेर रहने इच्छा नराखी सदा
पाचैले समभाव राख जनमा कल्याण कारी हुदा

१६५

मेरो वोक्रा हेर जम्मा गरेर
बाँध्छन् मूठा नामटूकल् भनेर
गाड्छन् माहादीप त्यस्मा लगेर
वाल्छन् सन्भूहर्ष पारौं भनेर

१६६

सिध्धिन्छ हेर जब चातुरमास राम्रो
पूजागरेर तुलसी संग काम हाम्रो
छत्री वनाइ तुलसीकन भक्ति गर्छन्
राम्रो भरेङ उखुकै जडि चट्ट पार्छन्

१६७

श्रीलाख वत्ति जनले जब वाल्न लाग्छ
वत्ती चलाउन पनि उखुचाहि हाल्छ
कस्तो रहेछु हरको हरिको छु प्यारो
नैवद्य लाग्छु प्रभुको मछुकिन्तु सारो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१९८

वोक्रावाली आँग सुत्केरी सेक्छन्
सारा दुख्ने फाल्छु आनन्द मान्छन्
प्याराछोरा पार्वतीका गणेश
हुन्छन् खूशै पाइ उखु विशेष

१९९

क्यैनाम मेरो उखुको विचित्र। वताउँ दैछु सुनिह्वौ पवित्र
साधारणै नाम चुनी उखूभो। ढोडेकिराती अनि पौंन्डकै हो
रातो उखू वंशउखू भनेर। काली निगाले थपयो गनेर
चिल्लो उखूछ झवरा उखुछ। त्यस्तै पहेलो ग्यवरा पनी हुँ

२०१

कोशेर भन्ने पनि जातहुन्छू आल्खा नजीकै यसका रहन्छू
ढोडेउखूका सव पात टुप्पा।हुन्छू तिखा यो पनि जानपका

२०२

कोक्याउने उखु पनी महुँदो रहेछू
वोको मिठो र गुलियो म हुनेपनी छू
जोदाँतले लुछिलुछि रसलाई निल्छन्
पीयूष तुल्य यसको गुणलाई चिल्छन्

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२०३

जो खालिपेट रहँदा उखुलाई खान्छन्
नासेर पित्त अति सुन्दर देह वन्छन्
भोजन् सकेर उखुको रस जौन चुस्छन्
त्यस्वाट वायु अलि केहि वढाइ राख्छन्

२०४

जो मध्य भोजन विषे रसलाइ प्यूँछन्
अत्यन्त भारि हुनजान्छ भनेर भन्छन्
स्त्रीको प्रसंग गरने जनलाइ धेर
दात्ले चपाइ कनखान उचीत हेर

२०५

चालःख्खमा म कफ कोरकमा गनिन्छु
मेदो प्रमेह दुइ रोग वढाइ दिन्छु
हुँदा जवान वलियो तव वायु नास्छु
केही म तिस्ण पर्नीछू तर पित्त मास्छू

२०६

वूढ़ो भए कि वलवीर्य वढाइ दिन्छू
त्यो रक्तपित्त क्षत नाश गराइ लिन्छु
जो दाँतले उखुचपाइ घुट्क्क निल्छन्
भै विर्यवान अविदाइ कफै वढ्ल्छन्

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२०७

मेरो अलीकति कहें गुण संझिलेऊ
तिम्रो बताउँछु खुदो गुण जानिलेउ
वातघ्न पित्त अतिपुष्ट बनी रहन्छौ
मूत्रादि वस्ति सबशोधन गर्न सक्छौं

२०८

हे चाकु लौसुनतिमी बलकारकै छौं
त्यो रक्तपित्त हरि सुक्र बढाइ दिन्छौ
गर्छौं विनाश कृमिको बलवाननै छौं
चाकू पुरानु हुनगै गुणले भरिन्छौं

२०९

भै अग्नि बर्द्धक र पुष्टि दिने भएर
नाशेर पित्त हितकारि निकै बनेर
दिन्छौ बढाइ बलसुक्र विनाशि वायू
राख्छौ प्रसन्न सबरक्त थमाइ आयू

२१०

हुँदा जवान कृमिकाश बढाइ स्वास
जागेर अग्नि कफलाई दिने निवास
भन्दैछु हेर अनुपान गरेर भेद
शक्तैन जोड गरनै कन रोगले त

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२११

नास्गर्नलाइ कफको अदुवा मिलाउ
हर्रो मिलाइ सबपित्त झिकि भगाऊ
चाकू सुठो संगगरी अनिलै हटाउ
सक्छौ अवश्य तिनदोष तिमी भगाउ

२१२

आँखा विषे हितदिने सखरै रहेछौ
छौसीत व्रिर्य तर सुक्र बढाउँदै छौ
त्यो रक्तपित्त अनि वायु र दाह हर्छौ
मुर्छा वमन् ज्वर समेत बिनाश गर्छौं

२१३

मिश्रीचिनी सुनतिमी भइसीत वीर्य
त्योरक्तपित्त हरदै बनछौ हलुक्क
तिम्रो समस्त गुणको सब्रयो बयान
गर्ना निमित्त जनहुन्छ सबै अजान

२१४

मैबाट जन्मन गयौ र स्वभाव जाने
संसारमा हित गर्‍यौ अतिहर्ष माने
फैलेर गै घरघरै रूचिनै भएर
बस्छौ सबै खुशिगरी गुलियो भरेर

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२१५

बेलाकुबेला किन पर्खिएला । पाए गुलियो उहसुर्छ ढेला
जेठाखुदोगै जवलग्न छोप्छौ । गणेशजो ढड्डु कसार बन्छौ
फेरिदन्यौरा बनि सखरैले । लग्नादिछोप्छौ र यथाक्रमैले
चाकू तिमीलाइ सँगै लगेर।संक्रान्ति मान्छन् जनले मिलेर

२१६

छोरी चिनी के भनु धेर आज।फसीरहेछन् तिमिमा समाज
बन्छयौ मिठाई जनदङ्ग हुन्छ।चीया र सर्वत् पिइ मग्न बन्छ
मिश्री म तिम्रो गरूके बयान।देख्छु म तिम्रै भवभित्र मान
दशैंटिका भाइ टिका विहेमा।राख्छन् सबैले लगी किश्ति माझमा

२१७

उल्टो र सुल्टो जन काम गर्छन।पाचैजनाको भरमा सबैछन्
निम्तोनदीं पाचजना कसैको।बन्दैन यौठा पनि काम मीठो

२१८

संसार भित्र जतिजीव र कीट हुन्छन्
पाएर स्वाद गुलियैतिर चित्त दिन्छन्
मानीसदेखि पशुसम्म मिली समस्त
छापीन्छ आइ कमिला तक पाइ स्वाद

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२१९

ब्योएकि गाइहरूले गुलियो चपाई
दिन्छन् प्रसस्त संग हूद बढेर आई
मेरासबै तिमिहरू शुभसन्तती छौ
आनन्द साथ भव व्यापक भै रहन्छौ

२२०

आयू छ लामो युगचार सम्म।लीलाहज़ारौं गरछौ अगम्य
ननर्क डुब्छौ नतस्वर्ग पुग्छौ। संसारमै मस्त बनी रहन्छौ
जन्मेर मर्ने सब मानिसै हुन्।आफ्नो दुबैलोक सपारन्यै छन्
आनन्द मानुन् अब आइमाई। खूसीहुनेछन् सबदाजु भाई

२२१

जो गर्छ राम्रो जनले चरित्र। संसार होला उसको पवित्र
यो बिश्वसंसारछ झन् विचित्र।जानीन्छ तत्व बुझि खोज मित्र
संवाद हाम्रो जनले सुनेर। आनन्द मानुन् मनमा भनेर
यो बिश्वसंसार बिचार गर्न। मैले बताए खिचि सार मर्म

२२२

देखाइ आफ्नै व्यवहारलाई। घर्को कचिङ्गल् झगरागराइ
छाडाथियौ जो भवमा रमोई।ल्याएं ममा खैचि जहानलाई
अनङ्गले लेख्छु लिला भनेर। सुनाँउदैछु सबलाइ हेर
कोइ छ चिम्टी जतियो चरित्र।जस्ले बुझ्यो हुन्छ उता पवित्र

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

२२३

यस्मित्र ब्रह्म रस जो जनपानगर्छ
उस्का सबै घरभरी गुलियो भर्दछ
सन्सारमा घरघरै सब फैलिएर
आनन्द पार जनता गुलियो भरेर

२२४

आज्ञासुनेर उखुको बुझिचित्त धेर
लान्छौ भनीकन कबोल गरी उठेर
मिश्री चिनी सखर चाकु खुदो मिलेर
संसारिका घरघरै घुमछन् झुलेर

२२५

इच्छा उठेर मनमा उखुको मलाई
जम्मा गरेर गुलियो मनमा अडाई
कुराकहानि उनको पहिले गराई
लेखे क्षमा अबदिनोस् त्रुटिमा मलाई

* समाप्त *

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शुद्धा शुद्धि

पृष्ट	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
परिचयमा	--१--	दरावण	रावण
४	२	मुन्दरी	सुन्दरी
४	६	गुध्यौ	गुड्यौ
४	११	मेगे	मेरो
५	४	षनि	पनि
५	४	विवकाम	विकाम
६	७	वा	वा वा
७	१६	लाई	लाटी
९	५	निचिनी	वैनी चिनी
१०	३	न्न	बन्न
१२	१	एक्ल	एक्लै
१९	६	दु:खखीनी	दु:खिनी
२०	८	हम्ला	हल्मा
२०	११	जना	जता
२२	११	छ कि	छु कि

पुस्तक पाइने ठेगाना

लेखकको घर:--
गौरीघाट कुमारीगाल

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ॐ

वैकुण्ठोत्सव

★

रचयिता—
अनन्त प्रसाद गौतम

★

प्रकाशक र प्राप्तिस्थानः—
जानकी जीवन कुंज अखण्ड कीर्तन
काठमाडौं, नेपाल।

★

२०२५

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रचारकहरू:—
विहारी, सन्तोष, जनार्दन (हनुमान)

प्रकाश:—
श्रावण शुक्ल एकादशी
प्रथमबार १०००

मुद्रक:—
अष्टमहानन्द
हिमालय प्रिन्टिङ्ग प्रेस,
काठमाण्डू ।

मूल्य:—
नेपाली ६५ पैसा
भारतीय ४५ पैसा

प्रकाशक द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित छ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

❀ श्रीहरिः ❀

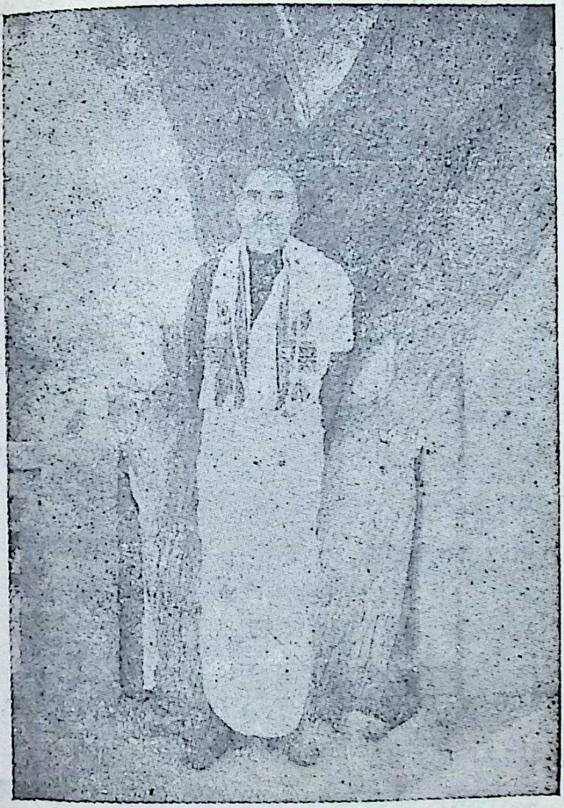

❀ आशीर्वाद ❀

अनन्त !

अन्त्येष्टि क्रियाको पुस्तक प्रकाश गर्न मलाई देखाउन ल्यायौ ठीक छ, तिम्रो उत्साह देखेर म खुशी भएँ परन्तु यी कर्महरुले के हुन्छ त्यो मलाई थाह र एक भगवन्नाम लाइ छोडेर विश्वास छैन। यो सब सम्पन्नता, निरोग एवं जनताले

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

संमान दिए सम्म र कालको असीम पराक्रम न देखे सम्म लाई सृष्टि चलाउँन सम्म हो। इहलोक सम्वन्धि हुनाले खाश परमार्थ हंन औ पारमेष्ठ पदमा समेत सुख न देखने अकुतोभय खोजने दुःखी लाई त लगातार हरिनाम उच्चारण गर्नु सिवाय कुन शास्त्रले कुन उपदेश दिनु ? किन्तु जस लाई वैरा य छैन त्यो न त कर्म छोड्न सक्छ ? न हरिनामै उच्चारण।

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ॥

यद्यपि उपरोक्त विषयमा भगवान् कै सम्पर्क छ नामकै ओतमा गरिने जस्तो छ तदपि वैरी अहङ्कारको यदि लेष मात्र पनि मिश्रण परेको छ भने त्यो कर्म दोष युक्तको हुन्छ। अतः त्यो समस्त कर्मलाई विश्व सेवाको भावमा परिणत गर्दै निछावरको केन्द्रमा पुगे त त्यो विफल कसरी मान्नु?

धर्मार्थकाम इति योऽभिहितस्त्रिवर्ग
ईक्षा त्रयी नयदमौ विविधा च वार्ता।
मन्ये तदेतदखिलं निगमस्य सत्यं
स्वात्मार्पणं स्वसुहृदः परमस्य पुंसः॥

ईक्षा, न्याय र दण्ड, त्रिवर्ग कर्मकाण्ड, व्यापार, सकल।
आत्मनिछावर गर्न सहायक भए सत्य हुन् नत्र विफल॥

यत्तिकैमा यौटा कुरा याद आयो जो भागवत्‌को मात्र हैन समस्त श्रुतिको मुटु हो त्यो तिमीले कहिले पनि न विर्सनु औ असत् कर्ममा अभिमान गर्नेको बात न पत्याउँनु—

नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनम्।
कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म यदप्यकारणम् ॥

गुरुपूर्णिमा — कवि प्रसाद गौतम
नारायण महासत्र हुँदा — अखण्ड कीर्तन जानकी जीवन कुञ्ज
शेषमहलमा। — काष्टमण्डप।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

माता सरयूको स्मृतिमा

यो अन्त्येष्टि क्रियाको पुस्तक सरयू कै स्मृतिलाई वहाँको वार्षिकको दिन वहाँकै कर कमलमा समर्पण गरेको छु, वहाँको जस्तो अखण्ड कीर्तन भित्रको निधन हाम्रो दुइ भाईले मात्र हैन विश्वले नै चाहना गर्नु पर्दछ ।

यो पुस्तक लेख्न श्रीमान् स्वशुरजी गदाधर आचार्य बाट मलाई प्रोत्साहन बक्सेको हो, साथै मथुरा निवासी श्री पराङ्कुशाचार्यको पनि सम्मति मिलेको थियो ।

आशा छ-सज्जनहरूले यो पुस्तकबाट लाभ उठाउँनु हुनेछ ।

श्रावण २०२५ अनन्त प्रसाद गौतम

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

थप संशोधन

भा. कुः ष. पाँचौं अध्याय

सृष्टि प्रलय दुइ तिर वहने हुन् माया उभय नदी ।
पार पुग्न यस बाट मनुष्य पुग्छन् तीर प्रति ।।
किन्तु हटाउँन तिनकन माया उर्लि वेग सँग ।
क्रोध अहंको रूप लिईकन लाग्छे हा ! बहन ।।
तरी नसक्नु छ माया त्यसमा भै अनभिज्ञ जन ।
कर्म गरोस् तर कसरी होला त्यसको शान्त मन ।।

एघारौं अध्याय

ब्राम्हणकन विश्वास दिलाई काट्यो शिर कस्तो ?
भाकल गर्दै कठोर हिन्दु रेट्तछ पशु जस्तो ।।

तेर्‍हौं अध्याय

दिदा प्रेरणा स्वार्थीहरूले मारे वृत्रासुर ।
किन्तु इन्द्रकन सहन पर्‍यो सुन क्लेश जलन भरपूर ।।

सोर्‍हौं अध्याय

गौर वर्ण औ कालो धोती किरीट वाजुबन्द ।
भक्ति वढ्यो अति भो रोमाञ्च हुन गो वोलो सन्न ।।
जसको फणमा भूमण्डल यो सर्स्यूं सम छ फगत् ।
मणि रश्मिले दिन्छ ज्ञानको महिमा पूर्ण झलक ।।
भए स्वप्नमा स्वत्नान्तर जग पाउँछ आफुमैं ।
स्वप्नान्तर जब टुट्छ स्वप्नमैं जागी देख्छ सवै ।।
जागृति निद्राको विच अनुभव गर्ने पुरुष प्रभु ।
विर्सेके भनुँ ? जन्म मरणमै घुम्छन् तिनीहरू ।।
स्वार्थ त्यही हो ब्रह्म र आत्मा एक गर्नु अनुभव ।"
यस्तो भन्दै विश्वात्मा श्री हरि भो अन्तर्भव ।।

—ज्योति प्रसाद गौतम

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भावुकप्रवर श्री पं. चन्द्रमणिजीको मन्तव्य—

नाम मात्रको कार्य हुने यो वेला अर्थात् कलियुग हैन नाम युग र्वात रहेको हुनाले यथावत् कर्म ता न कोही गर्न सक्छ न गराउने नै छन् ।

हामीले हेर्दैमा वेला यो प्रकार जटिल हुँदै आयो, यस्तो विकट वेलामा वावू श्री अनन्तज्यूले यो अच्युत भावना युक्त भै चतुर्व्यूहोपासना संम्वन्धित सर्वोपयोगी पुस्तक रचना गर्नु भएको देखेर म जस्ता व्यक्ति खुशी नहुने को होलान् !

प्रार्थना छ— मुमुक्षुले यही पध्दति द्वारा अन्तेष्टि क्रिया गर्नु हुनेछ ।

२०२५ आषाढ २४ गते
शङ्खमूलमा सत्र हुँदा ।

—चन्द्रमणि
अमर निवास ।

यो पुस्तिकामा एघार दिनमा गरिँदै आएका शय्या दान आदिको केही चर्चा नदेखेर भक्त समाज लाई त हैन त्यस्तै लाइ स्वार्थमा घाटा परेर शका निकाल्नु हुनेछ ता पनि भक्तहरू त्यो प्रपञ्च पट्टि जरुर फसनु हुने छैन मुक्तात्मा लाई त्यो उपकरण के लाई ? यदि मनले मानेन भने भागवत-पुस्तक, जपमाला, आराधनीय प्रतिमा— साधनमा वस्ने कुशासन पूजा भाँडा उपासनामा लाउन योग्य सेता कपडा वस यस्तो चीज गर्नु, नकि सुतने खाट् खाने पकाउने वर्तन एवं हुक्का चिलिम् ।

मुरारि प्रसाद गौतम
ज्योति कुञ्ज, पुराणस्थान पाको

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री हरिः

अनन्त !

तिमीले रचेको पुस्तक देखेर मलाई खुशी लाग्यो, कर्मलाई सेवामा परिणत गराउँने तिम्रो उँचो भावनालाई मैले जति वखान गरे पनि थोरै हुनेछ ! भागवत पढेको सार्थक भयो । हामी लाई त हजारन पटक सुने पढे पनि खै ?

एउटा कुरा भन्दछु- १३ दिन सम्म जो तिमीले अखण्ड कीर्तनको प्रधान क्रिया बतायौ त्यो अतिशय सुन्दर हो, बाजा चाँहि न बजे बढिया ।

विद्यानाथ भट्ट
भाटभटेनी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री हरिः शरणम्

देहान्तको समयमा-

" कोटिं त्यक्त्वा हरिंभजेत् "

तुलसीसन्निधौ कृत्वा शालग्रामशिलां तथा ।
म्रियमाणस्य कर्णे तु पुण्यमन्त्राञ्जपेत्ततः ॥

तुलसीको वृक्ष एवं शालग्रामको सन्निधान पारी पुण्यमन्त्र हरु अर्थात् भगवानको नाम कीर्तन गराई हाल्नु ।

मानव जन्म पाउनुको परमलाभ यही आखीरमा हरिस्मृति पाउन त हो—

जन्मलाभः परः पुंसामन्ते नारायणस्मृतिः ।

यसको विपरीत अभिमान वश घर-पेट भर्न एवं सम्मान पाउँन गरिएका पचाशौं बर्षका होस् कर्मको भर लियौं भने हामी धोखामा पर्ने छौं, त्यो सब प्रमाद लाई माटो गराउने वेला आइरहेछ, अब जो कुछ समय शेष छ घमण्ड छोडेर हरिनाम उच्चारण गरौं ।

किं प्रमत्तस्य बहुभिः परोक्षैर्हायनैरिह ।
वरं मुहूर्तं विदितं घटेत श्रेयसे यतः ॥

त्यस पछि—

दृष्ट्वा स्थानस्थमासन्नमर्धोन्मीलितलोचनम् ।
भूमिष्ठं पितरं पुत्रो यदि दानं प्रदापयेत् ॥

वन्धुको निति पूर्ण श्रद्धा र सम्पन्नता मात्र हैंन अवकाश पनि छ भने दान गर्नै पर्दछ, नत्र छँदैछ हरिनाम सङ्कीर्तन ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मोक्षधेनु दान

मोक्षं देहि हृषीकेश मोक्षं देहि जनार्दन ।
मोक्षधेनुप्रदानेन मुकुन्दः प्रीयतां मम ।।

यति भनेर गौको अभावमा तिल जौ कुश सहितको द्रव्य अहिंसक नाम प्रेमीको हातमा प्रदान गर्नु, यदि बोल्न जान्ने व्यक्ति नजिक भए संकल्प पढे पनि वेसै छ।

ऋणधेनु दान

ऐहिकामुष्मिकं यच्च सप्तजन्मार्जितं ऋणम् ।
तत्सर्वं शुद्धिमायातु गामेतां ददतो मम ।।

यसो भन्दै उही प्रकार सद्भाव गरीएको द्रव्य सत्पात्र ब्राम्हणको हातमा दिनु ! सद्भावना देखि शुभ संकल्प के हुन सक्ला ?

दश दानानि

गोभूतिल हिरण्याज्य वासोधान्यगुडानि च ।
रौप्यं लवणमित्याहुर्दशदानान्यनुक्रमात् ।।

गाई, पृथ्वी, तिल, सुवर्ण घिउ, वस्त्र, अन्न, चाकु, चाँदी, नुन, यो दश इन्द्रिय बाट हुन गएका पापको प्रायश्चित्तलाई हो।

किन्तु अकिंचन लाई यो कहाँ ? केवल सद्भाव गर्दै नामोच्चारण गरे हुन्छ। संपन्न वाललाई पनि वस्तु जुटाउन अवकाश नरहे त्यसको अभावमा दश दुनामा जल तिल कुशको साथ द्रव्य नैं सज्जनको हातमा दिए हुन्छ।

मुमूर्षोर्मधुपर्क दानम्

दृष्ट्वा सुविह्वळं त्वेनं परलोकपथानुगम् ।
प्रयाणकाले तु नरो मन्त्रेण विधिपूर्वकम् ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मधुपर्कं त्वरन्गृह्य इमं मन्त्रमुदीरयेत् ।
सर्पिर्दधिमधून्येव समं कृत्वा विचक्षणः ॥
पात्रे रौप्यमये चापि देवाय विनिवेदयेत् ।

तलको मन्त्र पढेर चाँदीको नभए पवित्र पत्तामा घिउ, दही गुड भगवानमा अर्पण गर्नु—

(महमा हिंसाको संभावना देखिने हुनाले भागवतहरू उसको सट्टा गुड उपयोग गर्दछन् ।)

ॐ योऽसौभवांस्तिष्टति सर्वदेहे ।
नारायणः सर्वजगत्प्रधानः ॥
गृहाण चैवं सुरलोकनाथ ।
भक्तोपनीतं मधुपर्कसंज्ञम् ॥

अनि त्यो प्रसाद निम्न लिखित मन्त्र पढदै मुमूर्षुलाई पिलाउनु—

गृहाणचेमं मधुपर्कमाद्यं ।
संसारनाशनकरं ह्यमृतेन तुल्यम् ॥
नारायणेन रचितं भगवत्प्रियाणां ।
दाहे च शान्तिकरणं सुरलोकपूज्यम् ॥

ब्रम्हमेध श्रौ अर्थि यात्रा

विपन्नं दीक्षितं ज्ञात्वा प्रार्थनीयो महागुरुः ।
स्नेहेन कृपयावाऽथ सहशिष्यैः कृतात्मभिः ॥

शरणागतिको देहान्त भै ब्रम्हमेधको निति समाचार आउँदा योग्य शिष्यहरूको साथ जीव वत्सल हो भने कुन गुरु नजाला ? नत्र के उसलाई स्वार्थी भने भएन !

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आगन्तुक आचार्य र अरु सहायक एवं शव वाहक लाई पनि पुष्प-अक्षतादिले पूजा गरेर कर्ताले वरण गरेपछि प्रथम दिवंगतको शवलाई पीतबस्त्रहरू ओढाई पाए सम्म हरिद्रा पुष्पहरूले अलंकार गराई केरा आम्र पल्लव फूल-मालाले सुशोभित शिविकामा आरुढ गराउनु औ तलको मन्त्रले सेतो, कालो तिल र पाए अमलाको चूर्ण छर्नु—

ॐ तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वसानुगाः।
तिलाः पुनन्तु ते पापं यत्किञ्चिद्दुरितं त्वयि ।।
धात्रि धातृसमुभ्द्भूते सर्वपातकनाशिनी ।
आमलकि नमस्तुभ्यं सर्वपापहरा भव ।।

तलको मन्त्र पढदै आचार्यले आज्ञा दिनु भए पछि ।
अग्नेनयसुपथारायेऽस्मान्विश्बानिवदेव वयुनानिविद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्ति विधेम ।।

वहन गर्नेले शिविकालाई दायाँ काँधमा राख्नुको साथ नारायण-नारायण बोलदै र वान्धवमा कुनैले स्थापित गर्नु पर्ने घडा आदि सामग्री बोकी कुनैले लावा फूल छर्दै कुनै नृत्य वाद्यादिले युक्त भगवन्नाम कीर्तन गर्दै शव शिविकाको साथ स्मशानमा जानु ।

अखण्ड-कीर्तनको घेरा भित्र शव राखे पछि कर्ता मुण्डन स्नान नवीन वस्त्र धारण गर्दै रहनेछन् उता गुरुजी ब्रम्हमेध शुरु गर्दै रहनु हुन्छ ।

विधिवत् स्थापित भएको माटोको घडा भीत्र निम्न लिखित १६ नामको र कलशको दाँया वगलमा विश्वक्सेन जो नै पाञ्चरात्र स्वरूप हुनुहुन्छ वहाँको पूजा हुन्छ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चारैतिर एक हात भैकन ४ अंगुल ऊँचो वालुवाको बेदी बनाई कुशको जरा द्वारा दक्षिण बाट उत्तर खीचिएर तीन रेखा द्वारा क्रमैले निक्लेको धूलो अनामिकांगुष्ठले उठाई ईशान तिर फेंकि दिनु त्यस पछि जलले सिचन पाएको उक्त वेदीमा कुशहरू र त्यस माथि पाए सम्म उदुम्वर, अपामार्ग देवदारु आदि पवित्र समिधा स्थापन गरी गर्भाधान देखि सद्भाव द्वारा आवाहन एवं संस्कार गरीएका दीपज्वाला प्रवेश गराउनु ।

अनि दक्षिण तिर तिन कुशको आसन दी ब्रम्हाजीको र सुरोको पूजा गरेंपछि अग्निकुण्डका दशै दिशातिर क्रमैले पूजा गर्नु ।

प्रथम आग्नेय तिर अग्निदेवाय नमः दक्षिणे- यमाय, पश्चिमे-वरुणाय, उत्तरे- कुबेराय, यही प्रकार ।

निहृतये नमः वायवे नमः ईशानाय नमः
ब्रम्हणे नमः अधोदिशे— अनन्ताय नमः ।

यस पछि प्रदक्षिणाको क्रम बाट कुश द्वारा जलको धारा दिए पछि हवन शुरु—

प्रथम पुष्प अक्षताले पूजा गरीएका १५ समिधाको टुक्रा लाई घिऊमा चोपेर प्रजापतिका अधिष्ठान विराट् भगवान् संझी ॐ विष्णवे स्वाहा ! यो मन्त्रले हवन गरे पछि तलको मन्त्रले श्रीमन्नारायण बाट प्रकाशित अग्निदेवको प्रार्थना गर्नु—

द्विशीर्षकं सप्तहस्तं त्रिपादं सप्तजिह्वकम् ।
वरदं शक्तिपाणिं च बिभ्राणं स्रुक्स्रुवौ तथा ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्वाहां च दक्षिणे पार्श्वे वामे देवींस्वधां तथा ।
रक्तमाल्याम्बरधरमेवमाग्नि विचिन्तयत् ।।

अग्नि नारायणाय स्वाहा: यो मूल मन्त्रले नारायणै नामबाट संस्कार गरीएका चरु द्वारा आहुती प्रदाम हुन्छ । यसपछि सर्व प्रायश्चित्तलाई कूष्माण्डी हवन—

कूष्माण्ड सूक्त

यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम् ।
अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वा ᳪहसः ।

अग्नये स्वाहा

यदि दिवा यदि नक्तमेनांसि चकृमा वयम् ।
वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ᳪ हसः ।

वायवे स्वाहा

यदि जागृद्यति स्वप्न एनांसि चकृमा वयम् ।
सूर्यो मातस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ᳪहसः ।

सूर्याय स्वाहा

यद्ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये
यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयम् ।
यदेकष्याधिकर्मणि तस्यावयजनमसि । भूतेभ्य स्वाहा ।

स्विष्ट कृत होम

ॐ अग्नये स्विष्ट कृतये स्वाहा, ॐ भू स्वाहा इदमग्नये, ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे ओं स्वः स्वाहा इदं सूर्याय ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पूर्णाहुति—

अहो भाग्यमहो भाग्यं नन्दगोपब्रजौकसाम् ।
यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रम्ह सनातनम् ।।

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन
तृप्यन्ति तत्स्कन्धभुजोपशाखाः ।
प्राणोपहाराच्च यथेन्द्रियाणां
तथैव सर्वार्हणमच्युतेज्या ।।

अनि ब्रम्हाजीलाई विसर्जन गर्दै प्रार्थना—

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ क्रियादिषु ।
न्यूनं संपूर्णतां याति सद्योवन्दे तमच्युतम् ।।

(तलको काम कर्ताबाट हुन्छ)

यसपछि पाए पञ्च गव्य र नपाए फूल-कुश द्वारा घडाको जल आचार्य सँग ली शवलाई स्नान अर्थात् सिंचन दिएर नवीन वस्त्रले लपेट्नु । पवित्र स्थानमा पाँच हात लम्बा तीन हात चौडा २ हात नीचो कुण्ड निर्माण गर्नु को साथ गोवर गहुँतले सिंचन दी पृथ्वीको पूजा गर्दै चिता निर्माण गर्नु औ उत्तर शिर गराई अर्थात् दक्षिणाभिमुख शव स्थापित भए पछि पवित्र काष्ठ तुलसीहरूले आच्छादित गर्नु—

सासनं च ततः शावं दक्षिणाभिमुखं ततः ।
चितोपरिस्थितं कुर्यात्पुष्पादि विकिरेत्ततः ।।

जया २४, ५६

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चिताको माथि तिलकुशफूलहरू छरे उप्रान्त स्थापित भएको कलशमा छिद्र पारेर निक्लेको जलधाराले तलको मन्त्र पढ्दै तीनपटक परिक्रमा गर्नु—

आपोऽस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ।
विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवी रुदिदाभ्य शुचिरापूत एभि ॥

अनि त्यो घडा आकाशतिर उफारी फोरी दिनु पश्चात् वलीरहेको हुताग्निलाई विशेष प्रज्वलित गराई शबको बाँया पार्श्वमा प्रवेश गराइदिनु ।

लय होम

यो सद्भावनामा निर्भर छ, उता वन्धुहरू भक्तहरूले कीर्तन छोडेको हुँदैन यता कर्तालि तलको मन्त्र पढेर वा नाम कीर्तन गर्दै वन्धुको मोक्ष अर्थात् तुरीय पद प्राप्तिको लागी प्रार्थना गर्दैरहनु—

ओं लां नमः पराय सर्वात्मने नारायणाय स्वाहा ।
ओं वां नमः पराय निवृत्यात्मने अनिरुद्धाय स्वाहा ।
ओं रां नमः पराय विश्वात्मने प्रद्युम्नाय स्वाहा ।
ओं यां नमः पराय पुरुषात्मने संकर्षणाय स्वाहा ॥
ओं वां नमः पराय परमेष्ठात्मने वासुदेवाय स्वाहा ।

वलिदान

फलफूलको या जौका पीठोको ४ पिंड बनाई तलको मन्त्र पढेर चिताको पूर्व तिर—

आद्याश्च कर्मजाश्चैव ये भूताःप्रागऽदिशि स्थिताः ।
प्रसन्नाः परितुष्टास्ते गृह्णन्तु बलिमुत्तमम् ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दक्षिण तिर—

वृक्षेषु पर्वताग्रेषु ये विदिक्षु च संस्थिताः ।
भूमौ व्योम्नि स्थिता ये च बलिं गृह्णन्तु ते त्वमुम् ।।

पश्चिम तिर—

विनायकाः क्षेत्रपाला ये चान्ये बलिकांक्षिणः ।
पूषाद्याः पार्षदाश्चैव प्रतिगृह्णन्तु ते बलिम् ।।

उत्तर तिर—

ये भूताः प्रचरन्ति दिवानक्तं
बलिमिच्छन्तो वितुदस्य प्रेष्ठाः ।
तेभ्यो बलिं पुष्टिकामो ददामि
मयि पुष्टिं पुष्टिपतिर्ददातु ।।

चारै पिंडको पूजा गरी तलको मन्त्रबाट नारियलले पूर्णाहुति—

यथैव सूर्यात्प्रभवन्ति वारः
पुनश्च तस्मिन् प्रविशन्ति काले ।
भूतानि भूमौ स्थिरजङ्गमानि
तथा हरावेव गुणप्रवाहः ।।

शेष रहेको फूलपाती कुश सूरो चितामा अर्पण र अन्य निःशेष भै शेष रहेको भष्मास्थि तीर्थमा प्रवाह गरी नाम कीर्तनको साथ फर्कनु । यतिवेर नै रामनाम–सच भन्ने कुराको अनुभव हुने हो अरु वेला त केवल आचार एवं कर्मादिले फुलेर काल भगवान्‌को अदम्य पराक्रम भुल्नु सिवाय मैले त कसैले

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कहीं साँचो भक्ति गरेको देख्न पाएको छैन। तेरो-मेरो अभिनिवेशले नै वृथा स्वाश चलीरहेछ— यसमा अज्ञान सिवा के कारण वताऊँ ?

क आत्मा कः परो वात्र स्वीयः पारक्य एव वा।
स्वःपराभिनिवेशेन विनाज्ञानेन देहिनाम् ॥
भा. स. २ अ. ६० श्लो.

ब्रम्हमेध इति प्रोक्तं मुनिभिर्ब्रह्मवित्तमैः।
महाभागवतानां च कर्तव्यमिदमुत्तमम् ॥
केशवार्पित सर्वांगं शशिभं मङ्गलास्पदम्।
न वृथादाहयेद्विद्वान्ब्रह्ममेधविधिं विना ॥

दशपिण्ड दान

दहनादि संस्कारको अनन्तर त्यो दिन कीर्तनको साथ उपवास रही भोली पल्ट देखि १० दिन पर्यन्त नित्य आफ्नो इष्टदेव आराधनाको पश्चात् आचार्यले बोल्ने तलको मन्त्र द्वारा कुश तिल जल लिनु।

अद्यामुकदिवंगतस्य भगवदपचार भागवतापचारासह्या पचारनिवृत्तिपूर्वक श्रीलक्ष्मीनारायण सन्निधिप्राप्तये दशाहेऽमुकदिवसपिण्डदानमहं करिष्यामि।

प्रथम पूर्व तिर १० दिन तक लाई मजवूत गरी निर्माण गरिएको मट्टीको वेदीमा रामनामले वीनिएका तील गाईको घिऊमा मुछि१०८पटक नारायणाय स्वाहा यो मन्त्रले आचार्यको

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हातबाट हवन भएपछि दक्षिण तिर निर्माण गरिएको वेदीमा पीपलको पात कुश ओछ्याई फूल–अक्षता द्वारा दिवंगत आत्माको आवाहन गर्नु—

आवाहयाम्यहं देवं जीवं सर्वगतं विभुम् ।
वेद्यामस्यामदृश्यस्त्वं प्रविशाद्य नमोस्तु ते ।।

अनि जल मोटक तिल तुलसी पत्र सहितको पिण्ड ली तलको मन्त्र द्वारा आचार्यले संकल्प पढे पछि वेदी माथि अर्पण गर्नु—

अद्यामुकगोत्रामुक नाम दिवंगत परमाल्हादजनक एष पिण्डो मया दीयते तवोपतिष्ठतां स्वधानमः ।

यसपछि जल गन्ध पुष्प धूप दीप वस्त्रादिले पिण्ड पूजा औ दूधको धार दिएर भगवान्‌को प्रार्थना गर्नु—

कृष्णकृष्णकृपालुस्त्वमगतीनां गतिप्रद ।
संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तमः ।।

अनि भो जीवात्मन् ! "यत्रागत स्तत्र व्रज"— यति भनेर विसर्जन गरे पछि पिण्ड तीर्थमा प्रवाह गरिदिनु ।

शेष समय १० दिन तक नित्य कुनै भक्त विद्वान मिले द्वितीयस्कन्ध र एकादशस्कन्ध श्रीमद्‌भागवत श्रवण गर्नु नमिले कीर्तन ता छदैछ फालतु कुरोले अमूल्य–वेला नवितोस् ।

प्रथम मरणासन्न वेलामैं जो कीर्तन अखण्ड शुरु भएको छ त्यो कत्तिनै कठिनाइ परे पनि नछुटोस् । कारण हामीहरू बाट कुनै कार्य पनि विधिवत् एवं पूर्ण श्रद्धा बाट हुन सक्तैन त्यो सब न्यूनता लाई यही नाम कीर्तनले पूर्ति गराउनेछ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एघार दिनको विहान पिण्डदान गरी सके पछि हवन बेदी र पिण्ड दान गर्ने वेदी लाई फोरी त्यो मट्टि तीर्थ प्रवाह गर्न पठाउँनु ।

यो प्रकार हरि स्मृतिले एघार दिन विते पछि साँझमा सपिण्डीको निति चतुर्व्यूह स्वरूपको भावनाबाट चार भक्त ब्राह्मणमा निमन्त्रणा पठाउँनु ।

बाऱ्हौं दिन सपिंडी

यदर्थं क्रियते श्राद्धं संज्ञा तस्यानिरुद्धकी ।
पितुः संज्ञा च विन्यस्येत्प्रद्युम्नस्यामितात्मनः ।।
संकर्षणं च मन्त्रेशं कल्पयेच्च पितामहम् ।
प्रपितामहसंज्ञं तु वासुदेवं प्रकल्पयेत् ।।
अनिरुद्धरूपं प्रेतं च प्रद्युम्नजनके न्यसेत् ।
संकर्षणे तं सुलीनं चिन्तयेत्प्रपितामहे ।।
प्रपितामहरूपे च वासुदेवे जगद्गुरौ ।
संलीनं भावयेद्विद्वान्संकर्षणमधोक्षजम् ।।

शुद्ध गराईएको भूमिमा एक हात ४ पाटे माटोको होम वेदी र उसको दक्षिण तिर पिंड सम्मेलनको चार वेदी निर्माण गर्नुका साथ भूमि पूजा गरेर आचार्यले संकल्प पढुन्—

हरि ओं तत्सत् भगवत्प्रीत्यर्थममुकदिवंगतस्य श्रीलक्ष्मीनारायण सायुज्य प्राप्त्यर्थं सपिण्डीकर्म तथा विश्वक्सेन पूजनं च करिष्यामि ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हवन वेदीको पूर्व पट्टि केरा या पिपल पत्तामा चावल माथि फलादिको रूपमा बिश्वक्सेनको आवाहन, पाद्य अर्घ्यादिले पूजा गरी प्रार्थना गर्नु—

यस्य द्विरदवक्त्राद्याः शासने स्थिरवृत्तयः ।
स मे वैकुण्ठ सेनानीर्भूयात्सर्वत्र विघ्नहा ॥

निमन्त्रित चार मध्ये १लाइ वासुदेवको भावबाट आवाहन—

आवाहयाम्यहं देवं वासुदेवं जगत्पतिम् ।
अमृताध्मातमेधाभं विद्युत्सदृशवाससम् ॥
एह्येहि पुण्डरीकाक्ष शरणागतवत्सल ।
सर्वकामप्रदाचित्य सर्वशक्तिबलान्वितः ॥

दोश्रालाई संकर्षणको भाव बाट—

आवाहयाम्यहं देवं संकर्षणमनामयम् ।
शशांकशतसंकाशं सजलाम्बुदवाससम् ॥
एहि संकर्षणाचिन्त्य देव भक्तजनप्रियः ।
वाङ्मनःकायसंभूतमलत्रितयनाशन ॥

तेश्रालाई प्रद्युम्नको भाव बाट—

देवमावाहयाम्यद्य प्रद्युम्नमपराजितम् ।
दूर्वांकुरदलश्यामं शशाङ्कांशुसमाम्बरम् ॥
कामः कामप्रदः शान्तः कमनीयगुणालयः ।
प्रद्युम्नाभ्येहि देवेश प्रद्योतितचराचर ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चारौंलाई अनिरुद्धको भाव बाट—

आवाहयाम्यहं देवमनिरुद्धं जगद्गुरुम् ।
पद्मपत्राग्रसंकाशं रक्ताम्बरविभूषणम् ।।
अनिरुध्दत्वमभ्येहि व्याप्ताशेषचराचर ।
सर्वेषां प्राणिनां कर्मसाक्षिभूतः परात्परः ।।

यस पछि आचमन गन्ध, पुष्प, छाता, जुत्ता, पुस्तक, बस्त्र पात्रादिको साथ दूनामा तुलसी सहितको मधुपर्क अर्पण गरेर भन्नु—

गृहाणचेमं मधुपर्कमाद्यं
संसारनाशनकरं ह्यमृतेन तुल्यम् ।
नारायणेन रचितं भगवत्प्रियाणां
दाहे च शान्तिकरणं सुरलोकपूज्यम् ।।

अनि गौघृतले लिपिएको र संस्कार एवं देवको पूजा गरे पश्चात् पायसको वा तिल र सखर मिश्रित चरु द्वारा १०८×१०८ पटक वासुदेवाय स्वाहाः शंकर्षणाय स्वाहा प्रद्युम्नाय स्वाहाः अनिरुद्धाय स्वाहाः यो मन्त्रले आचार्यको आज्ञा द्वारा कर्तालि नै हवन गरी नारियल द्वारा तलको मन्त्रले पूर्णाहुति प्रदान गर्नु—

ॐ नमस्तुभ्यं भगवते वासुदेवाय धीमहि ।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय नमः संकर्षणाय च ।।

तदनन्तर वैकुंठका पार्षदहरु संझी वलि प्रदानको भावना संम गर्नु—

सर्वे चतुर्भुजा ध्येया; शंखचक्रगदाधराः ।
किरीटकौस्तुभधरा वैनतेयासने स्थिताः ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यस पछि विल्वफल सदृश पायसको तीन वाटुलो र चारौं चाँहि नारियल समान किंचित् लामो पिंड बनाई त्यस मध्ये १ पिंड कुश तिल ओछ्याईएको प्रथम वेदीमा कुश-तिल जल तुलसीको साथ पूर्व तिर फर्केर ओं प्रद्युम्नाय तत्पितृ स्वरूपाय नमः स्वधा। यो मन्त्रले अर्पण गर्नु।

यसै प्रकार दोश्रो पिंड दक्षिण मुहुडा गरी दोश्रो वेदीमा ओं संकर्षणाय तत् पितामह स्वरुपाय नमः स्वधा। अर्पण गर्नु।

तेश्रो पिंड पश्चिम फर्केर ओं वासुदेवाय तत् प्रपितामह स्वरूपाय नमः स्वधाः। यो मंत्रले अर्पण गर्नु।

अनिरुद्ध स्वरूप पिंड लाई कुशको जराले तीन भाग लगाई एक भाग उत्तराभि मुख भएर।

ओं अनिरुद्धस्वरूपं दिवंगतममुकं
प्रद्युम्नस्वरूपे तत्पितरि विलापयामि।

यसो भन्दै संमेलन गराई दिनु।

दोश्रोभाग–

अनिरुद्धस्वरूपममुकदिवंगतं संकर्षणस्वरूपे
तत्पितामहे विलापयामि।

भनेर संमेलन गराई दिनु।

तृतीय भाग–

ओं अनिरुद्धस्वरूपममुकदिवंगतं
वासुदेवस्वरूपे तत्पितामहे विलापयामि।

यसो भनि संमेलन गराई दिनु।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यस पछि गंध पुष्प वस्त्रादिले पिंडहरूको पूजा गरेर मोक्ष भएको भावना पूर्ण राख्नु ।

यदि स्त्री हुन् भने—

अनिरूद्ध पत्नि नित्यानन्दा, प्रद्युम्न पत्नि सत्या संकर्षण पत्नि हिरण्या वासुदेव पत्नी हरिणी हुन् । नित्यानन्दा पिंड लाई तीन भाग लगाई उपरोक्त क्रमले सन्या-हिरण्या हरिणी पिंडमा संमेलन गराउनु ।

प्रार्थना

नमो विष्णुपदस्थेभ्यः स्वधाः वः पितरो नमः ।
हरये पितृनाथाय अग्निसोमात्मने नमः ।।
सत्सोमपात्मने विष्णो नमो वर्हिषदात्मने ।
आसंसाराभिजनका अग्निष्वाता तथाच्युत ।।
पितामहाः सोमपास्त्वं त्वमन्ये प्रपितामहाः ।
तुभ्यं नमो भगवते पितृमूर्त्यच्युताय च ।।
नारायणाय हंसाय विष्णो त्रिपुरषात्मने ।
मुक्त्वा त्वामेव भगवन्ननमाम्यर्चयामि च ।।
न तर्पयामि विश्वेश नान्यमावाहयाम्यहम् ।

त्यसपछि निमंत्रित संपूर्ण विप्र लाई १ घडी नाम कीर्तन गराई भोजन गराउनु औ भन्नु—

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा
बुद्ध्याऽऽत्मना वानुसृतस्वभावात् ।
करोमि यद् यत् सकळं परस्मै
नारायणायेति समर्पयेत्तत् ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
ममतृप्तिं प्रयान्त्वद्य विप्रदेहेषु संस्थिता ।।
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
मम तृप्तिं प्रयान्त्वद्य होमाप्यायित मूर्तयः ।।
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
तृप्तिं प्रयान्तु पिण्डेन मयादत्तेन भूतले ।।
वाजेवाजे ऽवत वाजिनो नोधनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
अस्य मध्वःपिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः।।

ब्राह्मण लाई विसर्जन र पिंड तीर्थमा प्रवाह गरे पछि आएका दीन दुःखी वहिरा एवं डाकिएका ज्ञाति वन्धुमा नाम कीर्तनको अनुरोध गरी थोरै बेर कीर्तन भए पछि भोजन गराई स्वयं प्रसाद लिनु ।

मासिक—

प्रत्येक महिनाको तिथिमा सक्नेले अहोरात्र नाम कीर्तन गराइ त्यस तिथिमा प्राण छोड्ने अरु जीवको पनि उद्धार गर्नु यही त हो अच्युत भावना । एक जीवको निंति त साधारण पनि गर्दछन् ! त्यस्ता लाई भागवत भन्न सकिंदैन । न सक्नेले २ घडी त जरुर गरेर विश्वतृप्ति-श्राद्ध ब्राह्मण भोजन दरिद्र-नारायणमा अन्न दान गर्नु ।

वार्षिक—

यो दिन समर्थ वालले समारोह वाट नारायण महासत्र र साधारणले साधारण अहोरात्र नाम कीर्तन हवन विश्वतृप्ति श्राद्ध ब्राह्मण एवं वंधु भोजन गराई दरिद्र लाई सन्तोष गराउनु ।

[इति शम्]

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री शङ्कर्षणाय नमः

प्रथम जानकी जीवन कुञ्जमा भएको शङ्कर्षणोपासनाको

स्मृतिमा—

गर्दछु शङ्कर्षणोपासना भनी रामबाले ।
श्रीनारायण सत्र भक्तपुर पत्र सँगै पहिले ।।

ज्ञात गराउँन भक्तहरूमा प्रचार गर्नु भो ।
त्यहो कुराको उत्सव झाँकी वर्णन गर्छु प्रभो !

नरपशु केवल विषय भोग अति गर्छ चाहना त्यो ।
नगरी तिम्रो भजन गर्दछन् इन्द्रादि सुरको ।।

रहित राजकुल अनुयायीको छुट्छ जीवीका सब ।
त्यस्तै सुरको ह्रासभएपछि नष्टहुन्छ वर भोग ।।

दुइ हजार पच्चीस साल छः गते बुद्ध आषाढ ।
देखि कुंजमा सात रातकन शुरुभयो यो चाड ।।

रूद्र एघारह थापी रामबुवा बाट वरण ।
भई गयो श्रीशंकर्षणको भेट्छु भनी चरण ।।

चित्रकेतु स्तुति पड्दा लेख झट्ट श्याम ! हे त्यो ।
भन्नु भयो अनि लेखे सुन्दर श्यामभक्तले यो ।।

" धर्म भागवत् भनेपछि भो जगमा तिम्रो जीत ।
मोक्ष निम्ति मुनि जसको ओत लिन्छन् गर्दै प्रीत ।।"

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बाँस आड दी राखे उनले पाठ भागवत को ।
रामबुबाले गर्नु भएको आठ एक सय को ।।
नयाँ नयाँ लय निक्ले यसविच शेषै कृपा परी ।
श्याम गरी अनुकरण बजाई दिन्थे होस गरी ।।
पूर्णविलास बजाउँदथे तबला थ्यो शास्त्रीय ढङ्ग ।
मेरो स्वरमा स्वरदी बोल्थे धन्य छ यिनकोसङ्ग ।।
अक्रूर बाजा सरल ढङ्गले बजाउँथे उन्मुक्त ।
विहारी बाबु तवल बजाई स्वरटिप्थे मनमुग्ध ।।
वन्थ्यो उध्दव पिताबाट नित भोजन सुन्दर थ्यो ।
गणेशप्यारा तबल बजाई पानै खिलाउँथ्यो ।।
श्रीनारायण लाटो सम भै बोल्थ्यो कहीं कहीं ।
सूर्य कराई तेज लुकाई भन्थ्यो उँगी उँगी ।।
रामदूत नित दूत भईकन गै गर्थे सेवा ।
साथ उरुक्रम चाल विगारी वोल्थे नलि टेवा ।।
बोल्थे तोते शब्द कराई बाल थिए वैकुण्ठ ।
थिए कृष्णदिल गर्थे कीर्तन प्रेम्मी बनुन् अब सन्त ।।
यिनै एघारह रुद्र स्थापना गरिएका हुन् जान ।
हामी हरू त्यस वेला मान्थ्यौं यिनै देव हुन् ज्ञान ।।
जगत महाँ जुन नाम कहिल्यै थिएन प्रकाशित ।
त्यो पाए शुभ नाम तिनोले गुप्त छ नाम अतः ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रुद्र एघारह वीरभद्र औ धीरभद्र अतिभद्र ।
नीलभद्र औ देवभद्र हो कीर्तिभद्र, वाकभद्र ॥

वेदभद्र औ श्वेतभद्र हो पीतभद्र भूतभद्र ।
मिली बसे तो गुप्त भए पनि खुल्यो न हौं न अभद्र॥

रामवुवाको विचार सत्य हो र बनोस् सिध्द ।
गर्छु प्रार्थना भक्तहरूमा मान्नु हवस् शुध्द ॥

मन्द र गुञ्जा कान्ति हरू पनि आफ्नो आफ्नो काम ।
भई अग्रसर गर्थे धन्य छ यिनको कृत्य महान् ॥

स्वहा स्वधा जिम्वा थ्यो रेवति कन यै नित्य कुरा ।
विज्ञाना गंगाले पाए सेवा गर्न पुरा ॥

यही समयमा आई पुगे श्री सेवक जनार्दन ।
पहिले कति कति, छुटे महोत्सव पुरा गराउन ॥

श्यामानन्द वनेलोका हुन् नरेश पहिलेका ।
उनले श्री सङ्कीर्तन स्तम्भ थाप्न दिए आज्ञा ॥

तीन सए औ साठी स्तम्भ राखने विचार भो ।
राज वनेलीमा कत्रो त्यो बन्यो आँट उनको ॥

यस्तो उत्सव उपासनाकन ठूलो जान्न सकूँ ।
शेष वहाँका भक्तहरूको सेवा गर्न सकूँ ॥

रचयिता- अनन्त

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भागवतानन्तको बानगो

छप्पय

परमब्रह्मको प्रतिपादन एवं भागवत्को बखान
यो जगको जो बाट सृष्टि, स्थिति, प्रलय हुन्छ त्यो ।
सब सद्रूप पदार्थ महाँ अनुगत छ औ जो ॥
असत् बाट हो पृथक् हैन जड चेतन हो यो ।
परतन्त्र नभै स्वयं प्रकाश छ परमेश्वर त्यो ॥
ज्ञान दिनुभो ब्रह्मामा पहिले जुन नारायणले ।
जसको बारे मोह सूरि छन् जसमा सब ऋषि हारे ॥
रश्मि हरूमा जलको जलमा स्थलको झलक ।
स्थलमा जलको हुँदा विनीमय भ्रमसम पलक ॥
जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्तिरूपा मिथ्या सृष्टि ।
अधिष्ठान-सत्ता बाटै यो हुन्छ प्रतीति ॥
आफ्नै ज्योति प्रकाश चरम् द्वारा नित्य छ मुक्त स्वयम् ।
माया कारज बाट पनि भजौं उही प्रभु सत्य परम् ॥
कपट धर्मले रहित, तथा जो निर्मत्सरले ।
मात्र जान्न सकिने वास्तव शुभ वस्तु छ जसले ॥
तीनतापको जड उन्मूलन गर्ने औषध ।
छँदै भागवत व्यासदेवको के छ शास्त्र अब ?
वन्दो बन्दछ सुन्दैमा हृदय बीच श्रीगोपाल ।
सुन्नु प्रयोजन कथा अरु पर्‍यो र के भन तत्काल ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

फलका दाता सुर औ त्यसमा नित्य प्रवृत्ति ।
गराउने छन् जति जति शास्त्र त्यसकन कुल्चौ ।।
हिंड्ने लाई मात्र अधिकार जसमा पूर्ण छ ।
त्यसै लाइ भन शास्त्र भागवत् अरु अपूर्ण छ ।।
आफ्नो मन अब जाँच गरौं उक्त कुरामा लाइ कसौ ।
ह्वौं हैनौं अधिकारी तव कदम वढाउँ सरी अघि ।।
ए रसका मर्मज्ञ सुजन हो ! निगम महीरुह ।
मा पाकेको फल शुक द्वारा भो सम्वन्धित ।।
परमानन्दमयी अमृतले छ परिपूर्ण ।
छिलका गुठली छैन तनिक पनि रसले घूर्ण ।।
जवतक चेतन छ तनमा पेऊ निरन्तर भावुक हो ।
क्षितिमा मात्रै सुलभ छ यो लोक कुनैमा छैन अहो !
गुरु हरू स्नेही शिष्यहरूमा गुप्त कुरा पनि ।
बताउँछन् सब त्यसो हुँदा प्रभु ! जानौं म पनि ।।
प्रायः कलिका जन छन् मन्द भाग्य अभागी ।
अल्पायुष औ विघ्न अँगाल्ने कृष्ण विरोधी ।।
तिनको खातिर सारकुरा शास्त्रनिचोरी वताईद्यौ ।
जसले हाम्रो आशय मन हुनेछ पावन सुनाईद्यौ ।।

दोहा—

सूत ! बताउँनु होस् शास्त्र पुराण गुरुजनको ।
शिक्षामा कलि बीच के साधन पक्का भो ?

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री द्वारपाल—प्रति

नन्द गोपका मन्दिर को हे पालक नायक हे हरि जन ।
तोरण बन्दन वार ध्वजाले छ प्रकाशमय दिव्य भवन ॥
मणि कपाट को यन्त्र खोल्नु होस् द्वारपाल मत देर गरी ।
गोप सुता हामी परिकर हितु आएका छन् ध्यान धरी ॥
लीला धारी सुमणि वर्ण ले प्रवेश गर्ने आज्ञा दऱ्यो ।
पहिले नै सुन्नु होस् बात शङ्का गर्नु किन यस्तो ॥
हामी भैं परिशुद्ध सबै छौं आएका मन्न चाह बडी ।
उठना साथै मङ्गल गीत गाउँदछौं हम त्यही घडी ॥
हजुर कवै प्रतिषेध नगर्नोस् आफ्नो मुखले हे माई ।
यो थिर चिपलो खोलन फाटक मनमा छ आतुर ताई ॥
सात्विकताले हृदय मध्य हम श्री वृज चन्द सवारे छन् ।
हे हे जानो जी अब यो नै मनको छन्द त हाम्रो हुन् ॥

श्री नन्द यशोदा तथा बलदेव प्रति

वस्त्र नीर अरु अन्न धर्मको दान हजुर देने वारे ।
हाम्रो श्रीगोपाल नन्द उठ स्वामी वृज रक्षण—हारे ॥
ललित लता का पल्लव को सम कुल—दीपा श्री वृजरानी ।
दयावती स्वामिनी हामरो जगो मातु सुत कर बानी ॥
विना ठौर रोंके नभ अन्तर बढेर् क्रान्त गरेका लोक ।
हे-अनिद्र बस निद्रा तजिये प्रमुदित छन् अब कोकी कोक ॥
शुद्ध स्वर्ण सम भूषित श्रीपद उनको सह अब नसुत्नु होस् ।
उठ्नोस् सो श्रीमत् बलदाऊ हामी कन प्रसन्न हुनुहोस् ॥
पुरुष्कार अब हजुरै वन्नोस् ज्ञानरूप हे परमाचार्य ।
उन्हे जगाउनु यो क्षण श्रीमन् हजुर सदृश कोनै हो कार्य ॥
श्री नीला देवी प्यारी को वक्षस्थलमा धारे छन् ।
हे हे जानो जी अब यो नै मनको छन्द त हाम्रो हुन् ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्री नीला देवी-प्रति

हेर भुजा जसको जग-मद ले मस्त चोख दो:कन भाग।
यस्तो भुजबल वन्त नन्द गोपाल तिमी ती अनुरागें॥
किनकी उनकै पुत्र-रत्नको वधू हुनुहुन्छ हजुर प्यारी।
श्री नीला वृषभान लाडिली हो अतिनै सुठि सुकुमारी॥
शुचि सुवास रंजिता सुकेशी मानवती अब द्वार उघार।
सब आई मिलिगए तथा अब कुक्कुट तिमिकन रहे पुकार॥
लता माधवी को मण्डपमा कोकिल कूज रही गोरी।
कन्दुक क्रीडावती लाडिली मातुलेय गुण गाउ री॥
अरुण-कमल सम तथा पूर्ण गुण वलय मञ्जु यो जनटेरे।
हुन्छन् ती शब्दायमान नै परोपकारी कर तेरे॥
सन्तोषिनी प्रिया बनेर अब खोलो जडे किवारे हैं।
हे हे जानो जो अब यो नै मनको छन्द हमारे हैं॥

भारत यात्राको केही झलक

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

SSS ।। S । S ।।। SSS । SS । S

यात्रामा सबले चिनुन् हरि भनी सेवा गरी यात्रुको।
फाली प्रेम गरेर फोहर धुलो श्रीरामवाले ठुलो॥
सेवाको दिनु भो सबै जनमहाँ द्रिष्टान्त कल्याणको।
जो देखी सब हामीमा लहर नै उत्साहको चल्दथ्यो॥
पाई प्रेम यही थकान मनको हाम्रो भयो वेपता।
ताजा भै सब गर्दथ्यौं सफरको कार्यादि हामी पुरा॥
यो मेरो कविता पढेर सबले यो तीर्थ यात्रा सब।
कस्तो भो भनि बुझ्नु होस् कति गरौं आफैं यहाँ वर्णन॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पनौती–मेला

पनौती– मेला, जनता मेला, सुनौला वेला यो ।
देशको भक्ति, सङ्घको शक्ति, मनले केलायो ।। ध्रु.व.।।

यो पुण्यवती, यो लीलावती, यो रोषी गङ्गाको ।
त्रिवेणी तीर्थ, तान समर्थ, कञ्चनजङ्गाको ।।

कावेली सरी, तमोर सरी, मेची र कनका ।
अरुणकोशी, वरुणकोशी, मिलेर यो कोका ।।

यो तामाकोशी, यो सुनकोशी, यो दुदकोशीको ।
सङ्गम सरी, जङ्गम तीर्थ, यो पुण्यवतीको ।

कमला जस्तो, विमल जल, यो इन्द्रावतीको ।
यो हनुमती, यो मणिमती, यो रुद्रावतीको ।।

वाग्मती गङ्गा, यो विष्णुमती, यो इक्षुमतीको ।
यो धर्मबती, यो प्रभावती, यो कीर्तिमतीको ।।

विहार भूमी, हो घूमी घूमी, धर्मका घरको ।
यो बाह्रवर्षे, पनौती–मेला, वरको परको ।।

कुम्भको मेला, भक्तको मेला, उत्तर–प्रयाग ।
हे पञ्च ! वर्ग ! न सुत जाग, धर्ममा लौ लाग ।

धार्मिक जन ! देउ यता मन, यर्थ भन्छौं सुनन ।
उचित छ कि ? उचित छैन ? मनमा गुनन ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(२)

यो शिवरात्रि, धर्मको पत्री, बोकेर आउँदै छ ।
प्रचारमन्त्री, सम्झी, गायत्री, श्रद्धाले गाउँदै छ ।।

हिमाली हिन्दू–राष्ट्रमा हिन्दू–धर्मको मेला छ ।
साधु र सन्त, सद्विद्यावन्त, भक्तको मेला छ ।

पाउकष्ट गरी, पालनु होला, सबैले सुनौंला ।
धर्मको मर्म, मानव, धर्म, मनमा गुनौंला ।।

त्रिशूली तादी, यो वेत्रावती, यो बुडीगण्डकी ।
दरम्दी चेपे, मर्स्याङ्दी मादी, यो शुक्ल गण्डकी ।।

क्याङदी र म्याङदी, भुरुङ्दी मोदी, यो कृष्णगण्डकी ।
पार्वती गङ्गा, अर्मादी आदी, हिमंवत्खण्डकी ।।

ज्यागदी र म्यारदी, सुरोदी जाही, गुणादी छाब्दी ।
राम्दी र चूँदी, सामरी खरो, मैदी र पार्दी छन् ।।

यो धारखोला, विजया सीता, धौली र मङ्गला ।
यो नारसिंहही, यो सरस्वती, मुस्ताङ्गी पिङ्गला ।।

निशी र भुजी, बो वडी गाड, माडी र झिम्रुक ।
रापती बबै, शारदा सबै, हिमाली हिम्रुक ।।

यो सानो भेरी, यो ठूलो भेरी, यो शूली भेरीको ।
यो व्यासभेरी, यो ऋष्मभेरी, यो ऋमिभेरीको ।।

मौभेरो सित, सङ्गम हुँदा, दुन्दुभिभेरीको ।
भाङ्कार भयो, अधर्म गयो, वेद–केसरीको ।।

गर्जना सुन्दा, नास्तिक फेरु, जसरि गैजाञ्छन् ।
हो हो लौ भन्दै, कोहोलो हाल्दै, बगालै लैजाञ्छन् ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो जवा नदी, यो तिला नदी, यो हिमा नदीको ।
दोल्फु र मुगु, लोहोडे छाम, मूल कर्णालीको ।।

कर्णाली–नाद, यो ऊर्ध्वमूल, सन्देश दिंदै छ ।
कैलास मान–सरोवरादि, शिरमा लिंदै छ ।।

मालिका गङ्गा, यो वृद्धगङ्गा, कैलासगङ्गाले ।
मालका मौलि–देशमा मिलि, कर्णाली अङ्गाले ।।

यो सेती गङ्गा, चौलानी गङ्गा, यो सुरनयाले ।
यो महाकाली–अँगालो हाले, बेनीले मयाले ।।

मकरमेला, भैंकन भेला, पनौती त्रिवेणी ।
तीर्थमा आये, माक नुहाये, छोडेर कुवेणी ।।

शतद्रु तिष्ठा, दिगर्चा गङ्गा विधिज सिन्धुले ।
कावेरी नेत्रा, नर्मदा गोदा, सकल बन्धुले ।।

निवास गर्छन्, मकर भरी, पनौती तीर्थमा ।
भावुक ! भन, भौं तारिदै छौ, के अन्त व्यर्थमा ? ।।

ई इन्द्रेश्वर, ई तुलानारायण र ब्रह्माणी ।
केदार बद्री, वंशीगोपाल, पनौती त्रिवेणी ।।

गोरखनाथ, कैलासनाथ, वसेर हेर्दछन् ।
यात्रीको मात्र, पवित्र पार्न, यो माला फेर्दछन् ।।

तेत्तिस कोटि, देवताहरु, मकर भरीमा ।
वसेर हेर्छन्, पनौती मेला, कैलास थरीमा ।।

हे नर ! नारी ! छोरा र छोरी, सँगमा लिएर ।
आउ नुहाऊ, निर्मल जाऊ, सद् धर्म लिएर ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पनौती-मेला, जनता मेला, सुनौंलो बेला यो ।
देशको भक्ति, सङ्घको शक्ति, मनले केलायो ॥

हे पञ्च ! सुन, मनमा गुन, तिम्रो छ धर्म यो ।
सेवाको मेवा, फलदछ सेवा, लौ गर मर्म यो ॥

ढुङखर्क वासी, ई नारायण, यो ढ्याङ्ग्रो ठोकेर ।
सन्देश दिन्छन्, निर्देश गर्छन्, यो शंख फुकेर ॥

कैलासबाट, डमरु डिम्-डिम्, मधुर बजाई ।
आदेश गर्छन्, उपदेश गर्छन्, शिवले जगाई ॥

चूलीमा बसी, शारदा देवी, पुस्तक वीणाले ।
विद्याको दिन्छिन्, सदुपदेश, ई चौद गुणाले ॥

हे चौद अञ्चल ! न बन अञ्चल, पञ्च र वर्गीय ।
जनता मिली, देश-विकास, लौ गर स्वर्गीय ॥

नाम्मुडावासी, ई नमोबुद्ध, नम्रता लियेर ।
छन् नमो मात्रै, पृथिवि ! भन्दै, अभय दियेर ॥

ई भालेश्वर, ई धनेश्वर, गोखुरेश्वरादि ।
चौसट्ठि पीठ-निष्ठ महिष्ठ, ई कुम्भेश्वरादि ॥

कण्ठमा ठेकी, भै नीलकण्ठ, गरल बलिष्ठ ।
बैकुण्ठ पनि, निर्भय पारी, बसेका वरिष्ठ ॥

फुल्चोकी देवी, साँगा र नाला-निवासी महेशी ।
गिरिजा दुर्गा, कालिका सिद्धि, भैरव सुरेशी ॥

भाले र भूते, पोखरी पञ्च, ई कलिञ्चोककी ।
दुर्गाले भन्छिन्, बचाउ धर्म, ई पलाञ्चोकको ॥

ई चण्ड मुण्ड-खण्डिनी चण्डी-ईश्वर चण्डेश ।
गण्डकी कोशी, कर्णाली काली, हिमालखण्डेश ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ई भालेश्वर, ई धनेश्वर, गोखुरेश्वरादि ।
चौसट्ठि पीठ–निष्ठ अ हिष्ठ, ई दुम्जेश्वरादि ।।
कण्ठमा ठेकी, भै नीलकण्ठ, गरल बलिष्ठ ।
वैकुण्ठ पनि, निर्भय पारी, वसेका वरिष्ठ ।।

फुल्चोकी देवी, साँगा र नाला निवासी महेशी ।
गिरिजा दुर्गा, कालिका सिद्धि, भैरव सुरेशी ।।
भाले र भूते पोखरी पञ्च ई कालिञ्चोकको ।
दुर्गालि भञ्छिन्, बचाउ धर्म, ई पलाञ्चोकको ।।

ई चण्ड मुण्ड–खण्डिनी चण्डी–ईश्वर चण्डेश ।
गण्डकी कोशी, कर्णाली काली, हिमालखण्डेश ।।
ई मणिचूड नगरकोट,– मुकुट महेश ।
फटिकशिला–निर्मल मूर्ति, ई नीलकण्ठेश ।।

एकशय आठ, मोसाइकुण्ड–निवासी निलिम्प ।
पनौती तीर्थ, नुहाउन आये, नगर विकल्प ।।
नेपाल तीनै, नगरवासी, सकल चलेर ।
सगण आये, यै पुण्यवती, देवता मिलेर ।।

ई शिवपुरी–निवासी शिव, भैरवी, रालुका ।
ई दुप्चेश्वर, वेल्कोट–काली, सामरी–जालपा ।।
कालिका देवी, मालिका देवी, यो महामण्डल ।
डाँडामा बस्छिन्, तुलजा देवी, कल्काई कुण्डल ।।

कपिल मुनि–थापित शिव, कपिलासनका ।
यो देवीघाट, इन्द्राणी देवी, धैबुङ वनका ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

परशरगुहा, छाब्दी वराह, यो व्यासगुहाले ।
मुकुन्देश्वर, यो सीतागुहा, वशिष्ठगुहाले ॥

सिखरकोट, यो द्रव्यगोठ, गोरखगुहाले ।
कालिकाथान, मालिकाथान, नारानथानले ॥

यो लम्बयुग्म, अग्नि र पुग्म, समान मानले ।
यो रागिनाश, कालिकावास, भैरवनाथले ॥

वभौली वसे ई वेदव्यास ऋषिङ्ग घिरिङ्ग ।
भिर्कोट वसे, ई भृगु ऋषि, ऋषिले ऋषिङ्ग ॥

लिङ्गलिगकोट, मुकुट सरी, कटक मच्चाको ।
वार्पाक धार्के, लाप्राक लार्के, लामाले फण्टाको ॥

वामीका स्वामी, ती मलैवम्म, महलवसन्ता ।
हिमाली हाम्रो, ई देवभूमी, रत्नले अनन्ता ॥

निश्री र भुजो, भुजेली-जन्म, भुजेल बसेका ।
धर्मको रक्षा, गर्नाका लागी, कम्मर कसेका ॥

यँ ढोर चौर, छन् ठौर ठौर, सरिता उम्रेर ।
उत्तरगङ्गा, मौभेरी सरी, वगेकी मिलेर ॥

इश्मा र पँजू, भन्दै छन् मै हूँ, वीरको जननी ।
अर्घा र खाँची, गुल्मी र गल्हौं, लसर्घा भननि ॥

श्रीराज राजेश्वरीले जस्ती, गुल्मीको गौरव ।
वढाइ गइन्, भयेर सती, साछी छन् भैरव ।

रेसुङ्गा शैल, गाउँदै छ गीत, ती ऋष्य श्रृङ्गको ॥
जन्म र कर्म, तपस्याभूमि, स्वर ली भृङ्गको ॥

शत हूँ गल्हौं, यो धुवाकोट, शिर्काङ मन्दिर ।
गोरक्षगाथा, गाउँछ शिर-वारी छ सुन्दर ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रुद्राक्ष-वृक्ष अरण्य-रक्षा, यक्ष र किन्नर ।
मिलेर गर्छन्, हिमाल-माल, सुखी र सुन्दर ।।

वाराह क्षेत्र, पारी पवित्र, वसेका वराह ।
घतराधूनि, तपका धनी, कौशिकी-प्रवाह ।।

रूपनारायण-गढकी काली, भैरव महान ।
ई हनुमान, कौशिकीतट-सङ्कट-मोचन ।।

ई षडानन्देश्वरले वेद, द्विडलामा दिँदै छन् ।
ई सिद्धिकाली, गुफामा वसी, सब सिद्धि दिँदै छन् ।।

ई दुग्धकोशी-गुहा-निवासी, महेश हलेशी ।
महिषासुर-मर्दन गर्न, वसेकी महेशी ।।

यँ सोलु-खम्बु-गुम्बामा वसी, बुद्धले ध्याउँदै छन् ।
यँ रुम्जाटार, ज्ञानको जोति, सन्तले ल्याउँदै छन् ।।

दोलखावासी, ई भीमेश्वर, नौलाख किरात ।
श्रीभीमक ली सहित हेर्छन्, दयाले दिन रात ।।

सिन्धुलीगढी-भैरव काली, जनक विदेह ।
जानकी-जन्मभूमि हो भव्य, धर्म छ सदेह ।।

जनकजीको, यो राजधानी, चतुर्भुज सिद्धले ।
लुप्त र गुप्त, भयेको देखी, फुलकये बुधले ।।

यो याज्ञवल्क्य-गार्गीको धाम, रामले मानेको ।
विश्वका मित्र, तो विश्वामित्र, विश्वले जानेको ।।

शुकले शिष्य, भयेर शिक्षा, अध्यात्मविद्याको ।
राजर्षिबाट, पायेका थिये, दर्शन आद्याको ।।

मिथिला पृथ्वी, शिथिल छैन, अद्यापि विद्याले ।
मैथिल कोकिल, गाउँछ गीत, गद्य र पद्यले ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पनौती–मेला, जनता मेला, सुनौलो बेला यो ।
देशको भक्ति, सङ्घको शक्ति, मनले केलायो ॥

हे पञ्च ! सुन, मनमा गुन, तिम्रो छ धर्म यो ।
सेवाले मेवा, फल्दछ सेवा, लौ गर मर्म यो ॥

ढुङ्खर्क वासी, ई नारायण, यो ढ्याङ्ग्रो ठोकेर ।
सन्देश दिन्छन्, निर्देश गर्छन्, यो शंख फुकेर ॥

कैलासबाट, डमरु डिम्–डिम्, मधुर बजाई ।
आदेश गर्छन्, उपदेश गर्छन्, शिवले जगाई ॥

चूलीमा बसी, शारदा देवी, पुस्तक वीणाले ।
विद्याको दिन्छिन्, सदुपदेश, ई चौद गुण ले ॥

हे चौद अञ्चल ! न बन अश्चल, पञ्च र वर्गीय ।
जनता मिली, देश–विकास, लौ गर स्वर्गीय ॥

नासमुडावासी, ई नमोबुद्ध, नम्रता लियेर ।
छन् नमो मात्रै, पृथिवि ! मन्दं, अभय दियेर ॥

ई भालेश्वर, ई धनेश्वर, गोखुरेश्वरादि ।
चौसट्ठि पीठ–निष्ठ महिष्ठ, ई कुम्भेश्वरादि ॥

कण्ठमा ठेकी, भै नीलकण्ठ, गरल बलिष्ठ ।
वैकुण्ठ पनि, निर्भय पारी, बसेका वरिष्ठ ॥

फुल्चोकी देवी, सांगा र नाला–निवासी महेशी ।
गिरिजा दुर्गा, कालिका सिद्धि, भैरव सुरेशी ॥

भाले र भूते, पोखरी पञ्च, ई कलिञ्चोककी ।
दुर्गाले भन्छिन्, बचाउ धर्म, ई पलाञ्चोककी ॥

ई चण्ड मुण्ड–खण्डिनी चण्डी–ईश्वर चण्डेश ।
गण्डकी कोशी, कर्णाली काली, हिमालखण्डेश ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ई भालेश्वर, ई धनेश्वर, गोखुरेश्वरादि ।
चौसट्ठि पीठ–निष्ठ भ हिष्ठ, ई दुम्जेश्वरादि ।।
कण्ठमा ठेकी, भै नीलकण्ठ, गरल बलिष्ठ ।
वैकुण्ठ पनि, निर्भय पारी, वसेका वरिष्ठ ।।

फुल्चोकी देवी, साँगा र नाला निवासी महेशी ।
गिरिजा दुर्गा, कालिका सिद्धि, भैरव सुरेशी ।।
भाले र भूते पोखरी पञ्च ई कालिञ्चोकको ।
दुर्गाले भञ्छिन्, बचाउ धर्म, ई पलाञ्चोकको ।।

ई चण्ड मुण्ड–खण्डिनी चण्डी–ईश्वर चण्डेश ।
गण्डकी कोशी, कर्णाली काली, हिमालखण्डेश ।।
ई मणिचूड नगरकोट,– मुकुट महेश ।
स्फटिकशिला–निर्मल मूर्ति, ई नोलकण्ठेश ।।

एकशय आठ, गोसाइकुण्ड–निवासी निर्लिप्त ।
पनौती तीर्थ, नुहाउन आये, नगर विकल्प ।।
नेपाल तीनै, नगरवासी, सकल चलेर ।
सगण आये, यै पुण्यवती, देवता मिलेर ।।

ई शिवपुरी–निवासी शिव, भैरवी, रालुका ।
ई दुप्चेश्वर, बेल्कोट–काली, सांमरी–जालपा ।।
कालिका देवी, मालिका देवी, यो महामण्डल ।
डांडामा बस्छिन्, तुलजा देवी, कल्काई कुण्डल ।।

कपिल मुनि–थापित शिव, कपिलासनका ।
यो देवीघाट, इन्द्राणी देवी, धंवुङ वनका ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पराशरगुहा, छाब्दी बराह, यो व्यासगुहाले ।
मुकुन्देश्वर, यो सीतागुहा, वशिष्ठगुहाले ।।

शिखरकोट, यो व्रध्यगोठ, गोरखगुहाले ।
कालिकाथान, मालिकाथान, नारानथानले ।।

यो लम्व्युाम, ऋद्रम र पुगम, समान मानले ।
यो रागिनाश, कालिकानास, भैरवनाथले ।।

वमौली वसे ई वेदव्यास ऋषिङ्ग धरिङ्ग ।
सिर्कोट वसे, ई भृगु ऋषि, ऋषिले ऋषिङ्ग ।।

लिङ्लिगकोट, मुकुट सरी, कटक सब्टाको ।
वार्पाक धार्के, लाप्राक लार्के, लामाले फन्टाको ।।

वामीका स्वामी, तो मलैवम्म, महलवसन्ता ।
हिमाली हाम्रो, ई देवभूमी, रत्नले अनन्ता ।।

निश्री र भुजो, भुजेली–जन्म, भुजेल बसेका ।
धर्मको रक्षा, गर्नाका लागी, कम्मर कसेका ।।

यँ ढोर चौर, छन् ठौर ठौर, सरिता उत्तरे ।
उत्तरगङ्गा, मौभेरी सरी, वगेकी मिलेर ।।

इश्मा र पँजू, भन्दै छन् मै हूँ, वीरको जननी ।
अर्घा र खाँचो, गुल्ली र गह्रौं, लसर्घा भननि ।।

श्रीराज राजेश्वरीले जन्मी, गुल्मीको गौरव ।
वढाइ गइन्, भयेर सती, साछी छन् भैरव ।

रेसुङ्गा शैल, गाउँदै छ गीत, तो ऋष्य श्रृङ्गको ।।
जन्म र कर्म, तपस्याभूमि, स्वर ली मृङ्गको ।।

शत हूँ गह्रौं, यो धुवाकोट, शिर्काङ मन्दिर ।
गोरक्षगाथा, गाउँछ शिव–वारी छ सुन्दर ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सेतीको घाटो, यो रामघाट, ई विन्दुवासिनी ।
ई अन्नपूर्णा, हिमाल देवी, मधुरहासिनी ॥

ढोर वराह–लहरी–सिद्ध, सिद्धको आश्रम ।
रूपा र फेवा, यो वेगनास, मनको विश्राम ॥

कलैयावासी, ई सिद्धेश्वर, सकल सिद्धिले ।
वसन्तपुर-निवासी देव, विमल बुद्धिले ॥

यो पर्साग‍ढी, पारसनाथ, शिवले पालेको ।
हरिहर क्षेत्र, हरिहर मिली, दुवैले पालेको ॥

यो चित्रवन, चोर्दछ मन, विचित्र छविले ।
हनुमान् काला, छन् रखवाला, ई सिंहदेवीले ॥

माकन्दरपुर, कालेश्वरनेर, भैरव कालीको ।
विकट कोट, धैर्यको वोट, वीर हिमालीको ॥

यै देववाट, हिमालबाट, गण्डकी झरेकी ।
काली र सेती, त्रिशूली वुडी, त्रिवेणी परेकी ॥

यो गँडाकोट, कङ्कालीकोट, वाल्मीकित्रिवेणी ।
उपर्दाङगढी, दाउन्ने गडी, स्वर्गीय निश्रेणी ॥

यो मल्लपाली, यो माईपाली, भगौतीपालीको ।
अमरपाली, यो नागपाली, ई पञ्चपालीको ॥

हो मातृभाषा, यो पालीभाषा, बुद्धले लियेको ।
पञ्च शीलादि, धर्मको उपदेश हो दियेको ॥

यो पाली माऊ, खण्ड छ खण्ड, गण्डकी–तटैमा ।
यो बुद्धवल्ली, हो बुटवल्ली, हृदय पटैमा ॥

भैरवकूता, भैरवा पुरी, पालपा भैरव ।
यो तानसेन, माल र सेन - कुलको गौरव ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ई भगवती. ई नारायण, तान्सिन बसेका ।
अमरकीर्ति. समर-फूर्ति, हृदय पसेका ।।
सीता र राम, यै रामपुर-निवासी भयेका ।
गण्डकी- जल-स्नानको फल, लिये र गयेका ।।

यो रुरुक्षेत्र, यो मुक्तिक्षेत्र, धर्मको क्षेत्र हुन ।
यात्रीको गोत्र, पार्ने. पवित्र, भित्रको नेत्र हुन ।।
ई नटराज, डमरु बजाइ, सन्देश दिँदै छन् ।
पाणिनि मुनि, पणेना बसी, शाब्दिक हुँदै छन् ।।

यो भृगुकूट, भयो भिर्कोट, भृगुले लेखेर ।
भृगुसंहिता, मानवहिता, दर्पण देखेर ।।
भूत भविष्य, र वर्तमान, त्रिकाल देखिन्छन् ।
ग्रहको गति-गणित गरी, कुण्डली लेखिन्छन् ।।

भृगुको जन्म, भृगुको कर्म, भृगुको धर्म हो ।
मानव धर्म, मनुको मर्म, लोकको वर्म हो ।।
भार्गव तपोवनको नाम, भागर भनिन्छ ।
यो अवधूत, तपसी बसी, तपस्या गनिन्छ ।।

कैलासगुहा, गोरक्षगुहा, धुन्धुरगुहाको ।
समूह शान्त. रम्य एकान्त, शुक्लाले सुहाको ।।
यो भीमेश्वरको भीमबन्ध, शुक्लाको पोखरी ।
पोखरा भयो, अटक रह्यो, फुटेर खँगारी ।।

कृत्तिको गुफा, यो शिवढुङ्गा, शिव र गोरख ।
यौटाका दुइटा, स्वरूप राखी, देखाउँछन्, पौरख ।।
यो रामकोट यो छापडाँडा, शिव र भैरव ।
गोरखनाथ, कालिका देवी, स्याङजाको गौरव ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(८१९)

यो काश्कीकोट, पाङ्दूरदुर्ग, त्यो अरमुडीको ।
अर्मावी नदी, अर्मो ला किल्ला, कोट फँ कुडीको ॥
बाटुले चौर, हिउँडको ठौर, हदिया अर्घौं को ।
घन पोखरा, यो कर्पु टार, यो थ्याङ अर्घौं को ॥

चौथर माथी, नौ थर साथी, थरको थपालो ।
स्थलको थल, थलको थर, उकालो ओरालो ॥
हिमाली देश, सहेंर क्लेश, सिक्लेश बसेको ।
मनाङ भन्ने, मान्याङ्छु शैल, शिखर पसेको ॥

पुस्तुन पथी, नुन्पानी खानी, मर्स्याङ्दी तटैमा ।
लम्जुङ व्यासी, शिखर गाउँ, ननका घटैमा ।
यो हंसकुण्ड खैरावराहि, घान्द्रुक निकट ।
यो वीरेठाँटी यो सीताठाँटी, सामेत विकट ॥

यो घारखोला, हो हिमगङ्गा, यो धौली गङ्गा हो ।
यो सीता गङ्गा, मङ्गला गौरी, यो मुक्तिगङ्गा हो ।
यो मुक्तिनाथ, पवित्र धाम, मुक्तिको बाटो हो ।
धर्मको क्षेत्र, अधर्म-नेत्र, नवुफने लाटो हो ।

एक शय आठ, गोमुखी धारा, ई मुक्तिगङ्गाका ।
ई शालग्राम-का शालकोट, शिल्मी हुन् ढुङ्गाका ।
ई जलज्वाला. ई स्थलज्वाला. ई शिलाज्वालाले ।
यात्रीको भित्री, उज्यालो पार्छिन्, न हेर हेलाले ।

यो नरसिंह-औतार-भूमी, नरसिङखोला हो ।
भुक्ति र मुक्ति-साधन गर्ने, नरको चोला हो ॥
ऋषि र मुनि, लामा र चुम्बा, मुस्ताङ्ग शृङ्गमा ।
बसेर हेर्छन् यो आर्यावर्त, हिमाली अङ्गमा ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तल्लो र मल्लो, दामोदरकुण्ड. गण्डकी–मण्डले ।
गण्डकी नदी, उभारेको छ, हिमवत्खण्डले ॥

गण्डकी–गर्भ, मन्दिर मामी, विवाद छोडेर ।
तेत्तिस कोटि, देवता वसे, सनेह जोडेर ॥

लामा र फुमा, पूजारी मिली. वैदिक विधिले ।
श्री मुक्तिनाथ–पूजन गर्छन्, गोष्ठीको निधिले ॥

यो काकवेनी, मङ्गलावेनी, ताकुम कोटको ।
खड्गपा दुर्गा, पालना गर्छिन्, मधेश भोटको ।

ती जालन्धरी, मुकुन्दसेन, सकल नृपाल
नारायणमल्ल, ती रामसाह. ताकुम हिमाल ।

गुफामा वसी, कम्मर कसी, बनेर तपस्वी ।
एकता शक्ति. खड्गपा दुर्गा–खड्गले यशस्वी ॥

मार्फा र फुम्सा टुकुचे गोरा, यो दान भंसार ।
ई देवीथानं–वसेकी देवी, पालेर संसार ॥

यो तातापानी. निरोगी तीर्थ, जडता हटाउँने ।
गण्डकीतट, निकट शिव, चौरासी कटाउँने ॥

ई जलेश्वर, ई गलेश्वर. यो भोल आश्रम ।
यो रहुगण–तपस्याभूमि प्राणीको विश्राम ॥

गुह्यकराज, ती अरमुडी, गण्डकी–वन्धक ।
यो जयापीड–विजयगड क्रोधीको अन्धक ॥

यो जन्मभूमी. यो कर्मभूमी, पुलह मुनिको ।
प्रभाको कीर्ति, प्राठिलो पौवा, राँखुमा रानीको ॥

काली र धौली, म्याग्दीको वेनी, यो धौलासिरीको ।
रूख झैं राम्रो, फुलेको वेला, यो मौलसिरीको ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कालीका तीर, कुसुमाग्निर, पाङ र पर्वत
पार्वती माता–को जन्मभूमि, सुषमा सर्वत ।।

पार्वती गङ्गा, तुङ्गतरङ्गा पर्वत–फेदीमा ।
गुफामा गुप्त, ई गुप्तेश्वर छन मोदी–बेनीमा ।।

पार्वती भाषा, पार्वती भूषा, पार्वतीबले ।
पर्वतराज. उज्यालो छ यो, पार्वती केशले ।।

यो हरितालो तिजको मेला पार्वती माताको ।
तपको फल, शिवको छल, विश्व–विधाताको ।।

पार्वती सती, शिवजि जति, सकल जगत
सन्तति प्यारा, विचारधारा, उदार भगत

पार्वती माता, शिवजी पिता, बिश्वका मानव ।
भाई र बैनी, स्वदेश विश्व. यो धर्म मानव ।।

भनेर मीठो सन्देश दिने, यो शिवरात्री हो ।
प्रचार गर्ने. पनौती–मेला, लेख्ने यात्री हो ।।

ऊँकारेश्वर, वाजुङ चौर, ई भोलानाथै छन ।
मेनका देवी. ई सुखी रानी, पार्वती साथै छन ।।

थन्थाप नेर, बलेवा चौर, बास्तुङ बजार ।
पार्वती–जन्मभूमिमा जन्मे, देवता हजार ।।

गण्डकीतट. यै गलकोट. वत्सको आश्रम ।
वात्सल्य रस–वशमा वसे, हिंसक विश्राम ।।

वामीका स्वामी. ती मलंवम्म, महलवसन्ता ।
हिमाली हाम्री. ई देवभूमी. रत्नले अनन्ता ।।

निशी र भुजी, भुजेली–जन्म भुजेल वसेका ।
धर्मको रक्षा, गर्नाका लागि, कम्मर कसेका ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यै ढोर चौर. छन् ठौर ठौर सरिता उत्रेर ।
उत्तरगङ्गा, मौ भेरी सरी, बगेकी मिलेर ।।

इश्मा र पैञ, भन्दै छन् मैं हूँ, वीरकी जननी ।
अर्घा र खांची, गुल्मी र गह्लौं, ललर्घा भन नि ।।

श्रीराजराजेश्वरीले जन्मी, गुल्मीको गौरव ।
वढाइ गइन्, भयेर सती साक्षी छन् भैरव ।।

रेसुङ्गा शैल, गाउँदै छ गीत, ती ऋष्यश्रृङ्गको ।
जन्म र कर्म, तपस्याभूमि, स्वर ली भृङ्गको ।।

शतहूँ गह्लौं, यो धुवांकोट, शिर्कोङ मन्दिर ।
गोरक्षगाथा, गाउँछ शिरु-वारी छ सुन्दर ।।

गण्डकीतट. वाल्मीकि आश्रम्, भो भैसा लोटन ।
लव र कुश-को जन्मभूमी, प्रचार-खटन ।।

यो देवदह, शन्देश दिन्छ, माइतीघरको ।
लुम्बिनी वन, जनको मन, हर्दछ परको ।।

इ मायादेवी, मायाले भन्छिन्, माया छ मलाई ।
यो पाली भाषा, पाली माफ् खण्ड, जोगाउ मिलाई ।।

बुद्धको जन्म-भूमि हो भव्य, लुम्बिनी कानन ।
सबैको ठाडो, गर्दछ सदा, मानले आनन ।।

पायेर शुद्धोदनको शुद्ध सत्त्व र शिक्षाले ।
सिद्धार्थ बुद्ध, भये प्रसिद्ध, कापिल दीक्षाले ।।

यो पञ्च शील, सकल लोक-हितोपदेश हो ।
न गर हिंसा, हे पञ्च ! वर्ग ! बुद्धको देश हो ।।

ऊँ मणिपद्मेऽहम् भनि इनि, सजन्छन् कैलास ।
मौलिक माया, वचाउँ सबै. न गरौं विनाश ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कपिलजन्म, कपिलकर्म, कपिलवास्तुले ।
कपिलवस्तु, बनेर भन्छ, सकल वस्तुले ।।

कर्दम देवहुतिको हुति. पारेर प्रसिद्ध ।
चौरासी सिद्ध-मध्यमा इनि कपिल प्रसिद्ध ।।

यो सांख्य दर्शन्, दियेर गये, यै दांते पाखुडी ।
लियेर बुद्ध, प्रसिद्ध भये, संसारमा हिंडी ।।

गौतम गोत्र, शाक्य हो वंश, शाक हो संवत ।
पालको भाषा हो पाली भाषा, सकल-सम्मत ।।

वैदिक थियो. संस्कृत भाषा, पालका पालामा ।
लोकले बोली, विकास गरे, विचार पालीमा ।।

जसरी वसे. बनेर शिला. देवता कालीमा ।
उसरी वसे, ई, पञ्च शील, देशना पालीमा ।

ब्रह्मा र विष्णु, महेश सित, पृथिवीमल्लले ।
बुद्ध र धर्म, सङ्घलाइ राखे, धर्मका बलले ।।

अशोक आये, तीर्थका यात्रा, लुम्बिनी वनमा ।
माया र बुद्ध, कनक मुनि, उनिका मनमा ।।

यो शिवपुरी, स्यूरीको शिर, शिवको निवास ।
कल्याणकारी, वैदिक धर्म, जीवको विकास ।।

यो वेदमठ. हो वेदमठी, वैदिक जनको ।
बघौर भयो, यो व्याघ्रपुर, भाषा छ मनको ।।

सुरेंया खोला, कंले प होला, फट्किरी बनाउने ?
खानी र पानी, सुधारी बानी, हो देश बनाउने ।।

चुरेमा चडी, स्यूपुरी गाडी, देउखुरी देखिन्छ ।
देशको यात्रा, गर्दामा देखि, यो कुरा लेखिन्छ ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सिद्धको धूनि, गोवरडिहा, शिवको मन्दिर ।
रमाइलो देती, अचिरवती-रापतीको तीर ।।

यो झालुवाङ. यो रत्नपुरी, लमही रिहार ।
शारदा देवी-वाहन हंस-बगाले विहार ।।

जाडाको वेला, माघीको मेला, यो तप्तकुण्डल ।
सुहाउन आउने, वर्दान पाउँने सुजनमण्डल ।।

वराह सिद्ध, नन्दिकेश्वर, ई महेश्वरले ।
यात्रीको गोत्र, पवित्र पार्छन्, गीवृद्धि वरले ।।

वसन्त-वेला, गोकुल खेला, नुन पानी खायेर ।
रोग हटाई, लाग्दछ बाटो, आरोग्य पायेर ।।

रापतीबन्ध, यो जलकुण्डी, भुवर भवानी ।
सुनार दून, सुनधुने जन, जीवन किसानी ।।

यो कोइलावास, कालिका थान, मारुति महान ।
श्रीशिवराम, वसेको धाम, नदीको मुहान ।।

पाटनदेवी-का नित्य सेवी, निर्जन खोलामा ।
कालठुङ्गी गुहा, पिपलनाथ सिद्धका चोलामा ।।

दङ्गीशरण, सन्ध्यापूरण. माणिकपारखू ।
ती भानुमती, केतकी सखी. रतन पारखू ।।

यो रत्नेश्वर – को सरोवर, पश्चिमवाहिनी ।
रापती ववै, ती नदी सवै, फर्केकी दाहिनी ।।

ववैका शिर, कौमुदीतीर, चौघेरा मन्दिर ।
यो रत्नपुरी, दाङ देउखुरी सवैले मानेर ।।

गोरक्ष शिव, ई कालसेन. भैरव साथै छन् ।
सिद्धरत्ननाथका साथ. ई नव नाथै छन् ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उरले विना. खुरले विना. न पाख चुच्चो छ ।
त्यो हंस मार. रे राजेश्वर. जो अति उच्चो छ ।

(उर विना, खुर विना, जाँच पांख विना हंसा ।
क्ष जिनावर मारो. रे राजेसुरा. जाके रकत न मंसा ।।)

भनेर हंसगायत्री–दीक्षा, गोरक्षनाथले ।
रत्नलाइ दिये. रत्नले लिये, फुकेका माथले ।।

रत्नको दीक्षा, रत्नको शिक्षा, धर्मको रक्षा हो ।
जंसलमेर, काम्बोज पुग्यो, गान्धाररक्षा हो ।।

आत्मा छ विश्वको मूल भन्ने, विश्वमा सन्देश ।
दाङले दियो, विश्वले लियो, उज्यालो यो देश ।।

सवारीकोट, पर्कटीवोट, काहुले कोटै छ ।
सुकोराकोट, यो चन्द्रकोट, यो छिल्लीकोटै छ ।।

यो खरकोट, यो थरकोट, यो चित्रकोटै छ ।
दाङ देउखुरी–माझ वसेर, तुइदाङकोटै छ ।।

घोघरा सिद्ध, रतननाथ, ई अम्बेश्वरीले ।
यो वारकुने, वराहदह, पहेलपारीले ।।

सुपात्रदेव, सकलसेव, लरेना त्रिवेणी ।
वाराही गङ्गा, यो गुहगङ्गा, सुकौरा त्रिवेणी ।।

सुर्पानी जर्वा. मूल्पानी धारा, ई वागीश्वरीले ।
यो ने. सं. वि. वि. निखिलजीवी, यो दिल्वेश्वरीले ।।

मालिका देवी, कालिका देवी, छिल्लीमा वसेर ।
अध्यात्मविद्योपदेश दिन्छिन्, हृदय पसेर ।।

दुइ हजार् वाइस्. एक् गते चैत्र, संफना दिंदै छ ।
अध्यात्मसम्मेलनको थली, फल्फली छदै छ ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

छिल्लीका सिद्ध, कालिका देवी, तुलसीपुरीले ।
रमाइलो मानी, एकान्त धामी, ज्ञाती र ध्यानीले ॥

ई सिद्ध भगवन्तले गरे, शीतल ध्यानीले ।
श्रीप्रामवास, सर्वविकास, भैरवधूनीले ॥

यो बहुधान्य, धर्ती छ धन्य, सिद्धिका धनीले ।
वाघ्मारा वन, भो शान्तमन, तपस्वी मुनिले ॥

सरयू ववँ, सुविधा सवै, हंसको विलास ।
स्थलको थल, थलको थर, थारुको विकास ॥

देउखुरी दाङ, ई दुइटा डुँगा, बाँधेको चलेयो ।
चुरेको धुरी, पश्चिम मुख, तुइदाङ धर्ती यो ॥

रतनवोध, दाङ फलावाङ चार्दा ही गुदेरी ।
निर्मल नीर, शारदा, तीर, रमाइलो बगेरी ॥

यो रानाग्राम, सिद्धको धाम, सिद्धका धूनिमा ।
पृथिवीमित्र, श्रीकृष्णसाही, शल्यानधानीमा ॥

यो छायाछेत्र, छ दिव्य नेत्र, अध्यात्मध्यानले ।
छन् छायानाथ, लोक सनाथ, धन र धानले ॥

जावालि मुनि, जन्मेकी भूमि, शल्यान जावाल ।
जनता भेजा, भयेर मेला, लाग्दै छ विशाल ॥

यँ खैरावाङ, देवीको दिव्य, देवल पवित्र ।
मालुवानेटा, फिंजि पखेटा, मालुवा विचित्र ॥

जाहारी चौर, रमाइलो ठौर, धौताले हेरेको ।
यो मूषीकोट, यो रुक्मकोट, भेरीले घेरेको ॥

यँ सर्पकोट, भो सापकोट, सापकोटानिकास ।
सीसा र तामा, सुन र चाँदी, खानिको विकास ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रुक्मिणिताल, रम्य विशाल, कमल फुलेका ।
तालचरीवास, माछा कछुवा, हाँसले खेलेका ॥

गोताम ग्राम, गौतमधाम, गोतामे थलो यो ।
मो श्वेरीतीर, भास्भिर भिर, रम्य र बलोयो ॥

माण्डव्य ऋषि, लेखमा बसी, माण्डूक्योपनिषत् ।
लेख्तै छन्, नदी, माण्डवी झाङी यो पनि कुरा सत् ॥

भृङ्गी र भृङ्गी, शिवका साथी, भाडोमा पसेका ।
खुङ्ग्री र भिङ्ग्री, सनाइकन, भाषामा रसेका ॥

ती घण्टाकर्ण, यै घण्टीखोला, रपाइला भनेर ।
रोल्पा र पाल्पा, मिलाइ बसे, एकान्त जानेर ॥

हिमाली सखा, यो सबी लेखा, निर्लिप्त लेखाले ।
सकल लेख, देखेर बस्यो, साथका रेखाले ॥

पं स्वर्गद्वारी, प्रभुको धूनि, यज्ञको धनी छ ।
व्यासको नासो, वेदको ध्वनि, राखेको पनि छ ॥

गसेवा गरी, जीवन भरी, औषण व्याधिको
भेषज गरे, भिषक बनी, निखिल आधिको ॥

वमौलीजन्मा, व्यासका मामा, जातिको माया छ ।
गोवंश माथी, गोरक्षनाथी, प्रभुको छाया छ ॥

हिमरुक् नदी, झिमरुक् छंदो, भाडोमा मिलेर ।
मै ऐरावती, रापती बनिन्, छोखुरी फरेर ॥

शेष कि देश, धनको खानि, गुह्यक रक्षक ।
प्यूठान ठाना, हो प्रतिष्ठान, सोमका भक्षक ॥

गोरक्ष काली, जालपा पाली शालि र गोधूम ।
दोहोरी वाली, अनिकाल् फाली, बसेका यै धाम ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उदयपुरी, अरङ्ग्वेनी यो साङ्कोटै हो ।
यो क्वाडी खैरा, यो बाघडुला, यो मित्रीकोटै हो ।।

यो रुदुनेर, ज्ञवाँको गाउँ, ज्ञवाली–थली छ ।
यो गुल्मीनेर, सिग्दीको गाउँ, सिग्द्याल थली छ ।।

गुह्यक महाराजिक गण, गुरुङ्ग मगर ।
अलकातुल्य, हिमालचूली, दनाइ नगर ।।

कालीका तीर, भयङ्कर भिर, धौचूली बङ्चूली ।
निशी र भुजी, मादी र तावी, बुडी त त्रिशूली ।।

यँ चन्द्रकोट, थपालो थियो, थापा र पौडेल ।
अर्जैमा जन्मे, अर्ज्याल द्विधा, बिहारे बगाले ।।

यँ धौलासिरी, उत्तरगङ्गा, हिमाली जोतिले ।
यो द्वारीकाँध, फाल्गुने लेख, ई सरस्वतीले ।।

यो छार्काभोट, टुपा र गुम्बा, नगरतारले ।
ऋग्वेदभूमि, यो ऋग्म पुग्म, शूलीका धाराले ।।

यो व्यासभेरी, यो राजा रानी, रल्लीका थलोले ।
दाडिमीवन, वैदिक जन, तुलसी गलोले ।

त्रिपुरासुर–तारणशक्ति, त्रिपुरसुन्दरी ।
हिउँपानी छडा, मोतीका लडा, पर्वतकन्दरी ।

त्रिपुराकूट, तिपुरीकोट, यो तिप्रिकोट छ ।
हिमालवाट कैलास जाने, यो वाटो छोट छ ।।

ई व्यासभेरी, व्यासको गुहा, मुहान खोलेर ।
ऋग्यजु साम, वेदको भेद भन्दी छन् तोलेर ।।

ऋग्मका ऋग्मी, रिग्मीका रेग्मी, परका रहेछन् ।
हिमाली थर, वर र पर, यसरी भयेछन् ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

डोल्पा र रोल्पा, जाल्पा र पाल्पा, डुर्पा र सेर्पाको ।
टुप र टुपा, नेपा बनेपा, खापुं र खुर्पाको ॥

सिक्लुङ नागी, बाग्लुङ रागी, खिलुङ सरीको
बाजुङ बजाङ, भाषाको नातो, हिमाल भरीको ॥

श्रीतारा देवी, ति पाय कीर्ति, टुपामा टल्नै छ ।
सुन चाँदी तामा, शिलाका पत्र, खस्ममा जम्नै छ ॥

विक्रमसाही. माथ नुहाँई, त्रिपुराकोटैमा ।
छ इतिहास, महाप्रकाश, लेखिन्छ छोटैमा ॥

कोटाल बाल, वृद्धले चाल, सकल पाएका ।
त्यो परम्परा, श्रुतिको पूरा, अति छन् लाएका ॥

तिपुरीकोट कीर्तिको वोट बडतडी बलाङ्रा ।
यो काइगाउँ फलासे वाउँ रिमि छन् दुइ पाङ्रा ॥

यो रिम्भिरी यो रिमिगाउँ हिमाल थली छ ।
यो काकमारा यो भालूलेख यो रूपा भली छ ॥

ई छन खोज्ने चन्द्रको बिम्ब चाखुरे टाकुरा ।
नोसूली माथी वनेर साथी हिमाली पाखुरा ॥

यो मौरे नेर भर्झरे छरो मोतीको छ हार ।
गाउँ चौरीकोट विकट बाटो टसीको पुकार ॥

(भर्मन्याका छरा मुनि चौरीकोट गाउँ छ ।
वर्ष दिनको गरी कमाइ फाप्रा बाली पाउँछ ॥

मुखियाका घाडा माथी देवीपूजा लाउँछ ।
यो विन्ति लागेन भर्या टसी नेपाल आउँछ ॥) इत्यादि...

यो वान्याकोट फलामे खानी बलीयो पानी छ ।
गाई र नाथुरा ... [illegible]

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जाजरकोट यो रामीडांडो रमाइलो थलो छ ।
जगतीपुर जगतीसिंह–चरित भलो छ ।।
भेरीका भेल फलामे पुल छोरोले हालेको ।
दुदको भारा तार्छु म भनी स्वधर्म पालेको ।
यै चौदोवंश लँगालमा कोम्लो छर्दैर सुनिन्छ ।
धौल्याली कोट सुनकेशा रानी रोयेको सुनिन्छ ।।
विक्रमसाही साइमलसाही पैकेला लियेर ।
कम्पन बांधो धिद् धर्म बांधी सुन्केशा लियेर ।।
गयेको कुरा संक्षना पूरा थानीले थरीले ।
चुट्किला बाटो खोलेर घांसी, गाउँ छन् लहरीले ।।
यो पाहाडिलो पाहाडी गडी, गाउँ चौविशैमा ।
पाहाडी–थलो, जवाको तट, चार्पटि पासैमा ।।
अध्यात्मधर्म–गोष्ठीको लागी बनेको चत्वर ।
यो गोठीचौर एकान्त ठौर पुगियो सत्वर ।।
हिमालचूली तीर्थ नौमूली तिलाका तिरैमा ।
तिलाको मूल गरुडकुण्ड मौन्याका शिरैमा ।।
उखाडीनेर प्याकुड्यावोडा प्याकुर्म्याल् थलो छ ।
यो काव्रज्वाला नौमूलीजल सङ्गम भलो छ ।।
यो ऋणमोक्ष क्षेत्र पवित्र चिमारामालिका ।
जवा र तिला दानसांगु मेला ई वांसीमालिका ।।
त्रिवेणी तीर्थ त्रिकोण यन्त्र ई रत्नचूडेश ।
अचार्जवाडा सालिका देवी वोहोरा–गणेश ।।
भैरवनाथ चन्दननाथ ई छिनासिमै छन् ।
वाडन्नहाते लिङ्गा र ध्वजा कैलास सङ्कल्प...

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जवा र तिला देवल डांडा अशी र पान्सय ।
यमला वाट जुमला भयो क्यं छैन संशय ॥

यमलाजन्मा रुद्रयामल यालली सिद्धिले ।
उभय लोक–सुखको मूल नवधा निधिले ।

चार टांगा मिली, भगना ध्वजा फर्फर हल्लाई ।
फट्कारी पाप डाकेर धर्म दिदैनन् कल्लाई ? ॥

यं कार्त्तिकेय–पाटन चर्दी, अशीको असंख्य ।
घोडी र भेडा विविध रङ्ग. ज्यै दह छ शंख ॥

योगिनीदह गिडिका मूल पार्वती माताले ।
बुहायेको छन् सेनानी सुत. देवका त्राताले ॥

हुड्के र विष्ट आड्या र गुह दह छन् विशाल ।
सुर्मा र मान लङ्कारि रारा नेत्रको हिमाल ॥

यं खलाचौड फुलपातीचौड छ दौड घोडाको ।
जस्का छन् घोडा हातमा कोडा काम् छैन गोडाको ॥

ई सत्र खम्म वाटामा टम्म यं सेरीढुस्काका ।
कीर्ति हुन उस्का छन् कर्म जस्का आकाश उठेका ॥

कनकपत्र छन् घरभित्र वयालकाटीया ।
शिलाको शिल्प मण्डपकल्प शिवको कुटीया ॥

सिम्खाडा गाउं सिम्खाडा थली, अशीमा वसेकी ।
घोडिला गाउं, त्रौमागाइ थली पान्सय वसेकी ॥

यं गिडिका–तट छ गाउं यो नवपानीय ।
न्यूपान्या थली यजमान बलि सबैले जानीय ॥

मीचाका वार देवल भला गोल्हुका सत्तान ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो तातापानी गन्धकखानी लछालखेतीको।
छ लाछु जिउलो प्रथम कीर्ति मार्सीका खेतीको॥

लछालखेती पैकेला थिये जनका सेवक।
चन्दननाथ सिद्धका पनि भयेर सेवक॥

सिद्ध र साधक मिलेर गरे यो कृषिविकास।
जनता नेता मिलेर गरे यै कृति विकास॥

भुल्ली टुपो धानको सुपो चन्दन जाँदछ।
यो रातो मार्सी हेरेर आर्सी कृषक खाँदछ॥

यो देवदारु कानन चारू तिलाका तिरैमा।
वलीको थली सुनारगाउ कस्तूरी भिरैमा॥

लाङ्घाका रास्रा ए देवदारु! कैलासक्वेल।
बोकेर व्रस्मौ यै छत्रछाया वसेका सकल॥

बालिका अश्वमेधको कीर्ति वोकेर विमल।
ई तिला नदी समुद्र जाँदो, हिमाल धवल॥

यै कार्त्तिकेय पाटन भरी कस्तूरी बगाल।
चर्दै छ बुकि, हेर्दै छ ढुकि नौमूली हिमाल॥

डाँफेका लेख नौरङ्गी डाँफे कुल्केर विहान।
जनतालाई नित्य जगाई खोल्द छ मुहान॥

कर्मले धर्म लौ गर भनी शिवको सन्देश।
दियेर नाची स्वतन्त्र वाँचो पालेर स्वदेश॥

यँ च्यारे चौर छन् ठौर-ठौर मिलेर चरेकी।
ई काली गाई कपिला गाई खर्कमा सरेकी॥

जल्जला लेख जलमा थल जन्मेको भन्दछ।
यँ लेखपुर कृषक शूर खीरिया खन्दछ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ऋणको मोक्ष, यै ऋणमोक्ष, यै धर्मकुण्डको ।
लियेर जल, आयेको हिमा, हिमाल खण्डको ।।

छिछिम लामा, गुफाको वाटो, यै घास वडार ।
कनककोट, पश्चिमवाट, पातक बडार ।।

तो नागराज, थापेर गये. ककनसुन्दरी ।
तिपुरीकोट, तो तारा देवी, त्रिपुरसुन्दरी ।।

यै शिञ्जापुर. यै लामा थाडा, पुण्य र पृथ्वीले ।
वसेर गरे. त्यो धर्मराज, स्वीकार पृथ्वीले ।।

कनककूट, कैलासकूट, निकट शिञ्जामा ।
हिमाको तट, विराट पीठ, विकट शिलामा ।।

यो हाटसिंजा यो पाँड्सेरा, पाँडेको थलो हो ।
सन्यालवाडा, यो सामाचौर, समालथलो हो ।।

यो नराकोट, यो द्धारपाटा, सिंजाले सिंजाली ।
जांचको देवल, शिलाका केवल, हिमाले हिमाली ।।

चिढुङ्गा, रोकायाब्ली, पाथर खोलामा ।
देवतागण, परिणत भये, मानव चोलामा ।।

यो ओरी जुम्ला, त्यो पोरी जुम्ला, तारमका सांगुमा ।
दोल्फु र मुगु, सङ्गम सरी, छायाका लांगुमा ।।

यो खल्ला गाड, यो रकासांगु, मलय सुमेरु ।
यो रत्नमाला–जस् काँहा जाला ? साछो छ सुमेरु ।।

यै लिताकोट, सल्लाका वोट, बुदबुदी केदार ।
यै गैरागाउँ, श्याउको ठाउँ, स्कन्दको मन्दिर ।।

सिद्धका गुफा, लेखका टुपा, शिल्पाडी फुल्याको ।
यो ढकमक्क, फुलेर फली, फलोद्यान् फुल्याको ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

फुशे र मुसे, इंशिले लेख, ई नदै मालिका।
ई खेप्तमाली, ई भुरिचूला, ई कलीमालिका॥

कैलासतुल्य, हिमालचूली, ई पूगमालिका।
ई नव दुर्गा, समष्टिरूपा, श्री वडी मालिका॥

जुविथामाथी, कार्त्तिक साथी, सुनबुकि, पाटन।
फट्टिकखानी, यो रुरु वञ्च, रुचिर पाटन॥

गुनाका गुनाल्, भर्ताका भर्तालि, सैन्याल सैनका।
ई खिङ्ङ्किसैने, हुन् अधिकारी, यै खिङ्ङ्किसैनका॥

ऊर्यांकोट किल्ला, ऊयांकोटी गाड ऊयांउँकिडी-खनन।
यो मेदिबम्म, कीर्तिले टम्म, मङग्राहा-खनन॥

यो महाभय, पाछ निर्भय, चिलुखाया देवल।
दाहाल-थली, यो दांहां गाउँ, गेलांका देवल॥

यै औलगेलां, यो लेखगेलां, यै पुण्यक्षितिमा।
छ पुण्यमल्ल-को जन्मभूमि, पुण्यका स्मृतिमा॥

छन् पञ्च देवल्. शिलाका केवल्, पदमा र तिलाको।
त्रिवेणी तीर्थ, तार्न समर्थ, प्रकृति मिलाको॥

यै घारगौंडा, यो बाघो शिला, जगति पृथ्वीको।
छ बडक्षरी, विद्याको पाटी, आदर्श पृथ्वीको॥

पाषाण काटी, बनेको वाटो, छ सय वर्षको।
जीवनबाटो, जनको स्थायी, छ अति हर्षको॥

यो कालीकोटे, खड्गको थलो, श्रीकालीकोट छ।
यो भर्ताकोट, भर्तालि-थलो, दुर्लङ्घ्य छोटे छ॥

ती शतरूपा, मनुको धानी, मानवी भयेर।
मनुले लेखे, यो मनुस्मृति, मान्नसा रहेर॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मानवी मान्छी, मानसी मान्छ, भाषाको विकास ।
मनुका सन्तान्, मानुष मानिस्. मानव विकास ।।

मनुको जन्म, मनुको कर्म, मनुको धर्म छ ।
यो मुथि मान्छ, यो तलि मान्छ, धर्मको वर्म छ ।।

यँ खांडाचक्र, खड्गको चक्र, धर्मको रक्षक ।
शास्त्रको रक्षा, शास्त्रले गर्छ, अधर्मभक्षक ।।

रास्कोटी राजा, मलयवर्मा, यँ खांडाचक्रमा ।
बसेर लाये, यो काठमाडु, धर्मका चक्रमा ।।

सुर्खेती दार, ली हातबार, खोचर दर्बार ।
दुलालघाट, र हरिद्वार, धोयेर तर्वार ।।

छ लाग्ना माथी, छ लाग्ना तली, मलय–तनय ।
धर्मका लागी, विभक्त भये, जनको विनय ।।

यो राजधानी मनुको थलो, मान्छ छ रमाइलो ।
समशीतोष्ण, न अतिचीसो, न अतिघमाइलो ।।

यँ खांडाचक्र, बसेर हेर्दा, छर्जङ्ग देखिन्छ ।
हिमाल माल, कीर्ति विशाल, देखेर लेखिन्छ ।।

त्रिकोण यन्त्र, यो शैलदुर्ग, नदीले घेरेको ।
कैलासतुल्य, मालिका बसी, गौरीले हेरेको ।।

कैलासबाट, यँ लालीघाट, कर्णाली ओर्लेको ।
थमलाबाट, यँ लालीघाट, ती तिला ओर्लेको ।।

त्रिवेणी तीर्थ, देवतासार्थ, स्नानले पवित्र ।
पर्वको मेला, जनता भेला, रमाइलो विचित्र ।।

मान्नका पञ्च, देवल ठूला, ई पञ्च कैलास ।
यो पञ्चायती, दर्शन पनि, यसैको विकास ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो तीखाशूली, मालिकाचूली, कर्णाली–कूलैमा ।
उज्यालो रूपशा, लोखाडा लालू, मालिकामूलैमा ॥
यो तलकोट, यो मालकोट, यो ढाँटीकोटै छ ।
खूलालू भली, खुलाल–थली, यो भानाकोटै छ ॥
यो कालो शिल्लो, विनाइक मष्टो, यो कुचि विहार ।
यो देवकोट, द्यौकोटा थलो, मनमा विचार ॥
कुइँकाना गाउँ, कुइँकेलथलो, ढाँकुंका ढकाल ।
यो मडासैन, ई मडासैनी, राँकाका रकाल ॥
यो पुडासैन ई पुँडासैनी, रिमाका रिमाल ।
फाँता र साता, कैलास तट, साताका सत्याल ॥
श्रीकोटवाट, श्रीकोटी भये, सिर्पले सिर्पाली ।
ऋक्सेनवाट, ऋक्सैनी भये, ऋग्वेद सेना ली ॥
मङ्गलसेन, मङ्गलसैनी, कँडीका कुँडयाल ।
तिमिलसेन, तिमिलसेना, पँमाका पँमाल ॥
ई वार वण्ढ, अठार खण्ड, शारदा–दर्पण ।
यैं नाचनथली, डाँफेको नाच, मालिका–अर्पण ॥
यो थामकोट, थामीको थलो, निगाली ढुङ्गाको ।
जिउलेखीमाडु, वैदिक लेख, यैं वही ढुङ्गाको ॥
वाजुराकोट, काफलवोट, यो कँडिकोटै छ ।
नुगाडाथली, जेउडचा मज्याडी, यो मानाकोटै छ ॥
श्रीपुण्यमल्ल–को पुण्यकीर्ति, कनकदलैमा ।
भौंन्याराटुपा, वनमाइसगुफा, हिमाली थलैमा ॥
पोरष्या लाग्ना, हिउँ काटी नाग्ना, ढँटेलो फुलेको ।
कुण्डाका थाणु, कैलासमाडु, गुराँस फुलेको ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो छातीकोट, छत्यालथली, फैतीका फैत्याल।
कुमारकोट, कवरथली, कोल्टीका कोल्ट्याल॥

समुद्रपाल-समुद्रगडी, यँ कोल्टीतटैमा।
कीर्तिको मूर्ति, शिला र लोक-हृदय पटैमा॥

यो कुण्डागाड, कर्णालीवाड, त्रिवेणी जवाला।
यँ धाडाकोट-का धाडाकोटी, मालिका उकाला॥

फुगाडतट, विकट कोट, यो राष्ट्रकूटै छ।
राकसकोट, रास्कोट भयो, यो शिवकूटै छ॥

यँ स्यूनाकोट, यो साराकोट, रावलकोटै छ।
कर्णालीकूल, शैलको बल, सकल कोटै छ॥

सुकेशाचौंरो. सन्निधि चौर सान्निगाड तिरैमा।
यो जालन्धरी-कुलाको जाल, फुगाडी तिरैमा॥

यो सन्निधाना, छ सन्निधाना. मालिका सन्निधि।
सुमेरुकीर्ति, सुनौलो मूर्ति, पूजित सविधि॥

(मालिकाको नवै बैनी, वसिन् थुम थुम।
पाउडण्डी उकालो लाग्यो, अलि अलि घुम॥)

छ मास बन्द, छ मास खुला. मालिका पाटन।
वैशाखी पूर्णे, कार्तिक पूर्णे, संशय काटन॥

यँ पञ्चपुरी पाटन मध्ये. त्रिवेणी पवित्र।
मालिका गङ्गा, मङ्गलमयी, फुल् फुले विचित्र॥

श्रावणी पूर्णे, कामना पूर्णे, यो ठूलो मेला छ।
माल हिमाल, उदय अस्त, यात्रीको भेला छ॥

घुमला डोटी, पल्टन भेटी, पैतला मिलाई।
ई चन्द्र-सूर्य, ध्वजामा बोकी, बतास हल्लाई॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कस्तूरी डाँफे फ्यारल तित्रा, सुनबुकि चरेर ।
स्वागत गर्छन् यात्रीको जाहाँ, अगाडी सरेर ।।

ई रजहाँस, जलमा खेली, रुगासाग् खाएर ।
यात्रीका लागी, माँगल गाउँछन्, नाद मिलाएर ।।

यो मखमली, डसना कुल्ची, सुनबुकि माटन ।
मन्थर पाइलो, सार्दछन् यात्री कलुष काटन ।

ई ठौर ठौर, उच्छ्वास फेर्दै, जयतु मालिका ।
यो जयकार, गर्दछन् यात्री, जयतु कालिका ।।

चूलीमा वसी, मालिका माता दयाका दृष्टिले ।
यात्रीको यात्रा, सफल पार्छिन्, वरका वृष्टिले ।।

मालिका गाथ, सुगन्ध गर्ने, कस्तूरीबगाल ।
मालती फूल, माथमा फूल, मालिका हिमाल ।।

किमेतद्यक्षं भनि अलक्ष ती अन्तरिक्षमा ।
विलखवन्द, देवता देखी, ध्यान दी शिक्षमा ।।

कैलासबाट प्रकट भयो, पञ्चक–प्रपञ्च ।
यो पञ्चायती, दर्शन पनि, यसैको हो पञ्च !

ॐकार बन्यो, स्वस्तिक बन्यो, यज्ञको मण्डप ।
चौसट्ठि वर्ण–को वर्णमाला, यो काष्ठमण्डप ।।

भोटो र चोलो, टुपी र चुल्ठो, डमरु मादल ।
त्रिशूल खुँडा, खुकुरी खड्ग, कुण्ड र यो थाल ।।

पाथी र माना, भाजन नाना, गहना अनेक ।
दोपाखे घर, घुमाउने घर, लौ गर विवेक ।।

मानव–बुद्धि–विकास–थलो, संस्कृति–विकास ।
सन्देश आद्य, वैदिक भाषा, संस्कृत–विकास ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विश्वको धुरी, हिमालशीला, मार्थमा कैलास ।
कैलासवासी, ई अविनासी–शिवको निवास ।।

शिवा र शिव, सकल जीव–जननी–जनक ।
मानव धर्म. धर्मको मर्म, हिमाली विवेक ।।

कैलास शैल, मानिका शैल, खेचर पञ्चूली ।
मल्लिकार्जुन, ई पञ्च धुरी, आदिम हिउँचूली ।।

ई सहलिङ्ग, सहस्रेश्वर, भासूको ई काली ।
ई सुमेश्वरी. ई वज्रभैरव, मष्टा र चण्डाली ।।

दिलीपेश्वर, ई शैलेश्वरी, यो देवीमण्डप ।
धौमाडु भयो, ई रणसेनी, बैतडी मण्डप ।।

यं वार व्यास, गोरख व्यास, गुफामा बसेका ।
ई मार्कण्डेय, मार्माका छेत्ति गुफामा बसेका ।।

यो मार्कण्डेय. पुराण लेखे, छेत्तिका गुहामा ।
यो अमरौघ—प्रबोध लेखे, गोरखगुहामा ।।

शङ्करपुर रुचिर शिर हुद छ बिद्याले ।
राउला केदार समय देव. रामको बराहले ।।

पातालवासी, भुवनेश्वर, यी सुरनयाका ।
तटमा कोट, स्वाराज्य राखी, स्वराडी भयाका ।।

ती नागनाथ, ती नगार्जुन, ती नागराज हुन् ।
ती नागपाल, ती नागमल्ल ई पञ्च नाग हुन् ।

कालीका कूल, विशाल शिला, ई नामपालेको ।
यो हरिहर – मन्दिर बली, कल्याल कालेको ।।

फुलघाटबाट. देवलहाट बैतडी मुकुट ।
शतकटा काली. ई महाकाली तट छविकट ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उकु र वाँकु, सेरा र फेरा, जोल्जीवी बाँधूँ ला ।
यँ महाकाली, झुल्घोटपुल, गोरील झौं ठूला ॥

ई सोमनाथ, गोपाललेख. अजयमेरुका ।
दुर्ग र देवल्, नाउला र नाउली, शिलपले कारुका ॥

धुन्याली डाँडा, देवल ठाडा, शिलाका किला छन् ।
यँ डोटी खोला. घटाल गण, वेताल ठुला छन् ॥

ई भागेश्वर, ती जागेश्वर, ई घण्टेश्वरै छन् ।
ई उग्रतारा, ई जगन्नाथ, ई गुणपालै छन् ॥

वखेतबाट, वखेती भये, पिखेत–पिखेती ।
ती उपपुरोहितका भये, अचेल उप्रेती ॥

ई चार भञ्ज्याङ भित्रका चारै. गणेश प्रहरी ।
चार नारायण. चारोटी काली. चारोटी कुमारी ॥

पशुपतिनाथ. ई आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथै छन् ।
गोरक्षनाथ, स्वयम्भूनाथ, आदेश साथै छन् ॥

ई नीलकण्ठ. बालाजुकुण्ड चण्डोल वराह ।
ई कुम्भेश्वर, भृङ्गारेश्वर, भ. पु. का वराह ॥

ई ज्ञानेश्वर, ई मानेश्वर, ई बाणेश्वरै छन् ।
ई कोटेश्वर, ई कीलेश्वर, ई आदीश्वरै छन् ॥

ई चङ्गु चाङ्गु विशंखु शिखा, ई मत्स्यनारान ।
ई अन्नपूर्णा, ई रक्तकाली, ई कालमोचन ॥

ई हरसिद्धि, ई मानेश्वरी. ई वज्रयोगिनी ।
भ. पु. र ल. पु. का. पु. र की. पु. तुलजा भवानी ॥

ई वनकाली, ई भद्रकाली, दक्षिणकाली छन् ।
ई मैतीदेवी, ई नरदेवी, ढुँडालदेवी छन् ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नक्साल शोभा ई भगवती, ई नीलवाराही ।
ई खाष्टि बौद्ध, ई महाबौद्ध, ई काशी बौद्ध छन ।।

गोकर्णेश्वर, गोभ्याटेश्वर, गोपालेश्वर छन ।
किरातेश्वर, विराटेश्वर, ई सिद्धेश्वर छन् ।।

ई हनुमान, ई महाकाल, ई काल भैरव ।
ई गुह्येश्वरी, ई गौरी देवी, ई वाघ भैरव ।।

यो सूर्यघाट. यो आर्यघाट, स्वच्छन्द भैरव ।
फुल्चोकी देवी. बालकुमारी, उन्मत्त भैरव ।।

यो गोदावरी, ई सरस्वती, ई टीका भैरव ।
ई एकानन ई त्रिविक्रम, ई भक्त भैरव ।।

वासुकि नन्दी, स्कन्द कुमार, रत्नेश गणेश ।
ई ताम्रेश्वर, ई विश्वरूप, ई वैरागणेश ।।

ई रामचन्द्र, यो सीतापाइलो, यो कृष्णमन्दिर ।
ई दत्तात्रेय, यो दिगुतले, पाँचतले सुन्दर ।।

सुन्दरीजल, यो शंखमूल, यो टेकुदोभान ।
यो सप्तमती, सङ्गम तीर्थ, तीव्र महान ।।

ई नील तारा, ई हिमहारा, नारानहिटीश ।
ई पारिजात–शारदा देवी, ई जपवागीश ।।

ई राजेश्वरी, भुवनेश्वरी, वत्सलेश्वरी छन, ।
ई रुद्रागारेश्वर ईश्वर, ई फङ्केश्वरी छन् ।।

ई सिद्धेश्वर, ई चण्डीश्वर, ई छत्रचण्डेश ।
ई आर्या देवी. ई विरूपाक्ष, ई ब्रह्मनाश्लेश ।।

ई मृगेश्वर, परमेश्वर, ई रामेश्वर छन ।
ई भस्मेश्वर, कैलासेश्वर, ई उमेश्वर छन् ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो उमाकुण्ड, भण्डारेश्वर, ई मल्लेश्वरै छन् ।
चतुरानन, दक्षिणामूर्ति दशावतारै छन् ।।

ई नव दुर्गा, ई नवनाथ, ई नव नागै छन् ।
ई नव निधि, ई नव रत्न, ई नव ग्रहै छन् ।।

तेतिस कोटी, देवताहरू, ई तीन पुरैमा ।
ई क्षेत्रपाल, थालेर वसे, ई चार सुरैमा ।।

मन्दिरमध्या, कमल फुल्ने यो रानी पोखरी ।
राता र नीला, कमल फुल्ने, कमलपोखरी ।।

यो दुग्धधवल, कमल जल, छ दुग्धपोखरी ।
यो नागराज-सिद्धिको धाम, छ सिद्धपोखरी ।।

खोला र नाला, नदी र दह, कुवा र धारा छन् ।
सजल सम्म, सफल सस्य-श्यामल धरा छन् ।।

यैं दहचोक, वसेर गरे, इन्द्रले तपस्या ।।
यैं चन्द्राचल, चित्लाङ वसी चन्द्रले तपस्या ।।

स्वयम्भूशैल, मञ्जूश्री वसे, पोखरी-तिरैमा ।
ती सिद्ध नागार्जुन यैं नागार्जुनाद्रि शिरैमा ।।

यैं विष्णुमती-गुफामा वसे, हिरण्य चिरेर ।
ती नरसिंह गर्जना गर्दै, संसारै फिरेर ।।

यैं शिवपुरी, शिखर वसी, महेन्द्रदमन ।
शिवको ध्यान, गरेर गर्थे, वैरीको दमन ।

गोकर्ण वसी, वाग्मती पसी, शिरका कमल ।
अर्पेर गर्थे, शिवको अर्चा, रावण प्रवल ।।

दाइ धुन्धुकारी, उद्धार गर्ने, गोकर्ण तपेर ।
गोकर्णेश्वर, सप्ताह लाए, नवार्ण जपेर ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ती बाणासुर, यँ बाणेश्वर, गरेर तपस्या ।
श्री बानेश्वर-थापना गरी भै गये अदृश्य ॥

श्रीबाणासुर-वीरकी छोरी, उषाको विहार ।
ढुङ्गाको ढुङ्गा, यो भीमढुङ्गा कलाको विचार ॥

भाइकुट हुँदा. वनमा रुँदा. दमौली पुकेर ।
अर्जुन आये, त्यो मन्त्र पाये. वनमा लुकेर ॥

कैलास सिद्धाचलका मध्य, यो इन्द्रकील छ ।
वागमतीतीर. सूर्यको भीर, कठिनशिले छ ॥

यँ पाशुपत, क्षेत्रमा दिये. किरातेश्वरले ।
पाशुपतास्त्र, त्यो कुरुक्षेत्र, जिते त्यै वरले ॥

किराती वीर, तीं एकलव्य, यलम्ब हाङ हुन् ।
यो यौटेतीर, जितार तिर, भन्ने ती वाङ हुन् ॥

ती पुष्पदन्त, गन्धर्वराना, मगर राजा हुन् ।
महिम्नः स्तोत्र भावपवित्र, वाणीका लाजा हुन् ॥

यँ पाशुपत क्षेत्रमा बसी, तपस्या गरेर ।
श्रीपशुपति-पूजन गरी, गये ती तरेर ॥

ने मुनिनामा. नेप ती गोप, कपिलागोठाला ।
श्रीपशुपति-दर्शन पाउने, पहिला कोटाला ॥

श्रीमानदेव-निर्मित गृह, यो मानगृहं हो ।
माणिगल भयो मल्लका पाला, तलेजु गृह हो ।

भाषा-विकास क्रमले आज, मङ्गल बजार ।
ती पुरातत्व, राखी महत्व, बसेका हजार ॥

श्रीअंशुवर्मा, कैलासकूट, मुकुट भवन ।
निर्माण गरी, निर्वाण भए, भृकुटी सवन ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कैलासकूट–निकटवासी, भारवि रविले ।
किरात अर्जुन, चरित लेखे, तो महाकविले ।।

ती बन्धुदत्त, नरेन्द्रदेव, कर्कोट मिलेर ।
ललित मिली, ललितपुरी, दुर्भिक्ष परेर ।

कामरू वसी, बनी तपसी, सुभिक्ष देवता ।।
मछिन्द्रनाथ, लियेर साथ, आइ पुगे तिनी ता ।।

यँ हनुमती–तीरमा तपी, ती बालवाल्मीकि ।
यो महारामायण नि लेखे, पुराण सार झिकि ।।

अमरावती–लङ्का अयोध्या, सिम्रौन निगम ।
दोलखा वसी, खिप्रुङ पसी, तुलजा आगम ।।

यँ दोलाशैल–दोलामा वसी, पसिना सुकाई ।
महिष मारी, दुर्गाले दिइन्, देवता फुकाई ।।

ई मानेश्वर, ई मानेश्वरी, ती मानदेवाले ।
थापेर कीर्ति, कमाई गये, ईशान–सेवाले ।।

चण्ड र मुण्ड, खण्डित गरी, चण्डिका शक्तिले ।
बनेपानेर, बसेको हेर, देशका भक्तिले ।।

ती धनेश्वर, कुबेरजीले ई धनेश्वरँको ।
थापना गरे, इन्द्रले तपी. ई इन्द्रेश्वरँको ।।

इन्द्रकी रानी, शचीको तप, यँ शचीतीर्थँमा ।
यो पूर्णवती, यो पुण्यवती, पनौती तीर्थँमा ।।

यो योगवृद्ध, भो जोगबुडा, आ बगन्नाथै छन् ।
यो भूमेथलो, रमाइलो भलो, कालिका साथै छन् ।

कालिकातीर, कञ्चनपुर, महेन्द्रनगर ।
यो सिंहपाल- दुर्ग छ याँहाँ, राना र मगर ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो शुक्ला फाँटा, न्हूरेका पाटा, वासमी गङ्गाले ।
वामन अवतारको भूमि, इतिहास् सँगाले ।

कश्यप मुनि, तपका धनी, काश्यप आश्रम ।
मृग र पक्षी, मानव सर्व, जीवको विश्राम ।।

वण्डालमध्ये, यो तारताल, रमाइलो विशाल ।
हिउँद र वर्षा, हिमाल माल, गर्दछन् मराल ।।

भजनी सती, भजनवती, सतीको कीर्ति छ ।
यो टीकापुर, यो राजापुर, रामको मूर्ति छ ।

स. सं. वि. वि. को. सरयूजीको, सन्निधि निवास ।
ई मोटेश्वर ठाकुरद्वारा, गिरिजा कैलास ।।

वानवताल, हात्ती बगाल, आ! सेतो हात्ती छ ।
दँताहा थारु, जातिको पूरातत्वको थाती छ ।।

बदनाहामा, भैरव बसी, क्षेत्रको पालना ।
गर्दछन् इनी, भाखरताल, हाँसको लालना ।।

कञ्चनपुर, कैलालीपाली, बाँके र वर्दिया ।
कर्णाली काली वर्दै र सबै, बगेकी नदी या ।।

यो चीसापानी, सुखको खानी, जलज विशाल ।
गुट्को घुट्, जाधु र कोइने, अ वार वण्डाल ।।

यो ऋक्‌चा भली, ऋक्सेनथली कर्णालीकूलमा ।
ती खेलथापा, थापिये राजा ऋक्सेन-कुलमा ।।

यो सिरीचौर, खोचरदार-संरचना दिदै छ ।
यो सुरक्षेत्र, भै सुरखेत, अँगडाइ लिदै छ ।।

यो रानीघाट, यो लाटी कोइली, शिवको देवल ।
यो नासादार, स्मारक लेख, शिलाको केवल ।।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो बाणगङ्गा, प्राणीका अङ्ग, मङ्गल जलले ।
झुल्झुले पानी, उरुलञ्छ छानी, धर्मका बलले ॥

यै सुरक्षेत्र, रम्य पवित्र, यो कांक्रे बिहार ।
जँ ठौर ठौर, लाग्दछन् मेला, पर्व र तिहार ॥

यै सुरक्षेत्र, विहारभित्र, लेखेका अनेक ।
लासा र चीन, पुस्तक पुगे, गयेर ती देख ।

मङ्गलगडी, कालिका वडी, क्षेत्रप भैरव ।
डांडा र कांडा, वसेका सुरक्षेत्रका, गौरव ॥

यो गाइनेकांडा, यो फिनिकांडा, यो मल्लकांडा हो ।
सेरो र फेरो, भेरीको घेरो, तेलपानी डाँडा हो ॥

ये रानीघाट, यो राङघाट यो सुपाघाट हो ।
उत्तरापन्थ, लागेको रानीभत्ताको बाट हो ॥

सिद्धको पाइलो, पूज्य रमाइलो, लेखमा देखिन्छ ।
प्याउलीफूल, गुराँउसीफूल, पूजे र धोगिन्छ ॥

हजार जना, अटाउनसक्ने, उदार ओडार ।
यो इतिहास, विबिध पुरातत्वको भँडार ॥

यै शैलदुर्ग, पूजित भर्ग ती भारजद्वाले ।
द्रोगले द्रोगेश्वर ई डुंगेश्वरको पूजाले ॥

लियेर दिये, शस्त्र र शास्त्र पाण्डव कौरव ।
शिष्पमा शिष्प–वत्सल हुँदा, कमाये गौरव ॥

कोटिलाशिव, लस्लाटज्वाला, यै कोटिशिलाले ।
यो शिरस्थान, यो नाभिस्थान, पादुकाज्वालाले ।

वैदिक वैश्वानरले घूलीश्वरको यो धाम ।
ई हुंसज्वाला, भैरवी नाभी, लोहोरे र छाम ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ती पुण्यगाद, तो हंसनाथ, ती धर्मराजले ।
ॐ अग्निमीले, भनेर मिलो, त्यै धर्मराजले ॥

निर्दोषी पञ्च-कोशीमा वसी, दुर्लङ्घ्य बनाये ।
यो कीर्तिखम्म, यो गडीखम्म, अपार जनाये ॥

कर्णालीकूल, सिद्धको थली, ई बालभैरव ।
विलासपूर, छैन यो दूर, कालिका भैरव ॥

सरयू पनि, कर्णाली बनी, देखेर प्रलय ।
यो यथापूर्व, छँदै छ सर्व, वैदिक वाङमय ॥

पाथरनाउली, कपूरनाउली, अनेक नाउली छन् ।
यै महाभय, निर्भय भई, ओडार व्याउली छन् ॥

दुल्लूमा ठुला, ई कीर्तिखम्म, दैलेख किला छन् ।
ई सातखम्म, शतशः खम्म, लिखित शिला छन् ॥

पृथिवीमल्ल-को कीर्तिखम्म, दुल्लूमा खडा छ ।
गीर्वाणयुद्ध-पालाको किल्ला, दैलेख कडा छ ॥

भूतिमा फूर्ति, लियेर खडा, पच्चिस देवल ।
वैदिक वैश्वनरको थलो, दुर्लङ्घ्य विमल ॥

दवाडाबाट, दवाडी भये, ऋजुका ऋजाल ।
पोखरबाट, पोखरेल भये, पौडीका पौड्याल ॥

यो लामिछाना, ई लामिलाने, भुकाँका भुसाल ।
गभौडीबाट, ई गभौड्याल, दुलूका दुलाल ॥

यो पराजुल, ई पराजुली, भूर्तिका भूर्त्याल ।
यै चालसबाट, चालिसे भये, लमजीका लमज्याल ॥

सिंगाउडीबाट, सिंगाउडे भये, सुवाका सुवाल ।
तलि र मुथि, यो नेपाकाँल्ला, नेपाका नेपाल ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

स्थलीको थली, स्थलको प्रेत, थिरको थाहै छ ।
यो ऊर्ध्वमूल, हिमाल हाम्रो, प्रचार चाहै छ ।।

पाम्म र राम्म नाम्म र भिम्म, झम्म, र घुम्मको
मान्मका साथ. सम्बन्ध छ यो सृष्टि छ युग्मको ।।

कुमाउंबाट, कुमाइ भये, काश्मीर–काश्मीरी ।
यो गढवाल, ई गढवाली, मैसूर–मैसूरी ।।

पञ्जाबबाट, पञ्जाबी भये, विहार–विहारी ।
उत्तरापथ–उत्तरपन्थी, निहार विचारी ।।

यो मारवाड, ई मारवाडी, बांगर–बांगरु ।
गुजरात्‌बाट गुज्‌राती भये, कौरव यो कुरु ।

मेवाडबाट. मेवाडी भये, ढुण्ढाड ढुण्ढाडी ।
कोङ्कणबाट, कोङ्कणी भये, वागड वागडी ।।

बङ्गालबाट, बङ्गाली भये कर्णाट कर्णाटी ।
उडिशाबाट, उडिया भये, लाटका ई लाटी ।।

ई महाराष्ट्र, मराठा भये, आसाम आसामी ।
सौराष्ट्रबाट. सौराष्ट्री भये, इलाम इलामी ।।

मद्रासबाट, मद्रासी भये, वर्माका वर्माली ।
तैलङ्गबाट. तिलङ्ग भये, नेपाल–नेपाली ।।

ई मालवीय, मालवाबाट, मिथिला मैथिल ।
गोरखाबाट, गोर्खाली भये. उत्कली उत्कल ।।

बुद्धका भक्त ई बौद्ध भयेः जिनका जैनी छन् ।
श्रुति र स्मृति, स्थिति संस्कृति, दिदी र बैनी छन् ।।

यै शिवरात्रि, पवित्र थिति, धर्मका मेलाले ।
मनको मेला, प्रकट गऱ्यो, जनका मेलाले ।।

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

संस्कृति हाम्रो, सभ्यता राम्रो, मूल र शाखाले ।
धर्मको रूप, फलदछ सधैं, वैदिक भावाले ॥

यो दशविध, मानव धर्म, विश्वको साक्षी छ ।
हृदयमध्ये, यो छैन भने, मानव बाँकी छ ॥

"पनौतीको स्वर्णपत्र"

पशुपतिनाथको र तुलानारायणको स्थापना
राजा जयार्जुनदेव र जयस्थितिमल्ल (स्थिति
राजमल्ल) को पुष्पाभिषेक (राज्याभिषेक)
पनौतीका राजा जयसिंहराम महाथ द्वारा

१) ॐ ॐ नमः श्रीगोपीनारायणाय ॥ स्वस्ति ॥
एषा पूर्णवती रम्या ख्याता नेपालमण्डले ।
यत्रास्ते भगवा

२) न्देवः श्रीमानिन्द्रेश्वरः शिवः ॥ अत्रासोज्जय
सिंहरामनृपतिः प्रख्यातभूमण्डले श्रीमान्
श्रीभगवान्

३) शिवः पशुपतिर्येन प्रतिष्ठापितः । येनवापि
जयार्ज्जुनो नरपतिः पुष्पाभिषेकः कृतो येनासौ
स्थिति

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

४) राजमल्लनृपतिः पट्टाभिषेकीकृतः ।। कृत्वा येन
तुलाद्दनम्मधुरिपुं संस्थाप्य चेन्द्रेश्वरे दत्तन्तत्र
स्वदे
५) हतुल्यकनकं ग्रासे रवे राहुना [णा] ।
भूयश्चापि हिरण्यनिर्मितरथं साश्वन्तथा हास्तिनं
रम्यं कल्पत
६) रुंच विप्रविदुषे दानम्प्रदत्तम्महत् ।। साष्टादश-
म्भारतपर्व्वपुण्यं शास्त्रं सभालेखयतिस्म
७) धीरः । आरण्यपर्व्वाख्यमिदं हि श्रुत्वा जगाम
स्वर्गं जयसिंहरामः ।। नेपाले शशिनेत्र
८) पञ्चकगते मासे सिते कार्तिके चाश्विन्यां सचतुर्द्दशी
तिथिविधौ सूर्ये व्यतीपातके ।
९) राज्याङ्गानि निधाय बान्धवजने लोकानुकम्पा
करो दुर्द्दैवाज्जयसिंहरामनृपतिः श्रीवि
१०) ष्णुलोकं ययौ ।। हा हा हा जयसिंहरामनृपते
प्रत्यक्षकल्पद्रुमो विप्राणामपि चार्थिनाञ्च
११) विदुषां षड्दर्शनानां तथा । सर्व्वाशापरिपूरणार्थ
सुफलः सत्कीर्तिपुष्पान्वितः कष्टं दैव
१२) वशात्स एव विट [ट] पी लूनो यमेनाधुना ।।
तद्रूपप्रतिमां हैमी [मीं] गोपीनारायणन्ततः
कृत्वा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पर्नोती-मेला

१३) चतुर्मुखन्देवं, शिवस्य प्रतिमां पुनः ॥ अस्मिन्
पुरवरे रम्ये स्थापितम्परमेश्वरं । यावच्चं
१४) द्रावर्कपर्यन्तं सुस्थिरत्वेन तिष्ठतु ॥ सम्वत ५२१
कार्तिकशुक्लचतुर्द्दश्यान्तिथौ ॥ अश्विनीनक्ष
१५) त्रे ॥ व्यतिपातयोगे ॥ आदित्यवासरे ॥ थ्वदिन
कुन्हु महामन्त्रीश्वर जयसिहरामवडमहाथ-
१६) भारोस श्रीविष्णुलोक संप्राप्त जुया दिन जुरों ॥
थ्वङदेशनाव श्रीगोपीनारायण परम भट्टारक
१७) स श्रीपमेश्वरीस सहित याङन सुवर्णप्रतिमा
द्वयकं जयसिहराम वडमहाथभारोस प्रतिरू
१८] प लीन याङन प्रतिष्ठा याङन, थ्वपूलस, समान
याङा दिन कुन्हु थापरपा [था] जुरों ॥ चतुर्मुख
सुवर्णकोष
१९] श्री श्री इन्द्रेश्वर सदाशिव भट्टारकस डोहरपा
जुरों ॥ दश दश थ्वस सवच्छली दिन कुन्हु
श्री श्री पशुपति
२०] सकेनो श्री चंगुसनो श्री बिष्णुतीथ [र्थं] सनो
पञ्चामृतस्नान याय, लिछिया ब्राह्मणजुसनो
लिछिया भक्षु जुसनो वर्राज भागय
२१] याङन लूं डोहरपा द्वं जुरो ॥ शुभः ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अनुवाद

ॐ ॐ पुरानु ॐ र नीलो ॐ नमस्कारछ श्री गोपीनारायण (वंशीगोपाल) लाई । स्वस्ति भलो छ । यो पनौती राम्रो छ र नेपाल मण्डलमा प्रख्यातछ / जहाँ भगवान देव श्रीमान् इन्द्रेश्वर शिव बसेका छन यसै पनौतीमा थिये जयसिंह राजा प्रख्यात भुमण्डलमा श्रीमान श्रीभगवान शिव पशुपतिनाथको जसले प्रतिष्ठागरे । जसले नै जयार्जुन राजाको पुष्पाभिषेक गरे । जसले ती स्थितिराजमल्ल (जयस्थितिमहल) राजाको पट्टाभिषेक गरे । जसले तुलानारायणको मूर्ति निर्माण गरेर इन्द्रेश्वरमा विधिवत् स्थापना गरी तिनैका अगाडी शिलातुला- खम्ब खडा गरेर आफ्ना देहतुल्य सुन तौलेर दान दिये सूर्यग्रहणमा । फेरी पनि त सुनको घोडा सहित रथ तथा सुनको हात्ती र राम्रो सुनको कल्प वृक्ष वनायर विप्र विद्वान्लाइ महानदान दिये । अट्ठार पर्वको पुण्य शास्त्र महाभारत राम्ररी लेखायेर विद्वान् धैर्यशाली राजा जयसिंह राम यसै महाभारतका अरण्यपर्वको कथा सुनेर स्वर्ग गये । नेपाली संवत् ५२१ कार्त्तिक शुल्क चतुर्दशी सोमवार अश्विनी नक्षत्र तथा सूर्य व्यतीपात योगमा वसेमा राजा १ मन्त्री २ मित्रराष्ट्र ३ कोश ४ राष्ट्र ५ दुर्ग ६ सेना ७ अङ्गको राज्य भाई वन्धु जनतामा राम्ररी राखेर लोकानुग्रह कारक राजा जयसिंहराम बुद्धैवले श्री विष्णु लोक गये । हाइ हाइ हाइ ! हे जयसिंहराम राजा ! तिमि विप्रहरु र अनेक प्रकारका प्रार्थीहरू, विद्वानहरू तथा षड्दर्शनहरू (गौतमस्य कणादस्य कपिलस्य पतञ्जलेः

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

व्यासस्य जैमिनेश्चापि दर्शनानि षडेव हि । एवं जोगी जङ्गम सेवडा सन्न्या-सी दर्वेश । छैठौं दर्शन ब्रह्मको जस्ता भेष न भेष ।। बौद्ध दर्शन समेत) का सबै प्रकारका आशाहरूको पूर्ति गर्ने मधुर फल फलेका र सत्कीर्तिरूपी फुलफुलेका प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष नै थियो, तर कष्टको कुरा यो छ कि दैवका वशमा परेर त्यो कल्पवृक्षलाइ ऐले निठुरा यमराजले काटेर ढाली दियो ।

ती राजा जयसिहरामका रूपको सुनौलो प्रतिमा तेसपछि गोपीनारा-यण (वंशीगोपाल) चतुर्भुजी देव तथा शिवको प्रतिमा सबै सुनौला बना-एर फेरि यसै पुरवर रम्य अश्मपुर पनौतीमा परमेश्वरको स्थापना गरियो । राष्ट्रध्वजका देवता चन्द्र सूर्य आकाशमा रहेसम्म यो कीर्ति सुस्थिर रहोस् । संवत ५२१ कार्त्तिक शु. दि. १४ अश्विनी नक्षत्र व्यतीपात योग रविवारका दिन महामन्त्रीश्वर (प्रधान मन्त्री) जयसिहराम वडा महथ भारधार को श्री विष्णुलोकमा राम्ररी पुगेको दिन भयो । यस पनौतीदेशमा श्रीगोपीनारायण महाराज गोपाल कृष्णको श्री परमेश्वरी (राधा) सहित गरेर सुनौलो मूर्तिदान गरेर जयसिहराम वडा महथ भारधारको प्रतिरूप (जस्ताको तस्तो सालिक) देवप्रतिमामा प्रीत गरेर प्रतिष्ठा गरी यो देवलको सुनौलो छानु बनाइ सिध्याएर थापना भयो । चारमुखे सुनौलो कोश (खोल) श्री श्री इन्द्रेश्वर सदा शिव महाराजको दोहोरो बनाइयो । वर्षवर्षमा यसवप्रबन्धनका निम श्री श्री पशुपतिमा श्रीचांगु नारायणमा श्री विष्णुतीर्थ (बुढानीलकण्ठ) मा पञ्चामृतले स्नान गराउनु । लिङ्गिका ब्राहणहरू र लिङ्गिका बौद्ध भिक्षुहरूलाइ आधा आधा भाग गरेर सुन दोहोरो दान भयो । शुभम् ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ॐ

आत्मा खलु विश्वमूलम्

ॐ खं ब्रह्म

वैदिक - राष्ट्रिय - प्रार्थना

ॐ आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर ऽ इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतान्दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।

तेजी ब्राह्मण वेदमा सब बनुन् आ राष्ट्रमा तेजिला
शूरा स्वस्थ महारथी धनुधरा रक्षाक्षम क्षत्रिय ।
गाई धेनुसमान दूध दुहुने गोरू र साँढे बली
घोडा वायुसरी सुशील विदुषी नारी पुरन्ध्री भली ।
योद्धा वीर रथस्थ-शत्रु-विजयी विद्वान युवा सभ्य हुन्,
देवार्ची यजमानका सुत हउन् वीराग्रणी सद्गुणी ।
हाम्रा खेति किसानिका समयमा पर्जन्य वर्षुन् जल,
बाली-नालि फुलुन् फलुन् पजुरियुन् पाकुन् सब औषधी ।
योग-क्षेम समानरूप सबको होस् कल्प-कल्पान्तमा,
मोधावी धन-धान्य-धर्म-धृतिले सम्बद्ध सारा रहुन् ।
शान्ति स्वस्ति र सङ्घशक्ति जनमा जागुन् जगाउन् जगत्
विश्व स्वस्थ रहोस् सदा जय हवोस् कल्याण होस् लोकको

ॐ वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः ।
हामीहेरू सदा जागौं; राष्ट्रमा राष्ट्र-भक्तिले,
अगुवा हौं हित गरौं, सबैको सङ्घशक्तिले ।

बृहद् आध्यात्मिक परिषद्

अखिल नेपाल हिन्दुधर्म-सम्मेलन

श्री ५ महेन्द्र वेदविद्याश्रम

२०३० शिवरात्रि

पशुपति गोशाला काष्ठमण्डप (नेपाल)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आध्यात्म दीपक मित्र

(२०२८।१०।१७ गते श्वस्थानी पूर्णिमा चन्द्रग्रहण)

यो दुइ दिनको झल्का हो, जुन दिन दियालो बङ्गलाको दियो निभ्यो, अन्धकारले डेरा जमायो, राष्ट्रसङ्घ परिवारले झण्डा झुकायो, चेतनशील मानवले मण्टो निहुरायो, पञ्चायती प्रजातन्त्र टुहुरो भयो, भूमिसुधार अधुरो भयो, गाउँ फर्क राष्ट्रिय अभियान अर्कै बाटो गयो, आर्थिक दशक मसक्क भयो, मुलुकी सविधान दिउसै निदायो देश भरि रुवावासी छायो, स्वर्गबाट विमान आयो, पाञ्च भौतिक पिंजरा उघारेर उडेका पञ्छीले स्वर्गवास पायो; यस्तै छ यो संसार। एक दिन सवैको पालो आउँछ । आफुलाइ कसैले विर्सनु हुन्न ।

मर्त्यलोकमा उम्रेका मानवले चार कुरा कमाउँछः— पुण्य र पाप, जस र अपजस; पुण्य र पाप लगेर जान्छ, जस र अपजस छोडेर जान्छ अरू सवै कुरा यहीँ रहन्छन । कौनै वस्तु साथमा ल्यायेको होइन साथमा जाने पनि होइन; नदी–नौका–सङ्गम क्षणिक छ। पारी पुगे पछि सवै नौका त्यागेर आफाफनु बाटो लाग्छन् । को को कता पुग्छ ? भन्न सकिन्न । जो जो जुन जुन लक्ष ताकेर हिंडेको हुन्छ, त्यो त्यो त्यहीं पुगेर थकाइ मार्छ । यस्तै छ यो चौरासीको चक्र ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आत्मा नै विश्वको मूल हो। हामीहरू हाँगा हौँ। हाँगा विगा मूलभन्दा भिन्न हुदैनन्। आत्मा खलु विश्वमूलम्। एकं सद् विप्रा वहुधा वदन्ति। रूपं रूप प्रतिरूपं बभूव। आत्माका इच्छाशक्तिबाट आकाश प्रकट भयो, आकाशबाट वायु प्रकट भयो, वायुवाट जल प्रकट भयो, जलबाट पृथ्वी प्रकट भयो पृथ्वीवाट अन्न उब्जयो, अन्नबाट चेतनशील चोला जन्म्यो। चराचर जगतको मूल आत्मा नै हो। आत्मालाइ कसैले इस्वर भन्छन्, कसैले परमेश्वर भन्छन, कसैले ब्रह्म भन्छन, कसैले परब्रह्म भन्छन कसैले शिव भन्छन्, कसैले सदाशिव भन्छन्। वस्तु तत्त्व यौटै हो। भेददृष्टि अज्ञान हो।

यो विवेक र विचार सुखी संसारमा र शान्ति–सुरक्षा–युक्त देशमामात्र हुन सक्तछ। अशान्तस्य कुतः सुखम्? शान्ति छैन भने सुख कता? सुख छैन भने आत्मविचार र अध्यात्मचिन्तन कसरी? अध्यात्मविद्या विना शाश्वत पदमा पुग्ने कसरी? पुनरपि जनन पुनरपि मरणम्!

तसर्थ विश्वमा शान्ति सुरक्षा हुनु वाञ्छनीय छ। विश्वशान्तिका लागि देशमा शान्ति आवश्यक छ। देशशान्तिका लागि घर परिवारमा शान्ति अनिवार्य छ। भोक, शोक, क्रोक र रोगले घेरियेका घरमा शान्ति–सुरक्षा र सुख वसोवास पाउँदैनन्। बुभुक्षितं न प्रति भाति किञ्चित्। रिसमा कसैले वेद पढदैन। रोगका राहुले खग्रास पारेको वेला समाधि लाग्दैन। आत्मज्योतिको दर्शन पाइदैन। आत्मदर्शनविना संसारचक्रको थकाइ मेटिदैन। सत् चित्

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आनन्दको अमृत भेटिदैन ।

यो उज्यालो हिमाली हिन्दुराष्ट्र हाम्रो घर हो । हिमालको धुरी छ । तराइको जग छ । चौद आँठा छन् । पचहत्तर कोठा छन् । सवाकोटि परिवार घर भित्र छन् । सवाकोटि परिवार छिमेकमा छन् । घरकाले बाहिरकालाइ बिर्सनु हुदैन । बाहिरकाले घरकालाइ बिर्सनु हुन्न । सांस्कृतिक, धार्मिक र राष्ट्रिय एकतासूत्रमा गाथि भयेर मोतीको माला हिमाली हृदयमा झल्काइ राखनु पर्छ । यत्ति हो यसको उद्देश्य ।

—लेखक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उहिँ दिनको झल्का

लेο– चिरञ्जिवी शर्मा

बस्ती पर्‍यो दियालो बंगला
नेपाली लाई पारेउनि कंगाल धू ॥

स्वर्गीय श्री ५ महेन्द्रको छूटचो आज देह
जगँ देखी राम्रो बनोस भन्ने थीयो धेय
यो विषय दियालोमा प्राण त्यागी दिए
तेस्र दिनमा नेपाली सब टुहुरा भैं थीए १ ॥

आज माघ १७ गते पौने चारको रात
देहान्त भो प्रभू तिम्रो कस्ले दियो साथ
तेसैं दिन १२ बजे छुटचो एउटा हांसो
विरेन्द्रको काधमा आयो नेपालीको नासो २ ॥

कोई कुरामा हांसो हुन्छ कोई कुरामा रुनू
एत्ती नं छ संसारमा सोज्याउन लाई दुन
हेरी ल्याउदा के रै छर एउटै यज्ञ साला
कस्ले रोक्ने रेछ ईश्वरको भाला ३ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चार वजे उडी गो लास
दुनियांमा गो होस हवास

नारांघाट र भरतपुरका सवैं नर नारी
लास लिएको जाहाज लाई हेर्थें आँखा वारी
त्यस दिन्लाई अध्यारो भो यो संन्सार जगत
केही थीएन मुखमा सबका राम नाम फगत ४ ॥

गौचरनमा लास पुग्यो हेर वारी पारी
हेर्न लागे गह भरी आसू झारी झारी ॥
रुन्चे बाजा वजन लागे घुक्क घुक्क गरी
लास वोके गौचरमा जप्तं हरि हरि ५ ॥

फुल माला अविरले छोपेको
विरहले सव्को मन खोपेको

त्यता वाट विधी अन्सार लास रहयो खटमा
ज्ञानेन्द्र र धीरेन्द्रले कांधमा राखे सतमा ॥
सहयोगीहरू गरि दिने थीए साथ
लास वोकी हिंडका छन् परिरेथ्यो रात ६ ॥

चारैं तर्फ मुल बाटो छेकि नरनारी
रुदैं रुदैं वडेका छन पाइलो सारी सारी
लावा अविर पैंसाहरू छरे बार बार
हा हा दैव हाम्लाई पारीस हरे यो धिक्कार ७ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तिम्रो किर्ती अमर रहोस हरे राष्ट्र भरमा
सबै विघ्न बाधा हटोस हाम्रो नेपाल घर्मा
बैंकूंठको अधी पति हुन पाए मालीक
भन्दै फोटो ग्राफहरु खिच्न लागे सालीक ॥

सिना मङ्गल गौचरन हुदै वाने स्वरमा
आँखा तानी तानी हेर्छन हेर रातको भोरमा ॥
बत्तीस पुतलीको वाटो वाजा गाजा सहीत
लडदै वडदै हेर्न लागे वे उमेरका रहीत ८ ॥

सांडे आठमा आर्जेवाद पुन्याई दिएलास
गंगाजीमा फुलमाला वगाइं दिने आस ॥
सुचक गरी स्नान गराई लाए टिका टाला
चीता माथी सयन गराई यो अग्नीको ज्वाला ९ ॥

राम हरे हरे राम
यो जिन्दगी जांदो छ वेकाम

यस्तो लिला देखी देखी गर्छन शान र सेखी
प्राणीहरू अर्क्षै बढछन हरेक वाटो छेकि ॥
सम्वेदना यहि नै छ मौसुफ परिवारमा
ईस्वरको लिला यो छ विश्व सन्सारमा १० ॥

माया मोह संसारमा त्यागन पऱ्यो गारो
फाडन गारो परिरहेछ आत्मीए तगारो ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ई मनिता मरि गए दुख सुख छाडी
मौसुफको कांध मार्न्हो विषयको झाडी ११ ॥

धन्य धन्य विर विरेन्द्र राष्टिय परिबार
चीरायूको कामना छ गर्छ सन्सार
पुर्व मेची पच्चीमको हेर माया काली
देसको सेवा निस्चयँ गर्छ विर नेपाली १२ ॥

राष्ट्रिए महान स्वक परि देशमा आज
नबुज्दीए आपत पर्‍यो दिन्मै पर्‍यो सांझ
जो जे पर्छ आपत विपत
विर नेपाली छुटाउ छ यो हत

दुखले सुख ल्याउनु छ भने गर्नु छ विचार
कमसे कम हुदै जान्छ देशको सुधार
रुदै मानै यो जिन्दगी वितनी होइन कोही
पर्ने कुरो टर्नै होइन राता दिन रोही १३ ॥

विस्व हाम्रो सहारा छन सत्यताको निम्ती
छोड्नु पर्‍यो कोठे निति गर्नु पर्‍यो खीम्ती
उर्चानिच माफ पाउ श्रोता वर्ग महा
भन्ने मेरो प्रार्थनाछ हेर जाहा ताँहा १४ ॥

राजाधानी नेपाल हो घर छ भक्तपुरमा
साधनको कमिनै छु लेख्छु आफ्नै भरमा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नाम मेरो चीरञ्जीवी थर मेरो शर्मा
बेलै देखी गाउँदै आए यैनै रे छ कर्म १५ ॥

जां गएनी शंगै जांन्छ विषयको पिर
पिर वोकोर के रे छर जानै छ यो आखीर
तर भन्छु गर्न मलाई सारै गारो नै छ
यो समस्या समस्या मै बिचार जाहा तै छ १६ ॥

ढोङ्गी नेता वनौ भन्ने पनि ईच्छा होईन
सुखमानि हाँसीन म दुख पर्दा रोइन ॥
के गर्नु दुखी विचार कर्म भयो सानु
कँले रुन्छु मेरो लागी उदावनत् भानु १७ ॥

सन्तान नव्वे साल देखी यो राष्ट्रको विचार
गर्छु भन्दा धोका पाए के गरेरे सुधार
सहयोगी साथी धरै पुगे माथी माथी
कोइले पनि मलाई चांही भने नन हैं जाती १८ ॥

निशुक्लमा सके सम्म सेवा गर्दा देशको
आफु जस्तै देखे सबले बनाई दिए छेस्को ॥
लडीबडी वामै शर्दै आज सम्म बाँचे
मेरो भन्नु केहि नै छैन जिवन यौटा सांचे १९ ॥

धर्मका औतार विर विरेन्द्र राजा
पांयौ आज हामी सवले हेर हाम्रा साजा ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गाउने छ नेपालले तिम्रो गुण किर्ती
फैलीनेछ सन्सारमा तिम्रो मायां प्रिती २० ॥

यो दुखको दुखेश्वमा गर्नु पर्ने केइछ
दिस्व शान्ति नारा हाम्रां कल्पना नै यैछ ॥
पुरख्यौलीको विजय र शान्ति वादी हामी
ई सन्तती जिई रँछन गर्न केई उन्नती २१ ॥

जाडो घाम तुसारोमा यज्ञादिको तपस
यो विषव ज्ञानेन्द्र र वीरेन्द्रमा सकस ॥
गर्नु पर्नें दश क्रिया यो पचली घाटमा
गर्न थाली बक्सेको छ ब्रह्मादी छन साथमा २२ ॥

पुत्रस्य परमो धर्म पित्रुद्धार समोनहि
वटूवा वाटामा हिडछन कर्म गर्न जांहा तहि ॥
यो दुख सुखको भोग सम्जेमा छुटि जानेछ
यो हो धर्म यो अधर्म यो सवै टुटि जानेछ २३ ॥

मृत्युको संम्फना राखी नेपाली दुखमा रहे
पाँच दिन सम्मको दुख खाइं नखाई नै सहे ॥
अमर किर्ती फैलाएर छोड न्याछन वीर जातीले
धर्मको वाटो लिने छन ई प्रेमी प्रेमी साथीले २४ ॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दोलाद्री दर्शन

दोलाद्रि पर्वतको इतिहासमा लेख्छु
मेरो बिचारमा भने मूख्य यो ठाउँ देख्छु
किनभने धर्मदेव र मानदेवको कीर्ति
हे नेपाली सबै मिली लाउन माया प्रिति ।

(१)

तीनसय छयासीको सम्बतसर थियो
मानदेवको दिग्विजय यो कीर्ति उभियो
भक्तपुर उत्तरपट्टी गयो ठाडो वाटो
गर्छन दर्शन इश्वरको नवनेर लाटो

(२)

उत्तरपट्टी कोस आधामा चौर नारनटारको
यात्रुहरू आउने जाने हेर्न संसारको
यो ठाउँ ठाउँमा राम्रो छ कल्पधारा
पानी खान त्यस गाउँमा आधार

(३)

तेताबाट उत्तरपट्टी भैरब यौ अजिमा
तेसं वीचमा पुवपट्टी साङदहको सिमा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो फेदीमा पाठशाला वर पिपलको गांज
त्यस गाउँमा आजकल भन्छन सत्य धर्म काँ छ
कली आयो कालो मुख लाएर, सत असत कल्ले के भ्यायो र

(४)

अव साङ्‌दहबाट जादा ठाडो वाटो
ढूङ्गा मात्रको सिडी छ छवकँ पर्छ लाटो
गयो वीचवाटोमा पर्छ तेर्सो नारन ढूङ्गो
के रैछर भन्छु मत जीवनको टुङ्गो।

(५)

त्यहाँ माथि मानदेवले थापे ढुङ्गेधारो
मलाई लाग्छ त्यो ठाउँ चाहि जोन्दगिलाई प्यारो
त्यहाँ माथि कुस्ले टोलछ फर्को पुर्व सिडी
यो ठाउँमा दिनमा बस्छन घरमा बुढा बुढी
डाडो छाडी फर्कःछौं व्याँसी, छुटला कहिले गलाको यो फांसी

(६)

उत्तर पुंर्व सिडी हुँदै पश्चिम ढोका भित्र
चारै तीर धमशाला लेखन लागे चित्र
त्यहा भएका डोला गिरी चम्पक नारायण
वजाई रहेको त्यो हातमा त्यो वासुरी वीणाछ
धन्य रैछ हे इश्वर भगवान, तिमीले दिनु पर्ला है बरदान

(७)

नचिनेर भुलें मता परें अन्धकारमा
किर्तो प्रति सिमा एकै जान्न संसारमा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो नदेखि जीवन वित्यो हरे कठैं वर
भन्दै हिडछन अझैं पनि यो सपनी घर
कुनदिन गर्छ कालले यो शिकार, जीवन यसैं वित्ने भो धिकार

(८)

नेपालको उपत्यका काठमाण्डौ देखि
पुर्वपट्टी दोलाद्रीको दिन्छु चित्र लेखी
सुम्व र निसुम्भ थिए थिए मैषाशुर
दुर्गाले दानवलाई पारीन चुर चुर

(९)

चण्ड मुण्ड खण्डा पारी चण्डेश्वरी माई
दोलाद्रीमा दोला खेल्न वसिन यहा आई
संग्रामको थकाई मारी पसिना चुहाई
एकता शक्तिले दिन्छिन देवता फुकाई

(१०)

गरूडमा चढी आए वर्शन गर्नलाई
बिष्णु पनि देबदल सगमा लगाई
किलेश्वर शिव पनि धर्म किलो ठोकी
आसन वाधेर वसे अधर्मलाई रोकी

(११)

भ. पु. ल. पु. का. पु. कि. पु. पोखरीको पेट
चोभार चिरिएपछी पशुपति भेट
एउटै शिलाजग राखी देवल वनाए
देवताले देबी वस्ने यो थल जनाए

(१२)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

किराती येलम्बहरू दर्शन गर्न आए
दिग्बिजयी मानदेव खम्बा रोटन आए
शिवदेव अंशुवर्मा राजा मन्त्री मिली
नारायण गुठी राखे पारे झिलि मिलि

(१३)

पनौतीका जय सिंह जिर्णोद्धार गर्ने
भक्तपुरका जयस्थिति थिति रितो गर्ने
काठमाण्डूका जयार्जुन जयाकार गर्ने
भक्तपुरकी गङ्गा रानी तीन कुने भर्ने

(१४)

चांगु माइतीघर भनि रिद्धिलक्ष्मी रानी
कोटीहोम हस्तिदान गर्ने धर्म ठानी
भूपालेन्द्र मल्लराजा भुव नारीलक्ष्मी
सुनौला सालिक बनि भज्छन विष्णु लक्ष्मी

(१५)

गीर्वाण युद्धले राखे महा स्नान गुठी
मन्दिरले घुम्छन तारा आकासमा उठी
मातृभक्त पितृभक्त देशभक्त कती
इशभक्त देशभक्त गए मुक्तीगती

(१६)

पारीजात सरस्वती आदि दिव्य मुर्ति
यक्षमल्ल आदि गर्छन मान कीर्ति पुर्ति

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अमात्यकुलले पनि अजिमा जगाए
धर्मशाला पाटीपौवा भक्तले लगाए

(१७)

चारसय सत्तरी ने. सं. मार्ग शूंदि दश
असुरको दल पस्यो चाँगु ठस मस
मुर्ति भए छिन्नामस्त धरासायी धाम
भाचि कुचिए सबै पूर्व किर्ती खाम

(१८)

जयार्जुन जयस्थिति जयसिंह राम
जनसहयोग हुदा पुनरभिराम
दायाँमिर सङ्खुपुर बायाँ भक्तपुर
ललितपुर कान्तिपुर छैन अति दूर

(१९)

दायाँतिर मणीमति हनुमती बायाँ
सर्वतिर समानैछ नारायणी छायाँ
इशानमा मणिचुर नगरकोट पूर्व
महादेव पोखरीको छवि छ अपूर्व

(२०)

शिवराम सान्तिधाम छालिङ्गको छवि
यो चाँगुको चर्चा गर्ने चिरञ्जिवी कवी
चम्बककानन थियो मासियो अचेल
कौखेल छ दायाँतीर बायाँ ब्रह्मखेल

(२१)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वरिपरि ढुङ्गे धारा साङ्गदहको शोभा
पश्चिम फर्की हेर्दाखिरी यात्रिमन लोभा
दुर्गाजय झल्काउने दोलाद्रिको दोला
तिनै शहर हेर्न भए चाँगु पाल्नु होला

(२२)

मणिप्रभा युवित कुलबालुका
उदयन्चयस्च मणोचूर निर्गता
मनोहरानाम नदि मनोहरा
उदन्चयश्यै मणिचुर निर्गता

(२३)

मुख्यदेवलोक पूर्व सार्दुल दुयि
पश्चिमपट्टि दुइटा मुर्ति सिंह घुन्छन भुइँ
दक्षिणपट्टि हात्ति दुइटा उत्तरपट्टि घोडा
चारै दिशा चार किसीमको कति राम्रो जोडा

(२४)

माथि सिरमा सुनको छ छानु, देख्दा लाग्थ वैकुण्ठ यो मानौं
बान्हहात भएको यो दक्षिण विश्व रूप
मेला भर्न जाने हर्ले बिचार राख्नु खुप
छिन्नमस्ता अगाडिको कतीराम्रो हात्ति
पश्चिमपट्टि किलेश्वर महादेव छन साथी
पश्चिमपट्टि वैकुण्ठपाटी, लेख्छुकुरा भएको नढाँटी

(२४)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नृसिंहको पश्चिमढोका पसे पछी थान
गर्छन साधु सन्त पुजा मर्यादा र मान
दक्षिणपट्टि एउटा मुर्ति लक्ष्मी नारायण
श्री भूपालेश्वर पनि दिन्छन् हाम्लाई ज्ञान

[२६]

पूर्ब उत्तर गम्बीर वहादुरको हेर कीर्ति
उन्ले लाएका हुन हेर भगबानमा पीर्ति
यो पुर्बजहरु हेर्दों देख्दा आर्य धर्म
आजकल भरी लाग्छ किन यो मनमा मर्म

[२७]

धर्म गर्दों पुण्यको लागि, अन्यायत जांइजान्छ यो भागी
चम्पक नारायणलाई आजकल भन्छन नारान
अझै पनि किन किन सबै बुझ्दै कारण
कारणमा सबै यो छ सृष्टि संसार
भूलमापरि विर्सीदिबा पृथ्विलाई भार

[२८]

सबैलाई नदिउ हे साथी थपस, सबको लागि धर्म र तपस
पूर्वपट्टि पौवा भन्छन पश्चिम खवाल चाप
उत्तरतिर गुरूङ्ग भोटे वस्छन हेर खासा
दक्षिणपट्टि बुढाथोकी गाउँ नारनटार
आउने जाने यात्रिहरु चल्छन बारम्बार

[२९]

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

युग गुरु श्री योगी नरहरी नाथ
भाग्यवश आजकल पाईरहेछु साथ
म माथिनी कृपाभयो महागुरुज्यूको
वहाको नै सहारामा कलम चोप्ने निउ भो

(३०)

राम्रो खुलाई ईतिहास लेख्छु पछी बाट,
केही दिनपछी फेर गर्ने छु यस्को छरी छाँट
यती लेखन योगी 'नरहरी'ज्यूको कृपा
सार्ने विचार निकालेर मेटछु मनको तिर्खा

(३१)

यतिकैमा यो विषय लाइदिएँ टुङ्गो
धर्य गरेनी तरिएन जिन्दगीको डुङ्गो
देख्दा लाग्छ मलाइ लेखन यो कविता रहर
ज्याउला जस्तो लाग्थ्यो मन्मा भयो बेल्की पहर

(३२)

पाठकवर्गहरुले यो उचनिच माफ
गरिदिनुहोला भनी जोडछु हात
किनभने कलम चोप्ने बानी बस्यो मेरो
घेरै लेखन लाग्थ्यो मन बुध्दि छ अँध्यारो

(३३)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यो पुस्तक छाप्न सहयोग दिनु हुने संस्थान र व्यक्तिहरु–

१ राष्ट्रिय प्रज्ञा प्रतिष्ठानका उपकुलपति लैन सिंह वाङ्गदेल र प्रज्ञाप्रतिष्ठान परिवारले सअन्यबाट रु.—२००।–

२ कानुन प्राध्यापक श्री चण्डुधर उप्रेतीबाट रु.— २०।–

३ शिक्षा मन्त्रालय मुल्यांकन साखाका सहसचिव डिल्लीराज उप्रतीबाट रु. २०।–

४ त्रि. बी. का भूतपूर्व कुलपति त्रैलोक्य नाथ उप्रेती बाट रु. २०।–

५ माननिय पुष्करनाथ उप्रेती समेत चन्दादाता सब परिवारमा सहृश्र हार्दिक शुभेच्छाहरु टक्र्याउदछु ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भीरनरोग

रोगी मं बाँचनैपर्ने निरोगी छैन कोही पनि
संसार मं देखीन मंले ज्ञानी योगी महाँ मुनी
किन रोगी भयो जिव माया र ममता लिंयि
गर्नै केही नसकिने भंगो घोटाले प्राणसम्म दिई

(१)

के गर्नु भूलमा व्यर्थं लागीयो जिन्दगी वित्यो
गुण लिने यादनराखी गुण सदा मान्दछन् तितो
गुणमा रसराख्नो छ यादले घोरीनु पर्‍यो
फकमा याद आउनेछ त्यो कहाँ छ छट्टु चरो

(२)

सबांको झरीन रोगीमं बाँचो यो देहयो सदां
भोलीको ख्याल नराखि निर्धक्क बस्छ यो यता
दशौं छन् देहमा चोर अनौठा रूप लिकन
आत्मिये वत्ति बालेमा खोजे पाउँदछौ जन

(३)

तिम्रो यो चेतनसिल देहु अचेत कँ भुल्नु किन ?

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आज भोली पर्सी भन्दै फिरी रहिछन् नविनदिन
आत्माको कल्पना रोग छुट्ने होइन जन्मभरी
ममतामा लगाई दिल विर्सी रहिछु अज्र्जे हरी

(४)

सामदाम दण्ड भेद यि चार चिरसाथमा भए
जीव यो परआत्मामा आउने छ यो सधैं दए
आज यो प्राणीमा रक्षा गर्नामा किन निठुरी
रक्षामा भन्छे ज्यादै छ आइरहेछ बडो हुरी

(५)

यो को हो ?

हाटखुल्यो आज मेरो शक्ति शाली बजारमा
वेमानी यो मनी सम्झीउन गिन्ती छैन हजारमा
सानमान सहीत आज ममताको होड बाजीमा
लागेर खाली हिन्नाले ममताको खुसी राजीमा

[६]

प्राणीमा भूल्यो सारा संसारै अन्धकारमा
छ छैन खाली नसम्झी जीवनगो यो वेकारमा
सारा यो सनको डोरी नछुटोस जीन्दगी भरी
चेतन्शिल जीब पाएर सम्झि रहन्छत् आज फेरी

[७]

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पापयो पुण्यका साथ धर्मकर्म सधा गर्रौ
न्याय यो आत्माले सब्को अन्याये केही नगरौं
माया मोह जति हरे छल कपट केही छैन संसारमा
माया कै बसमा सधाँ भुलो रहें उम्केर जाउँ कहाँ

[८]

यो को हो कतावाट धरती बीचमा आएरनै के गर्‍यो
आखिरमा सपनाकैं भै गयो भाग्यो की यो जीव र यो
जीव धारी जती छन् धरती बीचमा बृक्षादीको यो कुरा
अज्ञान मै किन विती गैगयौ केही नजानी पुरा

[९]

हारलूटको भयो आज न्याय छैइन के भयो
येस्लाई बाँधराखेर थुन्न सक्ने भयो र को
वेत्रस्ता पञ्चको आज पञ्च तत्तो सरी रयो
वर्गले मर्म राखेमा दु:ख पाउने हुन्छ को ?

(१०)

सच्चाई र इमान दारा देखाउनु पर्छ देशमा
लाउनु र खानकै खोजमा बर्ग काहाँ कहाँ
नमुना केही देखाई पथ एउटा बनाई दिए
अन्याये टाडा पुर्‍याई न्याय सबले मेटाउँ द्ये

(११)

यो खाली पापको खेल किन गर्नु वेकारमा
यो देह आइ जाई जान्छ इश्वरको शिकारमा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नाजान्ने होईनन् कोही ज्ञान पापी भयो सब
आखीरी बिर्सने भए बीर पुर्खाको हेरतप
(१२)

लाऊँदथे प्राणको बाजी अन्यायलाई भगाउन
कसीनु यो सर्व पर्छ देशको नासो जोगाउन
जहाँ जो पर्छ आपत भोग्नु पर्छ मिले रयो
साँच्चो र सत्यका निम्तो मर्न डर्ने यो हुन्छ को ?
(१३)

भानु, बुध्द, जनक, सीता पायो यो हाम्रो देशले
पृथ्वी, त्रिभुन, देवकोटा लेख निस्कन्थे जोसले
गंगा धर्म शुक्रराज थिए फेर दशरथ चन
भिम बीर बलभद्र महेन्द्र सुधारी बडढ थे मन
(१४)

यात्री हुं

उठहे यात्री हो कति सुतिरहन्छौ ढाक्यो अन्धकारले
मात्री भूमीको सेवा गरौ अब यात्रीहरूको सहाराले
युगहो यो मानवको असत्य दान नवने साथी
यात्रा हेर्न र मेला भर्न आएका हुं खुसीले माथी
(१)

आजयो किन हो मर्नास बिक्छन् बोकाखसी बनेर

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ई दुष्टलाई कस्ले के हो सत्ये भने र
जप्छन् मालाहातमाली खोलाको माँझी बनेर
पुकार यहिछ माछो परोस् मेरैजालमा भनेर

(२)

यो भ्रष्ट नष्ट गर्नु किन हो आत्मा सबैको एक हो
म र महुँ भनी सेखी गरी सब देश बिगारने टेक हो
सारा यि पथ र पथीकहरुमा यो माया र ममता बड्यो
अन्यायकै मूल फूटाई सत्तेताको बीज सड्यो

(३)

किन गर्नु हो पक्ष र पात बेर्थै लालच लोभ म बडी
समाजको रिती फैलाए एक दिन डुबी जाने हो घडी
सान र मान राखौं सबमा साँचो र सत्ये गरौं हित
नैतिकताको ख्यास गरेमा मानौताको बनौ मित

(४)

मिलीजुली सबको एक गराउन नैतिक्ताको पाठ सिक
न्याय गर्न र अन्याय फांडन बिचार सबैको एक सिक
जाग जाग हे वीर सपुत मानवताको गरौ जए
जए गर्दामा हामी कसैमा आउने छैन केही भए

(५)

उठहे यात्री हो कति सुतीरहन्छौ ढाक्यो अन्धकारले
मातृभूमी सेवा गरौं अब यात्रीहरूको सहाराले
यो युग हो मानवको असत्य दान नबनौ साथी
आस्था गर्न र मेला भर्न आएका हुं खुसीले माथी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अध्यात्म-दीपक

रिद्दी सिद्दी मलाई देउ गूरू गँणेस दाता
भाव भक्ती राम्रो पुगोस हे पृथ्वी माता ।
पसुपति गुहेस्वर शदा दाइना रहुन्
टाडा वाट आउने बैरी ई निर्मूलै हउन् ॥ (१)

दखीन काली फुल चोकि माई नमस्कार छ दिन दिन सबैं लाई ।
इ मन कामना माई र गोरखा कि कालि
भाव भक्ती नछुटाउ विर ई —नेपाली
संकटा छ काठमाडौं उँहि छ महाँङकाल
भद्र काली अन्न पुर्ण उहि छ यो नेपाल ॥ (२)

हनूमान ढोका हनूमान देउता गित गाउन मन लाग्यो यो एउटा
यो साँखुमा माईको थान चाँगु भक्तपुरमा
वौध पऱ्यो काठमान्डूमा तपस आफ्न सुर्मा ।
वौध मन्दीर वर पर लामा हरूको गुम्वा
ज्यादै वन्छन त्यस ठाउमा गलैचा र थुम्वा ॥ (३)

वौध मन्दीर यो कति राम्रो मन मिलेन किन हो यो हाम्रो
इश्वरले आसिक दिने गर यो संम्जेर पुण्ये
के रे छर जाने सरिर छ —सुन्थे ।
संम्जी आज पाखन्ड ना गर्नू हुन्न हेर
हुन्न फाल्नू यो अमूल्त जिवन लाई खेर ॥ (४)

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

किन आर्यौ के गरेर जानु पर्ने कहाँ
व्यर्थको यो माया मोह यो जिन्दगी महाँ
सृष्टि यं छ ईश्वरको विश्व चराचरमा
जानी जानी किन पार्छन मानिसलाई मर्म ॥५॥
नजानेको हुँन होला भए ज्ञान पापी
धोका दिए अधर्मले किन अत्व थाप्ने
साँढे जुधे बाच्छा मरे आखिरमा गौ का
जस्ले पनि खोजन जान्यो अन्यायको मौका ॥६॥
देव देवी जन सेवि पेला चरण मेरो
रक्षा गरे हाम्रो सबको नपारे है घेर
हामी गर्छौं मिलि जिलु आमा तिम्रो तप
गर्छौं हेर सदा दिन यो सेवा र जप ॥७॥
पुजा आजा धर्म र कर्म मानिसमा नपरोस हैं मर्म
सदा दिन ईश्वरमा लागोस भाव भक्ति
धन्यरेछ ईस्वरको हेर माहान सक्ती
तिम्ले दियौ जन्म पनि तिमले दियौ कर्म
तिम्रो भाव भक्ती गर्छू नमानेर शर्म ॥८॥
के रे छर जन्जालभारी को जान्छर आखीर काल टारि
नाङ्गै आयौ नाङ्गै जान्छौ केही छंन साथमा
जप्छौ शदा राम नाम के छ हाम्रो हातमा
यं हो एउटा भविष्यमा जाने हाम्रो बाटो
जप्नु पर्छ राम नाम नभएर लाटो ॥९॥
राम नाम जपेर जाउपारी सम्जे यो गिव लौ माया नमारी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बिषयको नाता

विषयेका नातेदार हेर कुटूम्बमा
हिडनू पर्नेरेछ हेर यो राखेर सिमा
नचिनेर विषयेलाई धेरै धोका पार्यौं ॥
थीचोएर मिचिएर ठक्कर धेरै खाँयौं ॥
के रेछर संसारमा मेरो नबुझेर सँधैको अँध्यारो
ज्ञानि र योगी जोगी रिषी मुनु समेत
भुलि रंछन यो भवमा बुझी बुझी फगत
जाने देखि यो विषये धेरै छैन टाढा
विर्सनलाई गान्हो पर्‍यो माया बस्यो गाडा ॥
वल्ल पाको चैतन्य चोला भविष्यमा भेट होला नहोला
ख्याल राखौं भविष्यको मरौं जप ध्यान
मानव हुँ भन्ने पनि ठान्नू पर्‍यो ज्ञान ।
अज्ञानले ढाकि दिदाँ सबै अन्धकार
छ छैन न सम्झेर वसछौं बार बार ॥
देखे पछि यो मायालाई जाने जिन्दगी यो आएर जाइ जाने
केरेछ सम्झी ल्याउँदा कर्कलाको पानि
ढल्के पछि पोख्खी जान्छ बुद्धि जिवी ज्ञानि ।
यो भुलमा पर्दै गर्छन हेर पाप कपट
जिन्दगी यो होइन केही दुई दिनको झलक ॥
सपना अडछ केहि छिन वरू, यो जिन्दगी आउँदैन के गरू
यस्तो नातादारमा आयौ हेर सनिसार्मा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भजय कितन गर्न छोडे परे अन्ध कारमा
विना वत्ति यो कोठामा नभे यो उज्यालो
आत्मीय वत्तो वाल्न खोजौ यो दियालो ।।
झलमल उज्यालो सर अन्धकार हटाउन रहर
चैतन्य जीव धारी मानिसको चोला
फेरि पनि जन्म लिन पर्छ कोला कोला ।
किन भने के रोप्यौ र हाम्ले पृथ्वीमा
के राख्यौ र पृथ्वीमा मानिस भै सिमा ।।
मानिस भयौ भनेर फुर्कैर खाई नखाई गो जीबन हुर्कैर
कति खाएं मैले आज जन्मीकन धोका
मानव बन्ने कार्य गरौं होइनौ खसी बोका ।
यो चैतन्य चोला पायौं भगवानको भेष
यो भेषलाई नचीनेर त्यसै फुले केश ।।
यो पाएको जिन्दगी हाम्रो नचीरे त्यसै गो नरास्रा
बुझेपछि गारो छैन दान व्रत–धर्म
यज्ञ गरोस कोई पुरुले सुधार्नलाई कर्म ।
कोहि पुरुष गछन हेर हरेक जप ध्यान
कोहि गर्छन देवस्थलमा यो अखण्डै ज्ञान ।।
काम गर्न नपर्ने गारो खोलन पऱ्यो सत्यको तगारो
न्याय गरौ जप गरौ धर्म गरौ पूजा
चढाउनु छ धुप बत्ती चन्द्र सूर्जे ध्वजा
केही गरे नि धुनू पर्छ यो मनको मैलो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पर्छ गर्नु राम्रो कार्य खेल्नु हुन्न भैलो
वल्ल वल्ल पाएको चोला फेरी पछि भेट होला नहोला

देस्को नासो

वीर महेन्द्र छाडेर गयौ जिन्दगीलाई आसाको कुट्टुरो
पञ्चायतको चुनाव भने हुन्छ बारम्बार
कोहि जित्छन ववंको भने हुन्छ हेर हार
हार हुनेले क्रोध लिंदं व्यवस्थालाई घात
हुन गयो देशमहा यसले पक्षपात
सामन्त र शोषण हर्नलाई यसको लक्ष सुधार गर्नलाई
नासो कुर्ने व्यक्तिहरुले स्वार्थ ज्यादै लिंदा ।
व्यवस्थालाई बुझि बुझि धोका देशलाई दिंदा ॥
अराजकता अन्याय र भ्रष्टाचार छ देशमा ।
पञ्चहरूले फसिएर विचार गर्नु यस्मा ॥
विचार गरी सबकुरा यसको आँसु पुछ्नु पर्नेछ देशको
रुदा रुदै आज जनता फसिरंछ देशमा
व्यबस्था यो अमुल्य छ बिचार गर्नु यस्मा
सुध्द कार्य के के छैन, गरौ छान बिन
पदको लोभले धोका देशमा दिन खोज्नु किन ? ॥
पाप गरे जानु छ नरक, पुण्य हुने काम गरौं फरक
न्याय राख धर्म राख सदाचार राख ।
व्यवस्थाको मुल उद्देश्य बुझि सबले चाख ॥
हेर आज देशमा न्याय यो नपाउने को छ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

काम गर्दैन कुरा काटछ महाँ पञ्च जो छ ॥
पञ्च तत्व शरिर हो हाम्रो काम, गर्नु छ नभुलियो राम्रो
वडा पञ्च गाउँ पञ्च, नगर पञ्च जिल्ला ।
अञ्चल पञ्च राष्ट्र पञ्च नगरे है झिल्ला
जहाँ जन्मे पञ्च सर्वं उहि गर्वको बास ।
यि सर्वको हुनुपऱ्यो देश बनाउने त्रास ॥
समाजमा मन मिलाई गरे काम, चाहिंदैन है वर्त र तिर्थधाम
किन भने याद गरौ धनि गरीब वर्ग ।
बाच्न आयौं यो भूमिमा ठानी सर्वं स्वर्ग ॥
वर्ग वर्ग नचिनेरगर्छन पक्षपात ।
हुंदा न्याय क्यैमा छैन, पारीरैछन् रात ॥
राम नाम जपेर जाउँ यो जीन्दगि के गरी बिताउँ ।
गर्नु पऱ्यो देशमहा सबकुराको ख्याल ।
कर्तव्यमा बन्द गर्नु पर्छ ढोका झ्याल ॥
उघारै राख्ता पसे धेरै घरमा चोर ।
नेपालीले नेपाल सम्झे कस्को पेवा हो र ॥
यो देश होइन व्यक्तिको पेवा, गर्न सके फल्ने छ यो मेवा
यो अघिका अधोटेले देशलाई छोडे नासो ।
नासो कुर्न यो देशलाई पऱ्यो गलापासो ॥
न्याय निति व्यवस्थालाइ सर्वं बुझदा मर्म ।
गारो पर्छ मानवलाई सुधार्नलाई कर्म ॥
कर्म गर कार्यको निम्ति, अन्याय गर्ने छाड्नु छ यो जुक्ति
प्यारो लाग्छ आत्मा भन्दा पनि मलाइ स्वदेश ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्वदेश स्वदेश भन्दा भन्दै फुलिसक्यो यो केश ॥
जया भन्ने शव्द यो हो बिजया हो नाउ ।
नेपाल हाम्रो पुण्य भूमि टुक्रे टुक्रे गाउँ ॥
गाइनेले गाइरयो गीत गीत सुन्ने हुन मेरा यो मीत

आत्माले त्याग

महाकालीबाट पुर्व पऱ्यो मेची नदि ।
दुख सुख नेपालीमा नहुदो हो यदि ॥
भनेदेखि स्वार्थ सम्झि अवसरबादीकाम ।
गर्नु हुन्न भन्ने पक्ष लाग्नु छ तमाम ॥
कल कल कलकले खोला बोल वोल बोल्दैमा के होला ।
बोले पनि चाहिने मात्रै गरौं कुराकानी ।
हुनुहुन्न मानवले बुझ्रि वेजमानी ॥
इमानीको कट्टर हुनु पर्छ आखिरीमा ।
साचो गरी काम काज राखौं गाउको सिमा ॥
नगरौन मनमा पीर, जन्मेपछि मरीन्छ आखिर ।
भन्ने किन नसम्झेर गर्नु धोका बाजी ॥
मुख हांकेर क्यै टर्दैन कामको बनौ काजो ॥
त्याग्नु पर्छ भईपरी आउने व्यवहार ।
कर्तव्यलाईं राम्रो चिन्नु मानिसको सार ॥
मनको राको दनदनी वल्दछ, यसै सम्झन्छु हृदय जल्दछ ।
देशको लागी मनुं मेटनु गर्न सपस त्याग ।
गर्नु हुन्न वबैनै संग यो रिस र राग ॥
रिसले गर्दा भविष्यमा दिन्छ आफुलाई धोका ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आखिर जीवन एकदिन मर्छ के चिज धनको पोका ॥
के गऱ्यो र आखिर यो धनले नढाकोस यो वैजतिपनले
सबको मनमा हुनु पऱ्यो साँचो सत्य कर्म ।
भोका नाङ्गा गरीवको बुझ्नु पऱ्यो मर्म ॥
यदि गर्दा साम दान दण्ड भेद आदि ।
बुझ्ने शक्ति सबमा भए हुन्छ यो यज्ञादि ॥
खुल्नु पऱ्यो यो आत्म ज्ञान, राख्नु पऱ्यो सबैमा यो ध्यान
जप तप तिर्थ वर्त गरौं पुजा आजा ।
देवस्थलमा बज्छन हेर शंख घण्ट बाजा ॥
इश्वर पनि खुसि हुन्छन हेर सुगन्धमा ।
कवि हेर्ले कलम चोप्छन आफ्नो यो छन्दमा ॥
जे नै गर्छौं आत्माले त्याग, मेटिदैन लेखेको यो माग

अब नरोउ

अब नरोउ आखिरी जानु छ, सम्झौं सत्य उदाउने भनु छ
देखेका छौं आजकल हाम्ले वस्त्र अलंकार ।
यसैले पो दुख दियौ सारा संसार ॥
खान मिठो लाउन राम्रो माग्छ लोकचार ।
यस्ले गर्दा देशलाई खवाई सक्यो हार ॥
आफ्नो देशको ब्यवस्था छोडेर, विदेशिको यो घुम्टो ओडेर
लाउनु पर्ने नाइलन सारी, चोलो, बेलबटम ।
पुरुषलाई चहिने भयो लुगा टेरिकटन ॥
यता भने लाउन खान बिदेशको चलन ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

घर बनाउंछन् सबैं मुण्डा घाउलाई छैन मलम ॥
सुखले यो उग्ररूप लियो, दुख गरी काम कस्ले गर्दियो
सबलाई चाहियो मोज मज्जा फेशन राम्रो राम्रो
यसैले पो जिन्दगि त बित्ने हो कि हाम्रो ॥
उद्योग धन्दा देशमा आज छैन कुना काप्चा ।
टाउन मात्रै यो सुधार कस्लाई के पो नाप्छ ॥
राष्ट्रभरी गर्नु छ बिकास मात्रै आफ्नो नखोजौं निकास ।
देशवासी मेरो अपिल सबै वर्गलाई ।
यो सब कुरा मनले सोची मिलम् भन्छु भाई ॥
भाई फुटे गवार लुटे भने जस्तै आज ।
नबुझनेलाई अर्कै पनि किन पारे सांझ ॥
यो मुर्खको औषधि छैन, खाली लुटको भरेछ यो चेन
धर्म जस्तोलाई आजकल ढाक्यो ममताले ।
सुध्द पञ्च देशमा आज नर्भ दिदा पाले ॥
किन भने गरौं बिचार लिदं सबले मनमा ।
लोभ नगर पञ्च दाजु यो अर्काको धनमा
पाप गर्नु यो के का निम्तिमा, सबैं मिलि लाग्नु छ खिम्तिमा
यी करोडौ नेपालीका भावी नर नारी ।
बचाउनु र बाच्न दिनु पर्छ पाइला सारी ॥
लम्क बीर चम्क तिमि हेर तारा कहीं ।
ममताले क्वैले भने देखन छोडे भइ ॥
देशको सेवा सब मिलि गर्नुछ, कि गर्नु छ कि भने मर्नु छ ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

❀ श्री हरिः ❀

मूर्ति-पूजा-निर्वचन-मीमांसा

ॐ
प्रधान अध्यक्ष श्री षट्दर्शन संत सभा
का कार्यालय "परमहंस सन्यास आश्रम"
ग्रा० जगता नगला पो० कजरौठ
जिला अलीगढ़ उ० प्र०

लेखकः—

श्री १०८ पूज्यपाद श्री स्वामी मंगलहरि जी मुनि

प्रकाशकः—

श्री स्वामी परमानंद जी महाराज (जरारा) अलीगढ़

प्रथम वार १८०० | सन् १९६२ | मूल्य १ रुपया

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विषय-सूची

क्र० स०	विषय	पृष्ठ संख्या
१	मूर्ति पूजा प्रथम निर्वचनम्	१
२	मूर्ति पूजा द्वितीय निर्वचनम्	६
३	मूर्ति पूजा तृतीय निर्वचनम्	८
४	मूर्ति पूजा चतुर्थ निर्वचनम्	११
५	विरोध की अनुमानगम्यता का प्रतिषेध	२८
६	आत्मा की व्यापकता में पूर्वपक्ष	७७
७	अणुवाद के निराकरण पूर्वक आत्मा की व्यापकता का समर्थन	८२
८	आत्मा की अणु रूपता का उपपादन	
९	प्रथम दोषोद्धार	९१
१०	द्वितीय दोषोद्धार	९२
११	तृतीय दोषोद्धार	९३
१२	ईश्वर मूर्ति अभाव में वेद प्रमाण का खण्डन	१००
१३	मन्दिरीय मूर्ति पूजा में शंका समाधान निरूपण	११४
१४	शंकान्तर का दृष्टान्त से समाधान	११६
१५	प्रार्थना	१२१

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

❀ श्री हरिः ❀

मूर्ति-पूजा-निर्वचन-मीमांसा

❀ ॐ ❀
प्रधान अध्यक्ष श्री षट्दर्शन संत सभा
का कार्यालय "परमहंस सन्यास आश्रम"
मु० जगती नगला पो० कजरौठ
जिला अलीगढ़ उ० प्र०

लेखकः—

श्री १०८ पूज्यपाद श्री स्वामी मंगलहरि जी मुनि

प्रकाशकः—

श्री स्वामी परमानंद जी महाराज (जरारा) अलीगढ़

प्रथम वार १००० } सन् १९६२ { मूल्य १ रुपया

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दो शब्द

पूज्यपाद श्री मंगल हरि जी महाराज ने "मूर्ति पूजा निर्वचन मीमांसा" नामक जिस ग्रंथ की अपने विरक्त जीवन में रचना की है। वह यह ग्रंथ रत्न श्री जगद्गुरु शंकराचार्य जी महाराज के शब्दों में अभूतपूर्व ग्रंथ है। क्योंकि विद्या सुधासिंधु का अनवरत अवगाहन करने वाले विद्वानों के लिये भी यह ग्रंथ समुद्र के उस रत्न की तरह से है, जिसे गोता खोर ने तह से हाथ में उठा लिया हो परन्तु जल से बाहर लाकर दृष्टि का विषय न बनाया हो। अतः आशा है कि इस ग्रंथ रत्न को दृष्टि का विषय बनाकर सदय सुहृद् विद्वान् भी प्रमोद मानेंगे। विद्वानों के प्रमु दित होने पर जिन "श्री स्वामी जयानन्द जी महाराज (बहीन गुड़गाँवा) "श्री लेफ्टीनेंट कर्नल रघुवीरसिंह (सालपुर-नागर) एवं लाला प्रभूदयाल जी (खैर) ने आर्थिक सहायता एवं उसके लिये प्रयत्न किया है। उनके प्रयत्न एवं धन भी सफल होंगे।

परमहंस वामदेव

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्रीहरिः

पुस्तक के विषय में भारत प्रसिद्ध विद्वानों की सम्मतियाँ

अनन्त श्री विभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद् गुरु शंकराचार्य श्री स्वामि कृष्णबोधाश्रम जी की सम्मतिः ।

मूर्ति-पूजा-निर्वचन-मीमांसा इस पुस्तक के नाम से ही इसकी उपादेयता सिद्ध है, विद्वान् लेखक ने पदार्थ, वाक्यार्थ निर्णय में मीमांसादि दर्शनों का अवलम्बन कर आधुनिक विचार पद्धति की त्रुटियों को दूर करने का महान् प्रयास किया है। अनेक युक्तियों तथा प्रमाणों से मूर्ति पूजा का समर्थन करने वाली इस पुस्तक को यदि अदृष्ट श्रुत पूर्व कहा जाय तो भी कोई अत्युक्ति न होगी।

आशा है सनातनी जगत् इससे परम लाभ प्राप्त करेगा।

अनन्त श्रीविभूषित कर पात्री जी महाराज

वर्तमान संचारस्थान हाथरस १-११-६१ श्रीमान् वीतराग महात्मा मङ्गल हरि द्वारा उपनिबद्ध 'मूर्ति-पूजा-निर्वचन-मीमांसा' पुरत्तक देखी। इसमें नैक विध अकाट्य युक्तियों द्वारा मूर्ति-पूजा विषयक शास्त्रीय प्रमाणों से मूर्ति-पूजा सिद्ध की गयी। प्रत्येक सनातन धर्मी के लिए यह ग्रन्थ सङ्ग्राह्य है।

ह० करपात्र स्वामी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पूज्य पाद श्री १०८ श्री अखण्डानंद जी महाराज वृन्दावन

उत्तर प्रदेश के गाँवों में विचरने वाले विरक्त एवं विद्वान् महात्मा श्री मंगलहरि जी महाराज के द्वारा लिखित 'मूर्ति-पूजा मीमांसा नाम की पुस्तक का अधिकांश मैंने देखा है। वर्तमान युग में जबकि लोग तर्क वितर्कों के जाल में फँसकर अपने हृदय की महत्त्व पूर्ण सम्पत्ति श्रद्धा को खोते जा रहे हैं शास्त्रीय एवं प्रबल युक्तियों के द्वारा उनके कुतर्कों का निराकरण एवं श्रद्धा सम्पत्ति के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए यह एक स्तुत्य प्रयास किया गया है। इस ग्रन्थ से मूर्ति पूजा की सिद्धि तो होती ही है लोगों को यह ज्ञान भी होता है कि हमारे प्राचीन विद्वान महात्मा किस प्रणाली से पदार्थों की कितनी गम्भीर मीमांसा करते हैं। हम विद्वान लेखक से आशा करते हैं कि वे और भी ऐसे ग्रन्थ लिखेंगे जिससे सनातन धर्म की महिमा बढ़े और भारतीय जनता उनका अनुसन्धान एवं अनुसरण करके कल्याण-भाजन बने।

ह० अखण्डनन्द सरस्वती स्वामिनः

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मूर्ति-पूजा-निर्वचन-मीमांसा

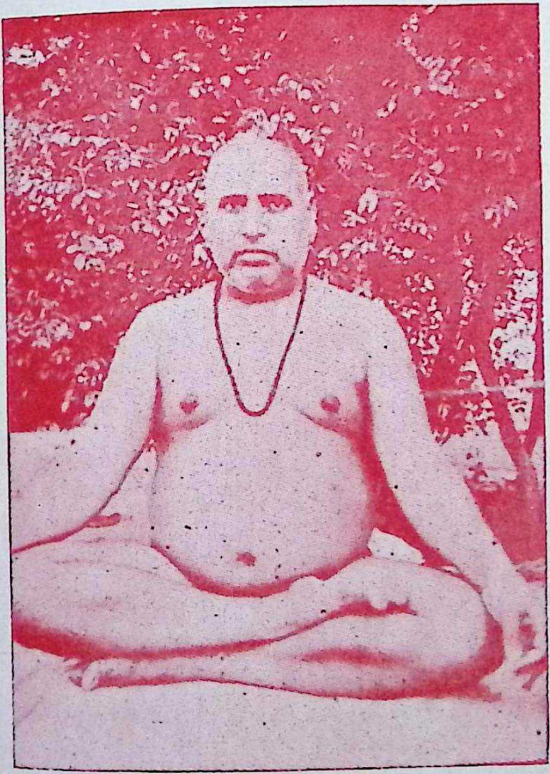

लेखक

श्री १०८ पूज्यपाद श्री स्वामी मंगलहरि जी मुनि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ ॐ ॥

अथ मूर्ति पूजा निर्वचन मीमांसा

यं साकारं निराकारं पालारामं प्रचक्षते ।
मुनयस्तं जगद्योनिं विश्वमूर्तिं यजामहे ॥१॥
विदितसकलवेद्यैर्नं प्रशंसन्ति लोके ।
ग्रथितमपि महद्भिः किं पुनर्मादृशेन ।
इतिविफलसमेऽस्मिन् वाग्व्ययेऽहंप्रवृत्तः ।
स्वमतिविमलतायै क्षन्तुर्मर्हन्ति सन्तः ॥२॥

अथ तत्र मूर्तिपूजा प्रथम निर्वचनम्

मंगलमयी भगवन्मूर्ति पूजा का प्रथम निर्वचन किया जाता है। मूर्त्यापूजा मूर्तिपूजा। अर्थ-मूर्ति से उपलक्षित भगवत्पूजा; भगवन्मूर्ति पूजा कही जाती है। भाव यह है कि जैसे पक्षिराज, देवसदन का उपलक्षण है। देवसदन, पक्षिराज रूप उपलक्षण से उपलक्षित है। उसी प्रकार भगवान् का मूर्ति, उपलक्षण तथा भगवान् उपलक्षित है। देवसदन दर्शनाभिलाषी पुरुष, पक्षिराजरूप उपलक्षण के दर्शन से देवसदन को प्राप्त कर लेता है कि, यह देवसदन है। उसी प्रकार भगवद्दर्शनाभिलाषाकुलमना श्रद्धालु पुरुष भी उपलक्षणभूत भगवन्मूर्ति के दर्शन से मूर्ति उपलक्षित भगवान को ही प्राप्त होता है कि यह भगवान् है। अतः मूर्ति से उपलक्षित परमात्मा की

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पूजा ही मूर्ति पूजा है। यह मूर्ति पूजा निराकारवादियों को भी स्वीकार करनी होगी। क्योंकि परिभाषित रेखा मय प्रणव से उपलक्षित परमात्मा का जप ही प्रणव-जप है। इस प्रकार निराकार ईश्वर वादियों के मत में भी मूर्त्युपलक्षित परमात्मा की पूजा देखी जाती है। निराकार वादी भी अनुपलक्षित को परमात्मा नहीं मान सकते हैं। यदि अनुपलक्षित को परमात्मा मानेंगे तो परमात्मा कौन, तथा कहाँ है इस प्रश्न के उत्तर में मौन ही प्राप्त होगा। मौन धारण न करना पड़े, अतः प्रणव के समान प्रपंचरूप मूति की शरण लेनी पड़ती है। क्योंकि ये नवीन वैदिकार्य, अमूर्तिवादी हुए भी अन्यथा अन्यथा अनुपपत्तियों से प्रपंच के सिद्ध करने में प्रयत्न-शील हैं। अतः पुरुषार्थशील आर्यों के पुरुषार्थ की सफलता के लिये प्रपंच में उपलक्षण बुद्धि, एवं परमात्मा में उपलक्षित बुद्धि करना अति श्रेष्ठ है। तब तो हम भी यह कह ही सकते हैं कि, परमात्मा को प्रधान मूर्ति यह प्रपंच है। मूर्च्छ्यते परिच्छिद्यते यत्तन्मूर्तिः। अर्थ-जो परिच्छेद वाला होता है उसे मूर्ति कहते हैं। अतः प्रपंच भी मूर्ति है। प्रपंच भूत मूर्ति की उत्पत्ति होती है। अतः प्रपंच परिच्छेद वाला भी है। इसमें विवाद का अवकाश नहीं। प्रपंच भूत मूर्ति से उपलक्षित परमात्मा की पूजा (सत्करण) किसी प्रकार भी यदि विरुद्ध नहीं है, तो प्रपंच का एकदेश भूतमूर्ति से उपलक्षित परमात्मा की पूजा भी किसी प्रकार से विरुद्ध नहीं है। अतएव कहा भी है कि पत्रैः पुष्पैः फलैस्तोयैर्भोजनाच्छादनादिभिः। सत्करणं समर्च्यानामर्चनं चक्षते बुधाः। अर्थ-पत्र पुष्प फल जल तथा भोजनाच्छादनादिकों से. पूजनीयों के सत्कार को ही विद्वान पुरुष पूजन कहते हैं। आज भी देश तथा आत्मोन्नति के अभिलाषी भव्य भारतीय वैदिक विद्वान् विश्वसेवा को विश्वम्भर की सेवा कहते हैं। उनका यह निश्चय यथार्थ ही है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शंका—यदि यह उनका निश्चय यथार्थ ही है तो ये मूर्ति पूजक तथा हम निराकार के अर्चक हैं, यह भेद निराकारवादियों के मन में क्यों उपस्थित हुआ है। समाधान-यह मार्ग भेद चित्त के दोष से ही है। मध्यस्थ का कथन है कि ये वावदूक निराकार-वादी अति कुशल हैं। क्योंकि, महान्मूति के अर्चक हैं कहते हैं कि हम मूर्तिपूजक नहीं। विश्वमूर्ति का एक देश भूत पाषाणादिकृत-मूर्ति के पूजक अत्यन्त सरल हृदय हैं। क्योंकि, परमेश्वर की अचिंत्य निराकार मूर्ति अर्चनातीत है ऐसे यथार्थ शास्त्रीय निश्चय वाले हैं। कितना आश्चर्य। कि पुनरपि वे निराकार वादी उन सरल हृदय सज्जनों को अपने वाग्वज्र से पीड़ित कते रहते हैं कि तुम जड़ मूर्ति पूजक जड़ हो हम अमूर्ति पूजक वैदिक विद्वान हैं।

शंका—निराकार में अनुरक्त, अमूर्ति पूजक, तथा अपने को निराकार का पूजक मानने वालों का इस पूज्य पूजक चर्चा में क्या स्थान है।

समाधान—इन पण्डितंमन्य महाशयों का इस चर्चा में कोई स्थान नहीं। क्योंकि आकार विहीन शून्य कल्प तत्व के जानने में तो अतिकुशल पुरुष भी असमर्थ है तब पूजा की तो कथा को भी अवकाश नहीं।

शंका—निराकार के अर्चकों से पृष्टव्य है कि आपकी प्रणाली में अर्चन क्या है।

उत्तर-ध्यान करना मात्र ही अर्चन है।

ध्यान किसे कहते हैं। इस प्रश्न के उत्तर में आपको कहना पड़ेगा कि, ध्येयवस्तु के आकार बौद्ध प्रत्ययों के प्रवाहीकरण का नाम ही ध्यान वेत्ता ध्यान कहते हैं। यह ध्यान का लक्षण उभय संमत है। अतः इसके खण्डन का अवकाश ही नहीं। अपितु यह ध्यान

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

का लक्षण ही साकार वाद का समर्थक है। क्योंकि ध्याता किसी आकाराकारित बौद्ध प्रत्ययों से ध्येय को अलंकृत करता है। अन्य किसी प्रकार से नहीं। एवं सति निराकारैकवाद नामक आपका मल्ल परास्त हुआ। यदि कहो कि ध्यान रूप अर्चन में ध्येयाकार स्थापित होता है तो हमारा अर्चन, निराकार के गुणों का अनुवाद मात्र ही है। तदपि मिथ्या भाषण ही है। क्योंकि गुणानुवादक पुरुष को, लोक में कोई भी अर्चक नहीं कहता है। तथापि यदि निराकार में गुण स्वाभाविक होंगे तो उन निराकार वत्सलों का निर्गुण निराकार सिद्धान्त ही समाप्त हो जायगा। निर्गुण कहकर तद्गुणानुवाद कहना, तो क्या ?

यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी च मे पिता ।
मम माता त्वभूद्वन्ध्याऽपुत्रो मम पिता महः ॥

इस वचन के तुल्य वदतो व्याघात दोष वाला नहीं है। अपितु है ही। अतः निर्गुण निराकार के अर्चक, स्वाभाविक गुणानुवाद रूप अर्चन करने में असमर्थ हैं। अन्यथा वे वैदिक भी न कहला सकेंगे। यदि तुष्यतु दुर्जनः इस न्याय से निराकार निर्गुण में गुण गुणि भाव मान भी लिया जाय तथापि सर्वज्ञत्व दयालुत्व गुणों को परमात्मा के स्वाभाविक गुण कहना हास्यास्पद है। क्योंकि सर्वज्ञत्वादिक सर्व गुणमाला माया के सत्वगुण का ही कार्य हैं। जैसा कि सर्वज्ञ श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि, सत्त्वात्संजायते ज्ञानम्। आप्तकामत्वादिक भी परमात्मा के स्वाभाविक गुण नहीं। क्योंकि कामादिक गुणों को मन का धर्म होने से पुरुष धर्मता भी उपचार मात्र हैं। पुनः परमात्मा को तो, अमनाः शुभ्रः। न तस्य कार्यं करणं च विद्यते। इत्यादिक शतशः श्रुति प्रमाणों ने निर्मनस्क कहा है। तेजोऽसितेजोमयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि बलमसि बलं मयि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धेहि। इत्यादिक याजुष मंत्रों ने परमेश्वर की तेजस्त्वादिक गुणवत्ता नहीं कही है। अपितु इन मंत्रों का विश्वेश्वर की विश्वात्मकता में तात्पर्य है। भगवान कृष्ण ने तो भक्ताग्रगण्य अर्जुन को स्वविश्वरूपता प्रत्यक्ष प्रदर्शित की ही है। यह श्रीमद्भगवद्गीता के पाठकों को प्रसिद्धतम है। भगवान की भव रूपता तो भगवान् को विश्वका अभिन्ननिमित्तोपादान कारण होने से युक्त ही है। जन्माद्यस्य यतः। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि। बीजं मां सर्व भूतानाम्। अहं सर्वस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा। इत्यादि शतशः प्रमाणों से परमात्मा की प्रपंच कारणता विनिश्चित है। सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म। प्रज्ञान घनः। इत्यादिक प्रमाणों ने परमात्मा की ज्ञानादि स्वरूपता ही कही है। अतः ज्ञानादिक परमात्मा के गुण हैं यह तो प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता। यदि यह कहें कि परमात्मा में गुण, औपाधिक हैं तो यह हमको भी इष्ट है, तथा यही निष्कंटक राज मार्ग है। माया तथा मायिक प्रपंच ही परमेश्वर को उपाधि है। उपलक्षण तथा उपाधि दोनों सदृश होते हैं इसमें अधिक विचार की अपेक्षा नहीं क्योंकि विज्ञों के मध्य विशेष वाग्विसर्ग का क्या फल। निष्कर्ष यह है कि, यदि प्रपंच भूत मूर्ति से उपलक्षित भगवत्पूजन, आप निराकारवादियों को मूर्ति पूजन अभिमत नहीं। तदा हम प्रपंचैकदेशोपलक्षित परमात्म पूजकों का परमात्मपूजन मूर्ति पूजन है। यह आपका पाण्डित्य अथवा बुद्धिवैभव आश्चर्यमय है।

इति मूर्ति पूजा प्रथम निर्वचनम्।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथ मूर्ति पूजा द्वितीय निर्वचनम्

मूर्तौवापूजा मूर्ति पूजा ॥ अर्थ-यह द्वितीय निर्वचन है कि मूर्ति को सर्वतः व्याप्त करके वर्तमान भगवत्पूजा मूर्ति पूजा कही जाती है। भगवान् सर्वत्र व्यापक है। यह सर्वतन्त्र सिद्धान्त है। क्योंकि कोई भी वादी प्रतिवादी आस्तिक पुरुष यह कहने तथा मानने को समर्थ नहीं, कि, परमेश्वर व्यापक नहीं। यही सर्वतन्त्र सिद्धांत का लक्षण अक्षचरण गौतम ऋषि ने किया भी है। कि, सर्वतन्त्राविरुद्ध स्तन्त्रेऽधिकृतोऽर्थः सर्वतन्त्र सिद्धान्तः। न्या० द० अ० १ सू० २८ सर्वशास्त्र से अविरुद्ध शास्त्र का प्रति पाद्य अर्थ ही सर्वतन्त्र सिद्धान्त है। परिच्छेद, तथा विनाश सम व्याप्त हैं। अतः यत्र यत्र परिच्छिन्नत्व है तत्र तत्र विनाशित्व भी अवश्यम्भावी होता है। अतः नैयायिकादितांत्रिक विद्वान् भी आत्मा को व्यापक मानते हैं। अन्यथा परिच्छिन्नत्व वादी को कृतनाशाकृताभ्यागम दोषसिंह का भक्ष्य बनना पड़ेगा। यह नियम है कि व्यापक ही मूर्ति वाला होता है। अव्यापक नहीं। गुण विशेष के आश्रय घटादिक व्यक्तियों को मूर्तिरूपता होने से ही उनमें व्यापकत्वव्यपदेश नहीं होता है।

घटादिकों में आकृति मात्रता ही मूर्ति शब्द का वाच्य है। अतएव आकृति युक्त घटादिक पदार्थों में मूर्ति शब्द के व्यपदेश का विरोध नहीं। जैसा कि न्याय सूत्र में कहा है कि-व्यक्तिर्गुण विशेषाश्रयो मूर्तिः। अ० २ आ० २ सू० ६७। अर्थ-गुण विशेष का आश्रय ही मूर्ति कहा जाता है। यह व्यवस्था है।

एवं च सति मूर्ति को व्यापनकर मूर्ति में वर्तमान व्यापक परमात्मा की पूजा ही मूर्तिपूजा है। यही मूर्तिपूजा शब्द का अर्थ है। नवीन वैदिक आर्यों के मत से भी यह अर्थ विरुद्ध नहीं। क्यों कि आपके मत में भी पृथ्वि आदिकों को व्याप्त करके वर्तमान व्यापक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

परमात्मा की पूजा स्वीकार की है। अतः हम दोनों ही मूर्ति पूजा सिद्धान्त के स्वीकर्ता हैं। जब हम दोनों हीं मूर्ति पूजक हैं। पुनः परस्पर विरोध किसके अज्ञान से है इसके मध्यस्थ भी आप ही वन जावें। हे विद्वन् एवं भूत विवादों में कुमारिल भट्ट का कथन है कि-यत्रोभयो: समोदोषः परिहारोपि वासमः। नैकस्तत्रानुयोक्तव्य-स्तादृगर्थविचारणे ॥ अर्थ-जहाँ दोष तथा परिहार उभय पक्ष में समान हों तहाँ तादृश अर्थ के विचार करने में एक ही पक्ष उपालंभ-नोय नहीं होता है। अतः सूक्ष्मेक्षिका से विचार करने पर हम दोनों का विरोध व्यर्थ वाग्विग्लापन मात्र है॥ यहो नहीं हम दोनों का परस्पर विरोध, मूर्ति पूजा का खण्डन करने वाले नास्तिकों को वेद सिद्धांत के खण्डन करने का अवकाश प्रदान करता है। अतः हम दोनों को मूर्तिपूजा के खण्डकों का खण्डन करना चाहिये। क्योंकि मूर्ति पूजा का खण्डन भी वेद सिद्धांत का खण्डन है।

वेद निराकार तत्त्व का उपदेशक है। निराकार तत्त्व के अर्चक, अर्चक ही नहीं, अपितु अर्चकोत्तम हैं। शालग्रामादिक मूर्तियाँ निराकार की मूर्ति भूत सर्व प्रपंच का एक देश रूप हैं। अतः शाल-ग्रामादिक मूर्तियों का अर्चक भी श्रेष्ठ है। निराकार की मूर्ति भूत प्रपंच की भगवद्रूप से अर्चकों के लिये, सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलान् शान्त इत्युपासीत, यह श्रुति चित्त की स्थिरता रूप महत्फल का आदेश दे रही है। अतः यह निश्चित है कि शालग्रामादि मूर्ति पूजा का प्रचार भी चित्त की स्थिरता अर्थ ही है।

यद्यपि वर्तमान काल में प्रायशः स्वकर्तव्य विमुख बुद्धि युक्त अर्चकों का चित्त स्थैर्य अदृष्टचर है। तथापि भगवन्मूर्ति दर्शन से तात्कालिक, चित्त का प्रसाद अवश्य होता है। मूर्ति पूजन का भेद अधिकारी भेद निबन्धन है। अधिकारी भेद, रुचिभेदनिमित्तक है। भगवद्बुद्धि से जिस किसी भी मूर्ति का जो कोई भी पूजक हैं,

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वे सर्व भगवन्मूर्ति पूजक ही हैं। क्योंकि माया विशिष्ट निराकार परमेश्वर ही सृष्टिरचकर साकार हुआ है। यथा ब्रह्मचारी ही गृहस्थ होकर पुत्र पौत्रादि रूप हो जाता है। अथवा जैसे एक ही शुद्ध ब्राह्मण योगदशापन्न होकर अनेकाकार युक्त हो जाता है। तथैव एक शुद्ध निराकार परब्रह्म ही स्वमाया शक्ति से अनेक आकारों से युक्त हुआ है। रुचि भेद से एक ही परमात्मा की विष्णु राम कृष्ण शिव सूर्य गणेश देवी आदिकों की मूर्ति में पूजा की जाती है। अतः सर्वत्र विश्व रूप भगवान् का ही पूजन है। विरोधा भाव से सर्वार्थ विशुद्ध ही है।

इति मूर्ति पूजा द्वितीय निर्वचनम्।

अथ तृतीय मूर्ति पूजा निर्वचनम्

मूर्तेर्वा पूजा मूति पूजा अर्थ-अथवा ब्रह्म का प्रतीक भूत मूर्ति की ब्रह्म रूप से पूजा ही मूर्ति पूजा है।

भाव यह है कि-मनो ब्रह्मेत्युपासीत। आकाशो ब्रह्मेत्या देशः। स यो नाम ब्रह्मेत्युपासते। इत्यादिक श्रुति प्रतिपादित प्रतीकोपासनाओं में मन आदिक मूर्ति विशेषों की ब्रह्म-रूप से उपासना वैदिकों को कल्याणार्थ अभिमत है। इस वेदोक्त उपासना में किसी वैदिक का विवाद नहीं। एवमेव राम कृष्णादिक मूर्तियों की परमात्म रूप से अर्चा सेवा रूप उपासना भी वैदिक सिद्धान्त से अविरुद्ध तथा महाफल का कारण है। इस मान्यता में विवाद का कोई कारण भी उपलब्ध नहीं होता है। क्योंकि मन चेतन है तथा शिलादि निर्मित मूर्ति अचेतन है ऐसा भी नहीं कहा जा सकता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अन्यथा दृष्ट विरोध प्राप्त होगा। जैसे मूर्ति भौतिक होने से स्वतः सत्ता स्फूर्ति से रहित जड़ है। एवमेव मन आदिक पदार्थ भी भौतिक होने से स्वतः सत्ता स्फूर्ति से शून्य अचेतन हैं। क्योंकि इनके वैलक्षण्य में कोई बीज नहीं है।

शंका—यथा, "मनोब्रह्मेत्युपासीत्" इस वचन से ब्रह्मरूपेण मन की उपासना का विधान है तथैव ब्रह्मरूपेण मूर्ति की उपासना का विधान नहीं है कि मूर्तिंर्ब्रह्मेत्युपासीतेति।

समाधान—मनो ब्रह्मेत्युपासीत इत्यादिक वाक्यों में मनपद मूर्ति का भी उपलक्षण बन कर बोधक हैं। अतः मूर्ति का भी उपलक्षण है। सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति. शान्त उपासीत, पुरुष एवेदं सर्वम्। इत्यादिक वेद वाक्यों में सर्व शब्द से, पुरोदृश्यमान घट कुलाल मन आदिक पदार्थों के साथ दृश्यभूत मूर्ति का भी ग्रहण है। एवं च सति यथा ब्रह्म रूप होने से घटपटादि मूर्तियों के लिये घटेभ्यो नमः कुलालेभ्यो नमः इन याजुष मंत्रों में नमस्कार करना कहा है। तथैव ब्रह्मरूप से इन मूर्तियों की अर्चा रूप उपासना प्राप्त है। अतः यह निर्णय अतांत्रिक है यह शंका भी अतांत्रिज्ञ को ही हो सकती है। क्योंकि यह निर्णय तंत्रज्ञों को संमत है। उत्तर मीमांसा अध्याय ४ पा० १ सूत्र ५ से आचार्य वेद व्यास जी ने कहा है कि ब्रह्मदृष्टिरुत्कर्षात्। अर्थ मन आदित्यादिकों में ब्रह्म दृष्टि करनी चाहिये। क्योंकि ब्रह्म को चेतन रूपता होने से उत्कृष्टता है। अतः ब्रह्मदृष्टि से उपासित मन आदिक मूर्तियाँ मोक्षरूपफलप्रदान में समर्थ हैं।

यथा मूर्ति पूजन में शास्त्रानुगमन प्रदर्शित किया है तथा लोकानुगमन का भी चिन्तन कर लेना चाहिये। तथाहिः ऐसा लोक में देखा गया है कि यदि कोई अनाढ्य (अधनी) पुरुष भी आप

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आढ्यतम हैं विश्वाधिपति हैं, हे धर्म मूर्ते आप मेरे ऊपर कृपा करो इस प्रकार स्तुति करने पर, मनुष्य अधमें मूर्ति होने पर भी स्तोता के लिये इष्ट दायक ही होता है। तथा निंदक के लिये अनिष्ट दायक होता है। इन दोनों अर्थों में दृष्टि ही कारण है। क्योंकि दृष्टि के होने पर ही सृष्टि होती है। इस अर्थ को वशिष्ठ आदि ऋषि महर्षियों ने पुनः पुनः कहा है। वेद ने भी विपरीत दृष्टा के लिये सर्व जगत् को तिरस्कार करने वाला कहा है।

सर्वं तं परादाद्योऽन्यत्रात्मनः सर्वं वेद ।। इति ।।

शंका—जड़ मूर्ति पूजा में पुरुष की स्तुति पूजा का उदाहरण विषम हैं। क्योंकि पुरुष चेतन तथा स्वपूजा का फल देने में समर्थ है। मूर्ति स्वयं जड़ अतएव स्वपूजा का फल देने में असमर्थ है। अन्यथा अति प्रसंग होगा। समाधान-यह शंका, मन आदिक जड़ पदार्थों की उपासना में, आप आर्यों को क्यों न हुई। इससे तो यही ज्ञात होता है कि आप आर्य महाशय केवल वाचाल मात्र हैं। मीमांसकनहीं। पूज्यतम (वेदाविरोधी) विचार का नाम मीमांसा है। मूर्ति ब्रह्मोपासकों का यह सिद्धांत है कि मूर्ति ही फल दाता नहीं है। क्योंकि भगवदुपासना में यह मूर्ति स्वर्ण पित्तल आदि धातुओं से बने हुए ॐ अक्षर के समान अवलम्बन मात्र है। ज्ञानादिकों की भाँति उपासना एवं पूजाविधि सालम्बन ही होती है। अतः वहाँ आश्रय भगवान् ही है। भगवान सर्वाध्यक्ष है। अतः उपासना तथा पूजा का फल भी भगवान् ही देता है। इस अर्थ को पारसर्षसूत्र भी कह रहे हैं। फलमत उपपत्तेः (ब्रह्मसूत्र अ० ३ पा० २ सू० ३८) ईश्वरः कारणं पुरुषकर्मफलदर्शनात्। न्यायद० अ० ४ आ० १ सू० १८। इति एवं अथिति आदिक चेतन तथा क्षेत्रादिक जड़ पदार्थों की सेवा का फल भी भगवान् ही देता है। अतः मूर्ति पूजन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

लोक तथा शास्त्र दोनों के अनुकूल है न कि प्रतिकूल। एवं भूत पूजन तो आप निराकारवादियों को भी तो इष्ट ही है।

जैसे अध्ययन शाला में श्रेणी (कक्षा) के अधिकारानुकूल ही अध्यापन उन्नति प्रद होता है, इसके विपरीत अध्यापन विधि अध्ययनशाला ही की विरोधिनी होती है। जैसे एक ही घर में माता भगिनी पुत्री पुत्र-वधू तथा वधू में पुत्र भ्राता आदि सर्व पुरुषों को एक प्रकार की क्रिया सेवन का उपदेश गृह की व्यवस्था का परम विघातक है। इसी प्रकार शास्त्र ने अधिकार भेद से क्रिया भेद का उपदेश दिया है। इस शास्त्र व्यवस्था का विघातक शास्त्र का भक्त नहीं अपितु विनाशक है।

इति मूर्ति पूजा तृतीय निर्वचनम्॥

अथ चतुर्थं मूर्ति पूजा निर्वचनम्

अथवा मूर्तेः पूजाः मूर्ति पूजा। मूर्ति की पूजा ही मूर्ति पूजा शब्द का अर्थ है। यहाँ कर्म में ही षष्ठी विभक्ति है। शरीर, आकार, मूर्ति ये पर्याय हैं। अतः यह निर्वचन सिद्ध हुआ कि भगवन्मूर्त्तेरिव मूर्त्तेः प्रतिकृतेः या पूजा सा मूर्ति पूजा इति। भगवान् की अभौतिक मायिक मूर्ति के समान कल्पित भौतिक मूर्ति की पूजा मूर्ति पूजा है। यह चतुर्थ निर्वचन का अर्थ है। भगवान् का भी माय मय अभौतिक शरीर होता ही है। भगवान् ने स्वयं कहा भी है कि–माया ह्येषा मया सृष्टा यन्मां पश्यसि नारद। इति। संभवा-म्यात्ममायया। सृष्टि स्थितिलय कारणत्व ही ईश्वर का तटस्थ लक्षण है। कारण दो प्रकार का है। एक उपादान दूसरा निमित्त।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कुलाल की तरह निमित्तकारण में कर्तृत्व शरीर निबन्धन होता है। अतः भौतिक सृष्टि के विचार में भूत सृष्टि से प्रथम ही ईश्वर को शरीरी कहना होगा। परमेश्वर का वह शरीर भौतिक तो हो ही नहीं सकता है क्योंकि अभी भूतों की सत्ता ही नहीं है। अतः ईश्वर का शरीर अभौतिक माया मय ही कहना होगा। जिस प्रकार सृष्टि दशा में ईश्वर का शरीर अभौतिक माया मय है। उसी प्रकार स्थिति दशा में भी परमेश्वर का शरीर अभौतिक माया मय होता है। इसी अभिप्राय से वेदान्त के अध्यारोपापवाद में परमात्मा के अवतार भूत श्रीराम कृष्ण नृसिंह आदिकों के शरीर अभौतिक माया मय ही माने हैं। जिस माया से परमेश्वर ने इतने विशाल विचित्र जगत् की रचना कर डाली है। उस माया के बल से भगवान् की अपनी, अलौकिक लीलोपयिक, शिशुकुमार पौगण्ड किशोर आदिक अवस्थाओं वाली, श्यामसुन्दर चतुर्भुज अथवा नरपशुविलक्षण नृसिंहादि, मायामय अभौतिक मूर्ति का प्रतीत होना असंभव नहीं। यद्यपि साधारण मनुष्यों को माया बल से परमेश्वर की अलौकिक मूर्ति का प्रतीत होना उतना ही असंभव प्रतीत होता है, जितना कि हनुमान का समुद्रलंघन अथवा अर्जुनकृत अलौकिक धनुष कृत्यों का। परन्तु मीमांसक विद्वानों को नहीं उपरोक्त संक्षेप से यह अर्थ निष्पन्न हुआ कि भगवान् की मायामय श्यामसुन्दर चतुर्भुजी अलौकिक, सर्वज्ञ राम कृष्ण विष्णु शिव शंकरादि मूर्ति के समान पार्थिव सौवर्ण राजतादि कल्पित कृष्णादि की मूर्ति की पूजा ही मूर्ति-पूजा हैं। इति तुरीय निर्वचनम्।

अथ तुरीय निर्वचन की विस्तृत मीमांसा

उक्त निर्वचन में नवीन निराकार वादी, मूर्ति पूजा सिद्धांत को अविवेक से न सहन करता हुआ आक्षेप करता है। आक्षेपः—

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हे सनातन वैदिक ! आपका मूर्ति पूजा के प्रचार के लिये भागीरथ प्रयत्न पूर्वक किया हुआ मूर्ति पूजा निर्वचन संभव हो सकता था। यदि ईश्वर मूर्तिमान् सिद्ध हो जाता। ईश्वर मूर्ति वाला है नहीं। जब ईश्वर ही मूर्ति वाला नहीं तो उसकी मूर्ति के सदृश मूर्ति की कल्पना तथा उसकी पूजा तो बहुत दूर है। समाधान-हे वादिन् ! ईश्वर की मूर्ति नहीं है, यह आपका केवल कथन मात्र है। इसमें आपके पास प्रमाण कुछ नहीं है। किसी विषय का निश्चय प्रमाण से ही होता है। यह वेदवेत्ताओं का मन्तव्य है। ईश्वर की मूर्ति नहीं इसमें प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं। क्योंकि प्रत्यक्ष सिद्ध अर्थ में संशय तथा विवाद नहीं होता है। यह निश्चय है कि संशय रहित वस्तु में विवाद नहीं होता है। निश्चितो वादं कुरुत। यह मणिकारका वचन अभिमानियों के निश्चय के अभिप्राय से कहा गया है। अतः इससे कोई विरोध नहीं है। अतः संदिग्धो विचार्य्यते। यह न्याय ही युक्ततर है। यद्यपि सर्वाध्यक्ष प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध नित्य आत्मा के स्वरूप में विवाद है तथापि आत्मा के सत्व में किसी को ऐसा संशय नहीं है कि मैं हूँ या नहीं हूँ। अतः आत्मा के अस्तित्व में विवाद भी नहीं है। प्रत्यक्ष सिद्ध घटादि पदार्थों में किसी का विवाद भी नहीं देखा है। अतएव योग दर्शन के भाष्यकार व्यास ने, समाधि पादस्थ सूत्र ३२ के भाष्य में प्रत्यक्ष प्रमाण को सर्व प्रमाणों से बलवान कहा है। न च प्रत्यक्षमाहात्म्यं प्रमाणान्तरेणाभिहन्यते। अर्थ प्रत्यक्ष प्रमाण की महिमा किसी अन्य प्रमाण के द्वारा निवृत्त नहीं की जाती है। लौकिक प्रवाद भी है कि प्रत्यक्ष में क्या प्रमाण। इतने संक्षेप से यह सिद्ध हुआ है कि आत्मा तथा घटादिकों की तरह ईश्वर मूर्ति का अभाव प्रत्यक्षसिद्ध होता तो उसमें संशय तथा विवाद न होता। परन्तु विवाद होता है। कोई वादी कहता है कि ईश्वर मूर्तिमान नहीं है। अन्य कहते हैं कि ईश्वर के मूर्तामूर्त दोनों स्वरूप हैं। कोई यह कहते है कि भग-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वत्पादांगुष्ठ की नखज्योतिः के चमत्कार से भगवद्विग्रह का दर्शन नहीं होता अपितु ज्योति मात्र ही प्रतीत होती है। वे ही भगवान को निराकार निर्गुण स्वयं प्रकाश कहते हैं। परमार्थतः निराकार निर्गुण स्वयं प्रकाश ब्रह्म यह नाम, भगवद्विग्रह के अवयव के भी अवयव नख की ज्योति मात्र का है। जो भगवद्विग्रह के दर्शनों से वंचित हैं, उनके कल्याण के लिये ही शास्त्र ने नखदीप्ति मात्र को निराकार निर्गुण स्वयं प्रकाश ब्रह्म नाम से वर्णन किया है। अतः इन पक्षों के सत्या सत्य का निर्णय अशक्य है। उपरोक्त विवाद से यह निर्णय हुआ कि भगवन्मूर्ति का अभाव प्रत्यक्ष सिद्ध नहीं है। दूसरा कारण यह भी है कि तार्किक, "निष्प्रतियोगिक अभाव का ज्ञान नहीं होता है" ऐसा नियम मानते हैं। अतः यदि आपको प्रतियोगी का ज्ञान है तब तो आपने ईश्वर की मूर्ति का स्वयं ही स्वीकार कर लिया। यदि कहो कि प्रतियोगी का ज्ञान नहीं है तब तो आपको प्रतियोगी रूप ईश्वर की मूर्ति के अभाव का ज्ञान दुर्गम ही नहीं अपितु असाध्य है। यदि कहो कि जागने पर स्वप्न में देखे जगत् और ईश्वर के समान ज्ञान होने पर ईश्वर की मूर्ति नहीं रहती है। यद्यपि यह कथन सत्य है। तथापि आप मौन ही रहेंगे। क्योंकि जागे हुए पुरुष को यदि ईश्वर की प्रतीति है तो ईश्वर के मूर्त अमूर्त दोनों रूप भी हैं। यदि ईश्वर का केवल मूर्त रूप नहीं है तो जगत् भी नहीं है। ऐसा मानने वाले आपकी तरह अर्धजरतीय न्याय को स्वीकार नहीं करते। वृद्धा स्त्री के अर्ध भाग से गृहरक्षक कूकरों की तृप्ति तथा अर्ध भाग से चुम्बनादि से उत्पन्न सुख के उपभोग की चेष्टा करने का नाम अर्धजरतीयन्याय है। ठीक यही दशा आपकी है। क्योंकि आपको ईश्वर की मूर्ति के अभाव का निश्चय है तथा भोगों के लिये मूर्त जगत् के सत्त्व का भी स्वीकार है। यह आपके ज्ञान की महिमा है। यदि आप कहो कि तर्क से ईश्वर की मूर्ति का सत्व सिद्ध नहीं होता है। अज्ञात

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पदार्थ की संभवता से तत्त्व ज्ञान के लिये की हुई कल्पनाओं का नाम तर्क है। ऐसा तर्क प्रमाण का अंग हो जाता है। अतएव मनु जी ने भी तर्क का आदर किया है। यस्तर्केणानुसंधते स धर्मं वेद-नेतरः। इति। तर्क से ही हम तत्त्व निर्णय करेंगे यह भी आपका अहंकार मात्र ही है। क्योंकि तर्क यौक्तिक तथा अयौक्तिक भेद से दो प्रकार का होता है। अयौक्तिक पक्ष असंभव है। क्योंकि अपने जन्म की सफलता के इच्छुक, तत्त्वान्वेषक महापुरुष जिस अयौक्तिक तर्क की इच्छा नहीं करते हैं। उस तर्क को आप विद्वान पुरुषों ने भी ग्रहण नहीं किया है। तथा यौक्तिक तर्क का त्याग भी नहीं किया है। यह व्यवस्था तर्क तक ही सीमित नहीं अपितु लौकिक अलौकिक सर्व पदार्थों में यह व्यवस्था न्यायोचित है। अतः विद्वत्समाज में यौक्तिक तर्क की ही प्रतिष्ठा है। युक्ति से संस्कृत तर्क यौक्तिक तथा युक्ति से असंस्कृत तर्क अयौक्तिक कहा जाता है। युक्ति अनुमान तथा तर्क का ही नाम है। यदि अनुमान रूप युक्ति का ग्रहण करोगे तो अन्योन्याश्रय दोष बलात्कार से प्राप्त होगा। क्योंकि प्रमाकरण को प्रमाण कहते हैं। अनुमिति प्रमा के करण को अनुमान प्रमाण कहते हैं। वह अनुमान प्रमाण अपने अंग के समान तर्क की भी आकांक्षा करता है। अन्यथा अंग रहित प्रमाण, प्रमा का साधक न होगा। यह इष्ट भी नहीं है। अतः अनुमान को तर्क की अपेक्षा है। तथा च अपने स्वास्थ्य के लिये अनुमान को तर्क की तरह तर्क को भी अपनी चरितार्थता के लिये अनुमान की अपेक्षा है। इस प्रकार तर्क को अनुमान, तथा अनुमान को तर्क की अपेक्षा होने से स्पष्ट ही परस्पराश्रय दोष है। वृद्धि रादैत्। इस सूत्र के महा भाष्य में कहा भी है कि-इतरेतराश्रयाणि च कार्याणि न प्रकल्प्यन्ते तद्यथा नौर्नावि बद्धा नेतरत्राणाय भवति। इति।

अर्थ—परस्पराश्रयदोषवाले पदार्थ, कार्य की सिद्धि में सफल

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नहीं होते हैं। जैसे एक नौका दूसरी नौका से बंधी हुई दूसरी की रक्षा में समर्थ नहीं होती है। इस उक्त दोष को दूर करने के लिये आगे से आगे धावन किया जायगा तो मूल तर्क का नाश करने वाला अनवस्था दोष शीघ्र सम्मुख होकर हंस रहा है।

अतः शाखा की रक्षा के लिये मूल की रक्षा ही हितकर है। यत्न बिना मूल भी नष्ट हो जाता है, अतः मूल की रक्षा के लिये तुरन्त प्रयत्न करना चाहिये। इस प्रकार अनुमान रूप युक्ति में दोष बहुलता की संभावना से, मूल तर्क की रक्षा के लिये शास्त्रीय पथ के पथिक के पास, द्वितीय तर्क रूप युक्ति ही अवशेष पाथेय है। इसमें भी घट कुट्टी प्रभातायित न्याय आपका मित्र बनकर उपस्थित हो रहा है।

प्रथम तर्क को यौक्तिक बनने के लिये द्वितीय तर्क रूप युक्ति की आवश्यकता है। द्वितीय तर्क रूप युक्ति को भी यौक्तिक बनने के लिये तर्क रूप अन्य युक्ति की अपेक्षा होगी। यदि स्वयं ही अपने को यौक्तिक करेगी तो आत्माश्रय दोष होगा। प्रथम तर्क की अपेक्षा होने पर अन्योन्याश्रय दोष होगा। तृतीय तर्क की अपेक्षा होने पर चक्रिका दोष होगा। उपरोक्त दोषों को दूर कर ने के लिये चतुर्थ तर्क स्वीकार करने पर प्रश्न धारा के समाप्त न होने से अत्यन्त पुष्ट अनवस्था दोष उक्त न्याय को स्पष्टकर रहा है।

यदि कहो कि हमारा तर्क यौक्तिकायौक्तिक विकल्प से रहित है। तथापि आपको कहना होगा कि आपका तर्क क्या है। नवीन निराकार वादी आर्य बोला कि तर्क यह है कि वादी प्रतिवादी दोनों को निराकार ईश्वर अभीष्ट है। क्योंकि "निराकार ब्रह्म वेद तात्पर्य का विषय है" यह सिद्धान्त, तत्तु समन्वयात् इस वेद व्यास सूत्र में दिखलाया है। तथा मूर्तिमान् साकार पक्ष संदिग्ध है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

संदिग्ध ही नहीं असंभव भी है। तहाँ तर्क यह है कि निराकारत्व और साकारत्व यह दोनों धर्म एक परमात्मा में नहीं रह सकते हैं। क्योंकि तम प्रकाश की तरह परस्पर विरुद्ध हैं।

प्राचीन वैदिक आर्य बोला कि-यह विरोध प्रामाणिक है या अप्रामाणिक। अप्रामाणिक विरोध का तो अस्तित्व ही नहीं है। लौकिक पदार्थ घट पट रुचिक स्वस्तिक आदि तथा अलौकिक पदार्थ स्वर्गादिक प्रामाणिक हैं। अतः उनका सत्त्व भी है। नर-विषाणादिक प्रामाणिक नहीं अतः उनका सत्त्व भी नहीं है। अतएव प्रामाणिकता और अप्रामाणिकता से अतिरिक्त सत्त्व और असत्त्व नहीं है। तथा च निराकारत्व और साकारत्व के निष्प्रामाणिक विरोध का सत्व नहीं हो सकता है। अतः शशविषाणवत् अप्रामाणिक अकिंचितकर निरर्थक, अग्राह्य, शिष्ट पुरुष निन्द्य, भ्रम मूल विरोध के मानने वाले अर्वाचीन आर्यों के बुद्धि वैभव को धन्यवाद है। ये विरोधैकप्रिय होने से अपने देश तथा आत्मा की उन्नति के परम विरोधी हैं। अतः निष्प्रमाणिक विरोध का त्याग ही श्रेयष्कर है।

यदि कहा जाय कि उक्त धर्मों का विरोध प्रामाणिक है। यह कहना भी केवल अहंकार मात्र है। क्योंकि विरोध की प्रामाणिकता का निरूपण नहीं हो सकता है। तथा हि-प्रत्यक्ष प्रमाण सिद्ध तो विरोध है नहीं। क्योंकि इन्द्रिय तथा अर्थ के सन्निकर्ष जन्य ज्ञान को नैयायिकादिक प्रत्यक्ष कहते हैं। नेत्रादि इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण है। सन्निकर्ष व्यापार और पदार्थ ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमा है। पदार्थ का ग्रहण त्याग फल है। यहाँ यह विचारणीय है कि-ईश्वर में स्थित निराकारत्व तथा साकारत्व धर्मों का विरोध प्रत्यक्ष का विषय है। अथवा जहाँ तहाँ विद्यमान उक्त दोनों धर्मों का विरोध प्रत्यक्ष का विषय है। प्रथम पक्ष संभव नहीं। क्योंकि धर्मी के प्रत्यक्ष बिना

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धर्म का प्रत्यक्ष नहीं होता है। धर्मी ईश्वर का प्रत्यक्ष स्वीकार नहीं अतः धर्मों के प्रत्यक्ष के अभाव से विरोध का प्रत्यक्ष कैसे हो सकता है। भाव यह है कि धर्मिप्रतियोगि के प्रत्यक्ष बिना विरोध का प्रत्यक्ष विकल्पमात्र है।

द्वितीय पक्ष भी असंभव है। क्योंकि स मान्य वचन मात्र से धर्मि तथा उसके धर्मों का निश्चय न होने पर धर्मों के विरोध का प्रत्यक्ष सुतरां असम्भव है। अतः हे देश तथा आत्मोन्नति के शत्रुओ! तिनके विरोध प्रत्यक्ष के अवधारण बाद की डिण्डिम पण्डित मन्यों की कैसे संभव हो सकती है। देखिये वेद भगवान् आदेश देरहा है-मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य च चक्षुषा समीक्षा महे। यजु० अ० ३६ म० १८। इस वेद शिक्षा को न मानने वाले, मिथ्याभिशंसकों की पंडितंमन्यता को स्वयं कठ श्रुति भी कह रही है।

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयं च धीराः पण्डितं मन्यमानाः।
दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढाः अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः॥
कठोपनि० अ० १ बल्ली २ श्रु० ५

अतः उक्त धर्मों के विरोध की प्रत्यक्ष प्रामाणिकता का अभिमानत्यागकर यथाधिकार प्रवृत्ति का अनुमोदन करते हुए सर्व से मित्रता करनी चाहिये। इससे मंगल कल्याण तथा ऐश्वर्य के पात्र बनोगे। परमहितैषी विभीषण तथा पाण्डवों के साथ विरोध करके रावण और दुर्योधन अकीर्ति तथा अमंगल को ही प्राप्त हुए थे। विभीषण और पाण्डव अपने अधिकारानुसार सत्यपथगामी होने से कीर्ति तथा भव्यता के पात्र बने थे। क्योंकि यतोधर्मस्ततोजयः। अविरोध ही परम धर्म उपासना तथा जय है। विरोध परम अधर्म है। अतः वेद का आदेश है कि—

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥
ऋ० अ० ८ व० ४६ म० २

अर्थ-संगच्छध्वम् भोजन द्वारा एकता करो। भोजन के निमित्त विरोध मत करो। क्योंकि भोजनादिक सर्व सम्पति से आढ्यता तथा स्वभाव विलक्षणता तो कर्मों की विलक्षणता से अवश्यम्भाविनी है· कर्मों की विलक्षणता से सृष्टि की विलक्षणता को सांख्य सूत्र भी कह रहा है। कर्मवैचित्र्यात् सृष्टि वैचित्र्यम ॥ संवदध्वम-सत्य का भाषण करो अर्थात् वाणी के विरोध को त्यागो। अतएव मनु जी कहते हैं कि—

सत्यं ब्रूयात्प्रियंब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम् ।
प्रियंचनानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः। इति ।

अर्थ—प्रिय सत्य बोले, अप्रिय सत्य भी न बोले। प्रिय मिथ्या भी न बोले यह सनातन धर्म है। इति ।

संवो मनांसि जानताम्– मानस विरोध भी मत करो। अर्थात मानस विरोध भी त्यागो। जैसे पूर्व विद्वानों ने अपने अपने अधिकार के अनुसार कर्तव्य को जानकर उसका पालन किया है। तैसे आप भी स्वस्वाधिकारानुसार कर्तव्य को जानकर सेवन करो। हे विद्वन् अपने अपने अधिकारानुसार कर्तव्य भाग के सेवन से ही स्वर्ग अपवर्ग आदिक फल प्राप्त होते हैं। इसी आशय से अथर्व मंत्र कहता है कि दिवं च रोह पृथिवीं च रोह राष्ट्रं च रोह द्रविणं च रोह प्रजांच रोहामृतं च रोहितेन तन्वं संस्पृशस्वेति। अथर्वका० १३ अनु० १ व० ४ म० ३४। हे आर्यभक्तो अपने अपने अधिकार में स्थिति गुण तथा विपरीत स्थिति दोष है। साधकों के लिये यह

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गुण दोष का लक्षण स्वयं भगवान् वेद व्यास ने कहा है। उन्हीं व्यास जी ने ब्रह्म वेत्ताओं के लिये गुण दोष का यह लक्षण कहा है कि-गुण दोष का देखना दोष तथा न देखना गुण है। इसी प्रकार साधक के लिये प्रथम परमात्मा साकार स्वरूप ही उपास्य है और ब्रह्मवेत्ताओं के लिये परामात्मा का निराकार सच्चिदानंद स्वरूप ही उपास्य है। ऐसे ब्रह्मवेत्ता को ही अति वर्णाश्रमी नाम से कहकर सर्व वर्णाश्रमियों का गुरु बतलाया है। अतिवर्णाश्रमी-प्रोक्तो गुरुः सर्वाधिकारिणाम्।

नकस्यापि भवेच्छिष्यो यथाहँ पुरुषोत्तम। इति।

वेद उपवेद ब्राह्मण उपनिषद् अङ्ग उपांग स्मृति इतिहास पुराण आदिक आप्त ग्रन्थों में अधिकारियों की कक्षा भेद से कर्तव्य भेदों का उपदेश है। इसमें गृह अधिकारियों के भेद की स्थिति, पाठशाला में स्थित अध्येतृ कक्षा भेद स्थिति एवं राज्याधिकारि कक्षा भेद स्थिति आदिक अनेक उदाहरण जागरूक हैं। किन्तु-अगाध तर्क समुद्र में गोते लगाने से कम्पित, स्तब्धचित्त सभ्य सीमा को उल्लंघन करने वाले ये आर्य अभंक, आगम-उपदेश भेद की अविरोध व्यवस्था को सहसा सुनेंगे भी नहीं। इसी आशय से नीति शास्त्र में राजर्षियों ने कहा है।

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि च तं नरंजयति। इति।

अर्थ— अज्ञानी का प्रसन्न करना सरल है तथा पूर्ण विद्वान का प्रसन्न करना तो अत्यंत सरल है। परन्तु उस अल्प ज्ञान युक्त चित्त वाले मनुष्य को ब्रह्मा भी प्रसन्न नहीं कर सकता है। अतः इनके साथ बोलने को अपेक्षा मौन ही श्रेष्ठ है। तथापि शान्ति

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रिय सभ्य पुरुषों की तो ऐसे समय यही प्रार्थना है कि यावदधिकार मवस्थितेरधिकरिकाणाम् । अपृष्टाः गुरवोवदन्ति । इत्यादि शास्त्र प्रमाण से अधिकारी विद्वान पिता तथा गुरु जनों को पुत्र तथा शिष्यों के लिये मर्यादा का उपदेश देकर जगाना ही कर्तव्य है। इसी आशय से गीता में कहा है कि।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥

वेदादिकों के ज्ञाता श्रेष्ठ पुरुष जिन जिन कर्मों को शुभ-मान कर करते हैं। उनके अनुगामी लोक भी उन्हीं क्रियाओं को किया करते हैं। वे श्रेष्ठ पुरुष जिस शास्त्र को प्रमाण मानते हैं उसी शास्त्र को उनके अनुगामी इतर मनुष्य भी प्रमाण मानते हैं।

लोक संग्रह के लिये भिन्न स्थिति के पथिकों को भी प्रति-बोधन करना चाहिये। यद्यपि परमहंस परिव्राजकाचार्य आप्त पुरुष पूजा उपासना आदिक निम्न मार्गों से उत्तीर्ण होकर निष्कर्तव्य पद पर स्थित हैं। किसी में राग द्वेष न होने पर भी महापुरुषों का भव्य पथ में ही पक्षपात स्वाभाविक है।

जैसे मोक्ष की इच्छा के रहते हुए भी मुमुक्षु निष्काम कहे जाते हैं। उसी प्रकार उक्त लक्षण महापुरुष भी भव्य पक्ष की रक्षा के इच्छुक होते हुए भी यथार्थ निर्णायक होने से पक्षपात रहित ही होते हैं। अतः भव्य पुरुषों को साकार निराकारत्व के विरोधा-विरोध का निर्णय अवश्य देना चाहिये। आर्य अर्भकों की वावदू-कता के कारण अश्लील भाषण को सुनकर निर्णय देने से उपराम होकर मौन नहीं होना चाहिये। क्योंकि ये आर्य अर्भक मंदाक्ष

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

होने पर भी पापाचार स्वभाव के परवश होने के कारण मंदाक्षता का सेवन नहीं करते हैं। परन्तु महापुरुष भी अचल धैर्य हृदय होने से स्वाभाविक कृपालुता को कभी नहीं त्यागते हैं।

अतः भव्य पुरुषों का तो निर्णय यह है कि निराकारत्व साकारत्व का विरोध प्रत्यक्ष प्रमाण का विषय नहीं अपितु अप्रत्यक्ष प्रमाणक हैं। क्योंकि विरोध प्रत्यक्ष का विषय ही नहीं है।

पूर्वपक्ष—जिनके धर्मि का निर्धारण नहीं है ऐसे जो निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध प्रत्यक्ष का विषय है। यही प्रकृत विषय है।समाधान—जिस साकारत्व निराकारत्व धर्मों का आपको प्रत्यक्ष होता है। उस विशिष्ट प्रत्यक्ष ज्ञान में विरोध विशेषण हैं अथवा विशेष्य है। यदि कहें कि विरोध विशेषण है। तो यह कहना संभव नहीं। क्योंकि यह पक्ष दोष युक्त है। क्योंकि प्राचीन आचार्य विशेषण के ज्ञान को विशिष्ट ज्ञान में कारण मानते हैं। निराकारत्व-साकारत्व विरुद्ध हैं यह विशिष्ट ज्ञान का आकार है। इसमें विरोध विशेषण है। विरोध का ज्ञान विशिष्ट ज्ञान का हेतु कहना चाहिये। परन्तु यह संभव नहीं क्योंकि निराकारत्व-साकारत्व रूप धर्मि प्रतियोगि के ज्ञान के बिना केवल विरोध का ज्ञान नहीं हो सकता है। नियम यह है कि धर्मि प्रतियोगि ज्ञान सापेक्ष ही विरोध का ज्ञान होता है। अतः लोक तथा वेद में धर्मि प्रतियोगि निरपेक्ष विरोध की स्थिति, अथवा धर्मि प्रतियोगि ग्रहण निरपेक्ष-विरोध का ग्रहण नहीं देखा गया है। क्योंकि धर्मि प्रतियोगि निरूपण के आधीन ही विरोध का निरूपण होता है। इसलिये आपके मति-धाम में अन्योन्याश्रय दोष रूप अतिथि आरहा है। उसका स्वागत कीजिये। अतिथि का स्वरूप यह है कि विशेषणी भूत विरोध के ज्ञान को धर्मि प्रतियोगी के ज्ञान की अपेक्षा तथा धर्मि प्रतियोगि रूप विशेष्य के ज्ञान को विशेषणी भूत विरोध के ज्ञान की आव-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्यकी अपेक्षा है। यहाँ स्व स्व ज्ञान की उत्पत्ति में परस्पर की अपेक्षा होने से अन्योन्याश्रयदोष अत्यन्त स्पष्ट है।

यदि यह कहा जाय कि विरोध का विशेष्य रूप से ग्रहण है न कि विशेषण रूप से। इस पक्ष का भी उपपादन नहीं किया जा सकता है। क्योंकि विरोध का विशेष्य रूप से ग्रहण होने पर साकारत्व निराकारत्व का विशेषण रूप से ग्रहण होगा। यहाँ "निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध है" यह विशिष्ट ज्ञान का आकार है। इसमें आपसे यह पूछना है कि जिन धर्मों का विरोध के विशेषण रूप से प्रत्यक्ष ग्रहण है। सो उनका एक अधिकरण में रहते हुए धर्मों का प्रत्यक्ष प्रमाण से ग्रहण है अथवा भिन्न भिन्न अधिकरण में। प्रथम पक्ष में भी यह उपपादनीय है कि एक अधिकरण में स्थित भी तिन धर्मों का ग्रहण एक काल में है अथवा भिन्न भिन्न काल में। इनमें से प्रथम पक्ष तो असंभव है। क्योंकि एक कालावच्छिन्न एक अधिकरण में स्थित निराकारत्व साकारत्व का विरोध के विशेषण रूप से ग्रहण होता है तब तो विरोध की कथा ही समाप्त है। तमः प्रकाशादि मिथः विरोधियों का एक कालावच्छिन्न एक अधिकरण में साथ रहना असंभव होने से अदृष्टचर है। तमः प्रकाश का अनपायी विरोध होने से जब जहाँ तिमिर है तब वहाँ प्रकाश नहीं, तथा जब जहाँ प्रकाश है वहाँ तिमिर नहीं विरोधियों का एक काल में एक अधिकरण में न रहना पांसुपादहालिक एवं अजाविपाल गोपाल भी जानते हैं। अतः विरुद्ध धर्मों का एक कालावच्छिन्न एक अधिकरण में सहावस्थान कहना तो विरोध का ही निराकरण करना है। अथवा मेरी माता बन्ध्या, पिता नैष्ठिक ब्रह्मचारी है तथा मेरे मुख में जिह्वा नहीं है इस प्रकार स्व वाग्व्याघात है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एवं द्वितीय पक्ष भी असम्भव है। क्योंकि भिन्न काल में एक अधिकरण में रहने वाले धर्मों के विरोध का निश्चय किसी उपाय से नहीं किया जा सकता है जो वीर अपने अपने अधिकारानुसार भिन्न काल में एक अधिकरण भूत प्रदेश में आ आ कर स्व स्व कर्तव्य का पालन करते हैं। उन वीरों के विरोध की तो संभावना भी नहीं की जा सकती है। उसी प्रकार भिन्न भिन्न काल में एक अधिकरणवर्ती निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध की भी संभावना नहीं की जा सकती। अतः कहिये आपको उनके विरोध का निश्चय कैसे हुआ है।

किंच यदि आप उक्त अवधारण में कुंठित बुद्धि होकर कहें कि विरोध होने से ही विरुद्ध धर्म एक काल में साथ साथ एक अधिकरण में नहीं आ सकते हैं। सो भी उचित नहीं है। क्योंकि ऐसा मानने पर तो भिन्न कालिक एक अधिकरण में आकर कर्तव्याधिकार की कथा ही समाप्त हो जायगी।

यह जो आपने अयौगपद्यता कही है वह स्वाभाविक है यानैमित्तिक है। आद्य पक्ष में भी वह स्वभाव निराकारत्व का है अथवा साकारत्व का है। तहाँ निराकारत्व की स्वभाव सिद्ध अयौगपद्यता तो कह नहीं सकते हैं। क्योंकि निराकारत्व की स्वभाव सिद्ध अयौगपद्यता होने से कादाचित्कता ही प्राप्त होती है। कारण यह है कि जो जिसका स्वभाव होता है वह उसको एक क्षणमात्र के लिये भी त्यागने को सहन नहीं करता है। इसमें अनेक अग्नि उष्णत्वादिक उदाहरण प्रसिद्धतम हैं। इसलिये अयौगपद्यता भी निराकार है। क्योंकि स्वभाव में पर्यनुयोग नहीं होता है। अतः परमात्मा में निराकारत्व साकारत्वकाल में नहीं होगा। इस प्रकार निराकारत्व की कादाचित्कता ही होगी। जो कि इष्ट नहीं है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

क्योंकि वादी प्रतिवादी दोनों को परमात्मा में सदातनी निराकारता स्वीकृत है। इसलिये परमात्मा में निराकारत्व की अयौगपद्यता स्वाभाविक है। यह अर्थ शून्य कथन है। जो एक काल में न हो उसे अयौगपद्य कहते हैं।

यदि यह कहा जाय कि अयौग-पद्यता साकारत्व का स्वभाव है। सो भी असंभव है। क्योंकि यह पक्ष भी अनिष्ट दायक है। यही दिखाते हैं कि-आपको परमात्मा का निराकारत्व सर्वथा इष्ट है, तथा साकारत्व अनिष्ट है। इसलिये निराकारत्व के साथ साकारत्व का कहीं भी निरूपण नहीं होना चाहिये। यह तुम्हारा सिद्धान्त है। यदि आप अयौगपद्यता को साकारत्व का स्वभाव कहेंगे। तो साकारत्व का निराकारत्व के साथ सर्वदा सहावस्थान न होने पर भी किसी काल में तो सहावस्थान होगा ही। यह स्वाभाविक निराकारत्व साकारत्व सहवास आप आर्यों के सिद्धान्त का परम विरोधी है। यही आपको अनिष्ट प्रसंग है।

यदि निराकारवादी यह कहे कि जब साकारत्व आयेगा तब प्राचीन भी निराकारत्व को निकाल देगा। अतः साकारत्व के समय निराकारत्व न रहेगा। इसलिये अनिष्ट प्रसंग भी कैसे होगा। निराकारवादी का यह कहना भी अविचार से ही सिद्ध है। क्योंकि परमात्मा में से किसी भी समय के लिये निराकारत्व का निकल जाना तो आर्यों का अत्यन्त अनिष्ट है। क्योंकि साकारत्व काल में निराकारत्व परमात्मा से निकल कर रहेगा कहाँ। विचार कर देखा जाय तो अविद्या से रचित स्वप्नावस्था का सार्वभौमत्व, पारमार्थिक भिक्षुपने का विरोधी नहीं है। एवमेव मायिक साकारत्व पारमार्थिक निराकारत्व का विरोधी नहीं है। निराकारत्व परमात्मा का पारमार्थिक रूप है यह वेदान्त का सिद्धान्त है। पादोऽस्य विश्वा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि। तिष्ठति दशाङ्गुलम्। इत्यादि वेद मन्त्रों ने परमात्मा की साकारता निराकारता रूप उभय रूपता कही है। परमात्मा को साकार न मानने पर यह प्रश्न शान्त न होगा कि "यह विस्तृत जगत् किसने किससे कहाँ कब किस लिये किया तथा कब और कैसे शान्त होगा।" क्योंकि परमात्मा निष्क्रिय अद्वैत तथा उत्पत्ति से पहिले देश कालादिकों से रहित है। इन प्रश्नों का वेदान्ततत्व समझे बिना केवल निराकारवादी के पास क्या उत्तर है। सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत। नारायण इदं सर्वं। वासुदेवः सर्वमिति। इत्यादि वाक्यों का भी वे क्या अर्थ करेंगे। यदि वे वेदान्त के तत्व को समझेंगे तो सर्व शास्त्र के अर्थ का यथार्थ तत्व भी समझ सकेंगे और समझा भी सकेंगे। इतने निरूपण से अयौगपद्य पक्ष का भी निराकरण होगया यह जान लेना चाहिये।

अयौगपद्य पक्ष में भी उक्तदूषण विद्यमान हैं। क्योंकि जहाँ पर नैमित्तिक अयौगपद्यता है वहाँ पर स्वाभाविक यौगपद्यता है। यह नियम है। निमित्त से लब्धात्मा पदार्थ नैमित्तिक निमित्त से बिना लब्धात्मा अनैमित्तिक (स्वाभाविक) कहलाता है। यदि अयौगपद्यता नैमित्तिक है तो उससे स्वाभाविक यौगपद्यता का निराकरण नहीं किया जा सकता है। क्योंकि यौगपद्यता तो स्वाभाविक है। जैसे मनुष्यों का मनुष्यत्व रूप से अभेद स्वाभाविक है। तथा वर्णकृत भेद नैमित्तिक है। क्योंकि ब्राह्मणादि वर्णों के भेद का निमित्त यजन याजनादि कर्म हैं। यह शास्त्र वेत्ताओं की मर्यादा है। इस वर्ण भेद से ही अधिकारों में भी भेद है। क्योंकि अश्वमेध राजसूय यज्ञ रूप कर्म में क्षत्रिय वर्ण का ही अधिकार है। वैश्यष्टोम में वैश्य वर्ण एवं ज्योतिष्टोम में ब्राह्मण वर्ण का अधिकार है। यद्यपि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र यह वर्ण विभाग जन्म से

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हैं तथापि अपने अपने कर्म से ही वर्ण विभाग की प्रतिष्ठा होती है। द्विजत्व जाति को संपादन करने वाले यज्ञोपवीतादि कर्मों में ब्राह्मण क्षत्रिय वैश इन तीन वर्णों का ही अधिकार है शूद्र का नहीं। इसी अभिप्राय से स्मृतिकारों ने कहा है कि त्रयोवर्णा द्विजातयः। शूद्रस्त्वेक जातिः। इससे यह सिद्ध हुआ कि प्रत्येक श्रौत कर्म में प्रत्येक वर्ण का अधिकार नहीं है। क्योंकि मनुष्यत्वेन एक जातीयता स्वाभाविक होने पर भी वर्णकृत नैमित्तिक भेद है। नैमित्तिक भेद से स्वाभाविक अभेद किसी के द्वारा खण्डन भी नहीं किया जा सकता है। क्योंकि स्वभाव सिद्ध होने से अभेद नित्य है। मनुष्यत्वेन मनुष्यों का अभेद और ब्राह्मणत्वादि रूपेण मनुष्यों के भेद के समान स्वाभाविक निराकारत्व तथा औपाधिक साकारत्व का परमात्मा में एक साथ रहने में कोई विरोध नहीं है। अतः एक अधिकरण में निराकारत्व तथा साकारत्व धर्मों का परस्पर विरोध है। इस पक्ष का खण्डन हुआ जान लेना चाहिये।

यदि कोई आर्य कहे कि भिन्न अधिकरण में रहने वाले निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध है। यह असम्भव है। क्योंकि भिन्न अधिकरणक धर्मों का विरोध अदृष्टचर है। अतः दृष्ट से विपर्यय होने के कारण श्रद्धेय नहीं है। क्योंकि जो लोक दृष्टानुसारी होते हैं। वे वनवासी हों चाहे नगर निवासी निराकारवादी हों या साकारवादी, उनकी व्यवहारतः कोई विशेषता नहीं होती है। जिन धर्मों के आश्रय ही हिमलय और विन्ध्याचल की भाँति भिन्न भिन्न हैं उनका विरोध हो हो कैसे सकता है। ऐसा कौन उन्मत्त पुरुष होगा जो स्वरूपतः प्रतिष्ठित स्वच्छन्द विहरण शील धर्मों को ये धर्म विरोध धर्मिक हैं। यह निश्चय कर लेगा। अनिश्चित को भी निश्चित कहने वाले मिथ्याभाषी पुरुष का तो वचन कभी श्रद्धेय नहीं हो सकता है। इसही लिये भिन्न अधिकरण

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वाले धर्मों का विरोध है यह मिथ्या वचन निरर्थक होने से अश्रद्धेय है। क्योंकि लोक में एक आश्रय अथवा एक विषय वालों का ही विरोध देखा गया है। अन्यथा अति प्रसंग होगा। स्वयं नेत्रों को खोल कर देखो कि एक अर्थ को विषय बनाकर ही लौकिक पुरुष परस्पर अभिसूया करते हैं। न कि भिन्न भिन्न अर्थों को विषय बनाकर। इसी प्रकार भिन्न भिन्न आश्रय वाले धर्मों का अभिसूया करने में कोई स्वार्थ या परार्थ नहीं है। अतः भिन्न आश्रय वाले निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विशेषण विरोध है। यह अत्यन्त मिथ्या भाषण है। इस प्रकार निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध उपपादन नहीं किया जा सकता है। अतः यह विरोध प्रत्यक्ष प्रमाण सिद्ध नहीं है।

इति सर्वं सितम्।

अथ विरोध की अनुमान गम्यता का प्रतिषेध

यदि कहा जाय कि प्रत्यक्ष प्रमाण का अविषय होने पर भी विरोध अनुमान गम्य है। यह भी सुसाध्य नहीं है। क्योंकि हे तार्किक शिरोमणे! पक्ष धर्म रूप से ज्ञात हेतु ही स्वसम्बद्ध अर्थ का बोधक होता है न कि अज्ञात हेतु। यह न्याय वेत्ताओं का निश्चित कथन है क्योंकि अज्ञात हेतु असमर्थ होता है। अतः जिस निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध को अनुमान प्रमाण से सिद्ध करना चाहते हो, वह विरोध व्यापक रूप से किसी अर्थ के साथ सम्बद्ध है यह अवश्य कहना होगा। क्योंकि असम्बद्ध विरोध की तो सिद्धि ही अनुपपन्न है। वह विरोध जिसके साथ संबन्ध वाला होगा वही सम्बन्ध का आश्रय होकर हेतु कहा जावेगा। पक्ष-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धर्मता से युक्त असन्दिग्ध, अव्यभिचारि हेतु ही अपने साध्य की सिद्धि करने में समर्थ है। ऐसा अनुमानविदों का कथन है। यहाँ पर भी ऐसे ही हेतु की आवश्यकता है। परन्तु हेतु का ही उपपादन कठिन होने से हेतु की पक्षधर्मता या विपक्षधर्मता का उपपादन तो अत्यन्त दूर है। ज्ञात हेतु ही उपपादन किया जा सकता है अज्ञात नहीं। ज्ञान के विषय का नाम ज्ञात है जब हम उसे जानते ही नहीं तो उसका उपपादन कैसे कर सकते हैं कि अमुक हेतु है। क्योंकि हेतु की ज्ञातता, हेतु और साध्य के भूयः सहचार दर्शन के विना असंभव है। यह हेतु है यह साध्य है इस निश्चय का कारण भूयः सहचार दर्शन रूप आत्म प्रत्यय है। कारण के होने पर कार्य का होना कारण के न होने पर कार्य का न होना रूप अन्वय व्यतिरेक से भूयः सहचार के दर्शन के अभाव होने पर हेतु का निश्चय नहीं हो सकता है। तथा भूयः सहचार दर्शन के बिना साध्य का भी निश्चय नहीं हो सकता है। जैसे अग्नि और धूम रूप जो साध्य तथा साधन हैं, उनके अव्यभिचरित सम्बन्ध का दर्शन महानस तथा सभ्यस्थण्डिलालाव में बार बार हुआ है। ऐसा ही सहचार दर्शन प्रकृत में भी विवक्षित है। प्रकृत में साध्य विरोध है। सो प्रत्यक्ष से सिद्ध नहीं है। इसका विस्तार से निरूपण कर चुके हैं। जब साध्य का ही प्रत्यक्ष दर्शन नहीं है। तब भूयः सहचार दर्शन तो हो ही कहाँ से सकता है। भूयः सहचार दर्शन के न होने पर हेतु का ज्ञान ही कैसे संभव है। हेतु का ज्ञान न होने पर हेतु का उपपादन करना तो सूरितमों की शक्ति से भी वाहर है। आर्यार्भकों की तो कथा ही क्या है। हेतु के उपपादन को अशक्य होने से ही पक्ष धर्म रूप से हेतु की प्रमितता भी असंभव ही है। पक्ष धर्म रूप से अज्ञात होने से असमर्थ हेतु अपने साध्य की सिद्धि कैसे कर सकता है। अतः विरोध अनुमान सिद्ध भी नहीं है अलं भूयसा विस्तरेण।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

किंच—जिस विरोध को आप आनुमानिक सिद्ध कर रहे हैं। वह कहीं पर प्रसिद्ध है या नहीं। वह कहीं पर प्रसिद्ध नहीं है यह अन्तिम पक्ष युक्त नहीं। क्योंकि अनुमान में असिद्ध विशेषणता की प्राप्ति भी एक दोष है। जिस पक्ष का साध्य रूप विशेषण कहीं अन्यत्र प्रसिद्ध नहीं होता है वह पक्ष अप्रसिद्ध विशेषण वाला कहा जाता है। जिसका विशेषण ही प्रसिद्ध नहीं उस पक्ष में पक्षत्व का ही अभाव है। जो कहीं पर विशेषण रूप से या अन्य अन्य प्रकार से प्रसिद्ध है वह जिन धर्मी में संदिग्ध है वह धर्मी पक्ष होता है। अर्थात् संदिग्ध साध्यवाला पक्ष होता है। जिस धर्मी में साध्य का संशय नहीं वह सपक्ष है या विपक्ष यह विचार भिन्न है। यदि निराकारत्व साकारत्व धर्म भी विरोध वाले होने से संदिग्ध हैं। तब तो पक्षता सम्पादन करने के लिये कहीं अन्य स्थल में धर्मों के विशेषणी भूत विरोध की प्रसिद्धि कहनी चाहिये क्योंकि पूर्व में किसी स्थल में देखे हुए पदार्थ में ही संदेह की विषयता देखी गयी है। धर्मि अथवा धर्म रूप से पूर्व में अदृष्ट पदार्थ, संदेह को विषयता के योग्य नहीं होता है। अन्यथा शश-विषाण भी संदेह के विषय हो जायेंगे। परन्तु अदृष्ट शशविषाण-दिक पदार्थ "शशविषाणादिक हैं या नहीं" इस संदेह के विषय नहीं देखे गये हैं। उसी प्रकार यदि कहीं पर भी ज्ञात रूप से विरोध प्रसिद्ध नहीं है तो वह कहीं पर भी "विरोध है या नहीं" इस संदेह का विषय कैसे होगा। तिस संशय रहित विरोध रूप साध्य वाले अनुमान में निराकारत्व साकारत्व धर्म भी पक्ष कैसे बनेंगे।

क्योंकि जिसमें साध्य का संशय होता है, वृद्ध जन उसी को पक्ष कहते हैं। संदिग्ध साध्यवान्पक्षः। इति। इस प्रकार विरोध की अप्रसिद्धि होने से अप्रसिद्ध विशेषण वाला पक्ष है, यह दूषण यथार्थ ही है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यदि कहो कि विरोध प्रसिद्ध है तो इस पक्ष में भी यह विवेक करना चाहिये कि कहाँ पर प्रसिद्ध है। क्योंकि विवेक से ही धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप चारों पुरुषार्थों की प्रसिद्धि होती है। विवेक-हीनों का प्रयत्न निरर्थक ही नहीं अपितु अनर्थदायी भी हो जाता है। अविवेकी पुरुष पशुओं के समान होते हैं। अविवेकी पुरुषों के शृंग पुच्छ नहीं होते हैं। बस यही पशुओं से विशेषता है। विवेकी पुरुष के सर्व अनर्थ निवृत्त हो जाते हैं। बहुत क्या कहें विवेकी पुरुष के क्लेश कर्म विपाकाशय तूलिका की तरह दग्ध हो जाते हैं। पुनः अंकुरित नहीं होते हैं। अतएव श्रुति कह रही है कि "विमुक्तश्च विमुच्यते। परमर्षि सांख्याचार्य का सूत्र भी कह रहा है। अविवेकाच्चप्रवर्तनमविशेषाणामिति। सां० अ० ३ सू० ४ विवेचन अर्थात् पृथक् करने को विवेक कहते हैं। योग्य अयोग्य के भेद ज्ञान के लिये ही उक्त लक्षण विवेक किया जाता है। योग्य अयोग्य के ज्ञान के अनन्तर ही मनुष्य को यह विवक्षा होती है कि कौन योग्य है कौन अयोग्य है। इसके पश्चात् योग्य तथा अयोग्य के निश्चय होने पर योग्य को ग्रहण करने वाले पुरुष ही विद्वत्समाज में यहाँ ही देवता अथवा आर्य ऋषि माने जाते हैं।

अयोग्य को ग्रहण करने वाले अविवेकी उनसे विपरीत माने जाते हैं। योग्य तथा अयोग्य के संग्रहण करने वाले पुरुषों का उदाहरण देते हैं। जैसे कोई जिज्ञासु पुरुष श्रद्धा से अकारण दयालु गुरुओं के चरण कमलों के समीप जाकर पूछे कि "अधीहि भगवन्नात्मानमिति" हे भगवन् आत्मा का क्या स्वरूप है! दयालु गुरु ने उत्तर दिया कि य आत्माऽपहत पाप्मा विजरो विमृत्युस्तमु-पादीथाः। अर्थात् लोक तथा वेद में प्रसिद्ध आत्मा है वह पाप पुण्य जरा मृत्यु आदि समूल अनर्थ से रहित है। उस आत्मा को अपना स्वरूप जानो। भाव यह है कि दीक्षित होकर अभ्यास करते

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हुए शिष्य को आत्मा का उपदेश सुनकर आत्मा को जानने की इच्छा होती है कि आत्मा कौन है। पुनः विवेक होता है कि आत्मा शब्द का अर्थ देह तथा पुरुष है। फिर श्रुति तथा युक्ति के अनुसार निश्चय करता है कि पुरुष योग्य है तथा देह अयोग्य है। अतः पुरुष को अपना स्वरूप जान लेता है। इसी प्रकार निराकार भी विवेचनीय विषय है। निराकार शब्द योग्य (सपक्ष) अर्थ वाला है अथवा अयोग्य (विपक्ष) अर्थ वाला है। जहाँ साध्य की शिद्धि का निश्चय होता है वह सपक्ष कहा जाता है जहाँ साध्य की सिद्धि का अनिश्चय होता है उसे विपक्ष कहते हैं। ऐसा अनुमानवेत्ता बृद्ध पुरुषों का निर्णय है तहाँ निराकार शब्दो वाचकोऽस्य निराकरस्यासौ निराकर शब्दो निराकार इति विग्रह।

तहाँ विवेचन किया जाता है कि एक शब्द है तथा दूसरा शाब्द अर्थ है। शब्द तथा अर्थ दोनों विवेचनीय हैं। क्योंकि शब्द ज्ञान पूर्वक ही अर्थ ज्ञान होता है। निराकार पद समस्त है। अथवा असमस्त है। ऐसी आकांक्षा होने पर यह निश्चय होता है कि निराकार पद समस्त है असमस्त नहीं। इसमें तत्पुरुष अथवा बहुब्रीहि समास है। जैसे निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौशाम्बिः। निष्क्रान्तोवाराणस्याः निर्वाराणसिः। इस प्रकार निष्क्रांतः आकारेभ्यः निराकारः। यह तत्पुरुष समास हैं। अथवा अनेक मन्य पदार्थे २।२।२३। इस सूत्र से बहुब्रीहि समास है। जैसे निर्गतरोगो निरोगः निर्गतप्राणो निष्प्राणः इसी प्रकार निर्गताकारो निराकारः। प्रथम समास में "नि" उपसर्ग निष्क्रमण अर्थ वाला है। क्योंकि निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पंचम्या। इस प्रकार विशेष कथन है। उत्तर समास से उपसर्ग निषेध अर्थ वाला है। एवं च सति यह दूसरा विवेक है। कि कौशम्या निष्क्रान्तः कश्चनान्यः कौशाम्बीं परित्यज्य बहिरुग्दतः। अर्थात् कौशाम्बी को त्यागकर कोई बाहर गया है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वह पुरुष है या पशु। इसको ही कौशाम्बी शब्द से कहा है। इसी प्रकार प्रकृत में भी है। आकारेभ्यो निष्क्रान्तः कश्चन निराकारः। अर्थात् कोई आकारों को त्याग कर वर्तमान पदार्थ निराकार शब्द से कहा जाता है। वह गन्ध है ज्ञान है अथवा शब्द है। आकार स्वरूप तथा मूर्ति यह एक ही अर्थ के वाचक हैं। अतः निराकार शब्द का अर्थ मूर्ति रहित स्वरूप रहित अथवा आकार रहित है। तो मूर्ति रहित शून्य है अथवा ईश्वर है। इस प्रकार निराकार शब्द और उस के अर्थों में आचार्य पद सेवी विनेय, विचार के आरम्भ में प्रश्न करता है कि निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध के साधक निराकारैकवादी पुरुष दोनों धर्मों के विरोध की सिद्धि को गन्ध, ज्ञान, शून्य तथा परमेश्वर में से कहाँ बतलाते हैं। इसमें से प्रथम पक्ष असम्भव है। क्योंकि आपातरमणीय है। जो पक्ष परीक्षक विद्वानों की दृष्टि (विचार) के अभिघात को सहन न कर सके वह आपातरमणीय कहा जाता है। लौकिक अलौकिक भेद से गन्ध दो प्रकार का है। अलौकिक गन्ध में तो तिस विरोध की अनुभूति होही नहीं सकती है। क्योंकि लौकिक घ्राण से अलौकिक गन्ध का साक्षात्कार नहीं किया जा सकता है। तब अलौकिक गन्ध धर्मिक विरोध का साक्षात्कार तो लौकिक घ्राण से हो ही कैसे सकता है। अलौकिक गन्ध लौकिक प्रत्यक्ष के अयोग्य है। अयोग्य योग्य तथा योग्य अयोग्य नहीं होता है। जो अयोग्य गन्ध में भी लौकिक प्रत्यक्ष प्रमाण की योग्यता मानता है वह किस अशक्य अर्थ की शक्यता नहीं मान सकता है। अर्थात ऐसा पुरुष आकाश वेष्टन को भी योग्य कह सकता है। योग्य को अयोग्य (अशक्य) अयोग्य (अशक्य) को योग्य (शक्य) मानने वाला निरंकुशतुण्ड पुरुष ही निजी परिभाषा में अलौकिक गन्ध को प्रत्यक्ष के योग्य कह सकता है। सारांश यह है कि अलौकिक गन्ध में लौकिक प्रमाण से विरोध की प्रसिद्धि नहीं है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एवं लौकिक गन्ध में भी विरोध की प्रसिद्धि नहीं है। क्योंकि जैसे स्पष्टालोक वर्ति घट का रूप, सर्व साधारण को प्रत्यक्ष है। क्योंकि धर्मि के सर्व साधारण होने पर उसका धर्म भी सर्व साधारण ही होता है। तैसे ही सुगन्ध और दुर्गन्ध भेद से दो प्रकार का गन्ध सर्वसाधारण को प्रत्यक्ष है। क्योंकि लौकिक गन्ध मात्र का सर्व घ्राणमात्रैकग्राह्यत्व स्वभाव है। जिस धर्म के धर्मि का भेद नहीं होता है वह धर्म सर्व साधारण होता है। अतः तिस गन्ध रूप धर्म के धर्मि भूत विरोध का उक्त घट रूप उदाहरण से सर्व साधारण को प्रत्यक्ष होना चाहिये। परन्तु यह अनुभव विरुद्ध है। क्योंकि गन्ध का अनुभव करते हुए भी बुद्धिमान तटस्थ, मध्यस्थ, निराकारवादी या साकारवादी भी सुरभि असुरभि की तरह विरोध का प्रत्यक्ष नहीं करते हैं। यदि विरोध का अधिकरण लौकिक गन्ध ही है तो रसोई घर में धूम की भाँति, निर्दोष गन्ध वाले पुरुष विरोध को प्रत्यक्ष क्यों नहीं करेंगे कि निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध है। किन्तु अवश्य ही करेंगे। परन्तु विरोध का अधिकरण गन्ध है इस प्रकार विरोध का प्रत्यक्ष किसी को नहीं होता है। क्योंकि भेद की भाँति विरोध भी असिद्ध है। अतएव वैशेषिक दर्शन के भाष्यकार प्रशस्तपाद ने भाष्य में कहा है कि—

गन्धो घ्राणग्राह्यः पृथिवीवृत्तिः घ्राणसहकारी सुरभिर सुरभिश्च।

अतः सपक्ष गन्ध नहीं अपितु विपक्ष है। यह अर्थ अनाकुल है। इतने से ज्ञान में विरोध की सिद्धि है इस पक्ष का भी खण्डन होगया ऐसा जान लेना। क्योंकि निराकार होने पर भी ज्ञान की अर्थ द्वारा साकारता ही उत्पादन की है। अर्थेनैव विशेषोहि निराकारतयाधियाम्।

शब्द में विरोध की सिद्धि है। यह पक्ष भी युक्ततर नहीं है। क्योंकि अनिष्ट प्राप्त होता है। तथा हि। जिसकी इच्छा

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

की जाती है उसे इष्ट कहते हैं। जिसकी इच्छा न की जाय उसे अनिष्ट कहते हैं। इसी को जिहासि अभव्य, अकल्याण, अभद्र, अमंगल, अशिव, अनैश्वर्य, अकीर्ति एवं अनर्थ भी कहते हैं। यह अनर्थ किसी को इस लोक में किसी को परलोक में प्राप्त होता है। परन्तु आप आर्य अर्भकों को दोनों लोकों में प्राप्त होगा। उभय लोक में अनिष्ट प्राप्ति का कारण विरोध है। जहाँ भी विरोध वीर पदार्पण करता है वहीं सर्वस्व नाश हो जाता है। बहुत क्या कहें इस अकीर्तिवर्धक अभव्य विरोध का आप आर्य अर्भकों में प्रत्यक्ष दर्शन है। संभावितों के लिये, अकीर्ति, मरण से भी अधिक दुःखदायी होने से, अकीतिवर्धक विरोध इष्ट नहीं है। अतएव गीता में कहा भी है कि-संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते। इति। संभावितस्य पद जाति वाचक होने से संभावितस्य के स्थान में संभावितानाम् समझना चाहिये। आप आर्य अर्भकों के पुरातन पूर्वज ब्रह्मर्षि राजर्षि आदिक सर्व महापुरुष, विद्या, शौर्य, वीर्य ब्रह्म-वर्चस् पराक्रम अर्थ धर्म काम मोक्ष रूप पुरुषार्थ के प्रकाशक, वेद भगवान् के अभिधेय अर्थ के अनुष्ठाता हो कर सव भूतात्मभूतात्मा ऋजु गुप्सिताचार तथा ब्रह्मवेत्ता हुए हैं। यह वार्ता वेद शास्त्र पुराणादि के तत्त्वार्थ के वेत्ता भारतीयों को ही नहीं अपितु वर्षान्तरीयों को भी प्रसिद्ध है। क्योंकि इस नश्वर संसार मण्डल में इनके कर्तव्य कर्म भेद उपासना भेद, अतएव उपदेश भेद अनश्वर रूप से अब भी प्रत्यक्ष उपलब्ध हो रहे हैं। ऐसे विश्वविख्यात कीर्ति, विश्व-विद्वन्मण्डल संभावित वेदाभिमंताओं की आप आर्य अर्भक भी संतान हैं। अपने पूर्वजों को असम्भावित बनाने में प्रयत्नशील आप ही असम्भावित हो जायेंगे। इसलिये ही आप इस जगत् में जीते हुए ही इस समय मरण से अधिक दुःख भोग रहे हैं और भोगेंगे। आप भव्य तथा महोदय आदिक शब्दों के वाच्यन बनकर अनार्य अर्भक हो माने जायेंगे। अतः अधर्म रूप इस विरोध बुद्धि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तथा इसके कारण, अनम्रता, अभिमान और अहंकार को त्यागो। धर्म रूप अविरोध का सेवन करो। आशीर्वाद रूप निम्नलिखित ऋग्वेद के मंत्रों के उपदेश को स्मरण करो।

संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।
समानीव आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहाऽसति॥

हे आर्य अर्भको इस प्रकार पुनः पुनः जगाने पर भी यदि आप श्रद्धा से ज्ञानोपदेश को ग्रहण नहीं करते हो तो इसमें तटस्थ अथवा मध्यस्थ पुरुष क्या कर सकते हैं। अतः आप प्रसन्न मन से प्रयत्न पूर्वक अभव्य तथा अकीर्ति आदि अनिष्ट का सेवन मत करो।

एक और भी अनिष्ट प्रसंग आपको प्राप्त हो रहा है। उसे ही दिखाते हैं। आपने जो शब्द सपक्ष स्वीकार किया है वह शब्द स्फोटात्मक है अथवा वर्णात्मक है। दोनों प्रकार से भी लघु वा महान् सीधे वा टेढ़े किसी रेखा रूप ही अक्षर कल्पना करने पड़ेंगे। अथवा उनका कोई लक्षण कल्पना करना पड़ेगा। क्योंकि जगत् का सब व्यवहार शब्दों के अनुकरण रूप रेखा अथवा लक्षणों के ही आधीन है। भाव यह है कि जितना जगत् में लौकिक तथा वैदिक व्यवहार है वह शब्द से ही चल रहा है। अतः जगत् व्यवहार की सिद्धि के लिये निराकार स्वरूप शब्द का जब तक कोई लक्षण अथवा रेखारूप अनुकरण कल्पना न किये जायेंगे तब तक जगत् का व्यवहार ही नहीं सिद्ध हो सकता है। और न वेद शास्त्र ऋषि महर्षि अभियुक्तों का उपदेश हो सकता है। और न राज्य प्रबन्ध

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ही हो सकता है। अधिक क्या कहें अस्मदादिकों का वाणी विलास या निबन्ध रचना भी नहीं हो सकती है। अतः शब्द के निराकार होने पर भी उसकी साकार कल्पना अवश्य ही करनी होगी। एवं जितने भी दृष्टि दिव्यदृष्टि अथवा अनुमान गोचर रूप हैं वे सर्व निराकार के ही शरीर हैं। हे आर्य अर्भको इस आशय से ही सर्व खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत। यह आगम वचन युक्ति पूर्वक सर्व जगत की ब्रह्म रूपता का उपदेश देरहा है। एवं च सति कहाँ विरोध है तथा कैसे शब्द को सपक्षता हो सकती है। क्योंकि यदि निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध का अधिकरण शब्द होता तो निराकार होता हुआ शब्द साकार की तरह कैसे प्रतीत होता। प्रतीत होता है। अतः शब्द विरोध का अधिकरण नहीं है। अपितु अविरोध का उदाहरण है। जैसे शब्द के उक्त प्रकार से दो रूप हैं उसी प्रकार परमात्मा के भी निराकार और साकार दो रूप हैं। यद्यपि परमात्मा की उभयरूपता अर्वाचीन केवल शाब्दिकों आर्य वैदिकों को इष्ट नहीं भी हो परन्तु पुरातन आर्य वैदिकों को तो इष्ट ही है। यदि इस उदाहरण को आर्य अर्भक भी स्वीकार करेंगे तो अप सिद्धान्त प्राप्त होगा। यही द्वितीय अनिष्ट प्रसंग का रूप है।

इतने से शून्य में विरोध की सिद्धि है यह पक्ष भी निराकृत हुआ जान लेना। क्योंकि शब्द की तरह यहाँ भी बाध विद्यमान है। तथाहि-शून्य के मानने वाले तीन हैं। (१) ज्यौतिषिक (२) वैशेषिक (३) बौद्ध। तहाँ ज्यौतिषिक लोक तो अपने लोक में रेखा विशेष का भेदमात्र संख्या सर्वस्व को ही शून्य इस नाम से प्रख्यात विन्दू के आकार वा कूपाकार को ही शून्य कहते हैं। यदि आप इसको ही उदाहरण मानते हैं तो स्पष्ट ही बाध है। क्योंकि इस परिभाषा से तो निराकार की भी साकार की तरह उपलब्धि सर्व

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जन प्रसिद्ध है। यदि निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध होता तो निरुपाख्य शून्य, सोपाख्य की तरह सर्व जन को उपलब्ध नहीं हो सकता था। क्योंकि केवल निरुपाख्य कल्पित शून्य की उपलब्धि किसी को भी नहीं होती है। जब कि उक्त विधया निराकार शून्य भी साकार की तरह उपलब्ध होता है कि यह ० शून्य है तब वह शून्य विरोध का अधिकरण या सपक्ष कैसे सम्भव हो सकता है। यह आर्य अर्भकों को स्वयं ऊहा करनी चाहिये। विद्वानों के मध्य आम्रेडन के परिश्रम से किंचित् भी फल नहीं है। इत्यलम्।

तदभावश्चापवर्गे। नास्ति घटो गेहे इति
सतो घटस्य गेहसंसर्ग प्रतिषेधः ॥

इत्यादि ग्रन्थ से सूचित द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेष समवाय इन छः पदार्थों के निषेध रूप एवं सर्वथा भाव पदार्थ परतन्त्रं अनेक प्रकार की संज्ञा वाले अभाव को ही वैशेषिक लोक शून्य कहते हैं। यदि आप इस शून्य को उदाहरण बनाते हैं तो यह पक्ष युक्ततर नहीं है। क्योंकि जब अप्रति बुद्धतत्वधीमान् ही यथार्थ नहीं कह सकता तब साधारण पुरुष की तो कथा ही क्या है। आप विपक्षरूप अभाव का सपक्ष रूप से उदाहरण दे रहे हैं। इससे ज्ञात होता है कि आप तत्त्व नाम की वस्तु के स्वरूप को ही नहीं जानते हैं। तथाहि। अभाव सप्रतियोगिक ही होता है निष्प्रतियोगिक नहीं। क्योंकि घटाभाववद्भूतलम् पटाभाववद्भूतलम्। इस प्रकार अभाव की विशिष्ट प्रतीति ही होती है। इस प्रतीति का रज्जुसर्प आदि की प्रतीतियों की तरह बाध भी नहीं होता है। अतः यह प्रतीति प्रामाणिकी है अप्रामाणि की नहीं। पूर्वोक्त प्रकार से धर्मि प्रतियोगि के विना केवल अभाव का अनुभव किसी को

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भी न होने से अभाव सप्रतियोगिक ही है। निष्प्रतियोगिक नहीं। यह वैशेषिकों की स्वीकृति है। भाव यह है कि प्रयुज्यमान नञ् पदार्थ का ही प्रतिषेध किया करता है, अपदार्थ का नहीं। क्योंकि न अपदार्थम् (अपदार्थ नहीं है) इस प्रकार अपदार्थ का प्रतिषेध नहीं किया जा सकता है। यहाँ दो नञ् होने से पदार्थ है। इस प्रकार पदार्थ का सत्व ही स्थापित होता है। इसी तात्पर्य से वैशेषिकों ने प्रध्वंसाभाव को सादि होने पर भी नित्य माना है। अन्यथा प्रतियोगी का ही उज्जीवन प्राप्त होगा। हे आर्य अर्भक स्वयं विचार कर देखो कि लब्ध स्वरूप पदार्थ ही क्रिया फल शाली होता है। अलब्धस्वरूप नहीं। अतः पदार्थ का ही प्रतिषेध या स्थापन हो सकता है। द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेष समवाय इस भेद से पदार्थ ६ हैं। जिसका निषेध अथवा स्थापन किया जाता है वही तिस निषेध अथवा स्थापन का प्रतियोगी विशेषण या उपलक्षण कहा जाता है। प्रतियोगी से विशिष्ट अथवा उपलक्षित अभाव ही विशिष्ट प्रत्यय वेद्य कहा जाता है। जैसे घटाभावः पटाभावः शाटिकाभावः कपाटिकाभावः ।।इति।। इस प्रकार सर्वथा सापेक्ष होने से भाव परतन्त्र ही अभाव होता है। स्वतन्त्र नहीं। भाव यह है कि अभाव सप्रतियोगिक ही होता है, निष्प्रतियोगिक नहीं। अतएव सद्भ्यामभावोनिरूप्यते नासद्भ्याम्। यह प्राचीन आचार्यों का कथन संगत है। किसका कहाँ पर अभाव है। ऐसी जिज्ञासा होने पर धर्मिप्रतियोगी द्वारा ही अभाव का निरूपण किया जा सकता है। धर्मि प्रतियोगी के बिना नहीं किया जा सकता है। जैसे गेहे घटाभावः। घर में घट का अभाव है। यहाँ पर जो धर्मि का और प्रतियोगि का कथन है। वही अभाव का आकार अर्थात् शरीर है। अतः अभाव साकार है केवल निराकार नहीं। किन्तु निराकार होता हुआ भी धर्मि प्रतियोगि सापेक्ष होने से अभाव साकार भी है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अतः अभाव विपक्ष ही है सपक्ष नहीं। आगे कृत बुद्धि विद्वान् स्वयं विचार करें। अत्रायं संग्रह श्लोकः।

निष्प्रतियोगिकाभावं मन्यन्ते नैव तार्किकाः।
स प्रतियोगिके तस्मिन् साकारत्वं प्रसज्यते॥

अति नास्तिक एक बौद्ध शून्य को ही जगत् का तत्व मानते हैं। यदि आपको भी यही मत अभीष्ट है तो रहो। हमारा आपको हटाने में प्रयत्न नहीं। फिर भी निष्पक्ष भाव से यह बता देना चाहते हैं कि विपक्ष जलधि में डूबते हुए आप आर्य अर्भकों को यह शून्य पक्ष का अभ्युपगम भी कुशकाश के समान अकिंचित्कर अवलम्ब होने से उद्धार नहीं कर सकता है। क्योंकि समर्थ अवलम्ब ही दूसरे को सामर्थ्य प्रदान कर सकता है असमर्थ नहीं। स्वयं असमर्थ होने से यह शून्य पक्ष डूबते हुए का किंचित् भी हित या उपकार नहीं कर सकता है। यह भारतीय शास्त्रार्थ रूप नदी नद के पारकर्ता विद्वानों को अति प्रसिद्ध है। अतः निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध का सपक्ष बौद्धाभिमत शून्य भी नहीं बन सकता है। अब आप आर्य अर्भकों को स्वबुद्धि व्यय से बात करनी चाहिये। यदि आप गुरुकुल में शिक्षित हैं तो आपको बौद्धसमयानुसार ही शून्य का उपपादन करना होगा।

एक शून्य ही जगत् का तत्व है ऐसी बौद्धों की मान्यता है। परन्तु केवल निर्विशेष शून्य को जगत् का तत्व बौद्ध नहीं मानते हैं। अतः उनके मत से भी शून्य में साकारत्व के प्रवेश होने से निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध की सिद्धि नहीं हो सकती है। जगत् का सत्व शून्य है। ऐसा शून्यवादी मानते हैं। वह सत्व चाहे पारमार्थिक हो चाहे आविद्यक (सांवृत्तिक) हो। यह विवेचना

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अन्य है। जिसका यहाँ अवकाश नहीं है। यहाँ तो केवल यह कहना है कि जगदुपलक्ष अथवा जगद्विशेषित ही शून्य को मानना होगा। अन्यथा जगत् का तत्व शून्य है, यह ज्ञान तथा कथन ही संभव नहीं होगा। क्योंकि निर्विशेष का बोध नहीं हो सकता है। जो जाना जाता है वह निर्विशेष नहीं होता है। अन्यथा स्वरूप का ही हनन हो जायगा जो कि किसी को इष्ट नहीं है। विशेष क्या कहें ईश्वर से पिपीलिका पर्यन्त सर्व पदार्थ सविशेष हुए ही जाने जाते हैं। निर्विशेष रूप से नहीं। उसी प्रकार शून्य भी सविशेष रूप से ही जाना जा सकता है, अन्यथा नहीं। जाति बचन गुण वचन क्रियावचन नाम वचन सम्बन्ध वचन भेद से शब्द पंच प्रकार का है। जैसे शुक्ला गौर्धावति भद्रे को भारवाहः॥ इति॥ जाति गुण क्रिया नाम सम्बन्धों में से एक का भी जिस निर्विशेष शून्य में समन्वय नहीं हो सकता उस शून्य में शब्द की प्रवृत्ति भी कथमपि सम्भव नहीं हो सकती है। शब्द की प्रवृत्ति के विना शून्य का कथन या उपदेश भी कैसे होगा। यदि कथन या उपदेश होगा तो शून्य में जाति गुण क्रिया नाम सम्बन्धों में से कोई एक अवश्य मानना होगा। वह चाहे औपाधिक हो अथवा स्वाभाविक इसमें कोई आग्रह नहीं। किंतु किसी रूप से किसी एक के रहने का आग्रह है। क्योंकि जाति आदिकों में से एक का शून्य में रहना ही शून्य के ज्ञान का उपाय है। ज्ञान मुक्ति का साधन है। अतएव तैर्थिकों का यह उपदेश है कि जिस सत्व में जाति आदिकों का स्वाभाविक कोई संबन्ध नहीं है उस तत्व में जाति आदिक सांवृत्तिक हैं ऐसा मानना चाहिये। यदि शून्य में किसी विशेष का स्वाभाविक होना असंभव है तो भी नैमित्तिक समवाय अवश्य कहना होगा। निमित्त तो कल्पित जगत् ही है अन्य नहीं। जो जगत् के सहित है वह निराकार होता हुआ भी साकार कैसे नहीं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

है। क्योंकि निरतिशयैकजगदाकारता का शून्य में सद्भाव है। जबकि निराकार भी शून्य सद्भाव मूर्ति आत्मक जगत् से साकार भी है वह सपक्ष कैसे सपक्ष बनेगा और विपक्ष न बनेगा। इसका निर्णय विद्या में कृतपरिश्रम विद्वान् ही करें। बहुत वाक्य विस्तार रूप शून्य कथा के कथन से क्या प्रयोजन। अत्राप्ययं संग्रहः।

सत्यादिकल्पशून्यत्वाच्छून्यं बौद्धैरुदाहृतम्।
लक्ष्म तस्य जगत्प्राहुस्तत्कथं निर्विशेषकम् ॥१॥
एवं बौद्धान्तशून्यानामभिधायि सुविस्तरम्।
तत्वं विद्वद्विनोदाय पश्यन्तु निर्मलाशयाः ॥२॥

निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध का सपक्ष महेश्वर है, यह भी असम्बद्ध भाषण है। क्योंकि ईश्वर में वर्तमान निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध को साध्य होने से महेश्वर सपक्ष नहीं है। उसमें तो उक्त धर्मों का विरोध तो स्वयं ही सन्दिग्ध है। वही उदाहरण कैसे बन सकता है। जो उदाहरण नहीं उसको उदाहरण कहने वाले का भाषण असम्बद्ध कैसे नहीं अपितु अवश्य है। भाव यह है कि जहाँ साध्य भूत धर्मों के साथ जिसकी सदृशता है वहाँ तत्प्रयुक्त तद्धर्मभावित्व ही निश्चय किया जाता है। अतः तिसका ही वहाँ उदाहरण दिया जा सकता है। अन्य का नहीं। प्रकृत परमेश्वर में वर्तमान निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध सुतरां सन्दिग्ध है। अतएव तत्समान धर्मता और तत्प्रयुक्त तद्धर्म भाविता का उदाहरण उसमें ही नहीं दिया जा सकता है। क्योंकि तत्संदिग्ध में तद्धर्मता का निश्चय अयुक्त है। अन्यथा सर्वत्र संशय अथवा निश्चय या तत्समवाय ही होगा। परन्तु यह इष्ट नहीं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

क्योंकि निश्चित घटत्वघट में संशय नहीं देखा जाता है। संशयास्पद स्थाणु अथवा पुरुष में "यह स्थाणु ही है या पुरुष ही है" इस प्रकार का एक कालावच्छिन्न निश्चय भी नहीं देखा जाता है। क्योंकि जो सन्दिग्ध है सो सन्धिग्ध ही है। असन्दिग्ध या अनिश्चित नहीं। जो निश्चित होता है वह अनिश्चित या सन्दिग्ध नहीं होता है। प्रमाण की प्रवृत्ति से प्रथम विषयविषयक संशयाभाव ही असंभव है। ईश्वरीय निराकारत्व साकारत्व धर्म संदिग्ध हैं। तिन सन्दिग्ध धर्मों का अधिकरण ईश्वर पक्ष के सदृश है। सपक्ष नहीं। पुनः आप ही विचार कर कहिये ईश्वर के धर्मों में ही ईश्वरीय धर्मों के विरोध का दृष्टान्त कैसे हो सकता है। इस प्रसिद्धानुमान में पक्ष से दृष्टांन्त की भिन्नता तो अत्यन्त प्रसिद्ध है। इस प्रकार साध्य की प्रसिद्धि का सर्वथा निरूपण न हो सकने पर भी यह कहना कि विरोध प्रसिद्ध है। केवल साहस मात्र तथा अप्रमाणिक है। अत एव साध्य विशिष्ट प्रतिज्ञा भी असंभव है। क्योंकि जब साध्य की प्रसिद्ध ही अब तक न हो सको वहाँ साध्य निर्देशात्मिका प्रतिज्ञा की संभावना किस प्रकार हो सकती है। इस प्रकार साध्य हेतु तथा प्रतिज्ञा के अनुपपन्न होने पर तो अनुमान की चर्चा हा असंभव है। एवं हेतु आदिकों के निरूपण न हो सकने पर अनुमान की चर्चा ही जब असंभव है तब अनुमान प्रमाणिक विरोध है यह कथा ही दन्त कथा मात्र है।

यदि यह कहें कि "परमेश्वर में निराकारत्व साकारत्व का विरोध आगम प्रमाण सिद्ध है तो यह कथन भी आगम के अज्ञान से ही है। क्योंकि उपरोक्त विरोध का कथन करने वाला कोई भी आगम वाक्य नहीं है। अपितु परमेश्वर में निराकारत्व साकारत्व के अविरोध को ही आगम बचन कह रहे हैं। यथाहि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पादोऽस्य सर्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ।
स भूमिं विश्वतोवृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥
अपाणिपादो जवनो गृहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः ।
विश्वतश्चक्षुरुत् विश्वतो पात् । सहस्त्र शीर्षः पुरुषः । इत्यादि ।

परमात्मा के साकार निराकार दोनों रूपों को वेद ही कह रहे हैं। अतः परमात्मा के दोनों स्वरूप वेद प्रामाणिक हैं। क्योंकि वेदमन्ता मनु कहते हैं कि ।

श्रुतिद्वैधन्तु यत्र स्यात् तत्रधर्मा वुभौ स्मृतौ ।
उभावपि हितौ धर्मौ सम्यगुक्तौ मनीषिभिः । अ० २ श्लो० १४ ।

अर्थ—जहाँ श्रुति ने दो प्रकार का धर्म कहा है। वहाँ वे दोनों धर्म मान्य हैं। क्योंकि वेदविदों ने उन दोनों धर्मों को यथार्थ ही कहा है। यदि आप इस अर्थ को न मानो तो अर्धजरतीय न्याय को ही प्राप्त होगे। विरोधेन प्रकारान्तरस्थितिः। जहाँ विरोध होता है वहाँ एक की भी स्थिति नहीं होती है। इस न्याय से आपको निराकार स्वरूप परमात्मा की भी स्थिति न होने से अपसिद्धांत ही नहीं अपितु अर्धनास्तिकता भी प्राप्त होगो। अतः आगम प्रमाण सिद्ध विरोध नहीं है किन्तु अविरोध ही आगम प्रमाण प्रसिद्ध है।

यदि आप उपरोक्त अर्थ के श्रद्धालु हैं तो आप को अपसिद्धांत प्राप्त होगा। अन्यथा प्राचीन वैदिकों के शिष्य बनकर यथाधिकार वैदिक अर्थ के अनुष्ठान से श्रेय भागी बनोगे। अतः आप पर उभय पाशारज्जुन्याय अवश्य चरितार्थ होगा।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आगम भी आप्त तथा अनाप्त भेद से दो प्रकार का है। अनाप्त आगम प्रामाण्य न होने से तदुक्त विरोध भी प्रामाणिक नहीं है। जिस आगम का अर्थ दृष्ट अथवा अनुमेय नहीं है। वह आगम किस प्रकार प्रमाण हो सकता है। कुछ भी बुद्धि रखने वाले मनुष्य भी जानते हैं कि दृष्ट विरुद्ध अथवा हेतु विरुद्ध कहने वाले असाधारण मनुष्य की भी प्रतिष्ठा नहीं होती अपितु अप्रतिष्ठा ही होती है। उसी प्रकार अनाप्त वाक्य रूप आगम प्रमाण भी दृष्ट विरुद्ध तथा हेतु विरुद्ध होने से अपनी महिमा तथा प्रतिष्ठा का स्वयं ही विघातक है। यह अनाप्त वाक्य रूप आगम दृष्टि तथा हेतु विरुद्ध है यह उसके मूल और वक्ता से ही जान लिया जाता है। एवं च सति अनाप्त आगम से कहा हुआ निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध दृष्ट तथा हेतु विरुद्ध होने से मेधावी पुरुषों की श्रद्धा का विषय कैसे हो सकता है। तथा किस प्रकार वह स्थिति पा सकता है।

अतः यही कहना होगा कि आप्त वाक्य ही प्रमाण है। सो आप्त वाक्य भूत आगम, वेद उपवेद, ब्राह्मण उपनिषद् अङ्ग उपांग इतिहास पुराण रूप है। न वह अधिक है न न्यून है। क्योंकि स्वतः तथा परतः प्रामाण्य रूप से इतने ही आगम को वादी प्रतिवादियों ने अपने अपने हृदय में निश्चय किया है। इसलिये इन उक्त आगमों में से कोई भी एक आगम, निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध को कहे तो हम लोग भी आपके वाक्यों का सत्कार करेंगे। अन्यथा श्रेयोमार्गपरिपन्थी भूत हृदय कालुष्य वर्धक पाप जनक कोलाहल के सुनने से लाभ भी क्या है। आर्याभासों के वाक्य के बिना उक्त आगमों में से कोई भी आगम मंत्र पंचिका, कण्डिका, सूत्र, पद्य अथवा गद्य, निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध को बोधन नहीं करता है। इसी लिये विद्वान तथा उनके

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अनुगामियों की इन आर्याभास विद्वस्यमानों के आप्त आगम विरुद्ध बचनों में श्रद्धा नहीं होती है। न हुई न होगी भी। क्योंकि भव्य विद्वानों का पक्ष पोषक आप्तोक्त आगम वचनों में ही विश्वास होता है। अतः निराकारत्व साकारत्वे विरुद्धे। अर्थात् निराकारत्व साकारत्व विरुद्ध है इस प्रकार का आगम उपलब्ध न होने से विरोध अप्रामाणिक है प्रामाणिक नहीं। अतः विरोध की प्रामाणिकता की कथा कथा मात्र है।

प्रत्यक्ष अनुमान तथा आगम रूप प्रमाणों से तर्क का निरूपण न होने से तर्क उद्भावित विरोध सर्वथा अप्रामाणिक है। जो निष्प्रामाणिक है वह दन्त कथा मात्र अथवा उन्मत्त प्रलाप मात्र होने से असत् है यह उक्त प्रायः ही है।

किंवा निराकारत्व साकारत्व धर्मों का जो विरोध तर्कोद्भावित है, वह विरोध औत्पत्तिक है अथवा अनौत्पत्तिक है। इनमें आद्य पक्ष ठीक नहीं हैं। क्योंकि जिन धर्मों का औत्पत्तिक विरोध होता है वे सत्त्व असत्व धर्मों की भाँति एक काल में अथवा भिन्न भिन्न काल में एक धर्मि में समवेत नहीं होते हैं। जो धर्म एक धर्मि में समवेत होते हैं उनका औत्पत्तिक विरोध नहीं होता है। यह व्याप्ति है। अतः सत्व असत्व की भाँति निराकारत्व और साकारत्व धर्मों का भी औत्पत्तिक विरोध होने पर युगपत् अथवा अयुगपद् एक धर्मी में समवेत नहीं हो सकेंगे। जैसे सत्व के विद्यमान होने पर असत्व का और असत्व के विद्यमान रहने पर सत्व का असम्भव है वैसे ही निराकारत्व साकारत्व धर्मों का अनपाय विरोध होने पर युगपद् अथवा अयुगपद् एक धर्मि में रहना असंभव है। परन्तु निराकात्व साकारत्व धर्मों का ऐसा विरोध नहीं है। क्योंकि निराकारत्व साकारत्व धर्मों का शब्दादिकों में समवाय पूर्व ग्रन्थ

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

में युक्तिपूर्वक कथन कर दिया गया है। इस प्रकार व्यापक विरुद्ध उपलब्धि के होने पर व्याप्य की उपलब्धि औत्पत्तिक विरोध पक्ष में केवल आशामोदकायित ही है। यहाँ स्वाविक विरोध का नाम औत्पत्तिक तथा नैमित्तिक विरोध का नाम अनौत्पत्तिक विरोध है।

नैमित्तिक विरोध रूप द्वितीय पक्ष कहें तो वह भी वाक् परिश्रम मात्र है। क्योंकि विचारासह है। सोई दिखलाते हैं। निमित्त विशेष से होने वाले को नैमित्तिक कहते हैं। वह निमित्त भी स्वार्थ का उपघात है या परार्थ का उपघात है। यह अवश्य कहना होगा। क्योंकि देव असुर मनुष्य कोई क्यों न हों सर्व स्वार्थ अथवा परार्थ की कामना से ही मन वाणी शरीर द्वारा चेष्टा करते हैं। अन्यथा नहीं। जितनी भी प्रवृत्ति होती है वह कामना से होती है। कामना के बिना यथार्थ प्रवृत्ति ही नहीं होगी। क्योंकि अकाम अथवा आप्त काम पुरुष की प्रवृत्ति और निवृत्ति नहीं होती है। अवएव मनुजी ने कहा है कि

अकामस्य क्रिया काचिद्दृश्यते नेह कर्हिचित्।
यद्यद्धि कुरुते जन्तुस्तत्तत्कामस्य चेष्टितम्॥ अ० २ श्लोक ४

अतः स्वार्थ अथवा परार्थ के उपघात से चेष्टा करने वाला प्राणी निम से दुःखी होता है। और दुःख से भी दुःखतर रूप उसके साधन में विरोध को प्राप्त होता है। क्योंकि विरोध को दुःखा शयिता है। अर्थात् विरोध दुःखानुशयी या दुःख साधनानुशयी होता है। लोक में भी दुःख और उसके साधनों के ज्ञाता पुरुष को ही दुःख और उसके साधनों में विरोध होता है। अर्थ के उपघात रूप निमित्त से उत्पन्न होने के कारण यह विरोध नैमित्तिक है। धर्मों का अर्थ केवल आश्रय है। अन्य नहीं। क्योंकि उक्त

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अर्थ से अतिरिक्त अर्थ की उपलब्धि नहीं है। आश्रम से ही धर्म चरिचार्थ होते हैं। निराकारत्व साकारत्व भी धर्म ही हैं। अतः वे भी यदि मिथः द्वेष करेंगे तो आश्रय प्रयुक्त होकर ही करेंगे। न कि अन्य प्रयुक्त, यह कहना होगा। परन्तु यह संभव नहीं है। क्योंकि अनादि काल से ही परस्पर अनुकम्पा के आधीन होकर निराकारत्व सम्पादित अधिकरण वाले होने से चरितार्थ हैं। जो अनादिकाल से दो मित्रों की भाँति स्वेच्छा से एक अधिकरण वाले होकर चरितार्थ हैं, वे परस्पर निष्प्रयोजन विरोध क्यों करेंगे। क्योंकि प्रयोजन बिना कोई अधर्मी भी किसी के साथ वैर विरोध नहीं करता है। धर्मी नहीं करता तो इसका तो कहना ही क्या है। निराकारत्व, साकारत्व दोनों धर्म, निर्विघ्न एक आश्रय वाले हैं इसे प्रतिपादन कर ही चुके हैं। ये दोनों धर्म ईश्वर में भी रहते हैं, उत्तर ग्रन्थ में इस अर्थ का उपपादन करेंगे। इस प्रकार निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध में निमित्त तथा फल का निरूपण न हो सकने से नैमित्तिक विरोध है यह कथन भी मनोरथ मात्र है। अतः विस्तार से क्या प्रयोजन।

किंच निराकारत्व साकारत्व का जो वर्तमान विरोध है वह एक है वा दो हैं। प्रथम पक्ष असम्भव है। क्योंकि स्व में भी स्व का विरोध होगा। जिसका जो स्वभाव है वह दूर नहीं किया जा सकता है। अतएव व्यास जी ने गीता में कहा है कि

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृते ज्ञनिवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥इति॥

यदि ज्ञानवान् चेतनात्मा जीव भी अपनी प्रकृति के सदृश चेष्टा करता है। तब अचेतन विरोध आदि धर्मों का तो कहना

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ही क्या है। अतः स्वभाव पराधीन विरोध स्व से स्व का विरोध अवश्य करेगा। क्योंकि निराकारत्व प्रतियोगिक विरोध तद्धर्मिक नहीं है यह समाधान करने को भी कोई समर्थ नहीं होगा। तिस एक को तत्प्रतियोगिकत्व होने पर तद्धर्मिकत्व कहने में भी कोई कठिनता न होगी। अतः वह विरोध निराकारत्वेन निराकारत्व के साथ तथा साकारत्वेन साकारत्व के साथ विरोध करेगा। क्योंकि समर्थ एवं स्वभाव पराधीन है। परन्तु स्व का स्व के साथ विरोध अदृष्टचर है, अतः विरोध ऐसा करता नहीं है। स्व का स्व से विरोध आत्माश्रय दोषग्रस्त तथा अनुभव विरुद्ध भी है। विवक्षा भेद भी विरोध के भेद का प्रयोजक नहीं है। अन्यथा प्रतिज्ञा हानि दोष प्राप्त होगा।

विरोध दो हैं अर्थात् एक निराकारत्व धर्मिक दूसरा साकारत्व धर्मिक विरोध है यह दूसरा पक्ष भी विकल्पविचारासह होने से असंभव है। तथा हि। ये स्वीकृत दोनों विरोध भी परस्पर विरुद्ध हैं या नहीं। यदि विरुद्ध हैं तो किस विरोध से विरुद्ध हैं। स्व से विरुद्ध हैं अथवा किसी अन्य विरोध से विरुद्ध हैं। प्रथम पक्ष में भी धातु ग्रहीत क्रिया को समान आश्रयविषयत्व होने से आत्माश्रय दोष प्राप्त होगा। अर्थात् कर्मकर्तृ भाव दोष प्राप्त होगा। इस दोष की शान्ति के लिये किसी अन्य विरोध से विरुद्ध कहोगे तो उसे भी तिन दोनों विरोधों से विरुद्ध ही कहना होगा। क्योंकि वह भी तो विरोध ही है। अन्यथा माया विग्रह भगवान श्रीकृष्ण जी महाराज की जो स्वभाव पराधीनता की उक्त उक्ति है उससे विरोध प्राप्त होगा! अतः जिस विरोध से उन दोनों विरोधों के साथ विरोध करता है वह विरोध उन दोनों विरोधों से अन्य है अथवा वे दोनों विरोध ही हैं। आद्य पक्ष में अन्योन्याश्रय दोष है। तथा आद्य पक्ष में अनवस्था दोष है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यदि वे दोनों दोष अविरुद्ध हैं तो आश्रय के साथ विरोध करने से ही उनको क्या फल। क्योंकि निराकारत्व साकारत्व धर्मों के आश्रित विरोध न होने पर उनके आश्रय निराकारत्व साकारत्व धर्म ही क्यों विरोध करेंगे। अपितु कदापि नहीं करेंगे। क्योंकि धर्म विरोध ही धर्मियों के विरोध का अभिव्यंजक होता है। जिस परमात्मा में साक्षात् विरोध स्वभाव विरोध का भी विरोध नहीं है उस परमेश्वर में अविरोध स्वभाव वाले निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध कैसे कहा जा सकता है। अतः जिन निराकारत्व साकारत्व धर्मों का अविरोध, तर्क से सिद्ध हो चुका है उनका विरोध कहने वाले तो प्रतारक ही हैं। निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध को शुष्क तर्कों से सिद्धं करने वाले पुरुष, सरल अन्तःकरण वाले साकार उपासक प्राचीन वैदिकों के अनुगामी किंचित् पढ़े लिखे मनुष्यों के प्रतारक ही हैं। क्योंकि अयुक्त को युक्त, युक्त को अयुक्त सिद्ध को असिद्ध असिद्ध को सिद्ध, अप्राप्तव्य को प्राप्तव्य और प्राप्तव्य को अप्राप्तव्य सिद्ध करने वा कहने वाले ही प्रतारक कहे जाते हैं। जिन्हें सरल भाषा में वंचक ठग या बहकाने वाला कहा जाता है।

अथवा ये अर्वाचीन वैदिक लोग आप्तवक्ता गुरु के उपदेश से असंस्कृत होने के कारण भ्रांत ही हैं। क्योंकि तिसके अभाव वाले में तत्प्रकारत्व का आपादन करने वाले हैं। तथाहि। विरोध के अभाव वाले में विरोध का आपादान करना शुक्तिरजतवत् भ्रम है। निराकारत्व साकारत्व का विरोध नहीं है, इसे अनेक युक्तियों से सिद्ध किया ही जा चुका है। अतः तिनके विरोध का दर्शन भ्रम मात्र ही है। जो मनुष्य युक्ति तथा प्रमाणों से परीक्षित पदार्थों के स्वभाव के विपरीत, आग्रह से बारम्बार प्रलाप करते हैं, उनके वचन श्रद्धेय नहीं होते हैं। तथा वे असम्बद्ध भाषी होने से विद्वत्समाज के द्वारा उपेक्ष्य हो जाते हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यदि यह कहा जाय कि निराकारत्व साकारत्व आख्यविरुद्ध धर्मों का ही विरोध है तो यह कहना भी पिष्ट पेषणन्याय से उपेक्ष्य है। क्योंकि इस पक्ष में भी विचार करने पर आत्माश्रयादि दोष विद्यमान हैं। यदि यह कहा जाय कि विरोध विशिष्टों का विरोध हम नहीं मानते हैं। अतः विशिष्ट वृत्ति धर्म के विशेषण वृत्तित्व के नियम से आत्माश्रयादिक दोष भी प्राप्त नहीं हो सकते हैं। किन्तु विरोध उपलक्षितों का विरोध मानते हैं। यह भी उनका मन्तव्य अनिष्ट प्राप्ति के अज्ञान से है। क्योंकि उपलक्षण कादाचित्क होता है न कि अकादाचित्क। यहाँ निराकारत्व साकारत्व का मिथः विरोध ही उपलक्षण है। सो विरोध यदि कदाचित्क सिद्ध होगा तो आपको अनिष्ट प्राप्त होगा। क्योंकि जिस काल में विरोध नहीं है उस काल में विरोध चर्चा ही असंभव है। कथंचित् चर्चा के उद्भावन करने पर भी पूर्वोक्त दोष वज्रलेपायित हैं। अतः दुर्दैवविलसित उपलक्षण पक्ष भी आपका सिद्धान्तच्युति से अतिरिक्त और कोई उपकार नहीं करेगा।

यदि कहो कि परमत के आवेश से उपलक्षण पक्ष का स्थापन किया है। तब भी प्रथम तो आपको अपसिद्धान्त प्राप्त हुआ। तथापि तुष्यतुदुर्जनः इस न्याय से आपको पूछा जाता है कि जिस निराकारत्व साकारत्व धर्मों के उपलक्षितत्व का उपस्थाप्य मानते हो वह उपलक्षितत्व भी उपलक्षण है या विशेषण है। यदि विशेषण है तो पुनः उक्त दोषों ही की प्राप्ति होगी। क्योंकि विशेषण को विरोध की अवस्थिति कालपर्यन्त अवस्थिति वाला होने से विशेषण पक्ष में उक्त दोषों का निराकरण करना सरल नहीं है।

यदि कहा जाय कि उपलक्षण है तो उपलक्षण से उपलक्षितत्व भी विशेषण है अथवा उपलक्षण है इस प्रकार आगे आगे विकल्प

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

करने पर पुनः अनवस्था दोष की प्रप्ति पूर्वक त्रिदोष प्राप्त होगा। अतः आगे की परीक्षा त्याग देनी पड़ रही है। इस प्रकार उपलक्षण पक्ष के खण्डन से उपहित पक्ष भी खण्डन हुआ जान लेना चाहिये। क्योंकि उपाधि को तटस्थ होने से उपधेय में उपाधिका प्रवेश नहीं होता है। अतः अविरुद्धों का विरोध स्थित होने पर पूर्व उक्त दोष की प्राप्ति उपहित पक्ष में भी शंका रहित है।

यहाँ पर यह भी विचारणीय है कि जिस विरोध को आपने स्वीकार किया है वह निराकारत्व साकारत्व का स्वरूप है अथवा धर्म है। आद्य पक्ष असंभव है क्योंकि विरोध निरपेक्ष सिद्ध हो जायगा। जोकि किसी को इष्ट नहीं है। कारण कि विरोध नियम पूर्वक धर्मि तथा प्रतियोगी की अपेक्षा रखता है। क्योंकि जहाँ पर धर्मि प्रतियोगी की प्रतीति नहीं होती है। वहाँ पर विरोध बुद्धि का भी उदय नहीं होता है। जहाँ पर विरोध बुद्धि उदय होती है वहाँ पर धर्मि प्रतियोगि दोनों की प्रतीति भी अवश्य होती है। अन्योन्याभाव की तरह विरोध का भी धर्मि प्रतियोगि के आधीन प्रतीत होने का ही स्वभाव है। किस में किस का भेद की भाँति किसमें किसका विरोध को भी धर्मि प्रतियोगि सापेक्षि प्रतीत की विषयता स्वभाव से ही है। और सो विरोध यदि स्वरूप ही है तो निरपेक्ष होगा। क्योंकि स्वरूप के एक बार देखने पर किसमें किसका स्वरूप इस प्रकार धर्मि प्रतियोगि की अपेक्षा अदृष्टचर होने से संभव है। अन्यथा स्वरूप ही न होगा। अपेक्षा के अनुपपन्न होने से सापेक्षत्व तथा संशय दोनों ही असंभव हैं। इस प्रकार निरपेक्ष स्वरूपात्मक विराध की निरपेक्षता ही साधु है।

किं च। निःसीम विरोध को स्वरूपात्मकता है। अथवा ससीम को। तहाँ आद्य पक्ष असंभव है। निरवधिक विरोध का असंभव

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

होने से आद्य पक्ष असंभव है। अन्यथा निरवधिकता पारिभाषिक ही माननी होगी। द्वितीय पक्ष भी असंभव है। क्योंकि यदि सावधिक विरोध को स्वरूपात्मकता है तो संकरता दोष का दूर करना कठिन है। संकर दोष सुजाति का विघातक होता है। क्योंकि संकरो जाति बाधकः यह वृद्धों का वचन है।

यदि कहा जाय कि विरोध धर्म है सो भी असम्भव है। क्योंकि यहाँ किसी भी संबन्ध का निरूपण नहीं हो सकता है। अब सम्बन्ध के अभाव को ही प्रदर्शित करते हैं। संयोग, समवाय तथा तदात्म्य इन तीन प्रसिद्ध सम्बन्धों में से कर्मज होने के कारण संयोग सम्बन्ध असम्भव है। कर्मज होने से निष्क्रियों का संयोग नहीं बन सकता है। साक्षात् अथवा परम्परा से संयोग कर्मज ही होता है। कहीं दोनों सम्बन्धियों की क्रिया से कहीं एक सम्बन्धि की क्रिया से संयोग होता है। कहीं संयोगज संयोग होता है। जो परम्परा से संयोग होता है वह संयोगज संयोग कहा जाता है। साक्षात् क्रिया जन्य संयोग, कर्मज संयोग कहा जाता है। यह संयोगों का भेद सूत्रकार ने भी कहा है। "अन्यतरकर्मज उभय कर्मज संयोगजश्च संयोगः। वैशेषिक अ० ७ अ० २ सू० ६ इति।

सो संयोग भी नियम से द्रव्यों का ही होता है। प्रकृत में निराकारत्व साकारत्व दोनों ही द्रव्य नहीं हैं विरोध तो सुतरां द्रव्य नहीं है। अतः इनके संयोग की तो कथा ही प्राप्त नहीं है। एवं समवाय भी अयुक्त है। शास्त्र तथा युक्ति भेद से अयुक्तता दो प्रकार की है। तहाँ समवाय स्वीकर्ता शास्त्रों ने अयुत सिद्धों का ही नित्य समवाय सम्बन्ध माना है। वह समवाय भी द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेषों का ही शास्त्रकारों को अभीष्ट है। निराकारत्व साकारत्व विरोधों का नहीं। क्योंकि ये अद्रव्यादिक हैं। यह शास्त्रायुक्तता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अब युक्ति अयोग को सुनो। जैसे संयोग सम्बन्ध अपने सम्बन्धियों से समवाय सम्बन्ध से रहता है। उसी प्रकार सम्बन्ध होने से समवाय भी अपने सम्बन्धियों में किसी सम्बन्ध से ही रहेगा। तहाँ संयोग सम्बन्ध से रहना तो असंभव है। क्योंकि दो द्रव्यों का ही संयोग होता है। समवाय द्रव्य नहीं। अतः इस पक्ष में शास्त्रायोग है। यदि समवाय को समवायियों में समवाय संबंध से रहता मानोगे तो आत्माश्रय अन्योन्याश्रय चक्रिका दोषों के भय से आगे आगे समवाय की कल्पना करने पर अनवस्था आदि दोष भी प्राप्य होंगे। यही युक्ति का अयोग है। इतने से तादात्म्य पक्ष भी खण्डन हुआ जान लेना चाहिये। तद् आत्मभाव का नाम ही तादात्म्य है वह धर्म अथवा स्वरूप के ही अन्तगत है। अतः स्वरूप और धर्म पक्ष में उक्त दोषों से तादात्म्य पक्ष भी दूषित है। इस प्रकार धर्म पक्ष सर्वथा अनुपपन्न है।

जो यह निराकारत्व साकारत्व रूप धर्मों का विरोध है वह साथ साथ स्थित न होना रूप सहानवस्थान लक्षण है। अथवा बध्यघातक लक्षण है। किंवा परस्पराभावरूप है, किमुत तदत्यन्ताभाव समानाधिकारणात्मक है। तहाँ आद्य पक्ष ठीक नहीं है। क्योंकि वादी प्रतिवादी दोनों ही शब्द और शून्य के तदसहानवस्थान लक्षण अविरोध को सिद्धवत् ग्रहण करते हैं। अन्यथा कूपाकार अकूपाकार अथवा अन्य किंचिदाकार की कल्पना करके दश १० शत १०० सहस्त्र १००० तथा घट पट का सिद्धवत् व्यपदेश "कथन रूप व्यवहार" कैसे करते। किन्तु नहीं कर सकते थे। क्योंकि किसी भी निराकार का आकार कल्पना के बिना कहीं पर भी इस प्रकार का व्यपदेश नहीं किया जाता है। क्योंकि सर्व व्यपदेश आकार के ही आधीन होता है। वह व्यपदेश स्फोट गोचर हो चाहे वर्ण गोचर हो। ब्रह्म गोचर हो या अब्रह्म गोचर हो। इसमें हम भी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कोई विशेषता नहीं करते हैं। क्योंकि निर्विशेष सविशेष दोनों वादों में आकार कल्पना समान ही है। अतः स्वयं विचार करके देखें कि ध्वनि आत्मक रेखात्मक स्वाभाविक अथवा औपाधिक आकार की कल्पना करने पर वह विरोध कहाँ है। और अविरोध कहाँ नहीं है।

यदि यह कहा जाय कि भागवत धर्मों का ही विरोधावस्थान रूप विरोध है। यह भी निरर्थक अभिमान मात्र है। क्योंकि विचार करने पर भी परम कारुणिक भगवान् में वर्तमान निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध की सिद्धि अद्यावधि नहीं हुई है। उदाहरण तो सिद्ध प्राय का ही दिया जाता है न कि असिद्ध प्राय का। अतः व्यर्थ विरोधाभिमान का त्याग करना ही उचित है। परम कारुणिक भगवान् तो स्वशरणागत दीन आर्त विरोधियों को भी स्वीकार कर लेता है। अतः विरोध बुद्धि को त्याग कर जाहु जाहु भगवदैक शरण जाउ। क्योंकि शरणागत को न त्यागने की परम कारुणिक भगवान की प्रतिज्ञा है। नत्यजामि व्रतं मम॥

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहंत्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

एवं बध्यघातक भाव विरोध है यह द्वितीय पक्ष भी अनुपपन्न है। क्योंकि बध्यघातकभाव सम्बन्ध ही अनुपन्न है। कारण कि पाक्य का पाक के साथ जब सम्बन्ध न होगा तब तक पाक्य भूत अन्नादिकों का पाक कैसे संभव हो सकता है। एवं सत्त्वादि रूप तप्य का ताप के साथ संसर्ग के बिना सत्त्व आदिकों का ताप कैसे निश्चय किया जा सकता है। तैसे ही जब तक निराकारत्व

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

साकारत्व धर्मों का सम्बन्ध नहीं तब तक बध्यघातक की संभावना ही कैसे की जा सकती है।

निराकारत्व यदि घातक है तो साकारत्व वध्य होगा। सो वध्य का घात भी बध्य से भिन्न स्वतन्त्र पदार्थ है। अथवा साकारत्व का धर्म है। अथवा तिस बध्य का आत्मा ही है। आद्य पक्ष असंभव है। क्योंकि साकारत्व का घात यदि साकारत्व से भिन्न स्वतन्त्र पदार्थ है। तब तो साकारत्व का घात सुतरां अनुपपन्न है। क्योंकि स्वतन्त्र पदार्थ किसी के संसर्ग की अपेक्षा नहीं करता है। यदि घात पदार्थ किसी की अपेक्षा करेगा तो अपनी स्वतन्त्रता ही खो बैठेगा। स्वतन्त्र होते हुए भी घात यदि अपने को बध्य के साथ बांधने की कामना करता है तो गुण होने पर उसकी स्वतन्त्रता का हो घात हो जायगा। क्योंकि बध्य की तो स्वतन्त्रता ही असंभव है। बध्य की स्वतन्त्रता कहीं देखी भी नहीं जाती है। तथापि घात को स्वतन्त्र कहा है। अतः सम्पर्क अनुपपन्न है। सम्बन्ध के अनुपपन्न होने पर बध्य का घात सुतरां अनुपपन्न है।

यदि घात को बध्य का धर्म कहें सो भी ठीक नहीं है। घात और ध्वंस पर्याय शब्द हैं। घातक से जन्म होने पर भी घात का नाश नहीं होता है। क्योंकि अनवस्था हाने से ध्वंस का ध्वंस अयुक्त है। जिसका ध्वंस नहीं वह ध्वंस का प्रतियोगी भी नहीं अपितु अप्रतियोगी ही है। इस प्रकार ध्वंस के अप्रतियोगी घात को बध्य रूप धर्मि का धर्म मानने पर बध्य रूप धर्मि को भी घात का अप्रतियोगी ही मानना पड़ेगा। अन्यथा निराश्रय होकर कोई भी धर्म अपने स्वरूप को प्राप्त नहीं हो सकता है।

निर्धर्मिक धर्म संभव भी नहीं है। घटादिकों के विद्यमान रहते ही तदाश्रित धर्म रूपादिकों का सत्त्व देखा है। अन्यथा नहीं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथवा जैसे आत्मा के होने पर ही ज्ञानादिकों का सत्त्व है। उसी प्रकार प्रकृत में भी जान लेना। इनके कथन से यह सिद्ध हुआ कि वध्य को घात का अप्रतियोगी स्वीकार कर लेने पर तो निराकारत्व साकारत्व धर्मों के बध्य घातक लक्षण विरोध को हटा कर अविरोध का ही स्थापन कर दिया है।

यदि घात को बध्य का आत्मा कहोगे तो आप मंगल मार्गी ही कहे जाओगे। क्योंकि इस पक्ष में भी विरोध का अभाव ही है। जो जिसका आत्मा अर्थात् स्वरूप होता है। वह उससे अणु-मात्र भी भिन्न नहीं होता है। यदि भिन्न है तो वह आत्मा ही नहीं है। भिन्न हो और आत्मा भी हो ये दोनों पक्ष अनुपपन्न हैं। क्योंकि अभिन्न धर्मि प्रतियोगिक भेद में कोई प्रमाण नहीं है। अतः अपने से अपना भेद अयुक्त है। घात भी बध्य का आत्मा है अतः बध्य घात से और घात बध्य से अतिरिक्त नहीं है। एवं घातक कर्तृक घात है और घातककर्तृक ही वध्य है। इस प्रकार बध्य को घातक से निष्पन्न होने पर निराकारत्व साकारत्व धर्मों का विरोध कैसे सिद्ध हो सकता है। क्योंकि निराकारत्व धर्म ही साकारत्व का उत्पादक है जैसे घातक से निष्पन्न घात का घातक के साथ बध्य घातक रूप विरोध नहीं है। तैसे ही वध्य भी घातक से उत्पन्न होने के कारण बध्य घातक का भीविरोध नहीं अपितु अविरोध ही है। इस प्रकार घातककर्तृक घात के निरूपण न हो सकने से निराकारत्व साकारत्व धर्मों का बध्य घातक लक्षण विरोध सर्वथा अनुपपन्न है।

यदि कहा जाय कि इतरेतराभावात्मक विरोध है तो यह कथन भी हास्यास्पद है। क्योंकि जो पदार्थ भाव रूप हैं उनका इतरेतराभावरूप कहना केवल हास्य को ही उत्पन्न करता है। एक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ही भाव रूप पदार्थ को भाव तथा अभाव रूप कैसे देखा जा सकता है। अन्यथा भाव रूप पदार्थों के गुण क्रिया आदिक धर्म भी अभावों में दीखनें चाहिये। परन्तु दीखते नहीं। क्योंकि इतरे-तराभावात्मक घट पट में यह वार्ता प्रसिद्ध तम है। एकही पदार्थ का भाव तथा अभावात्मक पूर्व महर्षियों ने माना भी नहीं है। तथा अभाव और भाव की भाव और अभाव रूपता अनुभव से विरुद्ध भी है। क्योंकि वस्तु में विकल्प नहीं होता है। भाव यह है कि जिस वस्तु के करने न करने अन्यथा करने को पुरुष समर्थ होता है उस वस्तु में हीं मनुष्य विकल्प कर सकता है। अन्यथा नहीं। करने न करने अन्यथा करने को अशक्य निरपेक्ष आत्म वस्तु तत्व में ऐसे है ऐसे नहीं है इस प्रकार कैसे और कौन मेधावी पुरुष कल्पना कर सकता है। अतः जो वस्तु जिस स्वरूप वाला है उससे अतिरिक्त स्वरूप वाला कदापि नहीं होता है। अन्यथा जैनों का स्याद्वाद प्राप्त होगा। जैनों ने (१) जीव (२) अजीव (३) आश्रव (४) संबर (५) निर्जर (६) बन्ध (७) मोक्ष इन सात पदार्थों की कल्पना की है। उन सप्त पदार्थों में भी सप्त भंगी न्याय की कल्पना की है। स्यादस्ति स्यान्नास्ति स्यादस्ति च नास्ति च। स्याद्वक्तव्यः स्यादस्ति चावक्तव्यश्च। इस सप्त भंगी न्याय से सत् वाद असत् वादादि नाना विचित्र दृष्टियों की कल्पना की हैं। इसी का नाम स्याद् वाद है। यदि एक ही पदार्थ को भाव और अभाव उभयात्मक मानोगे तो जैनों का स्याद्वाद प्राप्त होगा। जो स्याद्वाद अत्यन्त जुगुप्सित है। अतएव गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है किः—

नासतो विद्यते भावो ना भावो विद्यते सतः।

अर्थ—असत्पदार्थ की सत्ता तथा सत्पदार्थ की असत्ता नहीं होती है। अतः यह निराकारत्व साकारत्व दोनों धर्म भावात्मक हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

परस्पराभावात्मक नहीं है। क्योंकि परमात्मा में दोनों ही धर्म आर्ष ग्रन्थों में पठित हैं।

स्मरण रहे कि प्राचीन अथवा अर्वाचीन सर्व आर्यों को आर्ष ग्रन्थ वेदवत्प्रमाण हैं। क्योंकि सर्व ऋषि सर्वज्ञ हैं। उन्होंने संसारारण्य वीथियों में परिश्रम से खिन्न चित्त प्राणियों के कल्याणार्थ नानाविध उपदेश किये हैं। इन उपदेशों को भी अपने अधिकारानुसार अनुष्ठान करके ही मनुष्य कल्याण प्राप्त करेंगे। ऐसा उन दैवीसम्पत्सम्पन्न निर्विकल्प ब्रह्मात्मैकत्वानिष्ठ निखलवेद निष्णात सर्वज्ञकल्प ऋषियों का आशय था। अतः करणापाटव विप्रलिप्सादि दोष शंका कलंक से निर्मुक्त ही उनके बनाये हुए सूत्र भाष्य स्मृति पुराण इतिहासादिक वेदवत् प्रमाण हैं। इसी अभिप्राय से "वृद्धिरादैच्चादि" सूत्रों में भगवत्पाद पतंजलि जी ने भी कहा है कि "तत्प्रणीतानि सूत्राणि छन्दोवद्भवन्ति।" अतः आर्षाम्नायों में किसी को शंका का अवकाश ही नहीं है। अतः आर्ष ग्रन्थोक्त, निराकारत्व साकारत्व धर्मों की भावात्मकता श्रद्धा से मानने योग्य है। इन धर्मों की भावात्मकता में आर्ष वचनों का उल्लेख करते हैं कि तस्य भावस्त्वतलौ। अष्टाध्यायी अ० ५ पा० १ सू० ११६। इति। अतः इस सूत्र से निराकारत्व साकारत्व दोनों शब्द भाव प्रत्ययान्त हैं। निराकारस्य भावो निराकारत्वम् साकारस्य भावो साकारत्वम्। अर्थ-निराकार का भाव निराकारत्व है तथा साकार का भाव साकारत्व है। अतः ये दोनों धर्म भावात्मक हैं। इति सर्वनिरंजनम्। किमस्माकं निष्प्रंचानां भूरि प्रपंचेनेत्यलम्।

जो यह कहा था कि तदत्वन्ताभावसमानाधिकरणात्मक विरोध है। वह भी असंभव है। क्योंकि समानाधिकरण वालों का ही

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विरोध होगा। न कि भिन्नाधिकरण वालों का। लोक में भी एक आश्रय वालों का ही विरोध देखा जाता है न कि भिन्नाश्रय वालों का। अन्यथा भिन्न भिन्न गुहाओं में स्थित दीपक और अन्धकार का विरोध मानना पड़ेगा। जो कि अदृष्टचर है। इस लिये उक्त निराकारत्व साकारत्व धर्मों के विरोध को कहोगे तो निराकारत्व साकारत्व धर्मात्यन्ताभाव समानाधिकरणात्मक विरोध चिरकाल उदासीन होकर विचरेगा अथवा स्थित रहेगा। क्योंकि धर्मों के सामानाधिकरण वाले होने पर तदत्यन्ताभाव समानाधिकरणता रूप विरोध तो दूर से ही अपास्त है। निराकारत्व साकारत्व धर्मों की समानाधिकरणता होने पर साकारत्व धर्म की निराकारत्वात्यन्ताभावसमानाधिकरणता ही असंभव है। इसी प्रकार निराकारत्व धर्म को साकारत्वात्यन्ताभाव समानाधिकरणता भी संभव नहीं है। यदि परस्परात्यन्ताभाव की समानाधिकरणता सिद्ध होने पर निराकारत्व साकारत्व धर्मों की समानाधिकरणता कदापि नहीं बन सकती है। तो इनका विरोध नहीं बन सकता है। क्योंकि धर्मों की समानाधिकरणता मान कर ही आपने विरोध स्वीकार किया है। अतः आपको अपसिद्धान्त अथवा विरोध का अभाव ही प्राप्त होगा।

इस प्रकार तर्कोद्भावित विरोध का भी निरूपण नहीं हो सकता। तथा असद्विषयक होने से आपका तर्क भी अतर्क ही है। शिथिलात्मा होने से तर्क की प्रतिष्ठा भी नहीं है अतः तार्किकपने का अभिमान भी व्यर्थ है। अतः तर्क विषयक तर्क से कोई प्रयोजन न होने से उपरामता ही श्रेष्ठ है।

किंच आप आर्यों का तर्क का विषय सत् या असत् है इस विषय की अधिक परीक्षा हम नहीं करते हैं। तथापि यह बतला·

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

इये कि आपका यह स्वीकृत तर्क करता क्या है। यदि कहो कि तर्क प्रमाण का अनुग्राहक है। तो यह कहना भी उचित नहीं है। क्योंकि यह कथन विवेक कृत विकल्प को सहन नहीं करता है। यही दिखलाते हैं। प्रमाण का अनुग्राहक वह तर्क परपक्ष के अभाव की प्रतीत रूप है। अथवा अपने पक्ष की संभावना रूप है। प्रथम पक्ष में भी यह प्रष्टव्य है कि सो प्रतीति प्रमाण रूप है। अथवा अप्रमाण रूप है। प्रथम पक्ष स्वीकार करने पर भी यह तर्क प्रमाण रूप ही हुआ न कि प्रमाण का अनुग्राहक। यदि अप्रमाण रूप द्वितीय पक्ष कहो तो अप्रमाण भूत प्रतीति से तो पर पक्ष का अभाव ही सिद्ध न होगा। क्योंकि अप्रमाण से किसी अर्थ की भी सिद्धि नहीं होती है।

यदि यह कहो कि वह तर्क स्वपक्ष की संभावना रूप है तो इस पक्ष में भी यह प्रष्टव्य है कि स्वपक्ष की संभावना स्वपक्ष के साधक प्रमाण से होती है। अथवा परपक्ष की अभाव प्रतीति से होती है। यदि प्रथम पक्ष कहोगे तो परस्पराश्रय दोष होगा। क्योंकि तर्क से विवेचित विषय में स्वपक्ष के साधक प्रमाण की प्रवृत्ति को स्वीकार किया तथा परपक्ष की अभाव प्रतीति से स्वपक्ष की सिद्धि होगी। तब तो यह परपक्षाभावलिंगक अनुमान ही सिद्ध होगा और कुछ नहीं। क्योंकि परस्पर विरुद्धों में से किसी एकके निषेध को इतर की विधि की अविनाभूतताही देखी है। अर्थात् उन दोनों में से एक की विधि के बिना दूसरे का प्रतिषेध नहीं हो सकता है। ऐसा सिद्ध होने पर आर्य अर्भकों का जो यह तर्क है कि यदि ईश्वर मूर्ति वाला है तो वह निराकारत्व धर्म वाला नहीं हो सकता है किंतु मूर्ति रहित होने पर ही हो सकता है। यह आपका प्रमाणानुग्राहक तर्क भी केवल कथन मात्र है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तहाँ प्रमाण तो प्रत्यक्षादि प्रमाणों के ही अन्तर्गत होगा। अतः प्रमाण का तो प्रत्यक्षादि प्रमाणों के खण्डन मात्र से ही खंडन हो गया। पुनः खण्डन करने की आवश्यकता ही क्या है। रही अप्रमाण की बात वह तो किसीका साधक ही नहीं होता है। अतः उसके विचार की तो आवश्यकता ही नहीं। अतः सिद्ध हुआ कि ईश्वर मूर्ति रहित है यह प्रतिज्ञा करने वाले केवल निराकारवादियों का तर्क भी प्रत्यक्ष की तरह संभावित नहीं किया जा सकता है। यह निर्विघ्न सिद्ध अर्थ है ऐसा जान लेना चाहिये। अतः हे आर्य अर्भको आप इस वक्ष्यमाणपद्य में कहे हुए सिद्धान्त को याद रखते हुए यथाधिकार परमात्मा की उपासना करके शान्ति का अनुभव करो। अर्धजरतीय न्याय को अपने ऊपर लादकर पापात्मा मत बनो। क्योंकि सरल हृदय वाले सज्जनों को स्व स्वाधिकारानुसार धर्माचरण करने से भ्रष्ट करने का उपदेश देना ईश्वर तथा वेद का विरोध करके असुरता का संपादन नहीं करना चाहिये।

यत्नतस्तर्कितोऽप्यर्थः शुष्कतर्केण तार्किकैः।
अभियुक्ततरै रन्यैरन्यथैवोपतर्क्यते ॥१॥
तस्माच्छुष्केणतर्केण तर्कणीयं नवैदिकैः।
शुष्कतर्कं प्रतिष्ठानं लज्जायै केवलं यतः ॥२॥
तर्केणाप्रतिष्ठानादित्युक्तं ब्रह्मदर्शने।
गौतमीयेषु सूत्रेषु तर्कश्चेत्सूत्रसूत्रितः ॥३॥
मनुना धर्मबोधाय तर्कश्चेदेव स्वीकृतः।
वेदशास्त्राविरोधेन तर्कणीयं न चान्यथा ॥४॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अविज्ञाते हि तत्वार्थे हेतूपपत्तितः श्रुतेः ।
तत्वज्ञानाय तूहो यस्तर्कः स इति वैदिकाः ॥५॥

ऐसे सिद्धान्त बचनों को सुनकर तो ज्ञानलवमात्रावलिप्तहृदयवाले जिन विद्वस्यमानों को बोध नहीं होता है। उनको प्रवुद्ध करने में तो शेष सरस्वती आदिक भी असमर्थ हैं। इसी आशय से एक नीति कार राजर्षि ने कहा भी है किः—

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः ।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति । इति ।

जो अनुमान प्रमाण से ईश्वर की मूर्ति के अभाव की उद्घोषणा है, वह भी अनुमान के हेतु की असिद्धि के कारण दूषित होने से व्यर्थ ही है। तथाहि॥ ईश्वर की मूर्ति के अभाव की सिद्धि के लिये इस प्रकार का अनुमान दिया जाता है कि ईश्वरः न मूर्तिमान् निराकरत्वात्। अर्थात् निराकार होने से ईश्वर मूर्तिमान नहीं है। सो यह निराकारत्व हेतु भी आभास रूप होने से साध्य की सिद्धि नहीं करता है। तथाहि निराकारत्व हेतु का अर्थ ही विचारणीय है कि निराकारत्व शब्द का आकार वाले द्रव्यों से निष्क्रान्तत्व मूर्ति रहितत्व, निःस्वरूपत्व तथा निरवयवत्व रूप जो ये चार अर्थ हैं इनमें से कौनसा अर्थ स्वीकार है। इनमें से आद्यपक्ष असंभव है। क्योंकि हेतु को व्यभिचारी होने से साध्य की सिद्धि नहीं हो सकती है। मूर्ति मत्ता के अभाव वाले शब्द में हेतु का सद्भाव है। भाव यह है कि शब्द चाहे वर्णात्मक अथवा स्फोटात्मक हो। संयोग अथवा विभाग से जायमान हो। स्वतः अथवा उपाधि से अभिव्यज्यमान हो। बहुत क्या कहें सर्व प्रकार से निष्क्रान्त

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शब्द जगत् में व्यवहार के योग्य होता है। अन्यथा भेरी मृदंगादिकों अथवा मूकों में स्थित शब्द से ही व्यवहार होना चाहिये। सो होता नहीं है। स भूरिति व्याहरत्। स भूमि मसृजत। स भुव इति व्याहरत्। सादिव मसृजत। तै० ब्रा० २—२—४—२ इत्यादि भगवती तैत्तरीय श्रुति में भी भुवः आदि शब्दों के उच्चारण व्यवहार से ही पृथ्वी आदिकों की उत्पति दिखलाती हुई जगत्स्रष्टा प्रजापति से प्रथम भु आदि शब्दनिष्क्रान्त हुए तत्पश्चात् भूमि आदि लोकों की उत्पत्ति का उपदेश दे रही है। अतः इस श्रुति प्रमाण से भी यह मानना पड़ेगा कि निष्क्रांत शब्द से ही व्यवहार होता है। अनिष्क्रान्त से नहीं। ब्रह्मजिज्ञासाधिकरण में भामती निबन्धकार ने भी निष्क्रांत ॐ तथा अथ शब्दों की मंगल रूपता कही है। तहाँ श्लोकः—

ॐकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौब्रह्मणः पुरा।
कंठं भित्वा विनिर्यातौ तस्मान्मागलिका वुभौ॥ इति॥

पद्य में निर्यात शब्द का अर्थ निष्क्रांत ही है। इस प्रकार श्रुति युक्ति शिष्टाभियुक्तों के कथन से यह सिद्ध हुआ कि निष्क्रांत स्पष्ट शब्द ही व्यवहार में समर्थ है। अतः हेतु की शब्द में सद्भाव होने से अनैकान्तिकता ही है। निराकार होने पर भी शब्द में मूर्ति मत्ता पूर्व ग्रन्थ में सिद्ध कर आये हैं। अतः यहाँ पर पुनः विस्तार की अपेक्षा नहीं है।

स भूमि विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम। इम वेद मन्त्र ने ईश्वर में निराकारत्व और साकारत्व धर्मों का वर्णन किया है। अतएव ईश्वर मूर्तिमत्व के अभाव का अनुमान भी नहीं किया जा सकता है। तथा सव्यभिचारि अनैकान्तिक निराकारत्व हेतु भग्न

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

व्याप्तिवाला होने से ईश्वर में साध्य का साधक नहीं है। अर्थात् यत्र यत्र निराकारत्वं तत्र तत्र मूर्तिमत्वाभावः। इस व्याप्ति का शब्द में भग्न है। क्योंकि यहाँ निराकारत्व है परन्तु मूर्तिमत्वाभाव नहीं है। इस प्रकार निराकारत्व हेतु ईश्वर में विद्यमान होते हुए भी मूर्तिमत्वाभाव रूप साध्य के साथ व्याप्ति वाला नहीं है। इसी को साध्याव्याप्त हेतु कहते हैं। अतः इस हेतु का कोई भी फल नहीं है।

यदि मूर्तिरहितत्व ही निराकारत्व शब्द का अर्थ है। तथा यही हेतु भी है तो भी असंभव है। क्योंकि साध्याविशिष्ट होने से साध्य का साधक नहीं। भाव यह है कि मूर्ति रहितत्व हेतु का साध्य ईश्वरो मूर्ति रहितो न वा इस प्रकार संदेह का विषय होने से संदिग्ध ही है। साध्या विशिष्ट होने से हेतु भी संदिग्ध ही होगा। स्वयं संदिग्ध हेतुवादि प्रतिवादि के विवादास्पद संदिग्ध साध्य को संदेह रहित कैसे कर सकता है। क्योंकि जो स्वयं सुप्त है वह अन्य सुप्त को कैसे प्रबुद्ध कर सकता है। तथा जो स्वयं डूब रहा है वह अन्य डूबते हुए को कैसे बचा सकता है। अतः संदिग्ध हेतु तो हेतु ही नहीं है। क्योंकि हेतु तो सिद्ध होता है न कि साध्य। और मूर्ति रहतत्व हेतु तो संदेह का विषय होने से साध्य की तरह साधनीय ही है। ऐसे हेतु को ही साध्याविशिष्ट या साध्यसमहेत्वाभास नाम से कहा गया है। अतः हेत्वाभास होने से किंचित् भी उपकार नहीं कर सकता है। क्योंकि सत्व हीन है। यही वार्ता वैशेषिक दर्शन में स्पष्ट कही है। अप्रसिद्धोऽनपदेशोऽसत्सन्दिग्धश्चानपदेशः। वै० अ० ३ आ० १ सू० १५ इति।

यदि निराकारत्व का अर्थ निःस्वरूपत्व है तब भी यह हेतु

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास होने से साध्य की सिद्धि करने में समर्थ नहीं है। क्योंकि पक्ष रूप ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप होने से निःस्वरूप नहीं है। निःस्वरूप तो विकल्प अथवा तुच्छ का नाम है। यदि भगवान् वन्ध्या पुत्रादिवत् विकल्प रूप होता तो इस मनसे भी अचिन्त्य रचनात्मक जगत् का कारण कैसे शास्त्रों में कहा जा सकता था। और परमात्मा को "यतोवा इमानि भूतानि जायंते। जन्माद्यस्ययतः। अहं सर्वस्व जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा इत्यादि श्रुति सूत्र तथा स्मृतियों ने परमेश्वर को जगत् का कारण कहा है। अतः जो परमेश्वर संसार की उत्पत्ति आदि का कारण है वह निःस्वरूप कैसे हो सकता है। यदि निःस्वरूप भी कारण हो सकता है तो बन्ध्या पुत्र आदिक तुच्छ पदार्थों में भी कारणता आजायगी जोकि अत्यन्त असंभव है। अतः यह सिद्ध हुआ कि निःस्वरूपत्व हेतु पक्ष में न वर्तने से स्परूपासिद्ध हैत्वाभास ही है। आप ही स्वयं दृष्टि का उन्मीलन करके देखें कि असिद्ध स्वरूप वाला हेतु अपने साध्य की सिद्धि कैसे कर सकता है अर्थात् किसी प्रकार नहीं कर सकता है। यदि असिद्ध भी साधक होगा तो उसमें असिद्धता ही नहीं रहेगी। सिद्ध स्वरूप वाला ही साधक होता है। अतः निःस्वरूपत्व हेतु असिद्ध होने से परमात्मा में मूर्तिमत्व का अभाव सिद्ध नहीं कर सकता है। असिद्ध हेतु साध्य का साधक नहीं होता है, इसी तात्पर्य से प्रशस्त पादाचार्यों ने भाष्य में कहा है कि विरुद्धासिद्धसंदिग्धमलिंगं काश्यपोऽब्रवीदिति।

इस प्रकार निराकारत्व शब्द का चतुर्थ अर्थ रूप निरवयवत्व हेतु भी खण्डन हुआ जान लेना चाहिये। क्योंकि प्रथम विकल्प के दूषण इस चतुर्थ विकल्प में भी प्राप्त हैं। यही दिखलाते हैं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कि ईश्वरो न मूर्तिमान् निरवयवत्वात् यह आपका प्रयोग है। सो निरवयत्व हेतु भी अनैकान्तिक है। क्योंकि मूतिमान् जीव में निरवयत्व हेतु विद्यमान् है। जड़ अजड़ विभु अणु इन सर्व पक्षों में जीव को निरवयव ही कहना होगा। क्योंकि अनित्यता के भय से जीव की सावयवता का निरूपण नहीं किया जा सकता है। जो उत्पाद्य पदार्थ होता है वही सावयव होता है। जैसे घट पट आदिक हैं। जीव उत्पाद्य नहीं क्योंकि उसकी उत्पत्ति का कोई कारण नहीं है। यदि ईश्वर को कारण माना जाय तो घट के कारण मृत्तिका की भाँति ईश्वर भी विकारी हो जायगा। ईश्वर को विद्वानों ने कूटस्थ नित्य ही स्वीकार किया है। अतः उसमें विकार कथमपि नहीं हो सकता है। अन्यथा ईश्वर में ही अनित्यता आ जायगी जोकि किसी भी आस्तिक को स्वीकार नहीं है।

यदि यह कहो कि जैसे सांख्य मत में आरम्भ करती हुई भी प्रकृति स्वरूप के विघात न होने से नित्य है। उसी प्रकार ईश्वर भी जीवों का आरम्भ करता हुआ भी स्वरूप के विघात न होने से नित्य ही रहेगा। तथापि ईश्वर को दुःखादिकों का अधिकरण न होने से जीव भी दुःखादिकों का अधिकरण नहीं होगा। क्योंकि कारण से कार्य की स्वरूप से विलक्षणता होते हुए भी गुणों से विलक्षणता नहीं होती है। क्योंकि स्वर्ण के कार्य कटक रुचिकादिक स्वर्ण गुण वाले ही देखे जाते हैं मृद्गुण वाले नहीं। उसी प्रकार मृद् के कार्य घटशराबादिक मृद्गुण वाले ही देखे जाते हैं स्वर्ण गुणक नहीं। इस प्रकार लोक में कार्य कारण की एक गुणकता ही देखी गयी है।

वेदान्तमत में माया अनिर्वचनीय है। अतएव माया का कार्य जगत भी अनिर्वचनीय है। सांख्य मत में प्रकृति सुख

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दुःख मोहात्मिका है। अतएव प्रकृति का कार्य जगत् भी सुख दुःख मोहात्मक ही है। उसी प्रकार जीव का कारण ईश्वर होगा तो जीव भी ईश्वर की तरह क्लेश कर्म विपाक आशय से अपरामृष्ट होने से दुःख का अनधिकरण ही होगा। परन्तु जीव तो क्लेश कर्म विपाक तथा आशय से परामृष्ट होने से दुःख का अधिकरण ही देखा जाता है। अतएव ईश्वर कारणक जीव नहीं है। अन्यथा जीव तथा ईश्वर को एक गुण वाला होना अनिवार्य था। अतः जीव तथा ईश्वर के कार्य कारण भाव में बलवान् दृष्ट विलक्षणता बाधक है। कारणगुणपूर्वकः कार्यगुणो दृष्टः। वै० अ० १ सू० २४। इस महर्षि प्रणीत सूत्र के अनुसार यदि जीव ईश्वर कारणक होने से ईश्वर गुणक होता तो अपने कल्याण के लिये जीव की ईश्वर के भजन तथा उपासनादिक उपायों में कभी भी प्रवृत्ति न होती। क्योंकि प्रयोजन के बिना मन्द बुद्धि पुरुष की भी प्रवृत्ति नहीं होती है फिर बुद्धिमानों का तो कहना ही क्या है। अतः यह सिद्ध हुआ कि जीव तथा ईश्वर समान गुण वाले न होने के कारण कार्य कारण भाव से रहित हैं।

प्रकृत्या सह सारूप्यं विकाराणामवस्थितम्।
जीव ईशस्वरूपश्चेन्नस्याद्भक्तोऽविकारिणः ॥१॥
ईश्वरः सुख रूपो हि जीवः शंदुःखभाजनम्।
तत्कथं कथय सिद्ध्येत् तावकीनो मनोरथः ॥२॥

अथवा जीव का कारण ईश्वर मान भी लिया जाय तो प्रश्न होता है कि ईश्वर सावयव है या निरवयव। सावयव पक्ष में ईश्वर विनाशी ही सिद्ध होगा। क्योंकि सावयव पदार्थ नियम से विनष्ट होता है। सावयव पदार्थ के विनाश का नियम घटपटादिकों में

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्पष्ट देखा है। अतः इसमें किसी का भी विवाद नहीं है। ईश्वर को सावयव मानने पर ईश्वर नित्यसिद्ध अविनाशी है यह सार्वभौम सिद्धान्त भी उन्मत गीत हो जायगा। जीव के कारण ईश्वर को सावयव मानने पर तो उत्पद्यमान जीव को भी घटादि की तरह सावयव ही मानना पड़ेगा। तथा जीवों को उत्पन्न तथा विनष्ट मानने पर कृतनाश अकृताभ्यागम दोष भी वज्रलेपायित होगा। वृद्धिमिच्छतोमूल मपि नष्टम्। इस न्याय का ही उनको भार उठाना होगा। अतः ईश्वर सावयव है यह असाधु स्वीकृति है।

यदि कहा जाय कि जीव का कारण ईश्वर है सो निरवयव है तो यह भी कथन युक्तिसंगत नहीं है। क्योंकि निरवयव ईश्वर का परिणाम जीव है ऐसा मानने पर निरवयव होने से समस्त ईश्वर का ही परिणाम कहना होगा। ऐसा स्वीकार करने पर परमात्मा का ही अभाव हो जायगा। यद्यपि मृत्तिका आदि पदार्थों का घटादिरूप से परिणाम होने पर भीं कुछ भाग शेष रह जाता है क्योंकि वे सावयव हैं। परन्तु निरवयव होने से ईश्वर का परिणाम भी स्वीकार किया जायगा, तो अवश्य ही ईश्वर का अभाव स्वीकार करना पड़ेगा। अतः उनके ऊपर यह कहावत चरितार्थ होगी कि वृद्धि चाहते थे परन्तु अपने ही यत्न से मूल भी नष्ट हो गया।

यदि उपरोक्त दोषों को दूर करने के लिये यह कहा जाय कि हम परमात्मा को जीव का मृत्तिका आदिकों की तरह उपादान कारण मानें तो उपरोक्त दोष आसकते हैं। परन्तु हम परमात्मा को जीव का निमित्त कारण मानते हैं। जैसे कुलालादिक घटादिकों

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

के निमित्त कारण होते हैं। अतः उपरोक्त दोष नहीं आस ते हैं। परन्तु यह कथन भी साधु नहीं है। जीव और ईश्वर दो ही सृष्टि के रचने वाले हैं। उनमें से जीव रागद्वेषादिक दोषाक्रान्त होने से विषम सृष्टि कर भी सकता है। क्योंकि लोक में देखा जाता है कि चैत्र नाम वाला मनुष्य द्वेष के कारण मैत्र नाम वाले मनुष्य को दुःख पहुँचाता है। तथा राग के कारण स्त्री को सुख पहुँचाता है। परन्तु ईश्वर राग द्वेष से रहित हैं। नित्य समदर्शिकरुणैकमूर्ति हैं। अतः विषम सृष्टि क्यों रचेगा। क्योंकि कोई भी प्रयोजन नहीं है।

जब ईश्वर का कोई प्रिय अथवा द्वेष्य नहीं है। तो उसने सुख दुख की दशा के भेद से देव असुर मनुज पशु पक्षी की यह विषम सृष्टि क्यों रची। यदि सृष्टि रची भी तो सम ही क्यों नहीं रची। क्योंकि ईश्वर राग द्वेषादिक दोषों से सदा मुक्त है ऐसा वैदिकों का सिद्धान्त है। रागद्वेषादिक तो जीव में ही संभव हैं। जैसाकि न्याय दर्शन में कहा है कि "इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञानान्यात्मनोलिंगम्। अ १ आ० १सू० १०। कहने का भाव यह है कि पवित्रमार्गदर्शक जीव भी मलिन मार्ग को ग्रहण नहीं करता है तो समदर्शी सनातन ईश्वर ही अपवित्र पथ को कैसे ग्रहण कर सकता है।

तथा यदि ईश्वर कुम्भकार की तरह जीव का निमित्त कारण है तो वह किसी सहाय के सहित कारण है अथवा सहायता बिना कारण है। इनमें दूसरा पक्ष तो असंभव है। क्योंकि कुलाल भी मृत्तिका आदि की सहायता लेता है। इस प्रकार ईश्वर भी जीव की उत्पत्ति करने में प्रकृति आदि की सहायता लेकर ही कारण हो सकता है। अतः निःसहाय पक्ष तो सर्वथा ही असंभव है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यदि नवीन वैदिक यह कहे कि "सामर्थ्यादद्भुतादेव मामकीनः पिता प्रजाः। पुत्रस्वाराज्यकामेन निर्ममे निखलाः प्रजाः। इति। भाव यह है कि कुम्भकार शक्ति हीन है अतः उसे घट निर्माण करने के लिये मृत्तिकादि की अपेक्षा करता है। परन्तु परमपिता परमेश्वर करने न करने अन्था करने की शक्ति वाला है। अतः परमेश्वर को जीव के निर्माण करने में प्रकृति की आवश्यकता नहीं है।

वेद में ईश्वर को सत्यकाम सत्यसंकल्प कहा है। अतः परमात्मा जब संकल्प करता है कि अमुकार्य उत्पन्न हो अमुक कार्य नष्ट हो उसी समय कार्य की उत्पत्ति तथा विनाश हो जाता है। जिसके संकल्प मात्र से सर्व पदार्थ सिद्ध हो जाते हैं उसे किसी भी वाह्य कार्य के उत्पादन में किसी पदार्थ की अपेक्षा नहीं है। अन्यथा परमेश्वर भी जीव के समान ही होगा। अतः परमेश्वर में लोक सीमा स्थिति का उलंघन अकिंचित्कर है। क्योंकि सर्व शक्तिमान् है।

इस प्रकार का यह निरर्गल भाषण भी आपकी पदार्थ विद्या की अनभिज्ञता का ही परिचायक है। भाव यह है कि यदि कुछ भी पदार्थ तत्त्व का ज्ञान होता तो आप ऐसा निरर्गल भाषण न करते। यह तो हम भी जानते हैं कि ईश्वर सत्य काम सत्य संकल्प है। अतः ईश्वर के संकल्प से सब कुछ हो सकता है। तथापि यह वताना होगा कि ईश्वर असत् से सत् अथवा सत् से असत् होने का संकल्प करता है। इसमें प्रथम पक्ष तो असंभव है। क्योंकि व्याघात दोष युक्त है। असत् का सत् कहना ही व्याघात है। क्योंकि कभी भी असत् सत् तथा सत् असत् नहीं हो सकता है। असत् से सत् के होने का संकल्प करने वाला ईश्वर भी व्याघात दोष वाला हो

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जायगा। अर्थात् कथमसतः सज्जायेत। नासतोविद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः। यह परमात्म वाद भी हनन हो जायगा। तथा परीक्षक पुरुष उपेक्षा भी कर देंगे परन्तु ऐसा होता नहीं देखा। अतएव गीता में भगवान ने कहा है।

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोन्त स्त्वनयोस्तत्त्व दर्शिभिः॥

वेद में भी कहा है कि "कथमसतः सज्जायेत। असत् से सत् कैसे उत्पन्न होगा।

यदि असत् से भी सत् उत्पन्न होगा तो असत् से अन्वित ही होगा। क्योंकि असत् उपादान है। उपादान का यह लक्षण है कि "यदभिन्नं कार्यं मुत्पद्यते तदुपादानकारणम्। तब तो ऐसी प्रतीति होनी चाहिये कि असद् घट है असत्पट है असज्जीव है। तथा सन् घट है सन् पट है सत् जीव है ऐसी प्रतीति नहीं होनी चाहिये। परन्तु ऐसी प्रतीति नहीं होती है। सो यह प्रतीति असत् से सत् हो इस ईश्वर के संकल्प से विरुद्ध ही कहनी होगी। परन्तु ईश्वर सत्य संकल्प है। अत ईश्वर का संकल्प अन्यथा नहीं हो सकता है। अन्यथा ईश्वर की सत्य संकल्पता ही समाप्त हो जावेगी। यह दूसरा व्याघात है।

ईश्वर को सत्य संकल्प होने से नियम से असत् से ही सत् होगा। कभी भी सत् से सत् नहीं होगा। और ईश्वर का सत्य संकल्प भी कार्य है वह भी असत् से ही होगा। अतः ईश्वर का संकल्प भी असत् से ही अन्वित होगा। अतः ईश्वर के संकल्प की भी प्रतीति इस प्रकार की ही होगी कि "असत् सत्संकल्पः ईश्वरस्य। ईश्वर का असत् सत्संकल्प है। यह दूसरा व्याघात है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

असत् से सत् की उत्पत्ति सत् संप्रदायियों ने ही नहीं अपितु पदार्थ विद्या में कुशल पाश्चात्य विद्वानों ने भी स्वीकार नहीं की है। सत से सत् उत्पन्न होन में दृष्टांत भी अनेक हैं। तथा प्रत्यक्षादि प्रमाण भी हैं। इसी कारण सत् कारण पक्ष में तैर्थिकों का विवाद नहीं है। मूसलाघातों से धान्यों से चावलों की उत्पत्ति होती है। और सत सुरभियों से ही दुग्ध दुहा जाता है। असत् धानों से चावल तथा असत् धेनुओं से दुग्ध नहीं होता है।

तथा जो कार्य होता है वह साधार ही होता है निराधार नहीं होता है। यह व्याप्त न्याय है। जैसे ज्ञान इच्छा प्रयत्न इनका आधार जीवात्मा ह। अतः जो सत्कार्य है वह भी साधार ही होगा, निराधार नहीं। सो उस सत्कार्य का आधार सत् है अथवा असत्। इनमें से प्रथम पक्ष असंभव है। क्योंकि सत् शब्द का अर्थ यदि ईश्वर है तो आपने ईश्वर को निमित्त कारण माना है अतः वह ईश्वर आधार नहीं हो सकता है। कार्य का आधार उपादान कारण ही होता है। यह वार्ता घटादिक पदार्थों में सबने प्रत्यक्ष देखी है कि घट अपने उपादान कारण मृतिका में ही स्थित रहता है। द्वितीय पक्ष भी इसलिये उचित नहीं कि असत् से सत् उत्पन्न हो इस प्रकार का संकल्प ही व्याघात दोष युक्त है। क्योंकि असत् उपादान कारण से उत्पन्न होकर सत् प्रकृति को अपना आधार नहीं बना सकता है।

यदि यह कहा जाय कि उस सत् कार्य का आधार असत् है। क्योंकि असत् (अभाव) में आधार होने की योग्यता नहीं है। अन्यथा शशके शृङ्ग तथा कूर्म के रोमों का स्थूणा या कम्बल भी किन्हीं कार्यों का आधार हो जाना चाहिये। परन्तु होता नहीं। अतः सत् का आधार असत् है यह पक्ष अति तुच्छ हो है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यदि यह कहा जाय कि "सत् से सत् होवे" यह ईश्वर का संकल्प सत्य है। इस पक्ष में भी पूछना यह है कि संकल्प काल में परमात्मा प्रकृति आदि की अपेक्षा करता है या नहीं। तहाँ ईश्वर किसी की अपेक्षा नहीं करता यह तो कहा ही नहीं जा सकता है। क्योंकि कर्त्ता रूप निमित्त कारण सहाय की अपेक्षा अवश्य करता है ऐसा ही देखा गया है। अतः ईश्वर निमित्त कारण होने से किसी की सहायता की अपेक्षा अवश्य करेगा यही कहना होगा। क्योंकि ईश्वर का ही तो यह संकल्प है कि सत् से सत् कार्य की उत्पत्ति हो। यह शंका युक्त नहीं कि जब ईश्वर भी जीव की तरह सहाय की अपेक्षा करेगा तो वह भी कोई जीव विशेष ही होगा। क्योंकि यह दोष तो संकल्प पक्ष में भी समान है। जब जीव की तरह ईश्वर भी संकल्प वाला है तो वह भी कोई जीव विशेष ही होगा। परन्तु सृष्टि की उत्पत्ति का संकल्प करता हुआ भी परमेश्वर ही है उसी प्रकार प्रकृति की अपेक्षा करता हुआ भी ईश्वर ईश्वर ही है। जीव नहीं हो सकता है। अतः यह कथन अकिंचित्कर है कि ईश्वर जीव को आरंभ सहाय के बिना ही करता है।

सहाय के सहित ही ईश्वर जीव की उत्पत्ति का कारण है। यह कहना तो शक्ति के बाहर का ही कथन है। क्योंकि सहाय का निरूपण नहीं किया जा सकता है। जो जीव की प्रकृति है और ईश्वर की सहायक है वह ईश्वर की इच्छा है, अथवा भूत हैं। आद्य पक्ष असंभव है। क्योंकि इच्छा तो गुण होने से द्रव्य का आरंभक नहीं हो सकता है। द्रव्य का आरंभक तो द्रव्य ही होता है। ज्ञान आदिक गुणों का आश्रय होने से जीव तो द्रव्य रूप ही है। गुण तो गुण का ही आरंभक हो सकता है द्रव्य का नहीं। अतएव वैशेषिक दर्शन में स्पष्ट कथन है कि द्रव्याणि द्रव्यान्तर मारंभन्ते गुणाश्च गुणान्तर मिति अ० १ आ० १ सू० १० इति॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यद्यपि परमेश्वर के इच्छा आदिक गुण कार्य मात्र के आरंभक भी हैं। तथापि निमित्त रूप से ही आरंभक हैं। न कि प्रकृति रूप से। यह भेद है। अन्यथा गुणों को गुणान्तर की आरंभकता के नियम से ईश्वर भी जीव रूप से परिपात होकर अपनी कूटस्थता का ही त्यागकर देगा। इस वार्ता को प्रथम कह आए हैं उसे स्मरण ही रखना चाहिये। अतः ईश्वर को इच्छा जीव का प्रकृति रूप से आरंभक है यह कथन ही असाधु है।

यदि कहा जाय कि भूत ही जीव की प्रकृति रूप से सहाय हैं यह कथन भी युक्त नहीं है। क्योंकि भूत रूप जड़ प्रकृति से उत्पन्न होने से जीव भी जड़ ही होगा। परन्तु जीव पुण्य पाप कर्मों के फल का भोक्ता तथा देहेन्द्रियादिकों का साक्षी है। अतः जीव की चेतनता तथा भूतों की अचेतनता में किसी विद्वान् का विवाद नहीं हैं। जीव को भूतों का कार्य होने पर जड़ता ही प्राप्त होगी जोकि अनुभव विरुद्ध है। क्योंकि भूतों के कार्य घटादिक पदार्थों की जड़ता का सर्व को अनुभव है। प्रधान को भी जीव की प्रकृति मानने में पूर्वोक्त दोष है। इस प्रकार सहाय का निरूपण होना अशक्य है। सापेक्ष तथा निरपेक्ष ईश्वर ही जब जीव का कारण नहीं हो सकता तो अन्य का तो कहना ही क्या है।

इस प्रकार ईश्वर आदि कारणों से जीव का जन्म नहीं है। अतएव सावयव भी नहीं है। अपितु निरवयव ही है। अतः यह सिद्ध हुआ कि निरवयवत्व हेतु साध्य के अभाव वाले में वर्तमान होने से व्यभिचारी ही है सव्यभिचारि (अनैकांतिक) हेतु साध्य की सिद्ध करने में समर्थ नहीं है। अतः निराकारत्व हेतु परमेश्वर में मूर्तिमत्त्व के अभाव को सिद्ध नहीं कर सकता है। अत्रापि संग्रहः।

हेतुसाध्यवदन्यस्मिन्नपगच्छेद्यदि स्वयम्।
साध्येत् स कथं साध्यं वाच्यं किं तत्र तावकैः ॥१॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

न चानैकान्तिको दृष्टः साधको ही महाधियः ।
कल्पनीयं न चादृष्टं युज्येरन् कित्वदुक्तयः ॥२॥

इस प्रकार "ईश्वरो न मूर्तिमान् निराकारत्वात्" इस अनुमान में निराकारत्व हेतु को अनैकान्तिकत्वादि दोषों से युक्त होने से मूर्तिमत्व के अभाव का अनुमापक नहीं है। अतः ईश्वर की मूर्ति के अभाव में अनुमान प्रमाण भी नहीं है। मूर्ति के अभाव में अनुमान प्रमाण बतलाना भी साहस मात्र है।

यदि यह कहा जाय कि भगवान् की मूर्ति के अभाव का साधक व्यापकत्व हेतु है। क्योंकि जहाँ जहाँ व्यापकता है वहाँ वहाँ मूर्तिमत्त्व का अभाव है। निश्चित् व्याप्ति वाला होने से यह व्यापकत्व हेतु मूर्ति के अभाव का साधक तम है साधक तम ही करण होता है जैसा कि पाणिनीय जी ने कहा है कि "साधकतमं करण मिति।" अ० १ पा० ४ सू० ४२ प्रयोग का आकार यह है कि "यो यो व्यापकः स स मूर्त्यभाववान यथा कालो दिग् व्योमेति, व्यापकश्चेश्वरः तस्मान् मूर्तिमत्त्वाभाववान्। अर्थ जो जो व्यापक होता है वह मूर्ति के अभाववाला होता है। जैसे काल दिशा और आकाश हैं। ईश्वर व्यापक है इसलिये मूर्ति के अभाव वाला है।

यहाँ कहना यही है कि "मूर्तिमत्व के अभाव का साधक हेतु व्यापकत्व है" इस कथन का कारण अनुमान की स्थिति का अज्ञान ही है। क्योंकि व्यापकत्व हेतु, साध्य के अभाव वाले विपक्ष में भी वर्तमान होने से साधक तम नहीं है। सर्व वैदिकों का सिद्धान्त है कि जीव व्यापक है तथा मूर्तिमान् है। मूर्तिमान् जीव में व्यापकत्व हेतु विद्यमान रहता है। अतएव हेतु साधकतम न होने से साध्य का साधक नहीं है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आत्मा की व्यापकता में पूर्व पक्ष।

आत्मा की अणुरूपता का उपपादन॥

शंका—यदि जीवात्मा व्यापक हो तो हेतु असाधकतम कहा जा सकता है। परन्तु जीव तो अणु है। फलाभावादयुक्तत्वात्सांकर्यात् सुखदुःखयोः। तिरस्कृत्य विभुवादमणुवादः समर्थ्यते। सर्ववादी आत्मा को चेतन मानते हैं। आत्मा की चेतनता शरीर की चेष्टा से जानी जाती है। शव शरीर के समान योग्यता हीन शरीर में जिस चेतन शक्ति को आश्रय बनाकर हिताहित में प्रवृत्त तथा निवृत्त होता है, वही चेतन शक्ति जीव है। अतएव प्रशस्त पाद ने भी कहा है। शरीरसमवायिनाभ्यां च हिताहितप्राप्तिपरिहारयोग्याभ्यां प्रवृत्ति निवृत्तिभ्यां रथकर्मणा सारथिवत् प्रयत्नवान् विग्रहस्याधिष्ठातानुमीयते। इति। अर्थ-शरीर में समवाय सम्बन्ध से रहने वाली, हित में प्रवृत्ति तथा अहित में निवृत्ति के योग्य प्रवृत्ति और निवृत्ति से शरीर के अधिष्ठाता जीव का अनुमान, रथ की प्रवृत्ति से सारथि के समान किया जाता है। यहाँ विचारना यह है कि अनुमान से जाना हुआ जीव अणु है अथवा व्यापक है।

जीवात्मा व्यापक नहीं हैं। क्योंकि जीवात्मा को व्यापक मानने का कोई फल नहीं है। शरीर की चेष्टा तो केवल जीव के अस्तित्व के मानने से ही सिद्ध हो जाती है। व्यापक जीवात्मा मान भी लिया जाय तो शरीर के अन्दर स्थित जीवात्मा का तो शरीर की चेष्टा कराने में उपयोग है भी, परन्तु शरीर से बाहर जीवात्मा का कोई उपयोग नहीं है। यदि आत्मा दशों दिशाओं में स्थित पदार्थों को एक ही काल में जानता होता तो जीवात्मा के व्यापक मानने का कुछ प्रयोजन भी होता, परन्तु ऐसा जानता नहीं। अतः जीव को व्यापक मानना उन्मत्त प्रलाप है। यदि कहा जाय कि व्यापक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आत्मा में जितने प्रदेश में मन का सम्बन्ध होता है। उतना ही आत्मा चेतना, कामना एवं शरीर के ऊपर उपकार करने वाला होता है। तथापि चेतना आदिक धर्म जितने आत्मा में रहते हैं उतना ही आत्मा जीव कहा जाता है। अतः जीव व्यापक सिद्ध न हुआ। क्योंकि विभु आत्मवादी भी चेतना आदिकों के अनधिकरण को जीवात्मा नहीं मानते हैं। और चेतना आदिकों का अधिकरण भी मन से संयोग वाला ही जीवात्मा है। अतः जीव भी जितना बड़ा मन है उतना ही बड़ा होना चाहिये। मन परिच्छिन्न है अतः मनः संयुक्त जीव भी परिच्छिन्न है। मन अणु परिमाण वाला है अतः जीव भी अणु ही है। इस प्रकार आत्मा अणुपरिमाण वाला है महान् नहीं है। क्योंकि उसके महान् मानने का कोई फल नहीं है। संग्रह श्लोक—

अस्माद्देहादयं यावान् बहिर्जीवः प्रवर्तते।
किं फलं तस्य वक्तव्यमणुवादासहिष्णुभिः॥

किंच। जीव, पुरुष, विज्ञानात्मा, कर्ता, भोक्ता, श्रोता मंता, द्रष्टा आदि शब्दों का वाच्य जीवात्मा है। यह जीवात्मा शास्त्रों से अथवा लोक से भ्रम या प्रमाद से कर्मों को करता हुआ उनके फलों को भोगने के लिये इस लोक से परलोक जाता है। तथा पुनः कर्म करने के लिये इस लोक में आता है। यह विद्वानों के अनुभव श्रुति स्मृति तथा पुराणों से सिद्ध है। नास्तिकों के अतिरिक्त और किसी का विवाद न होने के कारण ग्रंथ की वृद्धि के भय से श्रुति स्मृति आदिकों के वचनों का कथन नहीं किया है। कहने का भाव यह है कि जीव ही गमना-गमन करता है। गमना-गमन परिच्छिन्न का होता है व्यापक का नहीं। प्रशस्तपादाचार्य ने भी साधर्म्य वैधर्म्य निरूपण प्रकरण में क्रिया का आश्रय पना परिच्छिन्न को ही है, यह कथन

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वक्ष्यमाणवचन से किया है। क्षितिजलज्योतिरनिलमनसां क्रियावत्व-मूर्तत्वपरत्वापरत्ववेगवत्वानि। इति

क्रिया का आश्रय न होने से व्यापक तथा अचल पदार्थ में आना जाना रूप क्रिया नहीं होती है। किंतु क्रिया के आश्रय परिच्छिन्न में गमना-गमन होते हैं। परिच्छिन्न होने पर भी जीव शरीर के समान परिमाण वाला नहीं है। क्यों कि छोटे बड़े अनेक प्रकार के शरीर हैं। अतः शरीरों के एक प्रकार के परिमाण का निश्चय नहीं है। जीवात्मा को भी कर्मों से पैदा होने वाले शरीर के समान घटने बढ़ने वाला मानने पर तो जीवात्मा भी सावयव मानना होगा। परन्तु सावयव पदार्थ अनित्य होता है अतः जीवात्मा की अनित्यता ही माननी पड़ेगी। जो किसी भी आस्तिक को स्वीकार नहीं है। इसलिये आत्मा न मध्यम परिमाण वाला है न विभु ही है। किन्तु परिशेष से अणु ही है। यहाँ यह संग्रह श्लोक है:—

जीवो गच्छति चागच्छतीति भो वेदडिण्डिमः।
व्यापकश्चेत्कथं गच्छेदागच्छेत्कथयेति नः॥

यदि जीवात्मा व्यापक है तो वह एक है या अनेक है। एक कहना असंभव है, क्योंकि व्यवस्था ही समाप्त हो जायगी। यही दिखलाते हैं कि इस संसार में कोई जीव सुखी कोई दुःखी कोई राजा कोई रंक कोई देव कोई दैत्य तो कोई पशु पक्षी है। कोई सोया है कोई जागता है कोई बद्ध है कोई बन्धन से छूटना चाहने वाला मुमुक्षु है तो कोई मुक्त है। इस तरह जीवों की लौकिक व्यवस्था है। यह व्यवस्था एक जीव के मानने पर सर्वथा असंभव है। क्योंकि सर्व शरीरों में आत्मा के एक मानने पर तो यातो सर्व प्राणी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सुखी या दुःखी या बद्ध अथवा मुक्त ही होंगे। इस प्रकार जन्म मरण सुख दुःख बन्ध मोक्ष आदिकों की जीवों के प्रति नियमित व्यवस्था की सम्प्राप्ति ही हो जायगी। इस दोष को दूर करने के लिये ही वैशेषिकादिक शास्त्र प्रणेताओं ने जीव नाना है यह ही निर्णय दिया है। व्यवस्था तो नाना (वै०दर्श० अ० ३ सूत्र २० अर्थ यह सुखी है यह दुःखी है यह पशु है यह पक्षी है इत्यादि व्यवस्था देखी जाने से जीवनाना हैं। जन्मादि व्यवस्थातो पुरुषबहुत्वम्। सांख्यदर्शन अध्याय १ सू० १४८ अर्थः जन्म मरणादिक की व्यवस्था होने से पुरुष बहुत हैं। अतः आत्मा के नानात्व का ही निर्णय देना चाहिये न कि एकत्व का।

जो यह निर्णय देते हैं कि आत्मा सर्वत्र व्यापक हैं तथा अनेक हैं। यह निर्णय भी असम्यक् है। क्योंकि इसमें भी सुख दुःखादिकों का संकर ही है। इस पक्ष में सुख दुःखादिकों का जीवात्मा से सम्बन्ध प्रधान के संबन्ध अथवा मन के संयोग सम्बन्ध से माना जाता है। प्रधान अथवा मन सर्व जीवात्माओं के लिये समान ही हैं। क्योंकि आत्माओं के सर्वत्र व्यापक होने से एक जीवात्मा के साथ प्रधान अथवा मन का संयोग होने पर अन्य आत्माओं के साथ भी संयोग होना अनिवार्य है। और एक आत्मा के संयोग के साथ ही अन्य आत्माओं से संयोग के अनिवार्य होने पर एक आत्मा के सुखी अथवा दुःखी होने पर अन्य समस्त आत्माओं का सुखी तथा दुःखी होना भी अनिवार्य है। क्योंकि हेतु के समान होने पर फल भी समान ही होता है। ऐसा होने पर यह सुख देवदत्त को हुआ है यह दुःख यज्ञदत्त को हुआ है यह व्यवस्था करनी कठिन है।

यदि कहा जाय कि प्रधान अथवा मन के संयोग के सर्व जीवों के समान होने पर भी प्रति जीव का अदृष्ट भिन्न भिन्न है। अतः

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

व्यवस्था संभव हो सकती है। परन्तु यह अदृष्ट देवदत्त का है, यह अदृष्ट यज्ञदत्त का है, यह निर्णय करना भी कठिन है। क्योंकि व्यवस्थापक मन तथा प्रधान के साथ जो संयोग सर्व जीवों के प्रति समान होने से एक जीव का जो अदृष्ट होगा वही अन्य भी सर्व जीवों का होगा। अतः अदृष्ट को भी सर्व जीवों के प्रति समान होने से अदृष्ट भी विभाजक नहीं है। सुख दुःखादिकों का सांकर्य ही प्राप्त होगा। परन्तु लोक में व्यवस्था देखी जाती है अतः जीव नाना हैं। यहाँ यह संग्रह श्लोक है।

व्यवस्थातस्तु नानात्वं जीवानामवगम्यते।
व्यापकत्वे कथं वार्यं सांकर्यं सुख दुःखयोः ॥१॥

अर्थ—व्यवस्था देखी जाने से जीवों की अनेकता ही जानी जाती है। जीवों की व्यापकता मानने पर सुख दुःख की संकरता कैसे निवारण की जा सकती है ॥१॥ इस लिये जीवात्मा के विषय में यही निर्णय उचित है कि "जीवात्मा अणु है" इस अणु पक्ष में कोई दोष नहीं है। जितने आकार वाली मणि होती है वह उतने ही स्वरूप से पूर्व उत्तर दक्षिण पश्चिमादिक दिशाओं में प्रकाश रूप कार्य करती रहती है। उसी प्रकार अणु आत्मा भी शरीर के सर्व कार्य करता रहता है। व्यापक पक्ष की तरह कोई भाग सार्थक तथा कोई भाग निरर्थक नहीं हैं। यह जीवात्मा अधूमक अग्नि की तरह प्रकाश रूप है। तथा हृदय देश में स्थित है। व्यापक आत्मा की तरह बाहर भीतर वर्तमान होने से निरर्थक भागों वाला नहीं है। कहने का भाव यह है कि सम्राट की भाँति बुद्धि रूपी महल में बैठा हुआ अणु आत्मा अपने तेज से अपने अनुचरों के तुल्य देहेन्द्रियादिकों को नियमानुसार अपनी अपनी क्रियाओं में प्रेरणा देता हुआ एक क्षण भी निरर्थक नहीं जाने देता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एवं अणु पक्ष में व्यापक पक्ष की भाँति गमनागमन का असंभव दोष नहीं है। क्योंकि परिच्छिन्न पदार्थ चलन क्रिया का आश्रय हाता है। तथा सुख दुःख की संकरता का दोष भी नहीं है। क्योंकि जीव अणु हैं अतः परस्पर वार्ता के भी अभिज्ञ नहीं हैं। इसीलिये ही अपने अपने कर्मों से उपार्जित सुख दुःख को भोगते हुए अवस्थित हैं। विशेष वार्ता यह भी है कि दोष अथवा दोषाभास उस पक्ष में हीं प्राप्त हो सकते हैं। जिस पक्ष में वेदादि सच्छास्त्रों का प्रमाण नहीं होता है। इस अणु पक्ष में तो भूरिशः वेद शास्त्र प्रमाण विद्यमान हैं। जैसे जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः। तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति। तेषां शांतिः शाश्वती नेतरेषाम्। एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो यस्मिन् प्राणः पंचधा संविवेश। बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च। भागो जीवः सविज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते। उत्क्रांतिगत्यागतीनाम्। वे० अ० २ पा० ३ सू० १८ तमणुमात्रमात्मानमनुविद्यास्मीत्येवं तावत्संप्रजानीते। समाधि पादस्थ षट्त्रिंशत ३६ के सूत्र के व्याख्यान में भाष्यकार व्यास ने पंचशिखा चार्य के सूत्र को उधृत किया है। इस प्रकार जीव को अणु होने से व्यापकत्व हेतु पक्ष में न वर्तने से साधकतम ही है। असाधकतम नहीं है।

अणुवाद के निराकरण पूर्वक आत्मा की व्यापकता का समर्थन

समाधान—ईश्वरो न मूर्तिमान् व्यापकत्वात् कालादिवत्। इस अनुमान में व्यापकत्व हेतु की साधकतमता की सिद्धि के लिये विपक्ष व्यावृत्ति के उपपादनार्थ आत्मा को अणु परिणाम का निर्णय दिया है सो यह निर्णय युक्त नहीं है। क्योंकि जो पदार्थ अणु परिणाम वाला होता है वह प्रत्यक्ष गुण वाला नहीं होता है। जैसे घटपटादिक पदार्थ अणु परिणाम नहीं होते हैं क्योंकि वे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रत्यक्ष गुण वाले होते हैं। जीव के ज्ञानादिक गुण प्रत्यक्ष हैं। क्योंकि परोक्ष पदार्थों की तरह जीव क ज्ञानादिक गुणों में किसो भी पुरुष को संशय अथवा विपर्यय नहीं होता है। अतः आत्मा अणु नहीं परिशेषतः व्यापक ही है।

जीव को अणु कहना अनुभव से भी विरुद्ध है। क्योंकि गंगा अथवा अन्य शीतल जल ह्रदों में निमग्न होकर पुरुषों को एक कालावच्छिन्न सर्व अङ्गों में शीतलता का अनुभव होता है। ऐसे ही सर्व अङ्गों में एक कालावच्छिन्न कंटक वेध से पुरुष को सर्व अङ्गों में वेदना का अनुभव होता हो है सो यह अनुभव जोवाणु-पक्ष में विरुद्ध है। क्योंकि अणु का सम्बन्ध अणु देश ही मं होता है। अतः सर्वाङ्गीण शीतलता अथवा वेदना का अनुभव कदापि नहीं हा सकता है। और विचार करने पर तो उभयत्र अणु को निरवयव होने से, अणु जीव तथा शरीराणु भाग का परस्पर कोई संयोग समवायादि संबन्ध न होने से गुण गुणी भाव, यहाँ शीतलता का, तथा वेदना का अनुभव हो संभव नहीं हो सकता है। परन्तु होता है। अतः जीवाणुत्ववाद अनुभव विरुद्ध है।

शंका— त्वक् सर्व शरीर व्यापनो है उस त्वक् के साथ सम्बन्ध हो जाने से अणु जीव को भी सर्वाङ्गीण शोतलता अथवा वेदना का अनुभव संभव हो सकता है। अतः पूर्वोक्त दोष का अवकाश नहीं है। समाधान—यदि जीवात्मा का सम्बन्ध समस्त त्वक् को व्याप्त कर लेता तो आपका मनोरथ सिद्ध हो जाता, परन्तु ऐसा होता नहीं है। क्योंकि अल्प का सम्बन्ध भी महान् के एक देश का ही निरोध करता है। अतः अणु जीव समग्र त्वक् देश को व्याप्त नहीं कर सकता है। क्योंकि आकाश में वर्तमान घटमठ आदिकों के संयोग समस्त आकाश को व्याप्त नहीं करते हैं। किंतु

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

घट मठादिक अल्प पदार्थों को ही आकाश का संयोग व्याप्त करता है। यदि आकाशमात्र को घटमठादिक पदार्थ व्याप्त कर लेवें तो जहाँ आकाश है वहाँ ही घटादिकों की प्रतीति होनी चाहिये किंतु ऐसी प्रतीति नहीं होती है। अतः घटादिकों का संयोग आकाश मात्र को व्याप्त नहीं करता है। इसी प्रकार अणु परिणाम जीवात्मा का सम्बन्ध भी स्व अपेक्षा से महान परिमाण वाली त्वचा के किसी अणु परिमाण प्रदेश को ही व्याप्त करेगा। अणु जीवात्मा भी अपने से सम्बन्ध वाले त्वक् के अणु प्रदेश ही से शीतलता अथवा वेदना का अनुभव करेगा। और यदि त्वक् मात्र सम्बन्ध से सर्वाङ्गीण शीतलता या वेदना की प्रतीति कथंचित् मानोगे तो शिर और पादतल में हिम के क्लेदन तथा कंटक के वेधन से शीतलता तथा वेदना भी समग्र शरीर में अनुगत रूप से भान होनी चाहिये। क्योंकि जीवाणु के सम्बन्ध की तरह हिम तथा कंटकों के सम्बन्ध भी अखिल त्वचा में वर्तमान हैं। त्वचा सर्व शरीर व्यापिनी है ही। तथापि हिम क्लिन्न शिर वाला तथा कंटक विद्ध पाद वाला पुरुष शिर में शीतलता और पादतल में वेदना का अनुभव करता है। सर्व शरीर में दोनों का अनुभव नहीं करता है। इतना भी विचार आपकी उक्ति को कथंचित् आदर देकर किया है। वस्तुगति से तो कुछ भी प्रतीत नहीं होगा। तथाहि ' अणु परिणाम जीवात्मा के साथ सम्बन्ध वाला त्वक् का प्रदेश भी अणु ही कहना होगा। ऐसा होने पर भी जिस त्वक् प्रदेश में जीवाणु का संबन्ध रहता है उसी प्रदेश में हिम तथा कंटक का संबन्ध नहीं हो सकता है। क्योंकि एक ही स्थान में अनेक मूर्त द्रव्यों का संयोग होना असंभव है। जीव का हिम और कंटक के साथ सम्बन्ध न होने पर शीतलता यथा वेदना का अनुभव भी किस प्रकार हो सकता है। अर्थात् किसी प्रकार से नहीं हो सकता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तुष्यतु दुर्जन न्याय से स्वीकार भी कर लिया जाय कि एक प्रदेश में अनेक अणुओं का सम्बन्ध है तथा उस सम्बन्ध के निमित्त से शीतलता तथा वेदना भी होती है। तथापि उस शीतलता तथा वेदना का प्रत्यक्ष अनुभव कैसे हो सकेगा। क्योंकि अणु पदार्थ में जायमान धर्म का प्रत्यक्ष इन्द्रियों से नहीं किया जा सकता है।

शंका—सर्व देह व्यापी शीतलता तथा वेदना का साक्षात्कार भले ही त्वक् सम्बन्ध से मत हो, तथापि अणु आत्मा के चैतन्य गुण की व्याप्ति से शीतलता तथा वेदना का साक्षात्कार तो अणु आत्मा को भी हो ही जायगा। गृह के एक देश में स्थित मणि प्रदीपादिकों की प्रभा जिस प्रकार सर्व गृह में व्याप्त है। उसी प्रकार अणु आत्मा का चैतन्य गुण भी सर्व शरीर में व्याप्त हैं। अतः शीतलतादिकों के अनुभव की हमारे अणु पक्ष में भी कोई अनुपपत्ति नहीं है।

समाधान—यदि आत्मा तथा चेतन का गुण गुणी भाव सिद्ध हो जाय तो आपका मनोरथ भी सिद्ध हो सकता है। परन्तु आत्मा और चेतन का गुण गुणी भाव ही संभव नहीं है। क्योंकि जहाँ वैधर्म्य होता है वहीं गुण गुणी भाव होता है। जैसे रूप रसादिक गुण तथा पृथिवी आदिक गुणियों का वैधर्म्य है। जिनका वैधर्म्य नहीं होता है उनका गुण गुणी भाव भी नहीं होता है। जैसे रूप रूपान्तर का रस रसान्तर का घट घटान्तर का एवं पट पटान्तर का गुण अथवा गुणी नहीं होता है। तैसे ही जीव और चेतन का गुण गुणी भाव नहीं बन सकता है। क्योंकि जीव भी चेतन तथा उसका गुण तो चेतन है ही। अतः साधर्म्य होने से गुण गुणी भाव जीव तथा उसके गुण चेतन का नहीं बन सकता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यदि आत्मा को जड़ तथा उसके गुण को चेतन मानोगे तो परमात्मा भी जड़ मानना पड़ेगा। क्योंकि श्रुति ने विस्फुल्लिंग के दृष्टान्त से जीव को परमात्मा का अंश बतलाया है। भगवान् श्री कृष्ण ने भी कहा है कि:—ममैवांशो जीवलोके जीव भूतः सनातनः। भगवान वेदव्यासजी ने भी कहा है कि:—अन्शी नानाव्य पदेशात्। परमात्मा का अंश जीव यदि जड़ है तो अंशी परमात्मा की जड़ता के बिना अंश जीव में जड़ता नहीं आसकती है। जो जड़ होता है। वह मिथ्या होता है अतः बतलाइये जड़ स्वरूप आत्मा तथा परमात्मा का अधिष्ठान कौन होगा ? क्योंकि मिथ्या जड़ पदार्थ का जड़ पदार्थ तो अधिष्ठान हो नहीं सकता है। अधिष्ठान तो सर्वत्र चेतन ही होता है। परमात्मा को जड़ कल्पित किसी ने भी स्वीकार नहीं किया है क्योंकि परमात्मा ही सर्व का अधिष्ठान तथा चेतन तत्व है ऐसा श्रुतियों ने कहा है। परमात्मा के चेतन होने पर उसका अंश जीव कथमपि जड़ नहीं हो सकता है। जीव के चेतन होने पर जीवात्मा और उसके गुण चैतन्य में वैधर्म्य न होने से गुणगुणी भाव अत्यन्त असंभव है।

तुष्यतु दुर्जन तोषन्याय से चैतन्य को आत्मा का गुण मान भी लिया जाय तो व्यवहार का निर्वाह नहीं होगा। क्योंकि पराधीन होने से गुणों का गुणी को त्याग कर देशान्तर में जाना असम्भव है। गुणी के बिना स्वतन्त्र रूप से गुण का रहना अदृष्टचर है। अतः यदि अणु आत्मा के प्रदेश को त्यागकर चेतन गुण की समग्रदेह में उक्त व्यवहार की सिद्धि के लोभ से व्याप्ति मानोगे तो चेतन में गुणत्व ही न रहेगा। अतः गुण की व्याप्ति तो संभव ही कैसे हो सकती है।

निबिडावयव तेज का नाम द्रव्य है जैसे मणि तथा प्रदीपादिक हैं। तथा विरलावयव तेज का नाम प्रभा है। इस प्रकार

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रभा का दृष्टांत आपके पक्ष में भले ही रहे। तथापि चेतन गुण की व्याप्ति प्रभा की भांति संभव नहीं हो सकती है। क्योंकि मध्यम परिमाण वाले मणि प्रदीप की प्रभा भी मध्यम परिमाण वाली होने से कथचित् घर को व्याप्त कर सकती है। परन्तु अणु परिमाण जीव की प्रभा भी अणु परिमाण वाली होने से मध्यम परिमाण वाले शरीर को कैसे व्याप्त कर सकती है। इस प्रकार सर्व शरीर में अणु जीव के ज्ञान गुण की व्याप्ति का असंभव होने से सर्वांगीण शीतलता या वेदना की उपलब्धि कदापि नहीं हो सकती है। अतः अन्यथाऽनुपपत्ति से जीवात्मा की व्यापकता की ही सिद्धि होती है।

किंच अणु आत्म वादी ने जीव की अणुरूपता में जो प्रमाण कहे थे वे प्रमाण जीवन की अणुता के साधक नहीं हैं। क्योंकि वाक्य का जो तात्पर्य होता है वही उसका अर्थ होता है। एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो यस्मिन्प्राणः पंचधा संविवेश। यह उपनिषद् का वचन जीव की अणु रूपता को नहीं कह रहा है। क्योंकि आत्मा के अणु प्रतिपादन करने में उसका तात्पर्यनहीं है। जिस प्रकार शत्रु के गृह में भोजन करने वाले पुत्र से परम-हितैषी पिता कहे कि विषं भुङ्क्ष्व (विष खाले) यह पिता का वाक्य विष भक्षण में प्रमाण नहीं है। उसी प्रकार उक्त वचन भी परमात्मा के ज्ञानपरक है। क्योंकि यहाँ प्राधान्यातया जीव का प्रकरण नहीं है। किन्तु स्पष्टतया परमात्मा का प्रकरण है। अतएव उक्त वाक्य में परमात्मा का परामर्शक एष पद दिया है। यह पद जीव का परामर्शक नहीं है। क्योंकि इससे पूर्व वाक्य में बृहत् तथा दिव्यादिक शब्दों से व्यापक तथा सर्वज्ञ परमात्मा का ही वर्णन किया है। तथाहि:—

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बृहच्च तद्दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च सूक्ष्मतरं विभाति ।
दूरात्सुदूरे तदिहांतिके च पश्यस्विहैव निहितं गुहायाम् ॥

इस प्रकार परमात्मा का रूप कहने के पश्चात् "एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः" इस वाक्य से परमात्मा के स्वाभेद ज्ञान का वर्णन किया है। अन्यथा पूर्व वर्णित स्वरूप, अणु आत्मवादियों को जीवात्मा का ही स्वरूप मानना पड़ेगा। ऐसा मानने पर एक ही जीव तत्व में महत्व तथा अणुत्व दो परस्पर विरोधी धर्म कदापि नहीं रह सकते हैं।

किं च-सर्वनाम से प्रधान भूत ईश्वर का ही तहाँ परामर्श किया गया है। अप्रधान रूप जीव का नहीं। क्योंकि ज्ञान प्रसादेन विशुद्ध सत्वस्तत स्तुतं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः इस वचन से तहाँ कर्म कर्ता का व्यपदेश किया गया है। अर्थात् दर्शन क्रिया कर्ता जीव है तथा कर्म ईश्वर है। पश्यते पद का अर्थ है "साक्षात्कार करता है" निष्कलं तं यह परमात्मा रूप कर्म का उपदेश है। विशुद्धसत्त्व यह जीव रूप कर्ता का व्यपदेश है। ज्ञान प्रसादेन का अर्थ है एकाग्रचित्त से चिंतन करता हुआ यह ज्ञान साधन का उपदेश है। अतः उक्त बचन, जीव की अणुता में प्रमाण नहीं है। किन्तु ईश्वर के ज्ञान में तात्पर्य वाला है।

अथवा एषोऽणुरात्माक यह वचन जीव परक ही रहो। परन्तु जीव की अणुरूपता का वर्णन नहीं करता है किन्तु सूक्ष्मता को कह रहा है। क्योंकि विभवत्येष आत्मा इस वाक्य शेष में आत्मा का विभुभाव ही ज्ञात होता है। अतः एक ही आत्मा विभु भी हो और अणु भी हो यह संभव नहीं है। हाँ विभु और सूक्ष्म हो सकता है। विभुता और सूक्ष्मता का परस्पर विरोध नहीं है। किन्तु अणु

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

तथा महत्परिमाण का परस्पर विरोध है। अतः एकत्र स्थित नहीं रह सकते हैं। सूक्ष्मता तथा विभुता का कोई विरोध नहीं है। अतः उनकी एकत्र स्थिति में भी कोई विवाद नहीं है। क्योंकि आकाशादिक व्यापक भी हैं और सूक्ष्म भी हैं। अतः यह सिद्ध हुआ कि "एषोऽणुरात्मा" यह उपनिषत् का वाक्य जीव की अणुता में प्रमाण नहीं है। इसी प्रकार पंचशिखाचार्य के सूत्र का भी तात्पर्य जीव की अणु परिमाणता में नहीं है। अतः सूत्र में स्थित अणु शब्द सूक्ष्मता का ही वाचक है। जैसे अणु पन्था विततः पुराणः इस वचनान्तर में तथा अणुश्च इस व्यास सूत्र में अणु पथ तथा प्राण में अणु शब्द का अर्थ सूक्ष्म ही है अणु नहीं है। इसी प्रकार

बालाग्रशतभागस्यशतधा कल्पिस्यच।
भागो जीवः सविज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते॥

इस श्वेताश्वतरीय वचन का आशय भी जीव के आनन्त्य ही में है। अणुता में नहीं है। क्योंकि वाक्य शेष में स चानन्त्याय कल्पते इस प्रकार साक्षात् जीव की अनन्तता ही प्रतीत होती है। यदि बालाग्र के अयुत भाग परिणाम वाला ही जीव होता तो श्रुति उसे अनन्ताता का उपदेश कदापि न देती। अतः यहाँ पर यही तत्वावधारण है कि आत्मा की अनन्तता ही पारमार्थिक है। और बालाग्र के अयुतभाग परिमाणकत्व तो औपाधिक ही है। अनन्त आकाश भी उपाधि से सान्त प्रतीत होता है। परन्तु सांत पदार्थ को उपाधि के संबन्ध से परिच्छिन्नता के विना अनन्तता कहीं भी अनुभूत नहीं होती है। उपाधि जब स्वयं ही अनन्त नहीं होती तब उपहित को अनन्त कैसे कर सकेगी। अतः जीव की अन-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

न्तता पारमार्थिक है और वालाग्र अयुतभाग परिमाणकत्व औपाधिक है यही निश्चय करना चाहिये।

अन्यथा श्रुतियों में ही जीवात्मा को कहीं पर बालाग्र अयुत भाग परिणामकत्व कहीं अंगुष्ठ मात्र परिमाणकत्व कहीं आनखाग्र परिमाणकत्व कहीं पर आराअग्रमात्र परिमाणकत्व कहीं पर अनन्त महान् परिमाणकत्व प्रतिपादन से विरुद्धार्थ प्रतिपादक श्रुति वचनों को ही अप्रामाणता प्राप्त हो जायगी। और वेदों का अप्रामाण्य किसी भी आस्तिक को स्वीकार नहीं है। अतः औपाधिक परिच्छिन्नता तथा पारमार्थिक व्यापकता है। यही उत्तमसिद्धान्त है। इसी सिद्धान्त को श्रुति ने स्वयं भी प्रमाणित किया है। बुद्धेर्गुणेनात्मगुणेन चैवाराग्रमात्रोप्यवरोपिदृष्टः। श्वेताश्वतर० अ० ५ म० ८ महत्वादिगुणों से अवर अर्थात् महान भी यह जीवात्मा बुद्धि के गुण अणुत्वादि से आराग्र मात्र भी प्रतीत होता है। अतः इस पक्ष में सर्व वाक्यों का समन्वय हो जाने से सर्वोत्तम सिद्धान्त है।

एवं बृहदारण्यकोक्त याज्ञवल्क्य संवाद में कतम आत्मेति योऽयं विज्ञान मयः प्राणेषु हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुषः स समानः सन्नुभौ लोका वनुसंचरति ध्यायतीव लेलायतीव। यह श्रुति समानः सन् इतने भाग से बुद्धि से आत्मा की समान रूपता को, ध्यायतीव लेलायतीव इस भाग से बुद्धि के गुणों की समान रूपता को कह रही है। इसी प्रकार योग दर्शन में भी कहा है। दृष्टा दृशिमात्रः शुद्धोपि प्रत्ययानुपश्यः। योग० पा० ० सू० २०। इस सूत्र में प्रतीयतेऽनेनेति प्रत्ययः इस व्युत्पत्ति से प्रत्यय नाम बुद्धि अथवा बुद्धि की वृत्तियों का है। उस बुद्धि अथवा बुद्धि की वृत्तियों को जो जानता हुआ अतदात्मक होता हुआ भी तदात्मक की तरह प्रतीत होता है।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उसे प्रत्ययानुपश्य कहते हैं। यह सूत्र अवयव का अर्थ है। यही व्यवस्था श्री वादरायणाचार्यों ने उत्तर मीमांसा में भी की है। तद्-गुणसारत्वात्तु तद्व्यपदेशः प्राज्ञवत्। अ० २ पाद० ३ सू० १६। सूत्र का अर्थ यह है। शंका यदि यह जीवात्मा व्यापक ही है तो श्रुति में आत्मा की अणुता का उपदेश क्यों है। समाधान—जैसे (प्राज्ञ) परमात्मा को सगुणोपासनाओं में गुण सारत्व से अणीयस्त्व आदिकों का व्यपदेश है। अणीयान् व्रीहेर्वायवाद्वा मनोमयः प्राणशरीरः सर्वगन्धः सर्व रसः सत्य संकल्पः छा०। प्रपा० ३ खं० १४ इति इसी प्रकार तद्गुणसारत्वात्। तस्याः बुद्धे गुणाः अणुत्वादयः सारः प्रधानं यस्य जीवात्मनस्तस्य भावस्तत्त्वम् तस्मा-दित्यर्थः। अणुत्वादिक बुद्धि के गुणों की प्रधानता से जीवात्मा को भी श्रुति ने अण आदिक रूपों से कथन किया है। आत्मा का परमार्थ स्वरूप अणु नहीं कहा है। यह सूत्रार्थ है।

इतने कहने से ही "उत्क्रांतिगत्यागतीनम। इस सूत्र की प्रमा-णता भी जीवात्मा की परमार्थाणुरूपता में नहीं है ऐसा जान लेना चाहिये। क्योंकि लोक परलोक में जीव का गमनागमन भी उपाधि के ही आधार पर होता है वास्तविक नहीं। इस सम्पूर्ण कथन का सार यह है कि आत्मा व्यापक है अणु नहीं है यही सिद्धान्त अचल है। इस सिद्धान्त की अचलता दिखाने के लिये आत्मा की व्यापकता में प्रमाण उपस्थित करते हैं। सवा एष महानज आत्मा योऽयं विज्ञानमयः नित्यः सर्वगतः स्थाणु रचलोऽयं सनातनः। इत्यादिक सैकड़ों ही श्रुति तथा स्मृतियाँ आत्मा की व्यापकता में प्रमाण हैं। अतः यही पक्ष निर्दोष है।

यद्यपि प्रतिवादी की ओर से निष्फलता आदिक तीन दोष कथन कर चुके हैं तथापि वे तीनों दोष आत्मा को व्यापक स्वीकार

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कर लेने पर भी कथं चिदपि प्राप्त नहीं होते हैं। तिन दोषों में से प्रथम दोष का उद्धार करते हैं। जैसे एक अग्नि के प्रकाशदाह शीत-निवृत्ति आदिक अनेक फल होते हैं। उसी प्रकार जीवात्मा के भी अनेक फल हैं। जीव का पहिला फल यह है कि शरीर की सम्पूर्ण चेष्टायें जीवात्मा से ही सिद्ध होती हैं। दूसरा फल यह है कि दूर दूरंतर तथा दूरतम विषयों में भोग्य की उत्पत्ति है। इन दोनों में से अणु पक्ष में चाहे प्रथम फल तो किसी प्रकार संभव भी हो जाय परन्तु दूर दूरतर तथा दूरतम विषयों में भोग्य की उत्पत्ति रूप द्वितीय फल तो संभव हो ही नहीं सकता है। क्योंकि उन उन देशों में भोग्य पदार्थों की उत्पत्ति जीव के अदृष्ट से ही होती है। अतः जिस देश में भोग्य पदार्थ की उत्पत्ति हुई है। उस देश में यदि अदृष्ट समवेत नहीं है तो वह अदृष्ट भोग्य पदार्थ की उत्पत्ति नहीं कर सकता है अणु आत्म समवेत अदृष्ट का साक्षात् सम्बन्ध उन दूर से दूर देशों से नहीं हो सकता है जहाँ जीव के भोग्य पदार्थों की उप्पत्ति हुई है। क्योंकि अदृष्ट स्वतन्त्र नहीं है। अतः दूर से दूर देशों में भोग्य पदार्थों की उत्पत्ति के लिये तिस तिस अदृष्ट के सम्बन्ध रूप से जीव की व्यापकता सफल है।

अथ द्वितीय दोषोउद्धार

द्वितीय दोष यह कहा था कि व्यापक में गमनागमन नहीं हो सकते हैं। सो यद्यपि निरूपाधिक जीव के गमनागमन तो नहीं हो सकते हैं तथापि औपाधिक जीव के गमनागमन से किसी भी आपत्ति का अवकाश नहीं है। जीव के गमनागमन कहने वाले शास्त्र का भीं यही तात्पर्य है कि उपाधि संवलित जीव ही गमनागमन करता है। क्योंकि सोपाधिक जीव ही श्रोता मंता विज्ञाता कर्ता

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विज्ञानात्मा पुरुष जीव तथा भोक्ता आदिक शब्दों से कहा गया है। सोपाधिक जीव ही भोक्ता है। अदृष्ट से उत्पन्न सुख दुःख के अनुभव का नाम भोग है। सो भोग अनित्य है। क्योंकि मनोजन्य है। अतः जीव की मन उपाधि है। यह मार्ग वृद्ध परम्परा से प्राप्त है तथा श्रुति सम्मत भी है। श्रुति यह है। आत्मेन्द्रिय मनो युक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः। ध्यायतीव लेलायतीव। व्यापक भी आत्मा मन रूप उपाधि के सम्बन्ध से इस लोक से परलोक तथा कर्म करने के लिये परलोक से पुनः इस लोक को जाता आता रहता है। अधिक क्या कहें आकाशादि की भांति व्यापक आत्मा में भी गमनागमन व्यवहार उपाधि से होते हैं। वास्तव में नहीं। इस अर्थ में सांख्य सूत्र भी प्रमाण है।

गतिश्रुतेश्च व्यापकत्वेप्युपाधियोगाद्भोगदेशकाललाभो व्योमवत्। सा० अ० ६ सू० ५८॥ इति॥

अथ तृतीय दोषोद्धार

औपाधिक आत्मा ही कर्ता भोक्ता है। तथा कर्ता के भोग का व्यवस्थापक अदृष्ट है। वह अदृष्ट स्वस्वफलानुगानुकूल शरीर को उत्पन्न करता है। जो शरीर जिस सोपाधिक आत्मा के अदृष्ट से उत्पन्न होता है। वह शरीर उसी सोपाधिक आत्मा का है। मन और शरीरों की व्यवस्था से अदृष्टों की व्यवस्था है। अदृष्टों की व्यवस्था से भोगों की व्यवस्था है। अतः सुख दुःखादिकों का सांकर्य प्रसंग नहीं है। यदि आत्मा की व्यापकता मात्र को लेकर सुख दुःखादिकों की संकरता मानोगे तो आपके मत में व्यापक परमात्मा का सर्व जीवों के साथ सम्बन्ध होने से जीवों के अदृष्ट से उत्पन्न सुख दुःख का भोक्ता मानना पड़ेगा। अतः व्यापक जीव की तरह ईश्वर का सर्व शरीर में सन्निधान भी सम है। सर्व शरीर ईश्वर के विनासायतन भी कहे ही हैं। अतः ईश्वर को भी सुख

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दुःख का योग समान ही मानना पड़ेगा। परन्तु उन उन शरीरों से ईश्वर का सन्निधान होने पर भी सुख दुःख नहीं होते हैं। क्योंकि वे शरीर ईश्वर के अदृष्ट से जन्य नहीं हैं। किन्तु जीवों के अदृष्ट से जन्य हैं। अतः जीवों के ही भोगायतन हैं ईश्वर के नहीं। इसी प्रकार एक आत्मा के एक तथा व्यापक होने पर भी औपाधिक परिच्छिन्न जीवों के अदृष्ट से ही उत्पन्न होने के कारण औपाधिक आत्माओं के ही भोगायतन हैं व्यापक आत्मा के नहीं। आत्मा को व्यापक होने पर भी निष्फलत्वादिक दोष नहीं है। उसकी व्यापकता प्रमाण सिद्ध भी है। अतः ईश्वरो न मूर्तिमान् व्यापकत्वात् कालादिवत्। इस अनुमान में व्यापकत्व हेतु व्यभिचारी होने से अनुपन्न है। संग्रह श्लोकाः

न भवेन्मूर्तिमानीशो व्यापकत्वेन हेतुना ।
यदि निरंकुशं ब्रूते नूनं ते बालचेष्टितम् ॥१॥
हेतुदोषग्रहग्रासग्रस्ताखिलकलेवरम् ।
विकलं यन्न ते भाति मानं पंचत्वशंकया ॥२॥
तस्मात्मैवं प्रयोक्तव्यं मानं मानविदां पुरः ।
दुष्टमानप्रयोगाद्धि मानं मान्यस्य हीयते ॥३॥

किंच व्यापकत्व हेतु केवल अनैकान्तिक ही नहीं है अपितु कालात्ययापदिष्ट भी है। जो हेतु प्रत्यक्ष अनुमान अथवा शब्द प्रमाण से अपने साध्य के विपरीत अर्थ के निर्णय द्वारा साध्यसंदेह विशिष्ट काल को उल्लंघन करता है वह हेतु कालात्ययाप दिष्ट एवं कालातीत कहलाता है। जैसे बह्निरनुष्णः द्रव्यत्वात्। शब्दो श्रावणः गुणत्वात्। नर शिरः कपालं शुचिः प्राण्यंगत्वात्। इसमें प्रथम

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

द्रव्यत्व हेतु प्रत्यक्ष से द्वितीय गुणत्व हेतु अनुमान से तृतीय प्राण्यंगत्व हेतु शब्द से अपने साध्य के विपरीत अर्थ के निर्णय द्वारा साध्यसंदेहविशिष्टकाल का उल्लंघन करता है। अतः तीनों ही हेतु कालात्ययापदिष्ट हेत्वाभास हैं। यहाँ प्रकृत में व्यापकत्व हेतु शब्द और अनुमान से कालात्ययापदिष्टहेत्वाभास है।

तथाहि अनुमान का आकार यह है। जो चेतन होता हुआ कर्ता होता है सो सर्व जीव की तरह मूर्तिमान् ही होता है। भगवान् परमात्मा भी ब्रह्माण्ड रूप कार्य का कर्ता है तथा चेतन भी है। अतः मूर्तिवाला अर्थात् शरीरी भी है। यद्यपि चेतन होते हुए कर्ता जीव के सशरीर होने में जीवकृत शुभाशुभ कर्म भी कारण हैं और ईश्वर के शुभाशुभ कर्म हैं नहीं अतः ईश्वर का सशरीरी होना संभव नहीं हैं। तथापि शरीर कर्मों से ही धारण किया जाता है ऐसा नियम नहीं है क्योंकि योगी पुरुष अनेक शरीर धारण करने का हेतु कर्म न होने पर भी अपनी इच्छा मात्र से अनेकों शरीर धारण कर लेते हैं। उसी प्रकार ईश्वर भी कर्म न होने पर भी अपने संकल्प मात्र से शरीर धारण कर लेता है। अतएव संकल्प मात्र से धारण किये शरीर लीलाविग्रह कहे जाते हैं। जो कर्मज शरीर होता है उसका इच्छानुसार उपसंहार नहीं होता है किंतु लीलाविग्रहों का इच्छानुसार उपसंहार होजाता है। यह योग दर्शन में स्पष्ट कहा है।

शंका—योगी जिन अनेकों विग्रहों को बनाता है उनकी चेष्टा कराने वाले मन भी उतने ही उत्पन्न होते हैं। अथवा सर्व विग्रह एक मन वाले ही होते हैं। इस शंका का समाधान, महर्षि पतंजलि ने इस सूत्र से किया है-सूत्र निर्माणचित्तानि अस्मिता मात्रात् पाद-४ सू० ६। अर्थ-(निर्माण चित्तानि) योगी ने जितने शरीर रचे हैं उतने ही मन भी रचे हैं। (अस्मितामात्रात्) ये मन के सहित सर्व

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शरीर योगी के संकल्प मात्र से आविर्भूत होते हैं। और किसी प्रयत्न की अपेक्षा नहीं होती है। क्योंकि योगभाष्यकारव्यास ने कहा है कि-अस्मितामात्रं चित्तकारणमुपादाय निर्माणचित्तानिकरोति ततः सचित्तानिभवन्ति। भाव यह है कि योगी के संकल्परचितलीला विग्रहों में कर्म कारण नहीं है अतः पक्ष में स्पष्ट ही व्यभिचार है।

अथवा सर्वत्र शरीर के कारण कर्म मान भी लिये जाये तब भी कोई हानि नहीं है। क्योंकि जीवों के कर्म ही भगवान के कर्म हैं। क्योंकि भगवान् सर्व जीवों का अधिष्ठान है। भगवान् संकल्पानुसार कर्मों का फल देता है। भगवान् गीता में स्वयं कहते हैं।

ये यथामां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्। अतः जो जीव विशेष भगवान् के दर्शनों की इच्छा से दुश्चर तप या अन्य दुष्करकर्म करते हैं। वही तप तथा कर्म भगवान् की मूर्ति का कारण बन जाता है। भक्तवत्सल भगवान् भक्तों के प्रमोदार्थ भक्तों के पुरुषार्थ को सफल बनाने के लिये स्वेच्छा से, राम कृष्ण कच्छप वाराहादिक लीला विग्रहों को धारण करते हैं। धन्य है भारतवासियों को जिनके यहाँ भगवान् भी अवतार लेते हैं। भगवान् की आत्मा में विद्यमान रहता हुआ भक्तों का कर्म भगवान के अवकर्ष का कारण नहीं होता है। क्योंकि भगवान की महिमा तो नित्य है न वह किसी से बढ़ती है न घटती है।

तत्सुखाद्वैतबोधात्मस्वभावहरये नमः
वेदान्तैक प्रमाणाय कुतर्काणामभूमये।

इति सर्वं शिवं मंगल च।

अथवा जीव और ईश्वर दोनों को ही चेतन होने से दोनों की आत्मता में कोई अन्तर नहीं है। अतः जैसे जीव कर्म वाला है वैसे

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ही ईश्वर भी कर्मों वाला है। केवल भेद इतना है कि जीवों के कर्म गुण हेतुक हैं परन्तु ईश्वर के कर्म गुण हेतुक नहीं हैं।

शंका—शास्त्र तो ईश्वर को कर्म के स्पर्श का भी निषेध करता है अतः हम आस्तिकों को तो शास्त्र का विरोध ही महान् दोष है। शास्त्र यह है कि—क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः। योगदर्शनपाद १ सू० २४॥ क्लेश, कर्म, विपाक तथा आशय के स्पर्श से रहित पुरुष विशेष ईश्वर है। इस सूत्र से ईश्वर में कर्मों के स्पर्श का भी निषेध कि ा है कर्मों का तो कहना ही क्या है। समाधान-यह शास्त्र ईश्वर में कर्ममात्र का निषेध नहीं करता है किन्तु गुण हेतुक जो शुक्ल, कृष्ण अथवा शुक्ल कृष्ण कर्म हैं उनका ही निषेध करता है। क्योंकि प्रकृति के वशीभूत जीव ही सात्विक राजस तथा तामस कर्म करते हैं। वे ही उनका फल भोगते हैं। उनके ही हृदय वासना से वासित होते हैं। ऐसे कर्म ईश्वर को कभी स्पर्श नहीं करते क्योंकि परमेश्वर प्रकृति के वश में नहीं है। अतः शास्त्र का किंचित् भी विरोध नहीं है। क्योंकि कर्म शब्द का भाष्यकार ने भी कुशलाकुशलानि कर्माणि (कुशल अकुशल कर्म) ही व्याख्यान किया है। अतः कुशल अकुशल कर्म ही ईश्वर में निषेध हैं। न कि कर्म मात्र का। ईश्वर के कर्म तो अशुक्ला कृष्ण होते हैं। जो कि गुण हेतुक नहीं होते हैं। गुण तीन हैं अतः जीवों के तीन प्रकार के कर्म हैं। ईश्वर तथा ईश्वर के समान योगी के गुण नहीं। अतः उनके कर्म गुणहेतुक न होने से तीन प्रकार के नहीं होते हैं। उनके कर्म अप्राकृतिक तथा एक ही प्रकार के होते हैं। यह सम्पूर्ण आशय योग सूत्र ने वर्णन किया है। सूत्र यह है—कर्माशुक्लाकृष्णयोगिनस्त्रिविधमितरेषाम्। योग-दर्शन पाद ४ सू० ७। अर्थ योगी का कर्म अशुक्लाकृष्ण होता है। दूसरे जीवों का तीन प्रकार का कर्म होता है। इति।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अभियुक्तों ने योगी भी दो प्रकार के कहे हैं—

योगिनोद्विविधाः प्रोक्ता युक्तयुजानभेदतः।
युक्तस्य सर्वदाभानं चिंतासहकृतोऽपरः॥

ईश्वर युक्त योगी ही होता है। अतः योगी कहने से ईश्वर का भी ग्रहण हो जाता है। श्री परमपूज्य वात्स्यायन महर्षि ने भी "तत्कारित्वादहेतुः। न्याय दर्शन अध्या० ४ आ० १ सू० २१ के भाष्य में परमेश्वर के भी कर्म का सद्भाव दिखलाया है। भाष्य यह है कि गुणविशिष्टमात्ममात्रमीश्वरः। तस्यात्मकल्पात्कल्पान्तरानुपपत्तिः। अधर्ममिथ्या ज्ञानप्रमादहान्यधर्मज्ञान समाधि संपदा च विशिष्टमात्मान्तरमीश्वरः। तस्य च धर्मसमाधिफलमणिमाद्यष्टविधमैश्वर्यम्। संकल्पानुविधायी चास्य धर्मः प्रत्यात्मवृत्तीन् धर्माधर्मसंचयान्पृथिव्यादीनि च भूतानि प्रवर्तयति। एवं च स्वकृताभ्यागमस्यालोपेन निर्माणप्रकाम्यमीश्वरस्य स्वकृतकर्म फलं वेदितव्यम्। इस प्रकार जीव के समान ईश्वर को भी कर्म का सद्भाव स्वीकार कर लेने पर परमात्मा का मूर्तिमान् होना निर्दोष है।

शंका—परमात्मा सर्वज्ञ तथा सर्व का अधिष्ठान है। ऐसा सर्व ही आस्तिक स्वीकार करते हैं। यदि परमात्मा भी मूर्तिमान् है तो वह सर्वज्ञ तथा सर्व का अधिष्ठान नहीं हो सकेगा। क्योंकि जो मूर्तिमान् होता है वह सर्वज्ञ और सर्व का अधिष्ठान नहीं होता है।

समाधान—शरीर रूप मूर्ति वाले योगी को सर्वज्ञ तथा सर्व पदार्थों का अधिष्ठान योग शास्त्र ने कहा है। अतः पूर्वोक्त शंका का भी अवकाश नहीं है। सूत्र-सत्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं सर्वज्ञातृत्वं च। योग-दर्शन पाद-३ सू० ४६ तथा इस ही सूत्र का व्यास कृतभाष्य यह है कि—निर्धूतरजस्तमोमलस्य बुद्धिसत्वस्य परे वैशारद्ये परस्यां वशीकारसंज्ञायां वर्तमानस्य सत्त्व पुरुषा-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

न्यताख्यातिमात्ररूपप्रतिष्ठस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं सर्वात्मानो गुणाव्यवसायव्यवसेयात्मकाः स्वामिनं क्षेत्रज्ञं प्रत्यशेषदृश्यात्मत्वेनोपतिष्ठन्ते इत्यर्थः। सर्वज्ञातृत्वं सर्वात्मनां गुणानां शांतोदिताव्यपदेश्य धर्मत्वेन व्यवस्थितानामक्रमेण रूढं विवेकजं ज्ञानमित्यर्थः। इत्येषा विशोका नाम सिद्धिः यां प्राप्य योगी सर्वज्ञ क्षीणक्लेशबन्धनो वशी विहरतीति। भाष्यार्थ—रजोगुण तथा तमोगुण रूप मल से रहित बुद्धि के परम स्वच्छ होने पर वशीकार अवस्था में स्थित, तथा बुद्धि और आत्मा की भिन्नता के ज्ञान रूप से स्थित योगी को सर्वभावाधिष्ठातृता हो जाती है। अर्थात् जड़ाप्रकाश रूप सर्व गुण, योगी को संकल्पित भोग्याकार रूप से परिणत होकर प्राप्त होते हैं। तथा योगी को सर्व ज्ञातृता रूप सर्वज्ञता भी हो जाती है। अर्थात् अतीत वर्तमान तथा अनागत वस्तु रूप से परिणत सर्वगुणों का एक काल में ही यथार्थ साक्षात्कार होता है। योगी की यह विशोका नाम वाली सिद्धि है। जिसको पाकर योगी सर्वज्ञ होकर सर्व क्लेश बन्धनों से रहित हो स्वंतत्रता से विहार करता है। एवं प्रशस्तपादभाष्य भी है। अस्मद्विशिष्टानां योगिनां योगजधर्मानुगृहीतेन मनसा स्वात्मान्तराकाशदिक्कालपरमाणुवायुमनस्सु तत्समवेतगुणकर्मसामान्यविशेषे समवाये चावितथं स्वरूप दर्शन मुत्पद्यते। इति॥

अर्थ—योगियों को योग से उत्पन्न धर्म से युक्त मन से, आत्मा आकाश दिशा काल परमाणु वायु मन तथा इनमें समवायसम्बन्ध से रहने वाले गुणकर्मसामान्यविशेष तथा समवाय के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान उत्पन्न होता है। पूर्वोक्त सूत्र तथा भाष्यों से भली प्रकार ज्ञात हो जाता है कि मूर्तिमान् योगी भी सर्व के अधिष्ठान तथा ज्ञाता होते हैं। अतः सर्वज्ञ तथा सर्वाधिष्ठान भी परमात्मा मूर्तिमान् हो सकता है इसमें कोई भी आपत्ति नहीं है। इस सम्पूर्ण कथन का निष्पन्न भाव यह है कि व्यापकत्व हेतु भी कालात्ययाप-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

दिष्ट ही है। अतः यह व्यापकत्व हेतु, मूर्तिमत्व के अभाव रूप साध्य का साधक नहीं है। अतएव व्यापक होने से ईश्वर मूर्तिवाला नहीं है यह निराकारैक वादियों का अनुमान भी आकाश कुसुमायत ही है। संग्रह श्लोक

यदा हेतोरसिद्धत्वादशक्यं तन्निरूपणम्।
कुतस्तद्धेतुकं सिध्येदीक्षस्वापक्षपाततः ॥१॥
मूर्त्यभावोऽनुमानेन न कथंचित्प्रसिध्यति।
किं पुनस्तत्प्रलापेन वाचो विग्लापनं यतः ॥२॥
तस्माच्चर्चानुमानस्य त्यजतां मेऽत्र सम्मतिः।
सर्वं शक्तिमति देवेकानुमूर्तेश्च यत्कृतिः ॥३॥

इति अनुमान प्रमाण खंडनम् !!

ईश्वर मूर्ति अभाव में वेद प्रमाण का खण्डन

शंका—यदि अनुमान से परमात्मा की मूर्ति का अभाव सिद्ध नहीं भी होता है। तथापि परमात्मा की मूर्ति का अभाव वेद से सिद्ध है। वेद, परमेश्वर की संशय विपर्यय आदिक दोषों से रहित बुद्धि से उत्पन्न होता है। जैसा कि परमर्षि उल्लूक्य का सूत्र भी कह रहा है। सूत्र-बुद्धि पूर्वा वाक्य वृत्तिर्वेदे। वै० अ० ६ आ० १ सू० १॥ अर्थ-वेद में भगवद्बुद्धि पूर्वक वाक्य वृत्ति (रचना) है। अतः अनुमान की अपेक्षा वेद वाक्य ही मान्य है। क्योंकि सर्व दोष निर्मुक्त भगवद्बुद्धि से उत्पन्न होने के कारण सर्व अर्थों को यथार्थ रूप से प्रकाशता है। समाधान—भगवद्बुद्धि से उत्पन्न वेद मूर्ति के अभाव को कहता है। यह आपका कहना, "मेरी माता वन्ध्या तथा मेरा पिता नैष्ठिक ब्रह्मचारी है" इस वाक्य के समान

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

व्याघात दोष युक्त है। अतः अश्रद्धेय है जो बुद्धि सत्त्व से उत्पन्न हो वह भगवान् की मूर्ति के अभाव को कैसे प्रकाशेगा। इसमें कोई भी दृष्टांत नहीं है। क्योंकि कुलाल की बुद्धि से उत्पन्न घटादि पदार्थ कुलाल की मूर्ति के अभाव के प्रकाशक नहीं हैं। उसी प्रकार वेद भी परमात्मा की मूर्ति के अभाव का प्रकाशक नहीं है। क्योंकि विशेष आनुपूर्वी वाली शब्द राशि का ही नाम वेद है। वह वेद यद्यपि भगवान् की बुद्धि से उत्पन्न होता है तथापि कंठ तालु आदि के अभिघात से बिना उत्पन्न नहीं हो सकता है। क्योंकि शब्द की उत्पत्ति कंठ तालु आदि के अभिघात से ही नियम करके होती है। भगवान् के शरीर के बिना कंठतालु आदि, शब्द की अभिव्यक्ति के स्थान ही असंभव हैं। अतः यह सिद्ध हुआ कि वेद की उत्पत्ति का कारण भगवान् का शरीर अवश्य है। यदि वही वेद परमात्मा की मूर्ति का खण्डन करेगा तो वह वेद अपने स्वरूप का खंडन करने वाला आप ही हो जायगा। क्योंकि कारणाभावेकार्याभावः इस न्याय के अनुसार वेद के कारण परमेश्वर के शरीर का खण्डन होगया तो पुनः वेद तो रह ही कैसे सकता है। अतः स्वीकार करना पड़ेगा कि योगी के लीला विग्रह की तरह ईश्वर का विग्रह है। वेद भी परमात्मा का वचन है। अतः हम तथा आप सर्व को वेद के मार्ग का ही अनुसरण करना चाहियें। क्योंकि शास्त्रवेत्ताओं का यही मार्ग रहा है। अतएव मनु जी महाराज ने कहा है कि—

येनास्य पितरोयाता येन याताः पितामहाः।
तेन यायात्सतां मार्गं तेन गच्छन्नरिष्यांति। अ० ४ श्लो० १७८

वेद की प्रमाणता भी शास्त्र के वचन से ही है। शास्त्र कहता है कि तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्। वै० अ० १ आ० १ सू० ३

अर्थ—परमात्मा का वचन होने से ही वेद को प्रमाणता है। यदि परमात्मा का वचन होने से ही वेद को, शास्त्र प्रणेता ऋषि

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रमाण मानते हैं तो भगवान् का लीलविग्रह अवश्य ही मानना पड़ेगा। अन्यथा वज्र के समान शास्त्र का विरोध टाला नहीं जा सकेगा। शंका-विद् ज्ञानार्थक धातु से ईश्वर के विज्ञान का नाम वेद है शब्द का नाम वेद नहीं है। समाधान-वृद्धिमिच्छतोमूलमपिनष्टम्। इस न्याय से विज्ञान को वेद मानने पर तो वेद मूर्ति भी हाथ से खोली जायगी। क्योंकि-ईश्वर जन्य शब्द से अविशिष्ट विज्ञान अमूर्त होने से अप्रत्यक्ष है। अतः शब्द विशिष्ट से विना ज्ञान में वेद प्रयोग नहीं होगा। अतएव जीवों के विज्ञान भी ईश्वर जन्य शब्द विशिष्ट होकर वेद रूपतया प्रामाण्य माने जाते हैं। अन्यथा नहीं। यदि धातु के बल से विज्ञान का नाम वेद कहोगे तो अन्य कोई धातु बल से सत्ता अथवा लाभ का नाम ही वेद कहने लगेंगे परन्तु ये सब अनर्गल प्रलाप हैं। अतः शब्द ही वेद है। शब्द कंठताल्वादि स्थानों से ही अभिव्यक्त होता है। कंठता, ल्वादि स्थान शरीर में ही होते हैं। अतः परमात्मा सशरीर है। अतः परमात्मा की बुद्धि से प्रसूत वेद परमात्मा की मूर्ति के अभाव में प्रमाण है यह मनोरथ मात्र है।

कथं न कण्ठयाल्वादि बुद्धिसत्वं यदीश्वरे
नैवं वक्तुं विना शक्तो मनस्तरंगवातुलम् ।१। इति ।

भगवद्बुद्धि सत्वं से उत्पन्न वेद ही भगवन्मूर्ति के अभाव में प्रमाण मान भी लिया जाय तो पूछना यह है किः – भगवन्मूर्ति के अभाव को वेद के दो चार मंत्र ही कहते हैं। अथवा समस्त वेद कह रहा है। समस्त वेद कह रहा है यह पक्ष तो असम्भव है। क्योंकि अनेक विद्याओं के स्थान सर्व ज्ञान का आकर वेद एक विषय को कहने वाला नहीं हो सकता है। अन्यथा ईश्वर में निरतिशय सज्ञर्वत्व सिद्ध नहीं होगा। तथा अग्नि होत्र याग उपासना

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आदिक सर्व विषय भी अवैदिक ही मानने पड़ेंगे। अतः वेद के अनेक ही विषय हैं। यदि कहा जाय कि वेद के दो तीन मन्त्र ही परमेश्वर की मूर्ति के अभाव में प्रमाण हैं तो बहूनामनुग्रहो न्यायः इस न्याय से वे दो तीन मंत्र, स्व प्रतिपक्षी भूत बहुत से प्रमाणों के विद्यमान रहते हुए, अपने कार्य में समर्थ नहीं हो सकेंगे। अतः कोई वेद प्रमाण निरर्थक न हो व्यवस्था ही अपनाना विद्वत्ता है। व्यवस्था इस प्रकार है। यथा वस्तुतः अज अव्यय भी आत्मा, देह इन्द्रियादि उपाधि से विशिष्ट होकर जन्म मरणादि धर्मों वाला कहलाता है। परमार्थ से नहीं। तैसे ही पारमार्थिक तथा औपाधिक रूपों से भगवान की मूर्ति के प्रतिषेधक मन्त्र तथा मूर्ति के विधायक मंत्र प्रमाण हैं। यह व्यवस्था ही श्रेयान् है।

वेद के सर्व मन्त्र अपने अपने विषय सें प्रमाण हैं, यह वृद्ध विद्वानों का पंथा ही मान्य है। अन्यथा परस्पर विरोधेतु न प्रकारान्तरस्थितिः। इस न्याय से मूर्ति के निषेधक तथा मूर्ति के प्रतिपादक मन्त्रों का परस्पर विरोध होने से प्रामाण्य ही जाता रहेगा स्वतः प्रामाण्य की तो कथा ही क्या है। दोनों प्रकार के मन्त्रों में से एक प्रकार के मन्त्रों को प्रमाण मान कर तो अर्ध जरतीय न्याय का भागी होकर तो नास्तिक जनता का हास्यास्पद होना ही फल प्राप्त होगा। अतः मनुजी महाराज कहते हैं किः—

श्रुतिद्वैधं तु यत्र स्यात्तत्र धर्मावुभौ स्मृतौ।
उभावपि हि तौ धर्मौ सम्यगुक्तौमनीषिभिः॥ अ० २श्लोक० १४।

मनुजी महाराज की इस आर्ष व्यवस्था को न मानने वाला पुरुष तो निश्चित ही शास्त्र के अर्थों से अपरिचित ही है। कथं

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

बोधेत शास्त्रं तं लोष्टं नरसमाक्रांतम् । इस न्यायानुसार उन शास्त्र विमुख पुरुषों को समझाना तो अन्य पुरुष की शक्ति के बाहर ही है।

शंका:-परमेश्वर की मूर्ति के अभाव को कहने वाले भी शास्त्र-विमुख नहीं हैं। क्योंकि परमेश्वर की मूर्ति के अभाव में वे शास्त्र का ही प्रमाण देते हैं। शास्त्र का वचन यह है। स पर्यगाच्छुक्रमकायम व्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् । कविर्मनीषीपरिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधच्छाश्वतभ्यिः समाभ्यः। ऋजुर्वेद अ० ४० म० ८ भगवन्मूर्ति के अभाव में इन वेद मन्त्रों को देने से वे शास्त्र विमुख नहीं कहे जा सकते हैं। समाधान-इस मन्त्र के यथार्थ अर्थ को न जानने के हीकारण इस मन्त्र को परमात्मा के शरीरके अभाव में प्रमाण दिया है। क्योंकि यह मन्त्र परमात्मा के शरीर के अभाव को नहीं कह रहा है। किन्तु यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः। तत्र को मोहः कः शोक एकत्व मनुपश्यतः ॥ इस पूर्व मंत्रोक्त ब्रह्मवेत्ता के शरीर का निषेध कर रहा है। अतः मन्त्र में स्थित स शब्द सन्निहित ब्रह्मवेत्ता का ही परामर्शक है। विप्रकृष्ट परमेश्वर का परामर्शक नहीं है। इस उत्तर मन्त्र का अर्थ यह है कि यह जीवात्मा संसार में भ्रमण करता हुआ उच्चावच योनियों में दुःखातिदुःख का अनुभव करता हुआ सुख शांति नहीं पाता है। क्योंकि वह आनन्द स्वरूप परमात्मा के अज्ञान तथा मिथ्याज्ञान से प्रभावित रहता है। परन्तु जब किसी पुण्य परिपाक वश से विरक्त हो गुरु की शरण जाकर सर्वदुःखनिवारक ब्रह्मात्मैक्य ज्ञान को पाकर शोक मोह से रहित कृतकृत्य हो जाता है तब यह ब्रह्मात्मवेत्ता कहाँ स्थित रहता है ऐसी जिज्ञासा के होने पर मन्त्र कहता है कि-सपर्यगादिति। (शाश्वतीभ्यः समाभ्यः) जो पुरुष बहुत काल से मिथ्या ज्ञान के प्रभाव से सांसारिक दुःख परम्परा रूप अनर्थ का अनुभव करके यह मनोरथ कर रहा था कि मैं मनुष्य शरीर को कब प्राप्त हूँगा। कब

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

निष्काम कर्म करूँगा। कब भगवदाराधन करूँगा। कब भगवद-हैतुकी दया से सद्गुरु का दर्शन करूँगा। कब गुरु की कृपा से सम्यग्ज्ञान प्राप्त करके इस अनर्थ परम्परा से मुक्त होऊँगा। सो पुरुष (यथातथ्यतो) अथार्थ रूप से अर्थात् दृढ़ प्रतिज्ञ होकर (व्यदधात्) इन मनोरथों को पूर्ण करता है सो पुरुष भगवत्कृपा से सम्यक् ज्ञान को प्राप्त करके (अकायं) शरीर रहित (अव्रणं) व्रण रहित (अस्नाविरं) स्नायुओं से रहित पापों से निर्मुक्त संसार बन्धन से (परि) ऊपर अर्थात् शुद्ध स्वाराज्य पद को (आगात्) प्राप्त हो जाता है। उस ब्रह्मवेत्ता के विशेषण हैं कि- (कविः) सर्वज्ञ क्रांतदर्शी (मनीषी) मेधावी (परिभूः) सर्वोपरि (स्वयं भूः) स्वतन्त्र है। भाव यह है कि सम्यग्ज्ञानान्तर ही यह ब्रह्मात्मैक्यवेत्ता समूल संसार दुःख बन्धन से रहित स्वतन्त्र सच्चिदानन्द रूप से स्थिति रूप स्वाराज्य में स्थित हो जाता है। इसी अर्थ को मनुजी ने भी कहा है।

सर्व भूतेषु चात्मानं सर्व भूतानि चात्मनि।
समं पश्यन्नात्मयाजी स्वराज्यमधिगच्छति। अ० १२ श्लोक ९१

इस प्रकार सपर्यगात् मन्त्र भगवान की प्रतिमा के अभाव में प्रमाण नहीं है। क्योंकि मंत्र में स्थित तत् शब्द से शोक मोह से रहित ब्रह्मात्मैक्य वेत्ता ही ग्रहण किया गया है। अन्यथा उपस्थित का त्याग तथा अनुपस्थित का ग्रहण रूप अन्याय ही प्राप्त होगा।

किंच (अकायं) यह कर्म में द्वितीया है। भगवान् का विशेषण है क्रिया विशेषण नहीं है। यह कल्पना भी गौरव दोष दूषित है। तथा अकाय विशेषण के विशेष्य का अध्याहार भी करना पड़ेगा। मन्त्र में नपुंसक विशेषणों की पुल्लिंगत्व कल्पना भी गौ-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रव ग्रस्त हैं। गुरु कल्पना भी वादी के अभिमत अर्थ का निर्वाहक नहीं है। किक्यों मुक्त विद्वान भी आपके मत में न परमेश्वर को प्राप्त होते हैं। और न परमेश्वर में लय ही होते हैं। किन्तु निरन्तर उड़ते ही रहते हैं। तो गुरु कल्पना युक्त अर्थ करने पर भी परमात्मा की ही प्राप्ति कहेगा। न कि जीवों का उड़ना कह रहा हो। अतः आपका किया हुआ अर्थ युक्त नहीं है।

किं वा तुष्यतु दुर्जनः इस न्याय से "सपर्यगात" इस मंत्र में तत् शब्द ईश्वर का परामर्शक, अकायं इत्यादि नपुंसकों का पुल्लिग रूप में परिणाम स्वीकार कर भी लिया जाय तथापि यह मंत्र परमेश्वर की सांसिद्धि की सांकल्पिकी अथवा प्राकृतिक मूति का खंडन नहीं करता है। किन्तु केवल पांच भौतिकी मूर्ति का ही खण्डन करता है। इसके खण्डन से तो कोई हानि ही नहीं। क्योंकि भगवान ने स्वयं ही पांच भौतिक मूति का खण्डन किया है। माया ह्येषामया सृष्टा यत्वं पश्यासि नारद। वेदव्यास ने भी कहा है। मातृ पितृ मलानुषंगाद्दैहो नास्य विजायते।

शंका—अकायं यह मन्त्र मूर्ति मात्र का निषेध कर रहा है। क्योंकि नञ् का यह स्वभाव नहीं है कि अपने से सम्बन्धित अर्थ के एक भाग का विषेध करे तथा अपर भाग का परिशेष करे किंतु सर्व का समान ही निषेध करता है। अन्यथा अतिप्रसंग प्राप्त होगा। समाधानसत्य हैं; नञ् का स्वभाव तो ऐसा ही है तथापि प्रतिबन्धक के न होने पर ही ऐसा स्वभाव है। क्योंकि प्रतिबन्धक के सद्भाव में स्वभाव का विपर्यय देखा है। जैसे दाहक भी अग्नि प्रतिबन्धक के होने पर दाह नहीं करता है। अनुदरा कन्या इस वाक्य में नञ् उदर मात्र का निषेध नहीं करता है। किन्तु स्थूल उदर मात्र का ही निषेध करता है तथा सूक्ष्म उदर का परिशेष

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

करता है। इसी तात्पर्य से वैयाकरणों ने नञ् के षट् अर्थ माने हैं। जिनमें एक अल्पार्थ भी है। अल्प का अर्थ यहाँ एक देश ही है। अन्यथा अनुदरा कन्या इस वाक्य का सूक्ष्मोदरा कन्या यह अर्थ नहीं हो सकता था। क्योंकि उदर मात्र का निषेध करने पर तो कन्या की कथा में अर्धजरतीय न्याय की कथा बलात्कार से प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार अकायं मंत्र में स्थित नञ् के स्वभाव का भी शास्त्र ही प्रतिबन्धक है क्योंकि सहस्र शीर्षा पुरुषः इत्यादिक शास्त्र वाक्य परमात्मा के हस्तपादादिकों का वर्णन कर रहे हैं। अतः अकायं मन्त्र में स्थित नञ् भगवान् की पांच भौतिक मूर्ति का ही निषेध कर रहा है। सांसिद्धिकी सांकल्पिकी या प्राकृतिक मूर्ति का निषेध नहीं कर रहा है। परमात्मा की मूर्ति के प्रतिपादक तथा नञ् अर्थ के प्रतिबन्धक और भी शास्त्र के वचन हैं। नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः। बाहुभ्या मुत ते नमः। याते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपाप काशिनी। तया नस्तन्वा शंतमया गिरिशं तमभिचाकशीहि। २॥ य० अ० १६ मं० १—२ नमो हिरण्य बाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्य पतयेऽम्बिकापतय उमा पतये पशु पतये नमो नमः॥ कृष्ण यजु० तै० अ० प्र कां० १० अधु० १८ म० १।

य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषोदृश्यते हिरण्यश्मश्रुः हिरण्यकेश आप्रनखात्सर्व एव सुवर्णः। सा० छा० प्र० १ अन्तस्तद्धर्मोपदेशात्। वेदान्त० द० अ० १ पाद० १ सू० २० इति।

पूर्वोक्त प्रमाणों से यह सिद्ध हो गया है कि परमात्मा की लौकिकालौकिक, सांसिद्धिक सांकल्पिक अथवा प्राकृतिक रूप वेदों में सुने गये हैं। यही नहीं वेद तो परमेश्वर की और भी बहुरूपता को कह रहा है। त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत व कुमारी। त्वं जीर्णो दण्डेन वंचसि त्वं जातो भवसि विश्वतो मुखः। अथर्व का०

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

१० अ० ४ मन्त्र० २७। तदेवाग्निस् तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमा। तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ॥ य० अ० ३२ मन्त्र १ इति

परमेश्वर की मूर्ति के प्रतिपादक शास्त्र के विद्यमान रहने पर अकायं यह यजुर्वेद का एक मन्त्र परमेश्वर की एक मूर्ति का निषेध करने में समर्थ नहीं है। क्योंकि मूर्ति का प्रतिपादन करने वाला शास्त्र अधिक है। अतः इसकी शक्ति प्रतिबद्ध हो रही है। प्रति-बद्ध शक्ति वाला होने से अकायं मंत्र पांच भौतिकी मूर्ति का ही निषेध करता है। अन्यथा अपाणि पादो जवनो गृहीता पश्यत्य-चक्षुः सशृणोत्यकर्णः इस श्वेताश्वतर शाखा वालों का परमेश्वर के हाथ पादादिकों के निषेध पूर्वक जवनादिकों का कथन असंभव हो जायगा। जिसके हस्त पाद नहीं है वह किसी प्रकार भी वेग वाला अथवा ग्रहण करने वाला नहीं हो सकता है। एवं जिसके नेत्र श्रोत्र नहीं हैं वह द्रष्टा श्रोता नहीं हो सकता है। परन्तु मन्त्र उसे वेग वाला ग्रहण करने वाला द्रष्टा तथा श्रोता कह रहा है। अतः मानना पड़ेगा कि भौतिक विग्रहविषयकनिषेधकवाक्या हैं। तथा मूर्ति के विधाय वाक्य अभौतिक विग्रह विषयक हैं।

एव मेष-न तस्य कार्यं करणं च विद्यते। तत्समश्चाभ्यधिक-श्च दृश्यते। परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबल-क्रिया च। श्वेताश्वतरोपनिषत अ० ६ म० ८।

यह मन्त्र भी मूर्ति के अभाव में प्रमाण नहीं है। क्योंकि इसमें शरीर वाचक कोई भी पद नहीं है। शंका—मंत्र में कार्य पद शरीर का वाचक है। तथा करण पद इन्द्रियों का वाचक है। समा-धान।यह शंका भी मंत्र के अर्थ के न जानने से ही है। अतः इस मंत्र का अर्थ किया जाता है कि "जिस भगवान् की माया शक्ति,

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अघटित घटना पटीयसी परमदक्षा सर्वोत्कृष्टा सर्व कार्य कर्त्री सर्वदा विजय शील है। उस परमात्मा का कोई कर्तव्य नहीं है तथा न उसकी कोई (करणं) क्रिया ही है। क्योंकि सुयोग्य मन्त्री वाले राजा की तरह उक्त शक्ति से ही परमात्मा सर्व कार्यों को करता है। अतएव न परमात्मा के कोई समान है न अधिक है। क्योंकि जैसी परमात्मा की शक्ति है। वैसी शक्ति और किसी की नहीं है। परमात्मा की ऐसी शक्ति भी स्वाभाविकी है। किसी से उत्पन्न होने वाली नहीं है। वह शक्ति अनेक कार्यों को करने से विविधा प्रकाशक होने से ज्ञान रूपा अर्थात् सत्त्वगुण रूपा चालक होने से क्रिया रूपा अर्थात् रजोगुण रूपा और चालक न होने से तमोगुण रूपा कही जाती है। अर्थात तीनों गुणों की साम्यावस्था रूपा है। यह मन्त्र का अर्थ है।

उपरोक्त मंत्र की भाँति ही अन्य मन्त्रों का भी अर्थ है। अतः आपका कहा हुआ मंत्र परमात्मा की मूर्ति के अभाव में प्रमाण नहीं है। अतः परमात्मा की मूर्ति के अभाव में शब्द प्रमाण है। यह आर्यभिकों का प्रलाप केवल बाल बुद्धि पुरुषों के मोहनार्थ ही हो सकता है। इसलिये सर्व अर्थ निर्विघ्न ही सिद्ध हैं। ३ ॥

यत्र वेदवचः प्राहुर्हरे वैंशेषिकादयः।
तत्र किं तैः समाधेयं निराकारैक वादिभीः ॥
न हि मूर्तिं विना वचनं वेदाना मुपपद्यते।
तस्माद् वेदा न ते मानं माने व्याघात दूषणम् ॥२॥

इस प्रकार प्रत्यक्षादिक परमात्मा की मूर्ति के अभाव के प्रतिपादक नहीं है। क्योंकि भगवान् मूर्तिवाला है इस अर्थ को अनेक

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्थानों पर प्रतिपादन कर दिया है। अतः भगवन्मूर्तेरिव मूर्तेः प्रतिकृतेः या पूजा सा मूर्ति पूजा। अर्थ—भगवान की मूर्ति की तरह बनाई हुई मूर्ति की पूजा ही मूर्ति पूजा है। वे मूर्तियाँ (१) शैली (२) दारुमयी (३) लौही (४) लेप्या (५) लेख्या (६) सैकती (७) मनोमयी तथा (८) मणिमयी भेद से आठ प्रकार की होती हैं। इन में से किसी प्रकार की भी मूर्ति की पूजा मूर्ति पूजा है। यह चतुर्थ निर्वचन उपपन्न हुआ ऐसा जान लेना चाहिये।

शंका—यद्यपि चाहे प्रत्यक्षादिक प्रमाण मूर्ति के अभाव के साधक नहीं हैं, तथापि मूर्ति पूजा शब्द का निवचन असंभव है। क्योंकि परमेश्वर की मूर्ति ही विचारणीय है। यही दिखलाया जाता है कि भगवान् की मूर्ति योनिजा है अथवा अयोनिजा है। भगवन्मूर्ति योनिजा संभव नहीं है। क्योंकि चराचर जीवों के कारण भगवान् का उत्पन्न करने वाला जीव हो ही नहीं सकता है। अपने कारण को उत्पन्न करते हुए कार्य को कहीं नहीं देखा है। तथा परमेश्वर तो परमेश्वर ही है अतः परमेश्वर की उत्पत्ति परमेश्वर से कैसे भी नहीं हो सकती है। यदि कहा जाय कि परमेश्वर की मूर्ति अयोनिजा है तो यह द्वितीय पक्ष भी संभव नहीं है। इस मान्यता में भी यह प्रश्न उठता है कि परमेश्वर की अयोनिजा मूर्ति भौतिकी है या प्राकृतिकी है। प्रथम मान्यता में भी यह दोष है कि भूतों की उत्पत्ति से प्रथम तो भौतिक मूर्ति की उत्पत्ति ही असंभव है। यदि भूतों की उत्पत्ति के पश्चात् भौतिकी मूर्ति की उत्पत्ति मानोगे तो वह परमेश्वर की मूर्ति तो हमारे ही समान होगी। सो किसी को इष्ट नहीं है। द्वितीय मान्यता में भी परमेश्वर की मूर्ति का असंभव है। क्योंकि वह प्रकृति तथा प्रकृति का साक्षात्कार्य किसी की दृष्टि का विषय नहीं होता है। परन्तु परमेश्वर की मूर्ति का तो प्रत्यक्ष दर्शन होता है। तथा अर्चक भी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मृति का प्रत्यक्ष मानते हैं। इस प्रकार मूर्ति का निरूपण ही अति कठिन है, तब मूर्ति पूजा पद का निर्वचन तो सर्वथा अनुपन्न है।

समाधान—यह कहा जा चुका है कि परमेश्वर की मूर्ति प्राकृतिकी सांसिद्धिकी वा सांकल्पिकी है। क्योंहि सांख्य सूत्र कहता है कि उष्मजाण्डजजरायुजोद्भिजसांकल्पिक सांसिद्धिकं चेतिन नियमः अ० ५ सू० १११। मूर्ति शब्द का अर्थ शरीर है सो वह तीन अथवा चार ही प्रकार का है ऐसा नियम नहीं है। किन्तु सांकल्पिक सांसिद्धिक के सहित स्वेदज अण्डज जरायुज उद्भिज भेद से ६ प्रकार का है यह सूत्र का अर्थ है। सांसिद्धिक और सांकल्पिक शरीरों का अयोनिज शरीरों में अन्तर्भाव है। अतः महर्षि कणादादिकों ने योनिजायोनिज भेद से शरीर दो ही प्रकार का कहा है। परमत्मा का प्राकृतिक जरीर, अयोनिज होने से सांकल्पिक अथवा सांसिद्धिक ही है। यद्यपि नारदादिक ऋषियों तथा योगियों का शरीर शुक्र शोणित सन्निपात जन्य न होने से अयोनिज होने पर भी साक्षात्प्राकृतिक नहीं है। परन्तु परमात्मा का शरीर प्राकृतिक है। अतएव कहा भी है किः—

माया ह्येषा मया सृष्टा यन्मां पश्यसि नारद। इति ॥

मातृ पितृ मलानुषंगाद्दे होनास्य विजायते ॥

संभबाभ्यात्मभायया। इति ॥

यद्यपि भगवान् का प्राकृतिक शरीर मनुष्य की मांस दृष्टि का विषय नहीं हो सकता है। परन्तु चिरकाल तक भगवत्कथा सुधा पानकर्ता भक्तों को भगवदनुग्रह से भगवन्मूर्ति का दर्शन होता ही है। अतएव गीता में कहा है किः—

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।
नाहंवेदैर्नतपसा न दानेन न चेज्यया ।।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ।
भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।।

ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ।। गीता अ० ११ तथा मुण्डकोपनिषद् में भी कहा है ।

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्योन मेधया न बहुना श्रुतेन । यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुं स्वाम् । (एष) यह परमात्मा (वृणुते) जिस अपने भक्त पर अनुग्रह करता है उस भक्त को ही यह परमात्मा मिलता है । उस भक्त के प्रति यह परमात्मा अपनी मूर्ति को निरावरण कर देता है । यह श्रुति के उत्तरार्ध भाग का अर्थ है ।

अब भगवन्मूर्ति के निरूपणानन्तर मूर्ति में प्रमाण शंका का निवारण किया जाता है । अनेक देवागारों से भगवन्मूर्ति के सदृश भगवन्मूर्ति की प्रत्यक्ष उपलब्धि हो रही है । अतः भगवन्मूर्ति में प्रत्यक्ष प्रमाण है । योगियों तथा भक्तों को साक्षाद् भगवन्मूर्ति दर्शन हुआ है । अतः योगी तथा भक्तों का प्रत्यक्ष भी भगवन्मूर्ति में प्रमाण है । एवमेव देवागारीय भगवन्मूर्ति भगवन्मूर्ति की प्रतिकृति है । अस्मदीयादि मूर्ति की प्रतिकृति के समान, यह अनुमान प्रमाण है । देवागारीय मूर्ति भगवन्मूर्ति के सदृश है यह उपमान प्रमाण है । प्रत्यक्षगोचर देवागारीय अस्मादिकों की भगवन्मूर्ति, भगवान् की प्राकृतिकी अथवा सांसिद्धिकी या सांकल्पिकी मूर्ति से अनुपपन्न हुई भगवन्मूर्ति प्राकृतिकी मूर्ति की कल्पना कराती है । यह अर्था-

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पत्ति प्रमाण है। एव मेव भगवन्मूति में श्रुति अर्थापत्ति भी ईश्वर में प्रमाण है।

श्रुतिः। एहि अश्मान मातिष्ठ अश्मा भवतु ते तनुः।
कृण्वन्तु विश्वेदेवाः आयुष्टे शरदः शतम् ॥ अथर्व० का० २ अनु० १३ म० ४०।

अर्थ–मनुजाकार या अमनुजाकार लिंगाकार या अलिंगाकार अश्मानं नाम पाषाण रूप मूर्ति भेद को आतिष्ठ नाम आश्रयण कर सो यह पाषाण मूर्ति (ते) तरा (तनुः) शरीर (भवतु) होवे।

मूर्ति निर्माणाय तां वल्मीक वयां परिगृह्णाति।
मूर्तें निर्माणाय वराह विहिताम् मूर्त मृदपरिगृह्णाति ॥

शतपथ काण्ड ११ अध्याय १ ब्रा० २ कं० १०–११ इति। इत्यादि वेदवचन मृत्तिका की मूर्ति का भो विधान कर रहे हैं। उपरोक्त मंत्रों के आधार पर ही श्रीमद्भागवत के एकादशस्कन्ध के सत्ताईसवं अध्याय में भी कहा है कि

शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती।
मनोमयी मणिमयी प्रतिमाऽष्टविधा स्मृता ॥

इस श्लोक के अनुसार भगवान् की प्रतिमा आठ प्रकार की है।

शंका– न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः यजुर्वेद अ० ३२ म० ३। इस मन्त्र में परमेश्वर को प्रातमा का निषेध किया है। समाधान–इस मन्त्र में प्रतिमा शब्द उपमा अर्थ वाला है मूर्ति का वाचक नहीं है। क्योंकि मूर्ति निषेध का वाक्यार्थ में कोई भी उपयोग नहीं है। जिस प्रकार पाक प्रकरण में पाचक से पाक भोक्ता

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कहे कि सैन्धव लाओ तो यहाँ सैन्धक शब्द का लवण ही अर्थ है। सिन्धु देश में उत्पन्न घोड़ा अर्थ नहीं है। क्योकि सूप या यवागू अलवण है। सैन्धव लाओ। इस प्रकार अलवण सूप या यावगू को सलवण क ने के अभिप्राय से सैन्धव मांगने पर सैन्धव शब्द का अर्थ लवण न करके अश्व अर्थ करना अनर्थ ही है। क्योंकि अश्व का अनुपयोग है। उसी प्रकार इस मन्त्र में भी प्रतिमा शब्द भी उपमार्थक है प्रतिकृति (प्रतिमा) अर्थ वाला नहीं है। उस परमेश्वर के प्रतिमा नाम सदृश कोई नहीं है जिस परमात्मा का महान् यश है। यह मन्त्रार्थ है।

यही नहीं अन्य स्थानों में भी प्रतिमा शब्द उपमार्थक देखा गया है। वाल्मीक रामायण में राम के वनवास प्रकरण में कहा है कि:—स तन्नियोगात्खलुसत्यवादी सत्यां प्रतिज्ञांनृप पालयँस्ते इतो महात्मा वनमेव रामो गतो सुखान्य प्रतिमानि हित्वा। इति ॥ महाभारत में नल प्रकरण में भी कहा है कि रूपेणाप्रतिमो भुवि। इति। अतः इस मन्त्र में भी भगवन् की प्रकृतिक (मूर्ति का निषेध नहीं। किन्तु उपमा (सदृश) का ही निवेध है। इस कथन से ही "यद्वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते। तदेव ब्रह्मत्वं विद्धिनेदं यदिद मुपासते ॥ इत्यादि उपनिषन्मत्रों का भी व्याख्यान किया गया समझ लेना चाहिये। क्योंकि जिसकी तू उपासना करता है वह ब्रह्म नहीं है किन्तु ब्रह्म की प्रतिकृति है ऐसा मन्त्र का भावार्थहै। अतः कोई भी दोष नहीं है।

मन्दिरीय मूर्ति पूजा में शंका समाधान निरूपण।

शंका—ईश्वर की मूर्ति तथा उसकी प्रतिकृति के आठ भेद, जैसे आपने कहे हैं वैसे भले हो रहो परन्तु प्रकृति तथा प्रकृति के कार्य की पूजा करने से कोई कल्याण की आशा नहीं है, क्योंकि:—

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अन्धं तमः प्रतिशन्ति येऽसंभूति मुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ संभूत्याँ रताः ॥

इस यजुर्वेद के अ० ४० मन्त्र ६ ने असंभूति शब्दित प्रकृति तथा संभूति शब्दिततत्कार्य भूत मूर्ति की उपासना को अकल्याणा पादक ही कहा है। समाधान-प्रकृति के कार्य भूत भगवन्मूर्ति की प्रतिकृति ही ये देवागारीय मूर्ति हैं। भगवन्मूर्ति अपने उपासक और पूजकों को मंगलमय होने से कल्याणापादक है। यह वार्ता निर्विवाद तथा निरपवाद है। अतएव भगवन्मूर्ति की प्रतिकृति मांदिरीय मूर्ति भी उस ही के समान सर्व फलप्रापक है। यह भली प्रकार कहा जा सकता है। पुनः शंका-आपके सिद्धान्त में मन्दिरों में स्थापित पाषाणादिक की मूर्तियों का श्रद्धा पूर्वक पुष्पादिकों से सत्कार करना ही पूजा है। परन्तु सो पूजन असम्भव है। क्योंकि यदि मूर्ति के सत्कार से सत्करणीय परमात्मा को कहा जाय तो असम्भव है क्योंकि भगवान् स्वयं सत्कृत है। और पाषाण तथा मृत्तिका की मूर्तियाँ कृत्रिम जड़ होने से बुद्धिमानों के द्वारा नित्य असत्कृत हैं, अतः उनके सत्करणीय होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। भाव यह है कि पत्र पुष्प जल दुग्ध आदिक नाना विध पदार्थों के अर्पण से क्षुत्पिपासारहित अन्तर्यामि परमात्मा के भूख प्यास निवृत्त नहीं होते हैं तथा न मूर्ति के ही शांत होते है। इसलिये पाषाणादि की मूर्तियों का पूजन सर्वथा निष्प्रयोजन है।

समाधान-यद्यपि उपरोक्त कथन यथार्थ भी है तथापि विचार कर देखा जाय तो हम लोगों को चर्म चक्षुओं से भगवान का दर्शन ही दुर्लभ है। अतः सीधा साधा भगवान् का सत्कार करना हमारी सामर्थ्य से बाहर है। इसलिये भगवन्मूर्ति की प्रतिकृति के पूजन के द्वारा ही हम लोग भगवान् के पूजन करने में समर्थ हैं।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जैसे लोक में राजा लोगों की प्रतिकृति रूप शिक्का मुहर मुद्रा आदि मूर्तियों का साधारण तथा असाधारण जनता सत्कार करती है। तथा जिस प्रकार सर्व सम्प्रदायों के आस्तिक लोग अपनी सम्प्रदायों के आदि आचार्यों की प्रतिकृति (मूर्तियों) का भाव युक्त चित्त से पुष्पादिक नाना प्रकार के पदार्थों से पूजन करते हैं, और अपने चित्त में शान्ति का अनुभव करते हैं। इन्हीं दृष्टान्तों से प्रतिकृति के द्वारा भगवान् का पूजन होता है तथा मनुष्य शान्ति का अनुभव करते हैं। अतः प्रतिकृति का पूजन असंभव तथा निष्प्रयोजन नहीं कहा जा सकता है। प्रतिकृति का पूजन भगवन्पूजन ही है, इसी तात्पर्य को भगवान् श्रीकृष्ण जी महाराज स्पष्ट कर रहे हैं कि:—

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥
यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोसि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥ अ० ९ श्लोक० २६-२७

शंकान्तर का दृष्टान्त से समाधान

जैसे सार्वभौम राजा प्रजा के स्वल्प द्रव्यदान की तृष्णा के न होने पर भी प्रजा के द्वारा भाव से समर्पित पुष्पादिक स्वल्प पदार्थों को ग्रहण करता है। उसी प्रकार भाव युक्त पुरुष की पत्र पुष्पादिकों से की हुई पूजा को परमेश्वर भी ग्रहण करता है। अतः भगवान् की भूख प्यास की शाति का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है। सार्वभौम राजा भी किसी की पूजा को साक्षात् ग्रहण करता है, तथा किसी की पूजा को मन्त्री आदिकों के द्वारा ग्रहण करता है। इसी प्रकार किसी भक्त की पूजा का साक्षात् ग्रहण करता है और किसी

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

की पूजा को ब्रह्म सन्यासी अग्निपाषाणमयी आदिक स्व प्रतिकृतियों द्वारा ग्रहण करता है।

हम लोग प्रतिकृति मात्र की पूजा नहीं करते हैं किन्तु भगवत्प्रतिकृति की पूजा करते हैं। अति पवित्र हृदय भक्त के लिये तो चराचर संसार ही भगवद् विग्रह की प्रतिकृति बन जाता है। क्योंकि सहस्रशीर्षा पुरुष. इत्यादिक श्रुति स्मृति तथा पुराणों के प्रमाण से परमेश्वर का विराट रूप भी है। अत एव भगवत्प्रतिकृति का पूजन कल्याण प्रद ही है भगवद् प्रार्थना श्लोकों से ही भगवद् पूजन को कल्याण प्रदत्व स्पष्ट हो जाता है। अतः तिन मन्त्र श्लोकों का दिग्दर्शन किया जाता है।

यस्य भूमि प्रमान्तरिक्षमुदरम्। दिवंयश्चक्रे
मूर्द्धानं तस्मैज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः। अथर्व काण्ड
१० प्र० २३ अनु० ४ म० ३२।

नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय मयस्कराय च।
नमः शिवाय शिवतराय च। यजु० अ० १६ मं० ४१॥

यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं योवै वेदाँश्च प्रहिणोति तस्मै।
तँ ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये।
श्वेताश्वतरोपनिषत्॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्योविश्वा जातानि परिता वभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥
ऋ० म० १० सू० १२१ म० १०।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ॐ-त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।
ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पति वेदनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत । यजु० अ० ३ म० ६ ॥

विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥
य० अ० ३० म ३०

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाग्ने
मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ यजुर्वेद अ० ३२ म० १४
तेजोऽसि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि ।
बलमसि बलं मयिधेहि ओजोऽस्योजो मयि धेहि ॥
अजुर्वेद अ० १९ मं० ९

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानिदेव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥
यजु० अ० ४० म० १४ इति ॥

इसी प्रकार गीता रामायण तथा पुराणों में भी अनेक प्रार्थना श्लोक विद्यमान हैं ।

संसारसंतापनिपातितानां मोहप्रमादेनविमोहितानाम् ।
दुःखार्णवप्लावितजीवितानां त्वमेव नस्तत्परमावलंबनम् ॥

करचरणकृतं वा कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजंवा मानसं वाऽपराधम् ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विहितमविहितम्वा सर्वं मेतत्क्षमस्व ॥
जय जय करुणाब्धे सच्चिदानन्द विष्णो ।

सेवापि न हि कर्तुं शक्यते मया महाऽधमोऽहं हतपुण्यलेशः ।
स्वतो महिम्ना मयि संविधत्स्व दयां यतोऽसि त्वमनाथनाथः ।

इत्यादि अभियुक्तों की प्रार्थना भी अनन्त है। ये वैदिक पौराणिक ऐतिहासिक तथा अभियुक्त प्रार्थना स्तोत्र केवल मूर्ति की उपासना या पूजा में उपयुक्त नहीं हो सकते हैं। अतः मूर्ति के सामने इन प्रार्थना स्तोत्रों को गाने वाले भक्त भगवन्मूर्ति उपासक ही हैं। भगवान की मूर्ति का पूजनोपासन भद्रप्रापक ही है। अतः विवाद का अवकाश नहीं।

यह कथन कि "अन्धं तमः प्रविशान्ति येऽसंभूति मुपासते ततो भूय इव ते तमो य उ संभूत्या्ँरताः। इस मन्त्र ने प्रकृति तथा प्रकृति के कार्य की उपासना करने में अनर्थ कहा है'। सरल हृदय पुरुषों का वचन मात्र है। क्योंकि यह मन्त्र तो स्वतन्त्र रूप से प्रकृति और उसके कार्य की उपासना करने में अन्धतम रूप अनर्थ की प्राप्ति कर रहा है। जिस काल में प्रकृति और उसके कार्य की भगवन्मूर्ति रूप से उपासना की जाती है। उस समय में यह उपासना भगवन्मूर्ति जातीय होने से अनर्थदायिनी न होकर विशेष फल देने वाली होती है। इस अर्थ को स्वयं वेद मन्त्र कह रहा है।

असंभूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयँ् सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वाऽसंभूत्याऽमृतमश्नुते ॥
य० अ० ४० मं० ११ इति।

अर्थ– जो पुरुष (असंभूतिं) अजा प्रकृति और (संभूति) (विनाशं) विनाशशील प्रकृति के कार्य (उभयं सह वेद) इन दोनों

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

की भगवद्बुद्धि के सहित उपासना करता है। वह पुरुष (विनाशेन) असंभूत्या च प्रकृति तत्कार्य की उपासना से परम्परा से सम्यग्ज्ञानी होकर अज्ञान रूप मृत्यु को उल्लंघन करके (अमृतं) मोक्ष को (अश्नुते) प्राप्त हो जाता है। इति।

अध्यस्त रूप मूर्ति विशेषों द्वारा शिव विष्णु आदिकों की उपासना या पूजा करके ब्रह्मादिलोक की प्राप्ति अथवा चित्तशुद्धि के क्रम से स्वरूप ज्ञान की निष्पत्ति से निरूढ़ अज्ञान की निवृत्ति हो जाने पर श्रेयः शब्द से कही जाने वाली कैवल्य मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। इस अर्थ को स्वयं कपिल जीने भी कहा है कि--अध्यस्तरूपोपासनात्पारंपर्येण यज्ञोपासकानामिव। सा० द० अ० ४ सू० २१। इसलिये भगवान् की मूर्ति की उपासना या पूजा से उपासक अन्धतम में प्रवेश नहीं करते। किन्तु भगवान् की दुरत्यय माया को तर कर भवबन्धन से मुक्त हो जाते हैं। श्रीभगवान् ने भी कहा है। दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया। मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते। इति। अर्थ–यह मेरी दैवी गुणमयी माया दुरत्यय है अर्थात् इसका तरना कठिन है। तथापि जो अधिकारी जन मेरी पूजा या उपासना करते हैं। वे चित्तशुद्धि के द्वारा मुझ आत्म रूप परमेश्वर को पाकर इस मेरी माया को तर जाते हैं।

अतएव उपनिषद् में प्रजापति बालखिल्य संवाद में अग्नि वायु आदित्य आदिक की उपासना भी भगवान् की उपासना बतलाई है। यही दिखाते हैं। अग्निर्वायुरादित्यः कालः प्राणोऽन्नं ब्रह्मा रुद्रो विष्णुरिति एकेऽन्यमभिध्यायन्ति एकेऽन्यं श्रेयः कतमोयः सोऽस्माकं ब्रूहीति तान्होवाच ब्रह्मणो वावैता अग्र्यास्तनवः परस्यामृतस्याशरीरस्य तस्यैव लोके प्रतिमा उदति इह यो यस्यानुषक्त इति। एवं ह्याह ब्रह्म खल्विदं वाव सर्वं या अस्या अग्रयास्तनवस्ता अभिध्यायेत् अर्चयेत्॥ इति। इस प्रकार भगवन्मूर्तेरिव मूर्तेः प्रतिकृतेः

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पूजा भगवन्मूर्ति पूजा। यह मूर्ति पूजा का निर्वचननिर्विघ्न सिद्ध हुआ। वेद शास्त्र पुराण इतिहासादि सद्ग्रन्थों से सिद्ध होने के कारण यह मूर्ति पूजा अधिकारियों को स्वाधिकारानुगुण्य पद्धति से परम आदरणीया है।

प्रार्थना

ज्ञानं च शक्तिमपि धैर्यमथो विवेकं
त्वद्दत्तमेव सकलं लभते मनुष्यः।
किमस्ति येन भवतो विदधामि चर्यां
स्वेनैव तुष्यतु भवान् करुणागुणेन ॥१॥
यं वै वेदो वेद नो नैव विष्णु
र्नो वा वेधा नो मानो नैव वाणी।
तं देशिकं मादृशः कोल्पमेधा
याथात्म्याद्वा वेत्यहो विश्वनाथम् ॥२॥
सच्चिच्छान्त पदान्तज्ञाननिपुणो-
दक्षो विदां मण्डले।
वेदावेदसुवेदवेदनवरो वेदार्थरक्षापरः।
भेदाभेदविभेदभेदनपरस्तातानुकं पापरः॥
रामारामविरामराम रमणो विद्या गुरुः पातुनः ॥३॥
स्वीकुर्वन्तु च ते साधु साष्टागनतयो मया।
भौमेन श्रद्धया कृताः श्रीपादाः ऋषभामराः ॥४॥

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यत्प्रसादात्समाप्तेयं मूर्तिपूजातिपुण्यसूः ।
प्रह्वीभावेन वन्द्योऽसौ विद्यादातेश्वरो गुरुः ॥५॥
संपात्युत्ह्वाद्य संसारं लाति कर्मानुगुण्यतः ।
रमन्ते योगिनो यस्मिन् रमते योगिनां हृदि ॥
साकारं तं निराकारं तारकं ब्रह्मशब्दितम् ।
गुरुपादाभिरामं वै पालारामं यजामहे ॥६॥

इति श्री परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ पूज्यपाद पंडित स्वामि ऋषभदेव मुनि गुरुचरण कृपाकटाक्षत्म प्राप्ताध्यात्तविद्येन श्री मन्महत्पदोपाधिधृग् ब्रह्मनिष्ठ परमहंसावतंस पूज्य पादस्वामिपालाराममुनिगुरु चरणप्रसादावाप्त परमहंसेन मंगलहरिमुनिनाप्रणीता

मूर्तिपूजा समाप्ता ।।

। इति शुभम् ।

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

...ई, स्पेनी, अरबी, स्वीडिश, स्वाहिली और इटालियन भाषा में प्रकाशित सचित्र मासिक ... हिन्दी :
...报1974年第4期（310）印地文版 本刊代号2—909
...च्वाङ सड़क, पेकिङ २८ द्वारा सम्पादित और प्रकाशित, तार : CHINAPIC
... बॉक्स ३९९, शीतान भवन, पेकिङ द्वारा वितरित, चीन लोक गणराज्य में मु...

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पृष्ठ ।

फोटोकार :

Jayatu Sanskritam, Kathmandu, Nepal